हि० ग्रं० अ० प्रभाग ग्रन्थाङ्क : २६४

लेखन कला का इतिहास

(द्वितीय खण्ड)

लेखक

ईश्वर चन्द्र राही

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान

(हिन्दी ग्रन्थ अकादमी प्रभाग)

राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन हिन्दी भवन

महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ—२२६००१

प्रकाशक

विनोद चन्द्र पाण्डेय

निदेशक,

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान,

लखनऊ

शिक्षा एवं समाज कल्याण मंत्रालय,

भारत सरकार की विश्वविद्यालयस्तरीय ग्रन्थ योजना के अन्तर्गत,

हिन्दी ग्रन्थ अकादमी प्रभाग, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा प्रकाशित ।

पुनरीक्षक

प्रोफ़ेसर डॉ० लल्लन जी गोपाल

विभागाध्यक्ष : प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं

पुरातत्व विभाग, कला संकाय,

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,

वाराणसी ।

प्रथम संस्करण : १९८३

प्रतियाँ : २२००

मूल्य : ८७ रुपया (सत्तासी रुपया)

मुद्रक

जीवन शिक्षा मुद्रणालय (प्रा०) लि०

गोलघर, वाराणसी

प्रस्तावना

शिक्षा-आयोग (१९६४-६६) की संस्तुतियों के आधार पर भारत सरकार ने १९६८ में शिक्षा सम्बन्धी अपनी राष्ट्रीय नीति घोषित की और १८ जनवरी, १९६८ को संसद के दोनों सदनों द्वारा इस सम्बन्ध में एक सङ्कल्प पारित किया गया। उक्त सङ्कल्प के अनुपालन में भारत सरकार के शिक्षा एवं युवक सेवा मंत्रालय ने भारतीय भाषाओं के माध्यम से शिक्षण की व्यवस्था करने के लिए विश्वविद्यालयस्तरीय पाठ्यपुस्तकों के निर्माण का एक व्यवस्थित कार्यक्रम निश्चित किया। उस कार्यक्रम के अन्तर्गत भारत सरकार की शत-प्रतिशत सहायता से प्रत्येक राज्य में एक ग्रन्थ अकादमी की स्थापना की गयी। इस राज्य में भी विश्वविद्यालय स्तर की प्रामाणिक पाठ्य-पुस्तकें तैयार करने के लिए हिन्दी ग्रन्थ अकादमी की स्थापना ७ जनवरी, १९७० को की गयी।

प्रामाणिक ग्रन्थ-निर्माण की योजना के अन्तर्गत यह अकादमी विश्वविद्यालय स्तरीय विदेशी भाषाओं की पाठ्यपुस्तकों को हिन्दी में अनूदित करा रही है और अनेक विषयों में मौलिक पुस्तकों की भी रचना करा रही है। प्रकाश्य ग्रन्थों में भारत सरकार द्वारा स्वीकृत पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग किया जा रहा है।

उपर्युक्त योजना के अन्तर्गत वे पाण्डुलिपियाँ भी अकादमी द्वारा मुद्रित करायी जा रही हैं जो भारत-सरकार की मानक-ग्रन्थ योजना के अन्तर्गत इस राज्य में स्थापित विभिन्न अधिकरणों द्वारा तैयार की गयी थी।

प्रस्तुत पुस्तक इसी योजना के अन्तर्गत मुद्रित एवं प्रकाशित करायी गयी है। इसके लेखक श्री ईश्वर चन्द्र राही हैं। इसका पुनरीक्षण प्रो० डॉ० लल्लन जी गोपाल ने किया है। इन दोनों विद्वानों के इस बहुमूल्य सहयोग के लिए उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान उनके प्रति आभारी है।

श्री राही जी द्वारा प्रस्तुत 'लेखन कला का इतिहास' उनके विशद अध्ययन और अध्यवसाय का परिचायक है। उसमें उन्होंने समस्त विश्व की भाषाओं के उद्गम, लिपियों के आविष्कार और इतिहास के बदलते हुए चरणों का विकासक्रम दिखाते हुए प्रत्येक प्राचीन देश के मूल स्वरूप, उसकी जातिगत विशेषता तथा आधुनिक उपलब्धियों का वैज्ञानिक विश्लेषण भी प्रस्तुत किया है। लिपियों के उद्भव एवं विकास का निरूपण करते हुए प्राचीन मानक चित्रों द्वारा सभ्यता और संस्कृति के विकास में मानवजाति के सामूहिक योगदान का भी समुचित उल्लेख है। इस प्रकार भाषा, लिपि, पुरातत्व, काल निर्धारण और प्राचीन इतिहास के आधार पर सिन्धु-धाटी, दक्षिण एशियाई देशों, पश्चिम एशियाई देशों तथा मध्य व पूर्वी एशियाई देशों की लेखन कला के विकास के साथ-साथ नृविज्ञान के आधार पर समस्त मानवता का इतिहास भी रेखांकित किया गया है। राही जी ने ज्ञान-विज्ञान के विभिन्न भण्डारों का आकलन कर विश्व मानक की जिज्ञासाओं के सहज विकास को वर्तमान दुर्धर्ष तकनीकी युग तक की मंगल यात्रा के रूप में निरूपित किया है। जहाँ तक मैं जानता हूँ भारतीय भाषाओं में यह अपने ढंग का अनन्य प्रयास है, निश्चित ही राही जी के इस ग्रन्थ के प्रकाशन से हिन्दी संस्थान गौरवान्वित हो सकेगा। वे हम सबके साधुवाद के पात्र हैं।

शिवमंगल सिंह 'सुमन'
उपाध्यक्ष
उ० प्र० हिन्दी संस्थान,
लखनऊ

प्राक्कथन

मानव सभ्यता और संस्कृति के इतिहास में अनेक क्रान्तिकारी परिवर्तन समय-समय पर प्रस्फुटित हुए हैं। मानव समाज को नयी दिशा देनेवाले आविष्कारों के सापेक्षिक महत्त्व का निर्धारण दुष्कर है, तथापि इनमें लेखन-कला की उपयोगिता किसी से कम नहीं है। मानव के अन्य जीवों पर प्राप्य श्रेष्ठता के सूचक गुणों और उपलब्धियों में भावों और विचारों को अंकित करने की उसकी क्षमता विशिष्ट है। इसके कारण मानव के लिए यह सम्भव हो सका है कि वह ज्ञान का सर्जन, संरक्षण, संवर्धन और सातत्य बनाये रखे। वह अपने अनुभवों, विचारों और कल्पनाओं को भी मूर्त और स्थायी रूप दे सकता है।

लेखन कला के आविष्कार, उसमें सुधार और विकास की कथा अत्यन्त रोचक है। उससे कुछ कम रोमांचक नहीं है इन आविष्कारों की कथा और अनेक भूली-बिसरी लिपियों को पहचानने और समझने का आधुनिक विद्वानों का प्रयास। लेखन कला का इतिहास इतना विस्तृत है और तथ्यों की इतनी अधिकता है कि उनका विधिवत् अध्ययन और समुचित प्रस्तुतीकरण सरल नहीं है। इस क्षेत्र में श्री ईश्वरचन्द्र राही का प्रयास स्तुत्य हैं। अर्थाभाव के होते हुए भी उन्होंने दीर्घकालीन अध्ययन के द्वारा एक कठिन कार्य को सम्पादित किया है। मुझे स्वयं पता है कि किस प्रकार अनेक देशों की यात्रा करके, अनेक पुस्तकालयों में अध्ययन करके और विशिष्ट विद्वानों से परामर्श करके उन्होंने प्रस्तुत पुस्तक का प्रणयन किया है। इस पुस्तक की रचना की अपनी एक रोचक कथा है जो किसी भी नैष्ठिक, कर्मठ और जिज्ञासु व्यक्ति के लिए प्रेरणा एवं स्फूर्ति का स्रोत सिद्ध होगी।

मुझे हर्ष है कि इस पुस्तक को प्रस्तुत करने का संयोग मुझे प्राप्त हुआ है। मैंने इस पुस्तक का औपचारिक पुनरीक्षण भी किया है। हिन्दी ही नहीं अन्य किसी भाषा में इससे तुलनीय उद्देश्य, विस्तार और शैली के ग्रन्थ विरल हैं। मानव की सांस्कृतिक विरासत को समझने में सहायक यह पुस्तक विभिन्न समाजों में परस्पर सहयोग और आदान-प्रदान की प्रक्रिया स्पष्ट करके समता और सद्भावना के विचारों और प्रयासों को बल देगी।

श्री राही को उनके इस बहुमूल्य योगदान के लिए साधुवाद देते हुए माँ सरस्वती से मेरी प्रार्थना है कि उनको स्थायी यश का भागी बनाये।

प्रो० लल्लन जी गोपाल
एम० ए०, डी० फ़िल (इलाहाबाद),
पी एच० डी० (लन्दन),
विद्या चक्रवर्ती (मानद)

संकाय प्रमुख, कला संकाय,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,
वाराणसी – २२१००५

दो शब्द

जब मैं सन् १९२८ में ८ वर्ष की आयु में सर्वप्रथम एक सायकिल – विश्व – यात्री के सम्पर्क में आया तो मनरूपी कक्ष के एक कोने में यात्रा करने की प्रेरणा का बीजारोपण हो गया। चैतन्यता तथा उत्सुकता के खाद एवं पानी देने से वह बीज अंकुरित होकर बढ़ता रहा। २ जून १९३८ को वही बीज एक फल के रूप में परिवर्तित हो गया, जब मैंने अपनी प्रथम सायकिल-यात्रा दिल्ली से पंजाब की ओर इस आशय से आरम्भ कर दी कि मैं एक ऐतिहासिक खैंबर दर्रे को पार करके विदेश चला जाऊँगा। परन्तु अंग्रेजी राज्याधिकारियों ने मुझे अनुमति नहीं दी और मैं अपने देश 'अखण्ड भारत' को जानने व समझने में लग गया।

भारत के सुदूर पश्चिमी, दक्षिणी, पूर्वी तथा उत्तरी पर्वतीय भागों की यात्रा में मेरा ध्यान एक मुख्य समस्या की ओर आकर्षित हुआ और वह समस्या थी भाषा की अर्थात् बोली व लिपि की। अंग्रेज़ी राज्य में अंग्रेज़ी भाषा द्वारा अहिन्दी भाषा-भाषियों से विचार-विनिमय का कार्य चलता रहा, परन्तु समस्या, समस्या ही बनी रही और मन में कुलबुलाती रही। न समस्या का पूर्ण रूप और न उसके किसी निदान का रूप मस्तिष्क में आ सका।

भारत की स्वतंत्रता के पश्चात् राजनैतिक, सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक समस्याएँ कुछ आंशिक रूप में सुलझने लगीं और विद्वानों का ध्यान भारत की राष्ट्रभाषा के निर्माण एवं एकता की ओर अग्रसर होने लगा तो मेरे मन की वह कुलबुलानेवाली समस्या भी अपने स्थूल रूप में प्रकट होने लगी और मैंने सन् १९५८-६० में पुनः सायकिल – यात्रा आरम्भ कर दी। अब मैं ३८ वर्ष का एक विकसित मानव बन चुका था, विचारों में भी परिपक्वता आ चुकी थी। इसके अतिरिक्त भी मैं बम्बई में सन् १९५२ - ५४ तक केन्द्रीय सरकार की ओर से विदेशी यात्रियों के लिए एक पथ-प्रदर्शक भी रह चुका था, जिसने उसी कुलबुलाती समस्या को अत्यधिक प्रज्ज्वलित कर दिया था।

दूसरी बार की सायकिल – यात्रा ने भाषा एवं लिपि की समस्या पर मुझे कुछ गहरी दृष्टि से सोचने एवं समझने का अवसर प्रदान किया। एक प्रश्न, जिसका जन्म तो हो चुका था, परन्तु उसका स्पष्ट रूप सामने नहीं आया था, सदैव उठता रहा कि जब भारत की मुख्य १५-१६ भाषाएँ – बोली व लिपि और उनकी लगभग २६५ बोलियों के रूप में शाखाएँ हैं, जिनका एकीकरण असम्भव सा प्रतीत होता है तो विश्व की भाषाओं का एकीकरण तो एक युटोपियन विचार होगा।

अपने इसी सायकिल – यात्रा – काल में मैंने एक पुरातत्त्व-सम्बन्धी पुस्तक के लिए हैदराबाद में प्रान्तीय सरकार के पुरातत्त्व विभाग के तात्कालिक निदेशक श्री मोहम्मद अब्दुल वहीद से भेंट की और उनसे कुछ चर्चा राष्ट्रभाषा

हिन्दी व उसकी देवनागरी लिपि के सम्बन्ध में हुई तब उन्होंने कुछ प्राचीन लिपियों के अभिलेख दिखाये तथा उनकी एकता पर कुछ प्रकाश डाला। अब क्या था, अन्धे को दो आँखें मिल गयीं, अँधेरी राह पर चलने के लिए एक कभी न बुझनेवाला दीप मिल गया और कुछ अध्ययन के पश्चात् यह भी पता लग गया कि भारत की समस्त लिपियों का एक ही स्रोत ब्राह्मी है। उसी की खोज में लग गया और अध्ययन की सही दिशा में अग्रसर होने लगा।

जब एक देश में भाषाओं एवं लिपियों की समस्या है तो विश्व में कितनी समस्या होगी? क्या भारत की लिपि देवनागरी का सम्बन्ध विदेशों की लिपियों से है या हो सकता है? क्या भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी – देवनागरी विश्व-भारती के पथ पर अग्रसर हो सकती है? क्या एक भारतीय अपनी राष्ट्रभाषा के द्वारा विश्व की अन्य भाषाएँ सीख सकता है? क्या भारत की तरह विश्व की अन्य लिपियों का स्रोत भी एक है? ऐसे प्रश्नों ने मुझे न केवल विश्व की लिपियों के अध्ययन करने की प्रेरणा प्रदान की, अपितु भिन्न-भिन्न देशों की लिपियों के जन्म व विकास के विषय में शोध करने के लिए विश्व की सायकिल – यात्रा करने के लिए भी प्रेरित किया, जिसके फलस्वरूप मैं १९७४ में ५८ वर्ष की आयु में अपनी सायकिल – यात्रा पर निकल पड़ा और ३५ देशों की यात्रा दो वर्ष में पूरी कर ली। इस यात्रा के पूर्व ही मैंने इस विषय का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त कर लिया था और उसको चार पुस्तिकाएँ तथा एक बृहद् ग्रन्थ लिखकर एक रूप भी दे चुका था। इस विश्व – सायकिल – यात्रा में मैंने अनेक पुरातत्त्व – विभागाध्यक्षों से भेंट करके इस विषय पर विचार-विमर्श किया। इस विषय की ऐसी अनेक पुस्तकों व ग्रन्थों का अवलोकन किया जिनका भारत में उपलब्ध होना असम्भव था। स्वीडन तथा जर्मनी में मैंने स्वयं चार्ट्स बनाकर भारत तथा अन्य मुख्य देशों के वर्णों की प्रदर्शनियाँ कीं तथा भाषण दिये। इन कार्यों से मेरे ज्ञान का विस्तार हुआ तथा भारत की देवनागरी लिपि की सरलता का प्रचार हुआ तथा अनेक पाश्चात्य देशवासियों को लिपियों के तुलनात्मक अध्ययन करने का अवसर मिला।

इस पुस्तक में आदिकाल अर्थात् ५००० वर्ष पूर्व से वर्तमान काल तक की लगभग सभी लिपियों के जन्म व विकास की तथा अन्य लिपियों से उनके सम्बन्ध की, विस्तार से प्रमाणों सहित चर्चा की गयी है। जहाँ – जहाँ से प्राचीन लिपियाँ उत्खनन द्वारा निकाली गयीं, वे भिन्न-भिन्न देशों के सारे स्थान मानचित्रों में दिये गये हैं। साथ साथ उन लिपियों का काल एवं देश का – प्राचीन से अर्वाचीन तक का – इतिहास, प्राचीन मानव का लिपियों के विकास में योगदान का रूप तथा अर्वाचीन मानव का उनको पढ़ने का प्रयास, प्रमाण सहित इस पुस्तक में दिया गया है।

सम्भवतः हिन्दी भाषा एवं उसकी देवनागरी लिपि के माध्यम से विश्व की समस्त लिपियों की ध्वनियों को तथा उनके वर्णों को लिपिबद्ध करने का मेरे द्वारा यह प्रथम प्रयास होगा। वैसे तो इसके पूव भी एक पुस्तक उर्दू भाषा में विश्व की लिपियों पर श्री मोहम्मद ईशाक सिद्दीकी द्वारा लिखी जा चुकी थी। यह प्रयास एक अन्त नहीं, अपितु इस बात का श्रीगणेश है कि हिन्दी को विश्व-भारती बनाना है तो उसके बुनियाद की भाषा और लिपियों को विश्व की भाषा की दृष्टि से अन्वेषण-ग्रंथ तैयार करने होंगे। भाषा से भी पहले लिपि को महत्त्व देना होगा। इस दृष्टि से भी यह हिन्दी या भारतीय भाषा में प्रथम पुस्तक होगी, ऐसी मेरी धारणा है।

अन्त में मैं उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के उपाध्यक्ष डॉ० शिवमंगल सिंह 'सुमन' जी का अत्यन्त आभारी हूँ, जिन्होंने अपने व्यक्तिगत प्रयास से इस प्रथम व अनोखे ग्रंथ को, प्रकाशित करने का भार वहन किया। मैं आंध्र प्रदेश के पुरातत्व-विभाग के भूतपूर्व निदेशक श्री मोहम्मद अब्दुल वहीद खाँ का भी आभारी हूँ, जिन्होंने इस विषय के अध्ययन की ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया तथा मैं विश्व के सभी पुरातत्त्व-वेत्ताओं का, प्राचीन एवं अर्वाचीन इतिहासकारों का और सभी लिपि-सम्बद्ध शोधकर्ताओं का, लेखकों का, लिपियों के रहस्योद्घाटनकर्ताओं का तथा उत्खननकर्ताओं का अत्यन्त आभारी हूँ, जिनके अथक परिश्रम के परिणामों द्वारा मैं इस ग्रन्थ को पूरा कर सका। इससे भी अधिक मुझे आभारी होना चाहिए और आभारी हूँ, जीवन शिक्षा मुद्रणालय (प्रा०) लि०, वाराणसी के श्री तरुण भाई का, जिनके प्रयास के फलस्वरूप यह ग्रन्थ मुद्रित हो सका। इसके अतिरिक्त भी इस विषय के विद्वानों स्व० श्री सी० शिवराममूर्ति, डॉ० लल्लन जी गोपाल, डॉ० गोबर्धन राय शर्मा, डॉ० रमेशचन्द्र शर्मा, स्व० डॉ० राजबली पाण्डेय आदि का भी आभारी हूँ जिन्होंने समय-समय पर मेरा मार्गदर्शन किया है तथा अपने व्यक्तिगत सहयोग से प्रेरित करते रहे। मैं विश्व के अनेक मुख्य पुस्तकालयाध्यक्षों का तथा उन सभी व्यक्तियों का आभारी हूँ, जिन्होंने इस ग्रन्थ के लेखन तथा प्रकाशन में अपना अमूल्य सहयोग प्रदान किया है।

इस बृहद् ग्रन्थ के प्रकाशन में समस्त विश्व की लिपियों के वर्ण, उनकी ध्वनियाँ, अभिलेखों के प्रतिदर्श आदि का यथासंभव प्रामाणिक एवं शुद्ध रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। इसके मुद्रण में यदि कुछ अशुद्धियाँ एवं त्रुटियाँ रह गयी हों तो मैं पाठकगणों से क्षमा चाहूँगा तथा भविष्य में ग्रन्थ को त्रुटिरहित बनाने के लिए उनके बहुमूल्य सुझाव एवं विचारों का स्वागत करूँगा।

श्याम निवास,
बाग़ शेरजंग,
लखनऊ—२२६००३

ईश्वरचन्द्र राही

संकेताक्षर

A. S. I.	Archaeological Survey of India.
C. I. I.	Corpus Inscriptionum Indicarum.
C. I. V.	Civilization of Indus Valley.
E. I.	Epigraphica Indica.
E. R.	Epigraphic Researches.
F. E. M.	Further Excavation by Mackay.
I. A.	Indian Antiquary.
I. M. D.	Indus-Valley – Mohenjo-Daro.
I. M. P.	Inscriptions of Madras Presidency.
J.	Journal.
J. I. A. S.	Journal of Indian Asiatic Society.
J. A. S. B.	Journal of Asiatic Society.
J. R. A. S.	Journal of Royal Asiatic Society.
L. S. I.	Linguistic Survey of Indiaof Bengal.
M. D.	Mohenjo-Daro.
M. E. H.	Mackay's Excavation at Harappa.
M I. C.	Marshall's Indus Civilization.
N. Y.	New York.
P.	Page.
Pl.	Plate.
P. U. B.	Published.
S. I. I.	South-Indian Inscriptions.
Vol.	Volume.

आ०; आधु०	—	आधुनिक
ई०	—	ईसवी
ई० पू०	—	ईसा पूर्व
ई० स०	—	ईसवी सन्
फ० सं०	—	फलक संख्या
तृ०	—	तृतीय
श०	—	शताब्दी

प्रयुक्त शब्दों के विविध रूप

अमेरिका	अमरीका	ब्राह्मो	ब्राह्‌मो
अर्साकिड	अर्सासिड	बैज़ेन्टाइन	बैज़ेन्टीन
असुरबनीपाल	अशुरबनीपाल	भिन्न	भिन्न
इङ्गलैण्ड	इंगलैण्ड	मिट्टी	मिट्‌टी
उद्‌देश्य	उद्देश्य	मिस्र	मिस्र
उद्भव	उद्‌भव	मैथ्यु	मैथिउ
कम्बोडिया	कम्पूचिया	युद्ध	युद्‌ध
केल्ट	सेल्ट	युरोप	योरोप, यूरोप
कन्द्रा	कन्दरा	व्यञ्जन	व्यंजन
क्रम	क्रम	लिये	लिए
खेमर	खेमिर	संभव	सम्भव
गई	गयी	संबन्ध	सम्बन्ध
ग्यान	ज्ञान	सेमेटिक	सेमिटिक
गेल्ब	जेल्ब	हण्टर	हन्टर
चित्र	चित्र	हेरोग्लिफ़्स	हैरोग्लिफ़्स
चिन्ह	चिह्न	हेरेटिक	हैरैटिक
चिन्तन	चिंतन	हैद्रामौत	हैद्रमउत
जिव्हा	जिह्वा	ह्रोज़नी	ह्‌रोज़्‌नी
दायें	दाएँ	ख	ख
टियूनिस	ट्युनिस	झ	झ
डच्छ	डच	ण	ण
पियू	प्यू	१	१
पश्चात्	पश्चात्	४	४
फ्रीजिया	फ़्रीगिया	५	५
फ्रांस	फ़्रांस	८	८
बायें	बाएँ	९	९

कुछ विशेष संयुक्ताक्षर

संयुक्ताक्षर							उदाहरण
ळ	=	ल	+	ड़			तमिळ
सं	=	स	+	म			संभव
क्ष	=	क	+	श			कक्षा
ज्ञ	=	ग	+	य			ज्ञान
श्री	=	श	+	री			श्रीमान्
स्र	=	स	+	र			मिस्र
त्र	=	त	+	र			मित्रता
स्य	=	स	+	य			राजस्य
अं	=	अ	+	न्			अंक
ह्वा	=	व	+	ह			जिह्वा
ह्न	=	न	+	ह			चिह्न
हृ	=	ह	+	र			हृदय
न्ध्र	=	न	+	ध	+	र	आन्ध्र
त्त	=	त	+	त			दत्त
क्य	=	क	+	य			चालुक्य
क्त (क्त)	=	क	+	त			शक्ति (शक्ति)
ण्ड	=	ण	+	ड			पाण्डेय
कृ	=	क	+	रि			कृपा
ष्ण	=	ष	+	ण			कृष्णा
प्र	=	प	+	र			प्रपात
द्व	=	द	+	व			द्वार
श्व	=	श	+	व			ईश्वर
न्द	=	न	+	द			नन्द
र्म	=	र	+	म			कर्म
म्ब	=	म	+	ब			सम्बन्ध
क्र	=	क	+	र			क्रम
ख्य	=	ख	+	य			संख्या
ष्ट	=	ष	+	ट			कष्ट

अनुक्रम

क्या **कहाँ**

पृष्ठबोधिनी

अध्याय : २

दक्षिण एशियाई देशों की लेखन कला का इतिहास–

अध्याय : ३

पश्चिमी एशियाई देशों की लेखन कला का इतिहास –

अध्याय : ४

मध्य व पूर्व एशियाई देशों की लेखन कला का इतिहास –

अध्याय : ५

दक्षिण–पूर्वी एशियाई देशों की लेखन कला का इतिहास –

अध्याय : ६

अफ्रीका महाद्वीप के देशों की लेखन कला का इतिहास –

अध्याय : ७

यूरोपीय देशों की लेखन कला का इतिहास

अध्याय : ८

अमरीकी देशों की लेखन कला का इतिहास –

परिशिष्ट

□

लिपियों के फलकों (Plates) की तालिका

(प्रथम खण्ड)

लिपियों के फलकों (Plates) की तालिका

(द्वितीय खण्ड)

□

मानचित्रों की तालिका

(प्रथम खण्ड)

मानचित्रों की तालिका

(द्वितीय खण्ड)

□

नोट :– इस पुस्तक में जो भी मानचित्र दिये गये हैं वे प्रामाणिक मानचित्रों के छाया – मात्र हैं। ये मानचित्र देशों की धारणा – मात्र प्रदर्शित करने के लिए अंकित किये गये हैं। सभी मानचित्र शुद्ध अनुपात में नहीं (**not to scale**) हैं।

लेखन कला का इतिहास

(द्वितीय खण्ड)

तिब्बत

तिब्बत निवासी इस देश को बोद् के नाम से सम्बोधित करते हैं। इसी प्रकार भारतीय 'भोट', मंगोल 'तुबेत' (जिससे हो गया तिब्बत) तत्पश्चात् चीनियों ने इसका नाम शी त्सांग (Hsi – Tsang) रखा।

इतिहास

इस देश का इतिहास पौराणिक काल से आरम्भ होता है। इसका सर्वप्रथम नरेश कौशल निवासी एक भारतीय राजा प्रसेनजीत का पाँचवाँ पुत्र था, जो अपना घर छोड़कर उत्तर दिशा की ओर भाग गया था। चलते – चलते यह तिब्बत पहुँच गया और वहाँ के निवासियों ने इसको तिब्बत का नरेश चुन लिया तथा उसका नाम न्या – त्रि च्ने – पो (Nya – tri Tsen – po) रख दिया। उसने अपना निवास स्थान यार – लोंग को बनाया। यह उप – नगर ल्हासा के दक्षिण में स्थित था। सर्वप्रथम शासक तथा उसके उत्तराधिकारी दिव्य – लोकीय – राजा कहलाते थे। तदनन्तर छः शासकों को भू – लोकीय राजा कहा जाता था।

तत्पश्चात् एक राजा हुआ जिसका नाम ल्हाथो थोरी न्यान च्ने था। इसी राजा के शासन काल में सर्वप्रथम बौद्ध – धर्म – सम्बन्धी वस्तुएँ नेपाल से तिब्बत पहुँचने लगीं। इस राजा का चौथा उत्तराधिकारी नाम – री सोंग – च्ने था जिसका स्वर्गवास ६३० ई० सन् में हुआ था। इसके शासन काल में तिब्बत – निवासियों ने गणित तथा आयुर्विज्ञान की शिक्षा चीन देश से प्राप्त की। इसके राज्य – काल में इतनी समृद्धि थी तथा इतना पशुधन था कि राजा ने अपना राजगृह निर्माण कराने के लिये पदार्थों में पानी के स्थान पर दूध व मक्खन का प्रयोग किया।

इस शासक के मरणोपरांत इसका पुत्र तेरह वर्ष की अवस्था में राजसिंहासनारूढ़ हुआ। तिब्बत का वास्तविक इतिहास इसी राजा के शासन काल से आरम्भ होता है। इसका नाम स्रोंग च्ने गम्पो था। इसी ने भारत की लिपि के वर्णों का प्रयोग तिब्बत में आरम्भ कराया। उसने अपने राज्य का विस्तार लद्दाक़ तथा नेपाल तक किया। ७०३ में नेपाल ने विद्रोह कर दिया और स्रोंग च्ने गम्पो का तीसरा उत्तराधिकारी वीरगति को प्राप्त हुआ।

स्रोंग च्ने गम्पो का दूसरा पुत्र व उत्तराधिकारी मंग – स्रोंग मंग – च्ने था जिसने ६६३ ई० में मध्य – एशिया का बहुत सा भू – भाग अपने अधीन कर लिया। उसने चीन पर भी आक्रमण किया जिसके

ऊपर आठवीं श० में 'तिब्बत' नीचे बारहवीं श० में

फलक संख्या – २०४
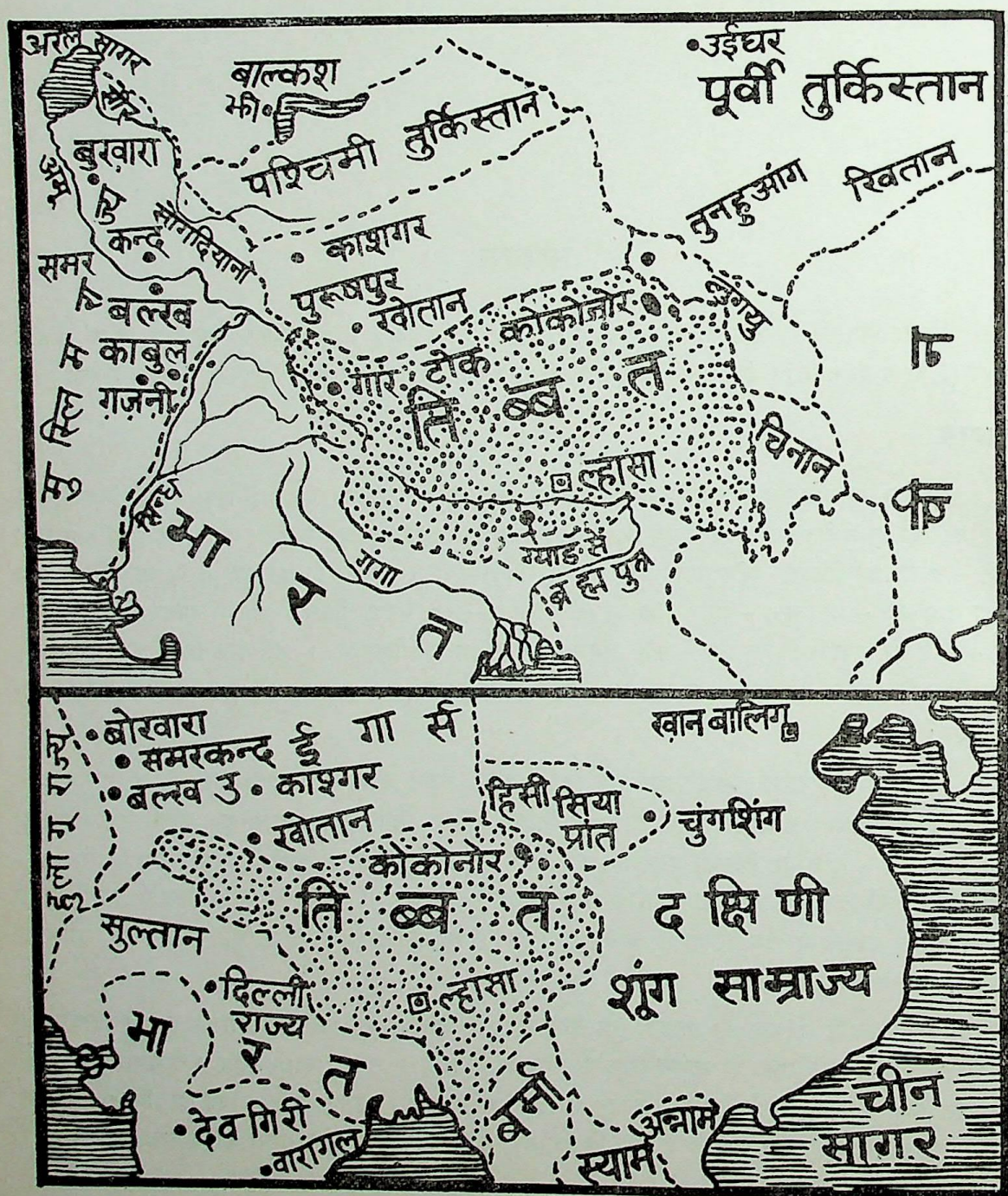
प्रतिकार में चीन ने विध्वंसक आक्रमण कर दिया और राजधानी को नष्ट – भ्रष्ट कर दिया। मंग चे़न के पौत्र त्सुक – चे़न ने एक चीन की राजकुमारी से विवाह किया। ७३० में उसके एक पुत्र त्रि – सोंग दे – चे़न उत्पन्न हुआ जो तिब्बत के इतिहास में एक प्रसिद्ध नरेश हुआ है। उसने ७४३ से ७८९ तक राज्य किया। तत्पश्चात् उसका पुत्र मुनि – चे़न – पो राजसिंहासन पर बैठा। उसने अपनी प्रजा में समानता लाने का प्रयत्न किया और धनवानों का धन निर्धनों में अपनी आज्ञानुसार विभाजित करना तथा उनको उच्च – पदाधिकार दिलाना आरम्भ कर दिया। इन बातों से अप्रसन्न होकर उसकी माता ने उसको विष दिलवा दिया।

उसके मरणोपरांत रल – पा – चे़न शासक बना। इसने बौद्ध ग्रन्थों का तिब्बत की भाषा में अनुवाद करवाया तथा चीन से ८२१ में सन्धि कर ली। रल – पा – चे़न के पश्चात् राजा धर्माध्यक्ष भी होने लगे जिनका नाम छोग्याल हो गया। इन भावी राजाओं ने बौद्ध धर्म का खूब प्रचार किया। यह राजा तिब्बत के मुख्य देवता चे़न – रे – सी के अवतार माने जाने लगे। पिछले तीन राजा भी उसी के अवतार माने जाने लगे थे। ८३८ में रल – पा – चेन का उसी के भ्राता लंगदर्मा ने वध कर दिया। तीन वर्ष लंगदर्मा ने राज्य किया परन्तु एक पुरोहित ने उसका भी वध कर दिया। वह भी एक नृत्य के अभिनय में और तभी से उस पुरोहित की स्मृति में नृत्य होता चला आ रहा है।

तत्पश्चात् तिब्बत का राज्य लंगदर्मा के दो पुत्रों में विभाजित हो गया। एक राज्य का नाम पूर्वी – तिब्बत तथा दूसरे का पश्चिमी – तिब्बत पड़ गया।

१०१३ ई० में एक भारतीय विद्वान् धर्मपाल यहाँ पहुँचा। शनैः शनैः बारहवीं एवं तेरहवीं शताब्दी तक पुरोहित ने अपनी सत्ता बढ़ा ली। उन्हीं में से एक बड़े विहार का पुरोहित साक्य[1] था। यह विहार मध्य – तिब्बत के दक्षिण – पश्चिम में स्थित था। १२४७ में मंगोल सम्राट् के पौत्र ने सा – क्य पण्डित को अपने राज दरबार में निमन्त्रित किया। पाँच वर्ष पश्चात् कुबलई खाँ, जिसने पूर्वी तिब्बत विजय किया था, चीन का सम्राट् बना। उसने सा – क्य पण्डित के भतीजे फक – पा ग्याल – चे़न को अपने दरबार में आमन्त्रित किया। उसने फक – पा को तिब्बत तथा दक्षिण – पूर्वी – तिब्बत के १३ जनपदों का तथा उत्तर – पूर्वी – तिब्बत के अम्दो प्रांत का भी शासक बना कर पूरी सत्ता सौंप दी। इसी समय से सा – क्य – पा के लामा (पुरोहित) शासक बन गये जो १३४० तक राज्य करते रहे।

सा – क्य विहार की शक्ति शनैः शनैः कम होने लगी और दूसरे विहार अपनी शक्ति को बढ़ाने लगे। उनमें से एक लामा ने मुख्य तिब्बत तथा पूर्वी – तिब्बत को परास्त किया और वहाँ का शासक भी बन गया। उसका नाम चांग – चुप ग्याल – छेन था जो फक – मो – द्रू के नाम से प्रसिद्ध था। उस विहार के १२ शासक हुए और १६३५ तक शासन किया। फक – मो – द्रू वंश को सोंग प्रांत के शासक ने समाप्त कर दिया।

१३५८ में एक महान् विद्वान् चोंग ख – पा का जन्म हुआ। उसके चेले पीला हैट (टोपा) पहनते थे जब कि दूसरे सम्प्रदाय वाले लाल हैट पहनते थे। पीले हैट वालों को विवाह करना तथा मदिरा पान करना निषेध था। सांग का – पा का उत्तराधिकारी गे – दुन त्रुप – पा हुआ जिसने एक विशाल विहार (मठ) का

---

1. इसका नाम सा – क्य विहार के नाम पर सा – क्य पड़ गया। इसका वास्तविक नाम कुनज्ञग्ग्यल मत्सन्द पाल – ब्जान – पो (Kun – dga – rgyal – mt's and pal – bzan – po) था। यह विवरण इस पुस्तक से लिया गया है :—
Jansen, H. : Syn, Symbol and Script (1970), p. – 414.

निर्माण करवाया। यह विहार महान् लामा अर्थात् ताशी लामा का निवास स्थान बना। यह पीले हैट वालों का दूसरा महान् लामा था। १४७४ में गे – दुन त्रुप – पा का स्वर्गवास हो गया। उसकी आत्मा एक बच्चे की आत्मा में प्रवेश कर गई और वह अवतार माना जाने लगा। तीसरे उत्तराधिकारी का नाम सोनम ग्यत्सो था जिसने यह धर्म मंगोलिया तक प्रसारित किया। मंगोलिया में लामा को दलाई लामा वज्रधर की पदवी दी गई और तभी से दलाई लामा[1] नाम पड़ गया।

पाँचवाँ उत्तराधिकारी लोब – सोंग ग्या – त्सो था जो मंगोलों के सहयोग से १६४१ में शासक भी बना दिया गया।

ल्हासा का पोताल राजगृह पहले सोंग – चे़न – गम्पो ने बनवाया था जो युद्धों में नष्ट हो गया। तत्पश्चात् इस पाँचवें दलाई – लामा के प्रधान मंत्री ने पत्थर का महल निर्माण करवाया जो आज भी वर्तमान है। इसने चीन की भी यात्रा की और इसको वहाँ के दरबार में एक स्वतंत्र देश के शासक तथा एक धर्म के अधिष्ठाता के रूप में मान्यता प्रदान की गई। इसी के शासनकाल में प्रथम यूरोप निवासी एक पुर्तगाली एन्तोनियो दि अन्द्रादा तिब्बत आया परन्तु वह ल्हासा नहीं पहुँच सका। तत्पश्चात् दो पादरी आये जो पीकिंग के रास्ते ल्हासा पहुँचे। एक माह निवास करके नेपाल के रास्ते वापस आ गये।

अठारहवीं श० में चीन ने तिब्बत से कूटनीतिक सम्बन्ध स्थापित कर लिये। राजदूतों की पदवी 'अम्बान' के नाम से ज्ञात हुई। १७५० में चीन में तिब्बत के राजदूतों का वध कर दिया जिसकी प्रतिक्रिया में तिब्बत निवासियों ने चीनी राजदूतावास के चीनियों का वध कर दिया। इस पर चीन के सम्राट् चेन – लुंग ने एक सेना भेज कर पुनः तिब्बत पर आधिपत्य जमा लिया परन्तु वह स्थिर न रह सका।

१७८८ में नेपाल – राज्य की सत्ता गोरखों के हाथ में आ गई और उन्होंने शी – गा – चे़ को अपने अधीन कर लिया परन्तु चीन ने एक सेना भेज दी और अब चीन एवं तिब्बत ने मिल कर १७९२ में नेपाल की सेना को परास्त कर दिया। तत्पश्चात् काठमण्डू के निकट एक सन्धि – पत्र पर हस्ताक्षर हो गये। १८४१ में कश्मीर के डोंगरा लोगों ने पश्चिम से तिब्बत पर आक्रमण किया परन्तु ठण्ड व बर्फ़ के कारण परास्त हो गये। १८५५ में फिर नेपाली गोरखाओं ने एक शक्तिशाली आक्रमण किया। तिब्बत से सन्धि हो गई। नेपाली एजेन्सी तिब्बत में स्थापित हो गई और नेपाल ने वचन दिया कि यदि कोई आक्रमण हुआ तो नेपाल सहायता देगा।

उन्नीसवीं श० के अन्त तक कश्मीर के शासक ने लद्दाख़ पर तथा अंग्रेज़ों ने सिक्किम पर अपना आधिपत्य जमा लिया। १९०७ में ब्रिटिश सरकार ने तिब्बत पर चीन के अधिकार को मान्यता प्रदान कर दी और यटुंग, ग्याङ् – से एवं गारटोक में चौकियाँ (व्यापारिक केन्द्र) स्थापित कर दीं। १९१२ में चीन के मांचू शासन के अन्त होने के साथ ही तिब्बत ने अपनी स्वतन्त्रता घोषित कर दी। १९१४ में चीन, तिब्बत व भारत के प्रतिनिधियों की एक बैठक शिमला में हुई जिसमें इस विशाल पठारी राज्य को दो भागों में विभाजित कर दिया गया। (१) पूर्वी भाग, जिसमें वर्तमान चीन के शंघाई एवं सी क्यांग प्रांत के कुछ भाग सम्मिलित थे। इसको अन्तावर्ती तिब्बत (Inner Tibet) के नाम से सम्बोधित किया गया तथा (२) पश्चिमी भाग जो बौद्ध – मतानुयायी लामा के हाथ में रहा। इसको बाह्य तिब्बत (Outer Tibet) के नाम से सम्बोधित किया गया।

---

1. दलाई (मंगोल भाषा) = सागर; लामा = ज्ञान अर्थात् ज्ञान का सागर।
पन चेन (पाली); पन = ज्ञान; चे़न। (तिब्बती) = महान् अर्थात् महान् ज्ञानी।

१९३३ में तेरहवें दलाई लामा के स्वर्गवास होने के पश्चात् बाह्य तिब्बत भी धीरे धीरे चीन के घेरे में आने लगा। चीनी भूमि पर लालित – पालित चौदहवें दलाई लामा ने १९४० में शासन भार सँभाला। १९५० में तो पँछेण लामा के चुनाव में दोनों देशों में शक्ति प्रदर्शन की नौबत आ गई। इस पर चीन को आक्रमण करने का अवसर प्राप्त हो गया। १९५१ में एक सन्धि के अनुसार यह देश साम्यवादी चीन के प्रशासन में एक स्वतंत्र राज्य मान लिया गया। इसी समय भूमि सुधार विधान एवं दलाई लामा के अधिकारों में हस्त – क्षेप तथा कटौती होने के कारण एक असन्तोष की आग सुलगने लगी जो क्रमशः १९५६ एवं १९५९ में ज़ोरों से भड़क उठी जिसको बल प्रयोग द्वारा चीन ने दबा दिया। अत्याचारों व हत्याओं आदि से किसी प्रकार बच कर दलाई लामा भारत पहुँच सके। अब तिब्बत पर चीन का पूर्ण अधिकार है और पँछेण लामा वहाँ के नाम मात्र शासक हैं।

तिब्बत की लिपियाँ

अु – चेन व अु – मेद लिपियाँ[1] : लगभग ६३० ईसवी में स्रोंग चेन गम्पो ने, जो उस समय का शासक था, अपने एक मंत्री थोन – मी – सम – भोटा को भारत भेजा। उसको आदेश दिया गया कि वह भारत जाकर बौद्ध धर्म का साहित्य तथा संस्कृत सीखे और वापस आकर तिब्बत निवासियों को पढ़ना लिखना सिखाये। इस मंत्री ने बौद्ध – गया में रह कर तथा अन्य स्थानों में रह कर शिक्षा प्राप्त की। वह तात्कालिक गुप्त लिपि के वर्णों को तिब्बत लाया और यहाँ की ध्वनियों के अनुसार कुछ वर्णों को कम कर दिया।

यह लिपि बाद में दो भागों में विभाजित हो गई। एक दैनिक जीवन में प्रयोग के लिए हस्त – लिखित – शीघ्र – लिपि जिसका नाम अु – मेद् 'फ० सं० – २०५' पड़ा तथा दूसरी मुद्रण के लिए जिसका नाम अु – चेन 'फ० सं० – २०६' पड़ा। पहली में शिरो – रेखा का प्रयोग नहीं होता तथा दूसरी में होता है। अु – चेन में प्रत्येक शब्द के पश्चात् शिरो – रेखा के अन्त में एक बिन्दी का प्रयोग किया जाता है ठीक इसी प्रकार जैसे देवनागरी लिपि में दो शब्दों के मध्य कुछ स्थान खाली रह जाता है। 'अु' तिब्बत के मध्य प्रांत का नाम था।

इस लिपि की समानता के लिए कुछ ध्वनियाँ तिब्बत की भाषा में ऐसी थीं जिनके लिये वर्ण थे ही नहीं। इस कारण बारहवीं श० में छः वर्ण और जोड़े गये। इन छः वर्णों पर अु – चेन की वर्णमाला में अंक डाल दिये गये हैं। साधारणतया यहाँ की लिपि को समझने में बड़ी कठिनाई इस कारण प्रतीत होती है कि अक्षरों की ध्वनियों में परिवर्तन आ जाता है। एक वर्ण की दो ध्वनियाँ होती हैं। उदाहरणार्थ 'ज' 'च' का, 'ग' 'क' का तथा 'द' 'त' का स्थान ग्रहण कर लेता है। तिब्बत के व्याकरण के नियमों के अनुसार कभी कभी 'ज, ग, द' को क्रम से 'च, क, त' पढ़ा जायेगा। 'अ' का प्रयोग स्वर की तरह नहीं किया जाता और वर्णमाला में उसका स्थान आरम्भ में होने के बजाय अन्त में कर दिया गया। एक दूसरा 'अ' भी है जिसका प्रयोग संगीत – मात्रा के अनुसार 'ऽ' होता है। इसमें स्वर केवल चार होते हैं, 'इ, उ, ए, ओं' तथा छोटी बड़ी मात्राएँ नहीं होतीं जैसी कि देवनागरी में होती हैं।

इन लिपियों में ध्वनि – बल पद्धति का प्रयोग होता है। टोन की संख्या[2] के विषय में विद्वान् एक मत नहीं हैं।

1. लेखक ने १९७४ में लखनऊ विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के तिब्बती भाषा के प्राध्यापक श्री लामा जी से साक्षात्कार करके तिब्बत की लिपियों की ध्वनियों को लिखा है।
2. जयेश्के (Jaeschke) के अनुसार दो टोन हैं। ग्रेहाम सैण्डबर्ग (Rev. Graham Sandberg) के अनुसार तीन टोन हैं। अमुन्द सेन के अनुसार छः टोन हैं।

पस्सेपा : इसका आविष्कार तिब्बत के महान् लामा द्वारा हुआ था। उनका नाम फाग – पा (अफगस – पा) था। चीनी भाषा में 'पा – को – सि – पा' लिखा जाता था जिसका संक्षिप्त रूप था 'पा – सि – पा' और उससे बन गया पस्सिपा तथा पस्सेपा। चीन के सम्राट कुबलई ख़ान ने १२६० में तिब्बत के महान् लामा को अपने दरबार में आमंत्रित किया तथा बौद्ध धर्म को ग्रहण कर लिया। १२६९ में इसी तिब्बत लिपि पस्सेपा को राजकीय लिपि बना दिया तथा उइगुरी लिपि, जो अब तक राजकीय लिपि थी, को हटा दिया गया। पस्सेपा अधिक दिनों तक चल न सकी। इसका प्रयोग ऊपर से नीचे की ओर किया जाता था परन्तु शिरोवृत्त पंक्तियाँ बाएँ से दाएँ की ओर लिखी जाती थीं। इसका प्रयोग चौदहवीं श० के मध्य तक रहा। इसके वर्ण 'फ० सं० – २०७' पर दिये गये हैं।

बाल्टी लिपि : इसका उपनाम भोटिया है। तिब्बत के सुदूर उत्तर – पश्चिम भागों के निवासी बाल्टी कहलाते थे। यह लोग तिब्बत के ही मूल निवासी भोटिया थे। इनकी भाषा भी तिब्बती थी परन्तु उसमें टोन पद्धति नहीं थी। बाल्टी लोग अपने इस भू – भाग को बाल्टिस्तान कहने लगे और शनैः शनैः एक राज्य में परिवर्तित कर लिया। कशमीर के राजा गुलाब सिंह ने इस पर आक्रमण कर १८१४ में अपने जम्मू राज्य में मिला लिया। १९०१ में इनकी जनसंख्या १,३४, ३७२ थी।

जब बाल्टी लोगों ने चौदहवीं श० में इस्लाम धर्म को ग्रहण कर लिया तब इन्होंने पस्सेपा लिपि की सहायता से अपनी एक बाल्टी लिपि का आविष्कार कर लिया। सर्वप्रथम गोडविन ऑस्टिन (Godwin Austen) ने इस लिपि की एक बारहखड़ी (Syllabary) तैयार की जिसकी सहायता से गुस्टाफ़सन (Gustafson) ने इस लिपि की एक वर्णमाला बनाई तथा इसका अनुवाद किया। इस लिपि का प्रयोग दाएँ से बाएँ किया जाता था। इसकी वर्णमाला[1] व प्रतिदर्श 'फ० सं० – २०८' पर दिया गया है।

अु – चेन लिपि का प्रतिदर्श : निम्नलिखित वाक्य अर्थ व भावार्थ सहित 'फ० सं० – २०६' पर दिया गया है :—

"ज़्येन = दूसरों (इस शब्द का प्रथम अक्षर 'ग' शांत है); की = का; च्या = काम; मो शे क्यां = न जानने पर भी (इसमें 'ब' शांत है); ते तङ् = वह और; ते यी = उसका; च्योत पा = व्यवहार; क्यों = पालो"। इसका भावार्थ : "दूसरों के काम न जानने पर भी उनके साथ (अच्छा) व्यवहार पालो (का पालन करो)।'

अु मेद का लिपि का प्रतिदर्श : 'फ० सं० – २०९' पर ऊपर की ओर दो वाक्य—"मेरे (एक) घर है"; "लडकी के पास बिल्ली है"—दिये गये हैं। नीचे की ओर सिक्किम[2] में प्रयोग होने वाली 'अु – चेन लिपि' का प्रतिदर्श तथा टेहढ़ी – गढ़वाल[3] में प्रयोग होने वाली 'अु – मेद लिपि' का प्रतिदर्श दिया गया है। दोनों प्रतिदर्शों के अर्थ एक ही हैं—'एक मनुष्य के दो पुत्र थे'।

---

1. Grierson, G. : Linguistic Survey of India, Vol. III, Part 1. page – 32. (through Rev. A. H. Francke)
2. Ibid : p. – 79. (through David Macdonald and Col. Waddell – 1899.)
3. Ibid : p. – 93.

अु -- मेद् लिपि

क	ख	ग क	ङ	च	छ	ज च	ञ	त	थ
द त	न	प	फ	ब प	म	च़[1]	छ़[2]	ज़[3]	व
ज्य[4]	स़[5]	अ-ऽ[6]	य	र	ल	श	स	ह	अ

= कि   = खु   = गे   = ङो

अंक

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
चिक्	अे	सुम्	शि	ङा	टू	दून्	ग्ये	गू	चु

फलक संख्या – २०५

अु -- चेन् लिपि

क	ख	ग	ङ	च	छ	ज	ञ	त	थ
ཀ་	ཁ་	ག་	ང་	ཅ་	ཆ་	ཇ་	ཉ་	ཏ་	ཐ་
द	न	प	फ	ब	म	च़[1]	छ़[2]	ज़[3]	व
ད་	ན་	པ་	ཕ་	བ་	མ་	ཙ་	ཚ་	ཛ་	ཝ་
ज्य[4]	स़[5]	अऽ[6]	य	र	ल	श	स	ह	अ
ཞ་	ཟ་	འ་	ཡ་	ར་	ལ་	ཤ་	ས་	ཧ་	ཨ་

कि	खु	गे	ङो
ཀི་	ཁུ་	གེ་	ངོ་

གཞན་ གྱི་ ཅྱ་ བ་ མི་ ཤེས་ ཀྱང་ དེ་ དང་

ज़्येन की च्या बा मी शे क्यां ते तङ्

དེ་ ཡི་ སྤྱོད་ པ་ སྐྱོང་

ते यी च्योत पा क्यों

फलक संख्या – २०६

पस्सेपा लिपि

क	ख	ग	ङ	च	छ
ज	ञ	त	थ	द	न
प	फ	ब	म	व़	छ़
ज़	व	ज़्य	ज़	अ़ ऽ	य
र	ल	श	स	ह	अ

फलक संख्या - २०७

बाल्टी लिपि

अ	ब़	प	ट	ग
ख़	च	छ	द	र
ज़	स	श	क	ल
म	न	न	ज	ख
त्स	अं	'ब्' की बारहखड़ी	ब	बा
बे	बी	बो	बू	बं

वाक्य दाएँ से बाएँ पढ़ा जायेगा

क ची बू री खो सी दा ख़ू

ख़ुदा सी खोरी बू चीक = ख़ुदा के केवल एक बेटा है

फलक संख्या – २०८

अु -- मेद एवं अु -- चेन के प्रतिदर्श

पठनीय सामग्री

Avery, John : The Beginnings of Writing in and Around Tibet (The American Antiquarian – Vol. VIII – 1886).

Bell, Sir Charles : The People of Tibet (1928).

Bushell, S. W. : The Early History of Tibet (Journal of Royal Asiatic Society – New Series – Vol. XIII – 1885).

Gould, B. and : Tibetan Word Book (Oxford University Press – 1943).

Grierson, : Linguistic Survey of India – Vol. III – part 1.

Konow, S. : Saka Studies (1932).

Laufer, B. : Origin of Tibetan Writing (Journal of the American Oriental Society – 1918).

Leumann, M. : Introduction to the Grammar of Tibetan.

Richardson, H. R,

,, ,, : Tibetan Sentences

,, ,, : Tibetan Syllables

Rockhill, W. W. : The land of Lamas (1891).

Senanayak, R. D. : Inside Story of Tibet (1967).

□

चीन

इतिहास : चीन देश की संस्कृति व सभ्यता बहुत प्राचीन है। इतिहास के लिए 'शू जिंग' (Shu Ching) नाम पौराणिक पुस्तक से पता लगता है कि २८०० ई० पू० में एक राजा या नेता हुआ जिसका नाम फ़ू शी (Fu Hsi)[1] था। इसने आरम्भ काल की प्रजा में कई सुधार किये। बा गुआ (Pa Kua) नाम से आठ शब्दों का निर्माण करके लिपि को जन्म दिया। यह तीन पंक्तियाँ थीं। त्रिपुण्ड के नाम से अथवा मिस्तिक ट्रिग्राम्स (Mystic Trigrams) के नाम से संसार में ज्ञात हुए। फ़ू शी ने विवाह संस्था को जन्म दिया। तत्पश्चात शेन नुङ्ग (Shen Nung) और हुआंग ती (Huang Ti)[2] दो शासक हुए। हुआंग ती ने चीन साम्राज्य का विस्तार किया, सुन्दर मकानों व नगरों का निर्माण किया, इतिहासकारों की एक समिति बनाई तथा रेशम का आविष्कार किया। इसके पश्चात् राजवंशों की स्थापना होने लगी।

शिया (Hsia) **वंश** : (२२०५ से १७६५ ई० पू० तक) का संस्थापक 'यू' (Yu) था। इस वंश का अन्तिम राजा चीय कुयेइ (Chieh Kuei) था। यह शासक बड़ा अत्याचारी था।

इन (Yin) **या शांग** (Shang) **वंश :** (१७६५ से ११२२ ई० पू० तक) के संस्थापक त अंग (T'ang) ने शिया वंश को समाप्त कर शांग वंश की नींव डाली। इसका अन्तिम शासक चाउ शीन (Chou Hsin) था। इस राजा के कुकर्मों के कारण एक क्रान्ति हुई और इस राजवंश का अन्त हो गया।

चाउ (Chao) **वंश** : (११२२ से २४९ ई० पू० तक) का संस्थापक वू वांग (Wu Wang) था। इन्हीं दिनों शासन का एक उच्च पदाधिकारी की – त्से (Ki – Tse) ने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया। वह चाउ वंश के शासन में नौकरी करना अच्छा नहीं समझता था। पद त्याग के साथ उसने अपनी जन्मभूमि भी त्याग दी और लगभग अपने पाँच सहस्र साथियों सहित पूर्व की ओर चल पड़ा और एक भूमि भाग को चुनकर निवास करने लगा। इस जगह प्रातःकाल बड़ा शान्तिमय प्रतीत होता था। इन्हीं कारणों से यह भूमि 'चुनी भूमि' (Chosen) अथवा कोरिया कहलाने लगी। इस देश पर की – त्से के वंशजों ने लगभग ९०० वर्ष राज्य किया।

चाउ वंश के काल में तीन महान् दार्शनिकों ने जन्म लिया जिन्होंने चीन के व्यक्तिगत जीवन पर बड़ा प्रभाव डाला। यह महान् व्यक्ति तीन धर्मों के प्रवर्तक भी थे जो निम्नलिखित हैं :—

---

1. इस राजा का काल तेरियन दि लाकपरी (Terrien de Lacouperie) के अनुसार २८५२ – २७८३ ई० पू० है तथा गाइल्स (Giles) के अनुसार २९५३ – २८३८ ई० पू० है।
2. इस राजा का काल २६९८ – २५९८ ई० पू० है।

चीन
ई॰पू॰ की ५वीं शती के पूर्व
१- त्साओ-कनफ़्यूशस का जन्म स्थान
२- शांगवंश के राज्य की राजधानी
३- चाओ वंश की राजधानी
वे
जुंग जाति
ई ती जाति
येन
चीन
चीन
हान
चू
वू
दीवार
हूण
जाति
चीन
की
बड़ी
कोरिया
वेई
हनाय
हान
हसी
साल्वीन
मीकांग
चीन (ई॰पू॰-१००)
सम्राट वूती ने राज्य का विस्तार किया (हानवंश)
सीमा

फलक संख्या – २१०
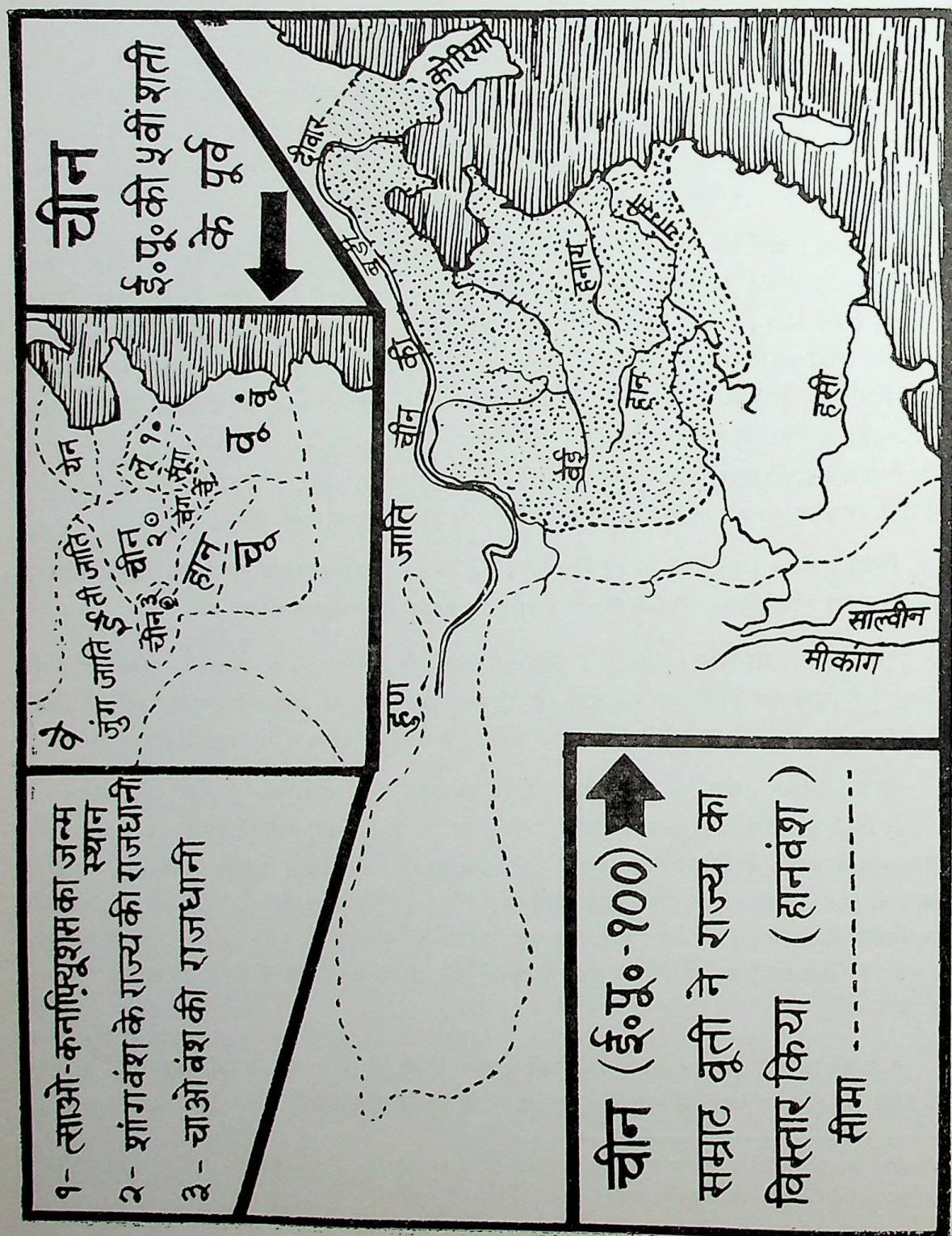
१. ली अर (Li Erh) का जन्म ६०४ ई० पू० में हुआ। इसका नाम बाद में लाउत्से (Lao – tze) पड़ा। इसने ताववाद चलाया। इस धर्म का मूल ग्रन्थ ताउ – ते – किंग (Tao[1] – Teh – King) है। लाउत्से की ५२४ ई० पू० में मृत्यु हो गयी।

२. चियु कुंग (Ch'iu K'ung) का जन्म ५५१ ई० पू० में हुआ। बाद में यह कुंग फ़ूत्से (K'ung Fu-Tze) अर्थात् दार्शनिक कुंग सम्बोधित किया जाने लगा और विश्व में कनफ़्यूशस (Confucius) के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसने कनफ़्यूशसवाद धर्म चलाया। इस धर्म का मूल ग्रन्थ 'ऐनालेक्ट्स और पाँच किंग' (Analects and Five Kings) है। इसने पूर्वज़ों की मान्यता तथा चारित्रिक उत्थान पर अधिक बल दिया। इस महान् व्यक्ति की मृत्यु ४७९ ई० पू० में हो गयी।

३. मेन्शियस (Mencius) का जन्म ३८५ ई० पू० में हुआ। इसने भी मानव स्वभाव को कल्याणकारी बनाने की ओर एक धर्म चलाया। इसकी मृत्यु २८९ ई० पू० में हो गयी।

चाउ वंश के अंतिम दिनों में छोटे छोटे अधीन राज्य स्वतंत्र होने लगे। स्वतंत्र होने के पश्चात् अपनी शक्ति बढ़ाने लगे तथा राजसिंहासनारूढ़ होने के लिए आपस में युद्ध भी करने लगे। इन्हीं में से एक राजा ची – न (Ch'in), चाउ वंश के अंतिम शासक को राजगद्दी से उतार कर स्वयं शासक बन गया।

चीं'न वंश : (२४९ से २०७ ई० पू० तक) का संस्थापक चीन हो गया। सम्भवतः इस देश का नाम 'चीन' इसी के नाम पर पड़ा। तीन शासकों ने तीन वर्ष राज्य किया। तत्पश्चात् २४६ ई० पू० में चौथा शासक आया जिसका नाम वांग चेंग (Wang Cheng) था। इसने गद्दी पर बैठने के पश्चात् अपना नाम शी हुआंग ती (Shih Huang Ti) रख लिया जिसके अर्थ हैं प्रथम सम्राट्। यह शासक अपने आप को बहुत बड़ा समझता था। चाहता था लोग अपने पूर्वजों को, पिछले राजाओं को तथा उनके कल्याणकारी कृत्यों को भूल जायें और केवल उसे ही जीवन में तथा मरणोपरांत याद रखें।

अभी तक चीन के सामाजिक व धार्मिक जीवन में पूर्वजों का मान – आदर एक अभिन्न अंग बन गया था। इसी बात पर कनफ़्यूशस के मतानुयायी अधिक प्रचार करते थे, परन्तु चीन का वर्तमान सम्राट् तो इसके विरुद्ध प्रचार करता था। पूर्वजों की पूजा रोकने के लिए उसने घोषणा की कि "जो मनुष्य पिछले राजाओं को व पूर्वजों को मान्यता देगा अथवा प्राचीन पुस्तकों को सुरक्षित रखेगा वह सम्राट् का अपमान करेगा तथा मृत्यु – दण्ड का भागी बनेगा।" इसी कारण उसने प्राचीन ग्रन्थों को जला डालने की आज्ञा निकलवा दी। केवल वैज्ञानिक विषयों की पुस्तकों को रखने का आदेश था। उसने सहस्रों ग्रन्थों को अग्नि के अर्पण कर दिया। कनफ्यूशसवादियों को मौत के घाट उतार दिया तथा उनसे चीन की बड़ी दीवार का निर्माण करवाया तथा बड़े अत्याचार किये।

उसने केवल बुरे ही नहीं कुछ अच्छे कार्य भी किये। इसने सामंतवाद का अन्त किया। सम्पूर्ण साम्राज्य को ३६ प्रांतों में विभाजित किया तथा प्रत्येक प्रान्त में एक प्रांतपति नियुक्त किया। साम्राज्य के विस्तार के लिए इसने अन्नाम तक आक्रमण किये। पूरे देश को एक सूत्र में बांध दिया। देश की सुरक्षा के लिए एक बड़ी दीवार का (२१५ ई० पू० में) निर्माण करवाया। इसकी लम्बाई लगभग १५०० मील, इसकी नीचान पर चौड़ाई २५ फ़ुट तथा ऊँचान पर १५ फुट तथा औसत ऊँचाई २० फुट थी। इस सम्राट की मृत्यु २१० ई० पू० में हो गई। तदुपरान्त सैनिक पदाधिकारी आपस में शासन की बागडोर सम्भालने के लिए झगड़ने लगे। इसी

1. ताउ=सत्य।

झगड़े में उस सम्राट का २०७ ई० पू० में वध कर दिया गया जो शू हुआंग ती के मरणोपरांत राजसिंहासनारूढ़ हुआ था। यही इस वंश का अन्तिम सम्राट था।

हान (Han) वंश : (२०६ ई० पू० से २२० ई० सन् तक) उपर्युक्त पदाधिकारियों के झगड़ों में एक वीर विजयी हुआ और हान वंश का संस्थापक हो गया। इसका नाम था लियू पांग (Liu Pang)। इस वंश का छठा सम्राट वू ती (Wu – Ti) था जिसने ५० वर्ष राज्य किया। इसने एशिया की अनेकों पर्यटन – शील तथा बर्बर जातियों को परास्त कर अपने अधीन कर लिया। इस सम्राट के काल में रोमन साम्राज्य से सम्बन्ध स्थापित हुए। थल के मार्ग से दोनों देशों में व्यापार होने लगा। इस व्यापार का मध्यस्थ देश पार्थिया था परन्तु जब पार्थिया के साथ रोम का युद्ध आरम्भ हो गया तब यह व्यापार स्थगित कर दिया गया।

इसी वंश के शासन काल में भारत से यहाँ बौद्ध धर्म आया और धर्म के साथ भारत की कला व दर्शन भी आये। इसी के शासन काल में यहाँ मुद्रण – कला का आरम्भ हुआ और १०५ ई० सन् में काग़ज़ का आविष्कार हुआ।

इस वंश के आरम्भिक शासकों ने छिन्न – भिन्न साम्राज्य को एक सूत्र में बाँधा परन्तु अन्तिम काल के शासक साम्राज्य की एकता को स्थिर न रख सके और वह २२१ ई० सन् में निम्नलिखित तीन भागों में विभाजित हो गया।

१. उत्तर में वेई (Wei) राज्य के नाम से स्थापित हुआ।
२. मध्य चीन में वू (Wu) का राज्य स्थापित हुआ।
३. दक्षिण में हान वंश का बचा राज्य शू (Shu) के राज्य के नाम से स्थापित हुआ। इस राज्य का प्रथम शासक लिन पेई (Lin Pei) था।

यह तीनों राज्य आपस में द्वेष रखते थे परन्तु फिर भी स्वास्थ्य रक्षा, गणित, खगोल शास्त्र, वनस्पति – शास्त्र तथा रसायनशास्त्र जैसे वैज्ञानिक विषयों पर विद्वानों ने अपने – अपने शोध व खोज कार्य सम्पन्न करके इन विषयों को व्यापकता प्रदान की। इन तीन वंशों का शासन २२१ से ५८८ ई० सन् तक स्थापित रहा।

५२६ ई० में भारत से एक बोद्धिधर्म नाम का एक बौद्ध भिक्षु आया जिसके साथ अन्य भिक्षु भी चीन आये। इस काल से पूर्व लगभग दस सहस्र भारत – वासी चीन पहुँच चुके थे।

सुई (Sui) वंश : (५८९ से ६१८ ई० सन् तक) इस वंश के शासकों ने एकता लाने का पर्याप्त प्रयत्न किया। इसके शासक उल्लेखनीय नहीं हैं।

तांग (T'ang) वंश : (६१८ से ९०६ ई० तक) का संस्थापक काओत्सु (Kao Tsu) था। इस सम्राट ने विभाजित चीन को फिर एक सूत्र में बांधा। अपने साम्राज्य का विस्तार किया। दक्षिण में अन्नाम व कम्बूचिया को अपने अधीन कर लिया। पश्चिम में कैस्पियन सागर तक आक्रमण करके अपने साम्राज्य में सम्मिलित किया। अपनी राजधानी सी – एन – फ़ू (Si – an – Fu) को बनाया।

चीन में जनगणना कराने की पद्धति बहुत प्राचीन है। जिसके अनुसार ६७५ ई० में जनगणना की गई। तब चीन की जनसंख्या लगभग १० करोड़ थी (जो अब बढ़कर १०० करोड़ के लगभग हो गई है)। यहाँ इसाई धर्म के पूर्व इस्लाम आया। मुसलमानों ने सातवीं शताब्दी में कैण्टन में एक मस्जिद का निर्माण किया। अरबों ने चीनियों से काग़ज़ बनाना सीखा और योरोप के लोगों ने अरबों से सीखा। इसी वंश के शासनकाल में बारूद का भी आविष्कार चीन में हुआ।

चीन -- (७५० ई० सन्)

७वीं श० -- तांग वंश का साम्राज्य

फलक संख्या – २११
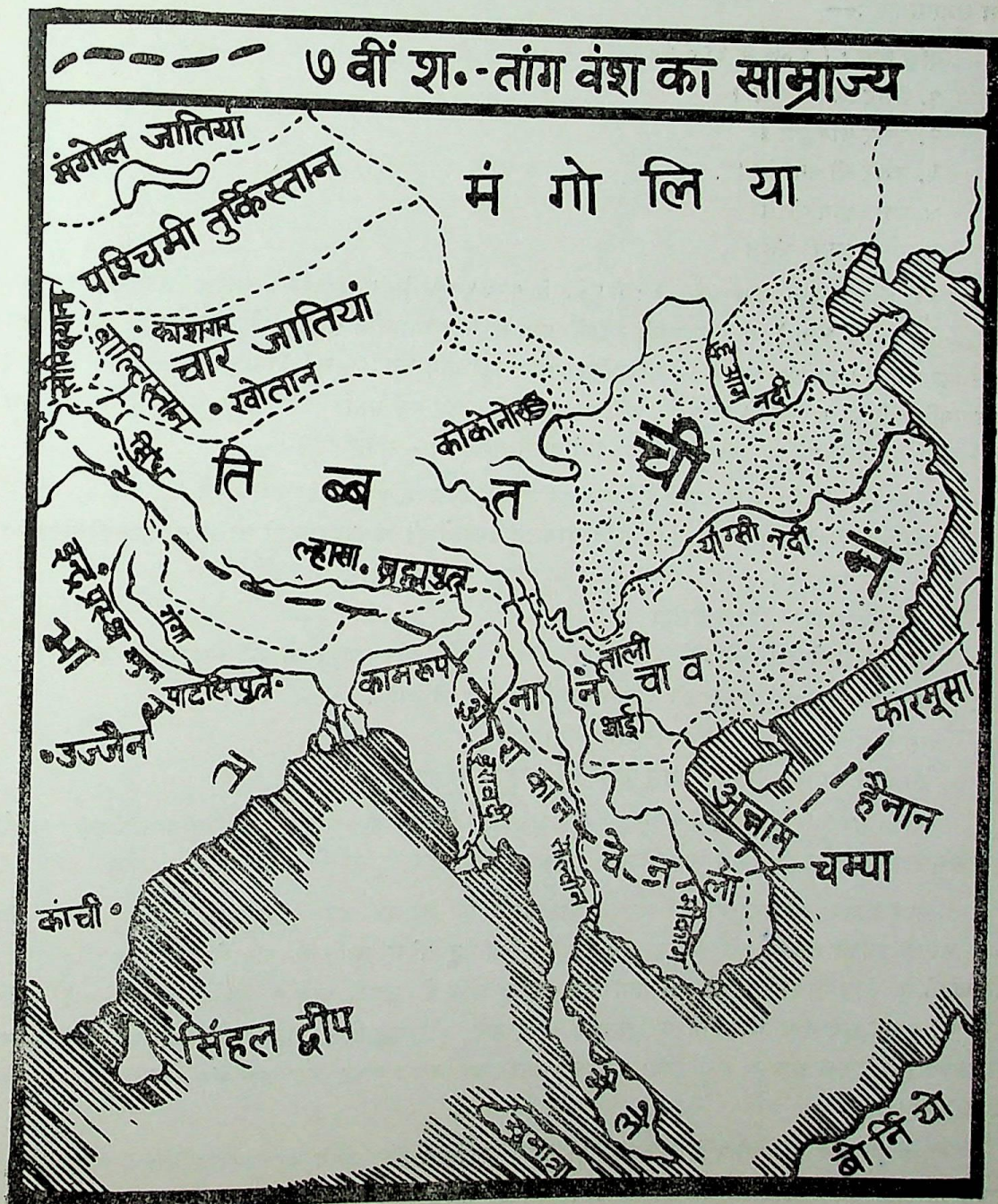
जैसे जैसे यहाँ के शासक विलासी होते गये वैसे वसे राज्वंश में तथा प्रजा में चरित्रहीनता बढ़ने लगी। इसी के साथ कर अधिक वसूल किये जाने लगे। तत्कालीन शासक के विरुद्ध विद्रोह हुआ। तदनन्तर एक के बाद एक वंश आया परन्तु स्थिरता के साथ कोई शासन न कर सका। इस प्रकार निम्नलिखित पाँच वंश आये तथा समाप्त हुए :—

पाँच वंश : (९०७ से ९६० ई० तक)

१. उत्तर लियांग वंश।
२. उत्तर तांग वंश।
३. उत्तर ची इन वंश।
४. उत्तर हान वंश।
५. उत्तर चाओ वंश।

सूंग वंश (Sung Dynasty) : (९६० से १२७९ तक) इस वंश का संस्थापक चाउ कुआंग – इन (Chao K'uang Yin) था। ग्यारहवीं श० में प्रजा में बड़ा असन्तोष फैला। फिर क्रान्ति हुई तथा उसका दमन किया गया। तब एक शासन का तत्कालीन प्रधानमन्त्री वांग अन – शर (Wang An – Shih) था जो बड़ा प्रगतिवादी था। उसने भविष्य में क्रांतियाँ रोकने के लिए कई सुधार किये ताकि जनता में संतोष बना रहे। उसने परिस्थितियों का विश्लेषण करके निम्नलिखित शासन – सुधार किये :—

१. कृषक अपना भूमि – कर मुद्रा के स्थान पर अपनी उत्पादक वस्तुओं द्वारा दे सकते हैं।
२. जब कृषकों को उत्पादन के लिए कृषि सम्बन्धी वस्तुओं की आवश्यकता हो तो सरकार उनकी सहायता करे और ऋण दे।
३. अनाज का क्रय – विक्रय शासन द्वारा हो।
४. पदाधिकारियों द्वारा ली जाने वाली बेगार बन्द की जाये और मजदूर को पूरी मजदूरी दी जाये।
५. आवश्यकता पड़ने पर कर की वृद्धि धनवानों के लिए की जाये।
६. एक देश – रक्षक – सेना का निर्माण किया जाये।
   इस सेना का नाम 'बाउ जिया (Pao Chia)' रखा जाये।

तात्कालिक परिस्थितियों के लिए यह सुधार औषधि के रूप में काम आये परन्तु प्रजा तथा राजा में यह विचार प्रचलित न हो सके। केवल देश – रक्षक – सेना स्थिर रह गई।

मध्य एशिया की तथा मंगोलों की कई जातियों ने इस देश पर अपने आक्रमण आरम्भ कर दिये। सूंग वंशी शासक इनको रोक न सके और उन्होंने देश की रक्षा हेतु 'किन' जाति के तातारों को उत्तर से बुलाया। इन लोगों ने आक्रमणकारियों को तो भगा दिया परन्तु चीन के उत्तरी भाग में बस गये। शनैः शनैः अपनी सत्ता को बढ़ाने लगे तथा राजनीति में हस्तक्षेप करने लगे और एक दिन आया कि उन्होंने उत्तर में अपना राज्य स्थापित करना आरम्भ कर दिया। 'किन' जाति का राज्य बढता गया और सूंग वंश का राज्य संकीर्ण होता गया।

अब सूंग वंश के शासन में दो चीन हो गये। उत्तर में किन जाति का तथा दक्षिण में सूंग वंश का राज्य स्थापित रहा। यह व्यवस्था ११२७ से १२७९ ई० तक चलती रही।

१२१० ई० में मंगोल जाति के लोगों ने अपने एक बीर तथा विश्व विख्यात नेता तिमूचिन के साथ

चीन १३वीं श० के अन्त में

फलक संख्या – २१२
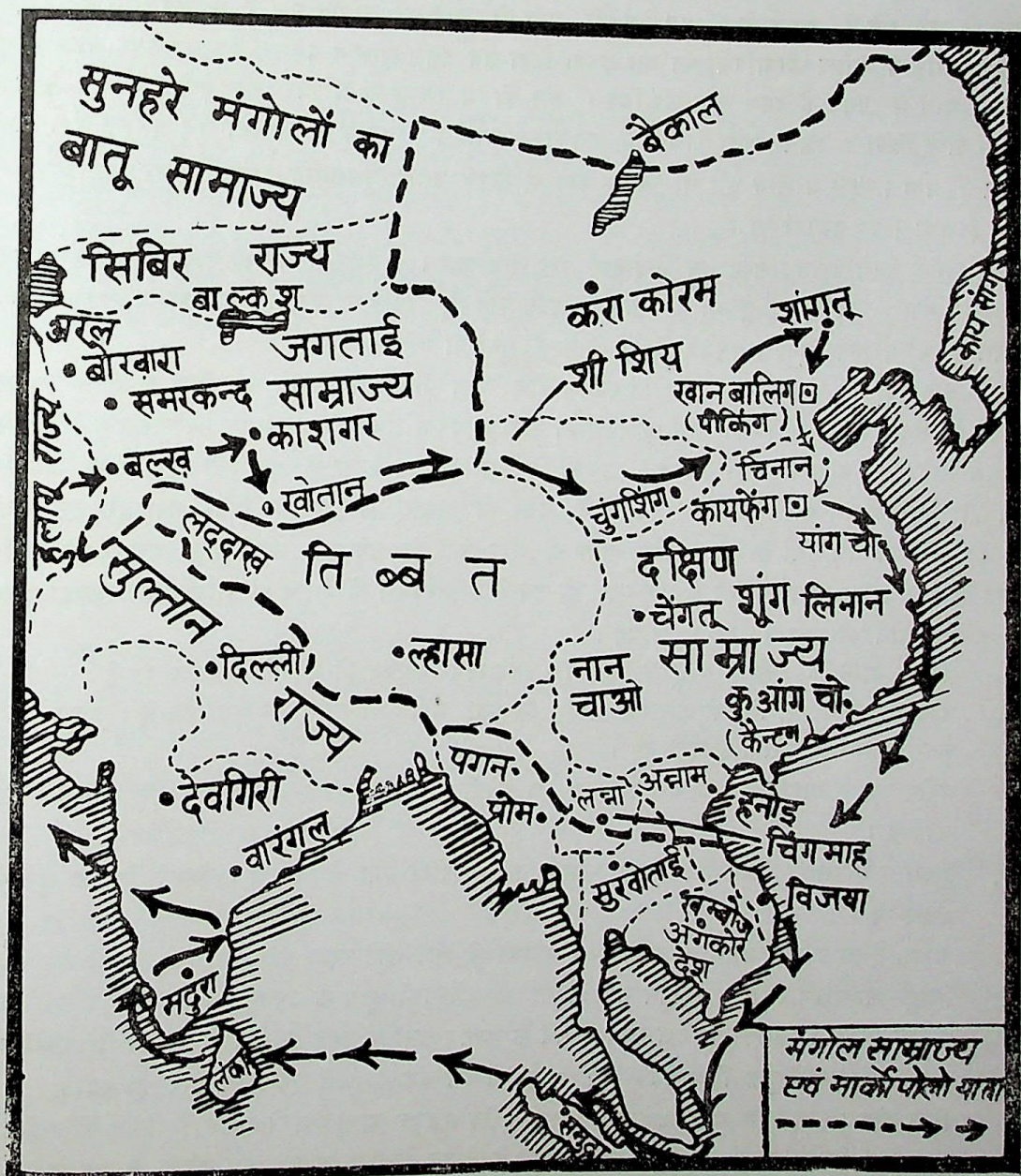
चीन पर आक्रमण कर दिया। पहले उसने उत्तरी चीन के किन वंशी शासक को समाप्त किया। तत्पश्चात् दक्षिणी चीन के सूंग वंशी शासक को परास्त किया। इस नेता का नाम बाद में चंगेज़ ख़ान पड़ा।

यूआन (Yuan) वंश : (१२७९ से १३६८ ई० तक) का दूसरा नाम था मंगोल वंश। चंगेज़ ख़ान का जन्म ११५५ ई० में हुआ। उसके पिता का नाम यसूगी बागातुर (अर्थात् बहादुर) था और ख़ान के या कागन के अर्थ होते हैं महाराजा। ५१ वर्ष की आयु हो जाने पर अर्थात् १२०६ में यह ख़ान बना। जब फ़ारस के शाह ने मंगोल व्यापारियों का वध करवा दिया तब चंगेज़ ख़ान ने १२१९ में फ़ारस पर आक्रमण कर दिया। मार्ग में नगर के नगर नष्ट कर दिये। रूस को पराजित किया और मध्य यूरोप के कई देशों को नष्ट – भ्रष्ट किया। उसने अपनी राजधानी कराकोरम बनाई। ७२ वर्ष की अवस्था में (१२२७ में) उसका देहान्त हो गया। बहुत से लोग अब भी 'ख़ान' शब्द के कारण उसको मुसलमान समझते हैं परन्तु वह आकाश – देवता (शमा) का पुजारी था।

उसके मरणोपरांत उसका पुत्र ओगोताइ महा ख़ान बना। १२५२ में इसकी मृत्यु के पश्चात् मंगू ख़ान महा ख़ान बना। इसके भाई हुलागू ने बग़दाद, मध्य एशिया, यूरोप व रूस पर नरसंहारक आक्रमण किये। तिब्बत को भी परास्त किया। १२३९ में मंगू ख़ान की मृत्यु हो गई।

अब चीन का प्रांतपति कुबलई ख़ान स्वतंत्र होकर महा ख़ान बना। उसने कराकोरम से अपनी राजधानी हटाकर पीकिंग बनाई तथा इसका नाम ख़ानबालिग रखा। परन्तु अब ख़ान (अर्थात् मंगोलसम्राट्) चीनियों के साथ रहते रहते बहुत सभ्य हो गये थे। उनकी निर्दयता पर्याप्त मात्रा में मर चुकी थी। इसने अन्नाम व बर्मा को अपने अधीन कर लिया और १२७९ में चीन का सम्राट् घोषित कर दिया गया और इस मंगोल वंश का संस्थापक बन गया। अब मंगोल जाति के लोग धनी हो गये थे। उनके पास काम करने के लिए ग़ुलाम थे। अब वह शांत स्वभाव के विलासी हो गये थे। आक्रमण के स्थान पर आराम को अच्छा समझते थे। कुबलई ख़ान की मृत्यु १२९२ में हो गई।

मंगोल जाति के, एशिया व यूरोप में, पाँच साम्राज्य स्थापित हो गये जो निम्नलिखित हैं :—

१. चीन का साम्राज्य, जिसके अन्तर्गत चीन, तिब्बत, मंगोलिया तथा मंचूरिया देश थे। इसके शासक कुबलई ख़ान के उत्तराधिकारी हुए।
२. यूरोप का साम्राज्य जिसके अन्तर्गत रूस व हंगेरी देश थे। इसक शासक सुनहरे मंगोल जाति के लोग थे।
३. इलख़ान साम्राज्य जिसके अन्तर्गत पर्शिया व मेसोपोटामिया के देश थे। इसके शासक हुलागू क वंशज थे।
४. ज़गाताई साम्राज्य जिसके अन्तर्गत मध्य एशिया के छोटे छोटे राज्य थे।
५. सिबिर साम्राज्य जिसक अन्तर्गत सायबेरिया की हरियाली भूमि के उपनगर थे।

मंगोल जाति के अनेकों देशों से सम्पर्क होने के कारण सेना में बहुत से विदेशी आ गये थे। उनमें बहुत से अच्छे अच्छे पदों पर नियुक्त किये गये। १३६८ ई० में इस वंश का अंत एक क्रांति द्वारा हो गया।

मिंग वंश : (१३६८ से १६४४ तक) एक ग़रीब मज़दूर का पुत्र मंगोल वंश के विरुद्ध की गई क्रान्ति का नेता बन गया जिसने उनको चीन की बड़ी दीवार के बाहर निकाल दिया। इस मज़दूर के पुत्र का नाम था जू युयान जांग (Chu Yuan Chang) जो अपनी पदवी के कारण हुंग वू (Hung Wu) के नाम से विख्यात हुआ। यही मिंग वंश का संस्थापक तथा प्रथम सम्राट् बना जिसने तीस वर्ष तक शासन किया। मिंग के अर्थ हैं 'प्रकाशमान्'।

एशिया के पूर्व तथा दक्षिण – पूर्व के देश, चीन का ज्येष्ठ भ्राता के रूप में आदर करते थे। जापान से जावा तक चीन की संस्कृति तथा भाषा व कला ने प्रभावित किया। इस काल में युद्ध नहीं हुए। देश का समय व धन देश के कल्याण के लिए प्रयोग होने लगा। कला व शिल्प की प्रगति होने लगी। ऊँचे ऊँचे कलापूर्ण भवनों का निर्माण होने लगा। इस पन्द्रहवीं श० में चीन योरोप से धन में, कला – कौशल में, उद्योग में तथा संस्कृति में बहुत ऊँचे शिखर पर था। इस वंश के एक शासक युंग लो (Yung Lo) ने अपनी राजधानी नानकिंग से पीकिंग बनाई। कागज़ की मुद्रा का (Paper Currency) का प्रचलन आरम्भ किया।

इसी काल की १५१६ में पुर्तगालियों का प्रथम जलपोत योरोप से चीन पहुँचा। आरम्भ में पुर्तगालियों ने चीन के निवासियों की ओर बड़ी सदभावना दिखाई तथा आदरपूर्ण व्यवहार किया। चीन की सरकार से अपने व्यापार के लिए कोठियाँ बनवाने की आज्ञा प्राप्त कर ली। शनैः शनैः इनके व्यवहार में अन्तर आने लगा। जब इस बात की सूचना चीन सरकार को मिली तो उसने सख्ती से काम लिया और उनको अधिक पैर न पसारने की आज्ञा दी। १५५७ में उनको केवल एक छोटे से द्वीप मकाओ (Macau) पर निवास तथा व्यापार करने की आज्ञा प्रदान कर दी जहाँ वह आज तक जमे हैं।

अब पुर्तगाली व चीनी सरकार में अच्छी मित्रता हो गई। योरोप के कई व्यापारी देश यहाँ आये, अपने पैर जमाना चाहे परन्तु पुर्तगाली अधिकारियो ने चीन की सरकार के ऐसे कान भरे कि उनको व्यापार करने की अनुमति न मिल सकी।

जैसा कि बहुधा होता चला आया कि वंश के शासन के कुछ समय बाद शासक विलासी तथा राज्य की ओर से उदासीन होते जाते हैं जिसके कारण राज्य – पदाधिकारी लोभी तथा घूसख़ोर होते जाते हैं और उसी के विरुद्ध क्रान्तियाँ होती जाती हैं। उसी प्रकार १६४४ में इस वंश का अन्त भी एक क्रान्ति द्वारा हुआ।

मंचू (Manchu) वंश : (१६४४ से १९११ तक) का आगमन चीन के उत्तर – पूर्वी भाग मंचूरिया से हुआ। मंचू लोगों ने १६४४ में एक विद्रोह खड़ा कर दिया तथा कुछ भाग पर अपना अधिकार भी कर लिया। इसी विद्रोह के एक नेता ली द्जू चेंग (Li Tzu – Ch'eng) ने चीन के सम्राट् होने की घोषणा कर दी। मिंग वंश के अन्तिम शासक ने आत्महत्या कर ली।

यह सब कैसे हो गया। मंचूओं ने जब विद्रोह किया तव मिंग वंश के शासक ने अपने एक सैनिक उच्च पदाधिकारी को, जिसका नाम वू सान कुई (Wu San – Kwei) था, विद्रोह दमन करने के लिए भेजा परन्तु वह उनसे मिल गया और देश व तत्कालीन शासन के साथ विश्वासघात किया। इसी सैनिक के कारण लीत्सू चेंग पीकिंग का सम्राट् बन गया जिसने इस सैनिक को दक्षिणी चीन का वायसराय बना दिया। इस सब परिवर्तन में नरसंहार नाममात्र को हुआ। युद्ध भी नहीं हुआ केवल शासन के अधिकारी विद्रोहियों द्वारा मिला लिये गये।

१६५० से मंचुओं ने अपने पैर अच्छी तरह जमा लिये। विद्रोही नेता ली प्रथम सम्राट् तथा इस वंश का संस्थापक बना। इस वंश को चींग (Ch'ing) वंश के नाम से भी सम्वोधित करते हैं।

इस वंश के एक शासक कांग शी (K'ang Hsi) ने, जिसने १६६१ से १७२२ तक राज्य किया, चीनी शब्दों का कोष तैयार करवाया जिसमें लगभग ४४ हजार शब्द थे। दूसरे इसने एक विश्वकोष चित्रों सहित लिखवाया तथा तीसरा महान् कार्य चीनी साहित्य का एकत्रित करना था। इन तीन कार्यों के कारण इस शासक का चीन के इतिहास में नाम अमर हो गया। इतना ही नहीं इसने अंग्रेजों पर तथा उसके व्यापार

पर कड़ी दृष्टि रखी और ईसाई धर्म फैलने के साथ राजनीति को दूषित करने से रोका। चाय का व्यापार इसी के काल से आरम्भ हुआ।

१७३६ से १७९६ तक कांग – ही के पौत्र जियेन लुंग (Chien Lung) ने चीन पर शासन किया। इसने दक्षिण – पूर्व के देशों को अपने अधीन कर लिया। देशों के अधीन करने का तथा उनके स्वतन्त्र होने का क्रम शताब्दियों से चला आ रहा है। इसी शासक के शासन काल में इंगलैण्ड के राजा जॉर्ज तृतीय (George III) ने १७९२ में अपने एक प्रतिनिधि मण्डल को चीन के साथ व्यापार करने की अन्य सुविधायें प्राप्त करने के लिए बहुत से उपहारों के साथ भेजा परन्तु चेन लुंग ने और अधिक सुविधायें देने से साफ़ मना कर दिया। अब अंग्रेज़ व्यापारियों ने चुपके चुपके छिप कर अफ़ीम का व्यापार बढ़ाया।

यह व्यापार दिन पर दिन बढ़ता ही गया। डच्छ व्यापारी अफ़ीम को तम्बाकू में मिला कर बेचा करते थे। १८०० ई० में चीन सरकार ने इस व्यापार को समाप्त करने के लिए एक आदेश निकाला कि चीन की भूमि पर अफ़ीम न आने पाये परन्तु व्यापारियों ने चीनी पदाधिकारियों की जेबें गर्म कीं और अफ़ीम का व्यापार पर्दे के पीछे से होने लगा।

१८३४ तक तो यह व्यापार कुछ कम रहा क्योंकि एक ईस्ट इण्डिया कम्पनी ही को व्यापार करने का अधिकार था परन्तु इसके पश्चात् ब्रिटिश सरकार ने अपने देश के अन्य व्यापारियों को भी व्यापार करने की अनुमति प्रदान कर दी जिसके कारण इस व्यापार में बहुत अधिक वृद्धि हुई। जब चीन की सरकार ने देख लिया कि उसके आदेश का पालन ऊपर से होता है तथा उल्लंघन नीचे से होता है तब उसने अपना एक विश्वासपात्र उच्च पदाधिकारी इसकी रोकथाम के लिए भेजा। कैण्टन में इसने अंग्रेज़ व्यापारियों के साथ बड़ा कड़ा व्यवहार किया। उनकी व्यापारिक कोठियों से छिपी हुई अफ़ीम के २० हज़ार बक्से नष्ट करवा दिये जिससे करोड़ों रुपयों की हानि हुई। ब्रिटिश सरकार इस हानि को सहन न कर सकी और उसने चीन की सरकार पर मानहानि का दोष लगा कर १८४० में आक्रमण कर दिया। चीनी अंग्रेज़ी तोपों एवं नौसेना के गोलों के सामने ठहर न सके। चीन को सन्धि करने के लिए बाध्य होना पड़ा।

यह सन्धि नानकिंग में १८४२ में सम्पन्न हुई। ऐसी सन्धियों में विजेता सदैव अपने पक्ष की शर्तें अधिक रखता है और वैसा ही इस सन्धि में भी हुआ। २० हज़ार अफ़ीम के बक्सों को नष्ट करने के तथा युद्ध की क्षति के बदले में चीन सरकार से बहुत सा धन तथा हांगकांग के द्वीप पर अपना अधिकार प्राप्त कर लिया। अब तो चीन में ईसाई धर्म के प्रचारक भी आने लगे। उनको किसी प्रकार का दण्ड देने का अधिकार चीन के न्यायालयों को नहीं था चाहे वह किसी प्रकार का दण्डनीय कार्य करें। इस प्रकार दिन पर दिन चीन की सरकार शक्तिहीन होती गई तथा विदेश के व्यापारी शक्तिमान् होते गये।

१८५० में एक महान् क्रान्ति हुई जिसको हुंग शीन जुआन (Hung Hsin Chuan) ने चलाया। इसमें लगभग दो करोड़ मनुष्य मारे गये। इधर तीन अन्य विदेशी शक्तियाँ इस सन्धि में सम्मिलित हो गईं जिनका नाम था अमरीका, फ्रांस तथा रूस। अब इन शक्तियों ने एक नई सन्धि करने के लिए चीन सरकार को बाध्य किया। विदेशी मण्डल बुलाये गये और उनको अमुक मार्ग से आने को कहा गया परन्तु विजेता होने के घमण्ड में दूसरे मार्ग से आये। चीनी सैनिकों ने गोली चला दी जिसके फलस्वरूप विदेशी सैनिकों ने पीकिंग नगर को खूब लूटा। १८६० में सन्धिपत्र पर सबके हस्ताक्षर हो गये।

१८६४ में एक चीनी प्रांत – पति ने क्रान्ति कर दी जिसका नाम ली हुअंग चांग (Li Huang ch'ang) था। इस विद्रोह को सरकार समाप्त नहीं कर पायी कि दूसरा विद्रोह चीनी अफ़सरों के विरुद्ध

चीन १६०० ई० में

फलक संख्या – २१४
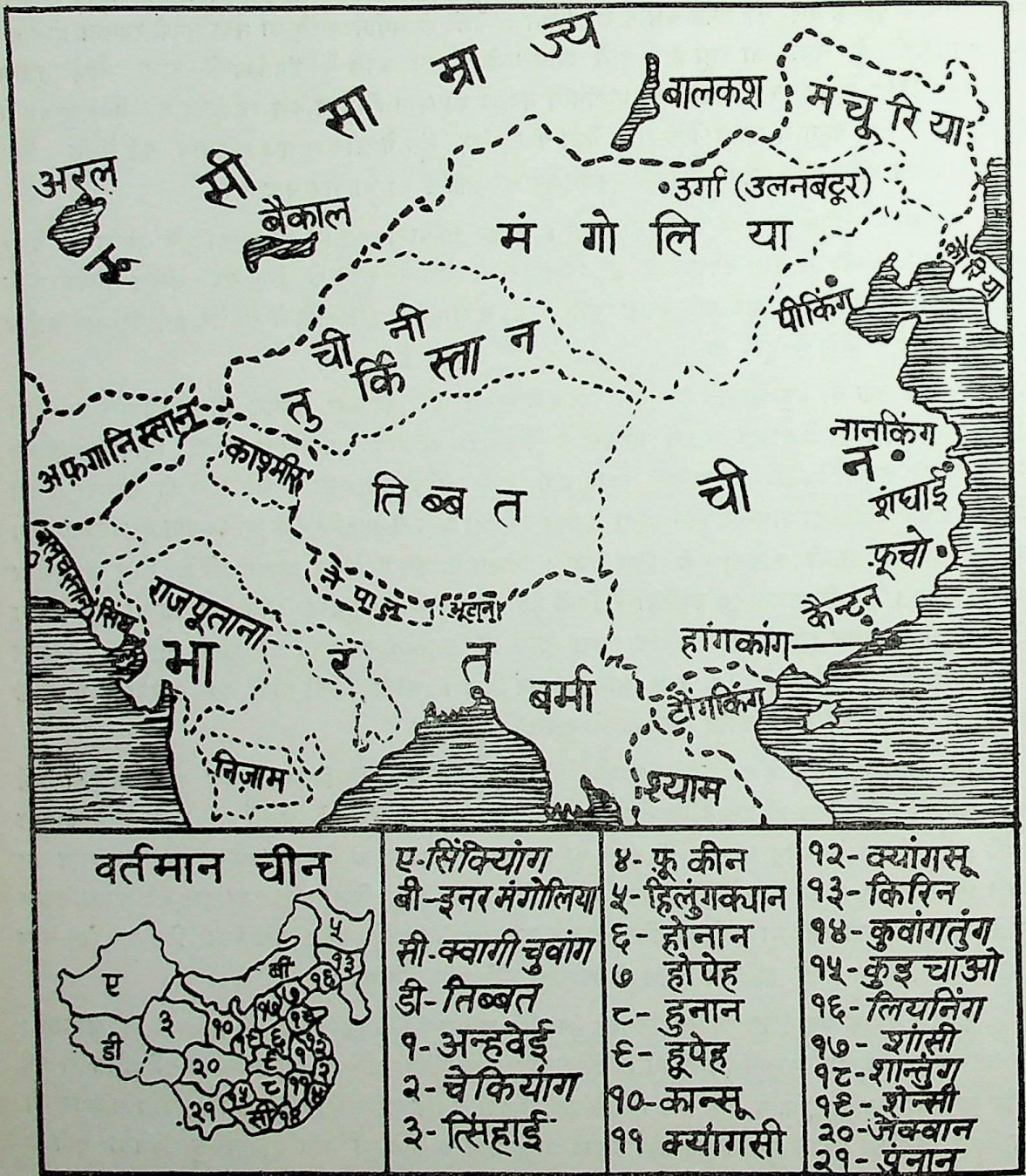
मध्य एशिया के मुसलमानों ने कर दिया। १८८५ में चीन का युद्ध फ्रांस से हो गया। चीन पराजित नहीं हुआ। १८८६ में चीन ने बर्मा ले लिया। इन दिनों चीन में एक महारानी द्जू शी (Tzu Hsi) शासन करती थी। १८९४ में डा० सनयात सेन (Dr. Sunyat Sen) ने चाइना रिवाइवल सोसायटी (China Revival Society) को जन्म दिया। १९०८ में महारानी के मरणोपरांत एक शिशु सम्राट् बना।

१९११ में डा० सेन की सोसायटी का नाम परिवर्तित करके पीपिल्स नेशनल पार्टी (Peoples Nati - onal Party) रख दिया गया। अक्टूबर १९११ में मध्य तथा दक्षिण चीन में क्रान्ति हो गई। पहली जनवरी १९१२ को स्वतंत्र प्रांतों में लोकतंत्र की घोषणा हो गई। नानकिंग राजधानी बनी तथा डा० सेन उसके राष्ट्रपति बने।

१२ फरवरी १९१२ को मंचु वंश के अंतिम शासक ने राजगद्दी को त्याग दिया। उत्तर में युयान (Yuan) ने अधिकार किया। इधर चीन - जापान युद्ध हुआ जो वर्षों चलता रहा। दूसरे महायुद्ध के पश्चात् चोनी साम्यवादियों का अधिकार बढ़ता गया और एक दिन १९४९ को राष्ट्रीय सरकार के राष्ट्रपति चियांग काइ शेक (Chiang K'ai - Shek) को फ़ारमूसा (तैवान) के द्वीप में जाकर अपना डेरा डालना पड़ा। अब दो चीन सरकारें बन गईं। एक राष्ट्रीय चीन सरकार तैवान में तथा दूसरी साम्यवादी सरकार चीन की मुख्य भूमि पर। साम्यवादी सरकार को विश्व के बहुत से देशों ने मान्यता प्रदान नहीं की। जब अमरीका ने मान्यता प्रदान की तब सारे देश इसको मानने लगे। १९७१ में यह संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य बन गया और तैवान को संघ से निष्कासित करा दिया गया।

चीन की लेखन कला

परिचय : संसार के किसी देश की भाषा (बोली व लिपि) इतनी जटिल नहीं है जितनी चान की। यह भी बड़े आश्चर्य की बात है कि चीन ने अपनी सांकेतिक लिपि के लगभग ४०,००० एकाक्षरी (Monosyllabic) और संयुक्त (Compound) शब्दों द्वारा इतनी वैज्ञानिक व तकनीकी प्रगति कर ली कि आज वह रूस व अमरीका जैसे प्रगतिशील देशों से प्रतियोगिता करने को तत्पर है।

इस भाषा में स्वर (Vowels), उपसर्ग (Prefixes) तथा शब्दों के अन्त में प्रत्यय (Suffixes) जोड़ने का प्रयोग नहीं होता था। एक शब्द क्रिया, संज्ञा अथवा विशेषण कुछ भी हो सकता था परन्तु उसका मूलरूप परिवर्तित नहीं होता था। अब व्याकरण का प्रयोग होने लगा है।

प्रचलित चीनी भाषा में जो आज विदेशों में सिखाई जाती है, दो प्रकार का मिश्रण है :—

१. श्रवणीय चिह्नों की पद्धति (System of Auditory Symbols)।

२. दृष्टिक चिह्नों की पद्धति (System of Visual Symbols) जिसमें रेखाओं के सम्मिलन से लिपि प्रयोगात्मक बनाई जाती है (Stroke Combinations - Called Characters)।

प्रोफ़ेसर ली[1] मण्डारिन (Mandarin) को पीकिंग (आधुनिक बीजिंग) भाषा सम्बोधित करते हैं। ५०० वर्षों से इसका समाज में उच्च - स्तर रहा है। इसी कारण इसका नाम गुआन ह्वाह (Kuan Hua) अर्थात् 'अफ़सरों की भाषा' पड़ गया परन्तु पश्चिमी देश - वासी इसको मण्डारिन पुकारते हैं। प्रो० ली के अनुसार चीन में आठ मुख्य भाषायें प्रचलित हैं जिनका नाम निम्नलिखित है :—

1. फ़ांगुई ली (Fang - Kuei Li) हवाई (Hawaii - U. S. A.) विश्व विद्यालय के १९३७ में प्रोफ़ेसर थे।

१. उत्तरी मण्डारिन   ५. कान – हक्का
२. पूर्वी मण्डारिन   ६. मीन
३. दक्षिणी मण्डारिन   ७. कैन्टोनीज़
४. वू   ८. हुई यांग

१९२३ में पीकिंग भाषा को राष्ट्रीय भाषा बनाने का एक आन्दोलन चला जिसमें ध्वन्यात्मक वर्णों का आविष्कार किया गया। १९१८ में चीन की सरकार ने इसको मान्यता प्रदान कर दी। छः दशक के पश्चात् अधिकांश चीनी तथा तैवान एवं सिंगापुर निवासी पीकिंग – भाषा का प्रयोग करने लगे और इस भाषा का नाम 'पू – टंग – ह्वा (p'u – T'ung – hua)' अर्थात् 'साधारण भाषा (Common Language)' पड़ गया।

माओ के शासन – काल में अनेक शब्दों को जो पूंजीवादी समाज में प्रचलित थे, परिवर्तित कर दिया गया।

चीनी व्याकरण की एक झलक : यहाँ की व्याकरण[1] अन्य भाषाओं के प्रकार से प्रयोग नहीं की जाती। उसके कुछ ही उदाहरण निम्नलिखित पंक्तियों में दिये गये हैं :—

संज्ञा (Noun) : इसमें शब्दों को स्त्री – लिंग या पुल्लिग नहीं माना जाता जिस प्रकार हिन्दी भाषा में प्रयोगात्मक है। इसमें स्त्री और पुरुष के नामों के पूर्व शब्दों का प्रयोग कर वाक्य बनाया जाता है। 'नान (Nan)' शब्द का प्रयोग पुरुष के नाम के पूर्व तथा 'न्यु (Nü)' का प्रयोग स्त्री के नाम के पूर्व किया जाता है।

पशुओं में स्त्रीलिंग – पुल्लिग के लिए पृथक् शब्दों का प्रयोग किया जाता है। नर के नाम के पूर्व 'मू (Mu)' तथा मादा – पशु के नाम के पूर्व 'पीन (P'in)' प्रयोग किया जाता है।

एक – वचन बहु – वचन संज्ञा के लिए अधिकांश इस प्रकार प्रयोग किया जाता है, जैसे, 'नान रन मन (Nan jên mên)' अर्थात् अनेक पुरुष। 'नीउ रन मन (Nü jên mên)' अर्थात् अनेक स्त्रियाँ।

अभिपद (Article) : 'ए या ऐन (a or an)' को 'ई (i) = एक' के द्वारा व्यक्त करते हैं, जैसे 'ई गो रन (I Ko jên)' अर्थात् 'एक मनुष्य'।

विशेषण (Adjective) : 'यह या वह' को 'ज गो (Chê Ko) = यह (This)' तथा 'न गो (Na Ko) = वह (That)' बहुबचन बनाने के लिए एक शब्द 'शीय (hsieh)' जोड़ देते हैं, जैसे, 'ज शीय रन (Chê hsieh jên) = यह मनुष्य (These men)। 'ना शीय रन (Na hsieh jên) = वह मनुष्य (Those men)

व्यक्ति – वाचक सर्वनाम (Personal Pronoun) : 'ह्वो (Wo)' = मैं, मुझे; 'नी (Ni)' = तुम; 'टा (T'a)' = वह (he, she, it)। बहुवचन बनाने के लिए 'मन (mên)' शब्द का प्रयोग किया जाता है, जैसे, 'ह्वो मन (Wo – mên) = हम (we), हमको (Us); 'नी मन (Ni – mên)' = तुम; 'टा मन (Ta – Mên)' = वे, उनको (They, them)।

प्रश्न वाचक सर्वनाम (Interrogative Pronouns) : 'श्वे (Shui)' = कौन है ?; 'श्वे डी (Shui ti)' = किसका है ? इस प्रकार 'श्वे (Shui)' शब्द जोड़ने से प्रश्नवाचक बन जाता है; जैसे, 'ना गो रन शर

1. Williamson, H. R. : Teach Yourself Books – Chinese (1972), p. – 425.

श्वे (Na ko jên shih shui)' = कौन है ? (Who is that ?) । 'ना शीय डुंग शी शर श्वे डी (Na hsieh tung hsi shih shui ti)' = वह किसकी वस्तुएँ हैं ? (Whose are those things ?) ।

क्रिया (Verb) : क्रिया के तीन काल :—भूत काल (Past Tense) 'व्वो लाई गुओ (Wo lai kuo)' = मैं आया (I came), मैं आ गया (I have come).

वर्तमान (Present Tense : ' व्वो लाई (Wo lai)' = मैं आ गया; मैं आ रहा हूँ ।

भविष्य (Future Tense) : क्रिया के पूर्व 'जियंग (Chiang)'; 'याओ (yao)'; 'ज्यू (Chiu) आदि शब्द जोड़ देने से बन जाता है ।

'श्व ह्वा ज्यू लाई (Shuo hua chiu lai) = जैसे ही आप बोले, वह आता है; 'टा ली को ज्यू लाई (T'a li k'o chiu lai) वह तुरन्त आयेगा ।

चीन में साक्षरता : इस देश में साक्षरता का अभाव आरम्भ से ही रहा । उसके दो मुख्य कारण थे – 'भाषा' एवं 'लिपि' । 'भाषा' में फ़ोनेटिक्स (Phonetics – प्रत्येक ध्वनि के लिए प्रत्येक अक्षर) नहीं थे और इसके स्थान पर थी टोन – पद्धति (Tone – System) जो एक स्थान से दूसरे स्थान में अन्तर रखती थी । दूसरा कारण था 'लिपि', जो संकेतात्मक न रह कर रेखात्मक (Written by Strokes) बन गयी थी ।

इन दो कारणों से केवल कुछ धनवान् – जिनके पास अभ्यास के लिए अधिक समय तथा धन होता था, इसको सीख सकते थे । यह धनवान् इसी बात के इच्छुक भी थे कि अधिक जनता साक्षर न हो जाये नहीं तो उस पर सर्वाधिकार जमाना कठिन होगा ।

चीन निवासी जिन्होंने १८०० वर्ष पूर्व काग़ज़ का आविष्कार[1] लकड़ी के गूदे से किया था । वैसे इसके पूर्व मिस्र में काग़ज़ था परन्तु वह रीड (Reed – सरकण्डा) से निकले गूदे से बनता था । यही काग़ज़ योरोप निवासियों ने केवल ५०० वर्ष पूर्व बनाया । मुद्रण[2] भी चीन में १२०० वर्ष पूर्व आरम्भ हुआ और संसार की सर्वप्रथम पुस्तक ८४८ ई० सन् में व्वांग जिये (Wang Chieh) ने वर्तिलेख (Scroll) के रूप में, जिसमें भारतीय हीरक – सूत्र चीनी लिपि में मुद्रित था और जो १९०० में प्राप्त हुआ था, प्रकाशित की थी और योरोप में मुद्रण केवल ५०० वर्ष पूर्व आरम्भ हुआ । चीन में साक्षरता न्यून रही और योरोप में ९८ प्रतिशत हो गयी, उसका कारण था ध्वन्यात्मक लिपि ।

चीनी लिपि की विदेश यात्रा : इतनी कठिन होने पर भी इस लिपि का बहिर्गमन हुआ और कोरिया, जापान, तैवान, वियतनाम तथा सिंगापुर पहुँची । कोरिया ने अपनी एक लिपि का आविष्कार कर लिया और १९४५ में इसका बहिष्कार कर दिया । जापान ने अपनी लिपि का आविष्कार किया परन्तु चीनी वर्णों का प्रयोग भी होता रहा जो कम होते होते दस सहस्र से लगभग दो सहस्र वर्ण रह गये । आज भी जापानी लिपि के साथ चीनी लिपि का प्रयोग सम्मानजनक समझा जाता है । तैवान तथा सिंगापुर में भी चीनी लिपि प्रचलित है परन्तु वियतनाम ने इसका स्थान फ्रेंच लिपि को प्रदान कर दिया ।

---

1. Parker B. M. : The Golden Book Encyclopedia, Vol. XI, p. – 1052.
2. Ibid : Vol. XII, p. – 1134.

चीनी लिपि का सुधार : माओ ने १९४० में कहा "चीनी लिपि का सुधार होना चाहिए तथा चीनी भाषा जनता के समीप आनी चाहिए।" १९५५ में चीनी सरकार ने 'चीनी लिपि सुधार कमीशन' नियुक्त किया तथा एक 'सर्व चीनी अधिवेशन' का, चीनी लिपि में संशोधन करने के लिए, आयोजन किया।[1]

इस अधिवेशन में चीनी लिपि में सुधार करने के तीन निम्नलिखित मुख्य कारणों पर विचार – विमर्श हुआ :—

१. चीनी लिपि बाल – शिक्षा तथा प्रौढ़ – शिक्षा पर एक भारी बोझ सिद्ध हुई है तथा श्रमिक व कृषक के तीन – वर्षीय साक्षरता के परीक्षण को निष्फल कर दिया। साथ साथ साक्षरता की योजना पर भी बुरा परिणाम डाला।
२. चीनी लिपि ने चीनी विद्यार्थियों के समय तथा शक्ति को नष्ट किया। प्राथमिक शालाओं के विद्यार्थी बड़ी कठिनाई से केवल ३००० शब्द लिखना तथा पढ़ना सीख पाते थे जिसके द्वारा वे कोई वैज्ञानिक विद्यालय में शिक्षार्थी बनने के अयोग्य रह जाते थे। उनको दो वर्ष केवल लिपि सीखने के लिए लगाने पड़ते थे। विज्ञान की विदेशी पुस्तकों के अनुवाद में भी चीनी लिपि ने अनेक समस्यायें खड़ी कर दीं। इस कारण चीन की वैज्ञानिक तथा तकनीकी प्रगति में अवरोध उत्पन्न होने लगे।
३. चीनी लिपि ने आधुनिक सांस्कृतिक जीवन पर भी बुरे परिणाम डाले। यह लिपि टंकणयंत्र (type – writer) मुद्रणयंत्र (printing – press) तार – प्रेषण तथा कम्पियूटर आदि के लिए भी एक बोझ बन गयी। तार घर में अनेक अनुवाद करने वाले रखे जाते थे। विदेशी तार भेजने में बहुत बिलम्ब होता था।

अन्त में इस अधिवेशन द्वारा यह निष्कर्ष निकला कि चीनी लिपि को वर्णात्मक बनाया जाये। इसके लिये रोमन लिपि का प्रयोग किया जाये। सम्भव है इस शताब्दी के अन्त तक चीनी लिपि का रूप परिवर्तित होकर पूर्णतया रोमनीकरण हो जाये।

जब से चीनी लिपि का जन्म हुआ तब से उसमें सदैव सुधार व संशोधन होते रहे। आज एक निपुण चीनी विद्यार्थी एक घण्टे में ३०० शब्दों से अधिक नहीं लिख सकता। संसार में कुछ वर्ष पूर्व तक चीनी भाषा पर कोई ऐसी पुस्तक नहीं थी जिसकी आलोचना न की गई हो अथवा जिसको पूर्णतया शुद्ध व त्रुटि – रहित माना गया हो। पुस्तक का यह पाठ भी त्रुटि – रहित नहीं हो सकता। लू शुइन (Lu Hsün)[2] के अनुसार "चीनी लिपि न यहाँ है न वहाँ – केवल एक गड़बड़ – झाला है।"

चीनी सरकार ने अब निश्चय कर लिया है कि चीनी लिपि का रोमीकरण अनिवार्य रूप से कर दिया जाये। उसमें अब यह परिवर्तन लाये जायेंगे, जैसे 'c' की ध्वनि 'ट्स् (Ts'u)', 'q' की 'जी (Chi) और 'X' की 'शी (hsi)' हो जायेगी। इसके अर्थ यह हैं कि रेखाओं का प्रयोग चीनी लिपि के चित्रों के निर्माण के लिए नहीं होगा। इससे कितनी अव्यवस्था होगी इसका अनुमान लगाना कठिन है।

---

1. Chung, Tan (J. N. U. – New Delhi) : 'Intricacies of Chines Language (s) and Script' – Article published in Organiser – October 29, 1978. P – 40. Mao, "Written. Chines must be reformed and the spoken language should be brought closer to that of the people."
2. Hsün, Lu : "........the Chinese Script is neither here nor there a mere hotch – potch." (Taken from 'Organiser' New Delhi weekly – 29th. October, 1978., p. – 40. Column. 2.)

इस परिवर्तन से सबसे बड़ी समस्या यह होगी कि चीन की संकेतात्मक लिपि की अनुपस्थिति में, जो अभी तक चीन की भिन्न भिन्न भाषाओं को एक सूत्र में बाँधे थी, वह एकता समाप्त हो जायेगी। इसके अतिरिक्त जो पीकिंग भाषा – भाषी नहीं हैं, तब उनके सामने ध्वन्यात्मक लिपि के वर्ण आयेंगे, वे अपने आपको निरक्षर समझने लगेंगे।

जब २००० ई० सन् तक पूर्ण चीन आधुनिक उद्योग व व्यवसाय अपना लेगा। संसार के अन्य देशों से उसके पर्याप्त सम्पर्क स्थापित हो जायेंगे तब लिपि का रोमनीकरण अधिक सम्भव हो पायेगा, और तब चीन का २००० वर्ष का प्राचीन लिपि का यशस्वी इतिहास संग्रहालयों को सुसज्जित करेगा। चीन का भूतपूर्व सांस्कृतिक गौरव लिपि के साथ समाप्त हो जायेगा और चीन भी एक आधुनिक देश में परिवर्तित हो जायेगा।

चीन की लिपियाँ

बा गुआ : आरम्भ में विचारों को व्यक्त करने के लिए तथा संवाद भेजने के लिए चीन में भी गाठों का प्रयोग होता था। पौराणिक काल के एक महाराजा फ़ू शी (Fu – Hsi) ने २८०० ई० पू० में आठ रहस्य – वादी त्रिपुण्डों (Eight mystic Trigrams)[1] का निर्माण किया जिनको चीनी भाषा में बा[2] गुआ (Pa – Kua) कहते हैं। इन तीन पंक्तियों को जगह जगह पर काट काट कर निम्नलिखित शब्दों का निर्माण किया जिनको चीनी भाषा के शब्दों के साथ दिया गया है :—(फ० सं० – २१५)।

क्रमांक	शब्द	चीनी भाषा	विवरण
१.	स्वर्ग	गान	तीन पक्तियाँ हैं।
२.	तोलना	डिन	ऊपर की पंक्ति कटी है।
३.	पानी	शुई	मध्य पंक्ति कटी है।
४.	गड़गड़ाहट	चेन्	ऊपर की दो पंक्तियाँ कटी हैं।
५.	लकड़ी	शू	नीचे की पंक्ति कटी है।
६.	त्याग	कन्	ऊपर व नीचे की पंक्तियाँ कटी हैं।
७.	सीमा	गेन्	नीचे की दो पक्तियाँ कटी हैं।
८.	पृथ्वी	गुन	तीनों पंक्तियाँ कटी हैं।

इस प्रकार आठ शब्दों का निर्माण हुआ। तदनन्तर एक पक्ति और जोड़कर आठ नये शब्द बने। इसी प्रकार छः पंक्तियों तक जोड़कर ४८ शब्दों का निर्माण किया गया।

चीन की प्राचीन लिपि : ली नाम के एक किसान को खेत में कुछ अद्भुत प्रकार की हड्डियाँ मिलीं। यह घटना १८६० की है जो होनान[3] प्रदेश के सिआव टुन नामक स्थान में घटी। उस किसान ने सोचा यह हड्डियाँ[4] ड्रैगन की हैं। उस समय चीन की देशी औषधियों के लिए हड्डियाँ अति शक्तिशाली मानी जाती थीं। ली ने यह हड्डियाँ रासायनिकों के हाथ में रखीं। इन लोगों ने इनका चूर्ण बना डाला तथा स्नायविक रोगों के

1. Taken from C. Gardner's – Journal of Ethnological Society (1870), Vol. II, p. – 5.
2. वा=आठ।
3. भूपेन्द्र नाथ सान्याल : आदिम मानव समाज (१९६१) पृष्ठ – 2.
4. यह हड्डियाँ बैल की अथवा मृतक कछुओं की पीठ की होती थीं।

आठ त्रिपुण्ड

प्राचीन रेखा चित्र

फलक संख्या – २१५
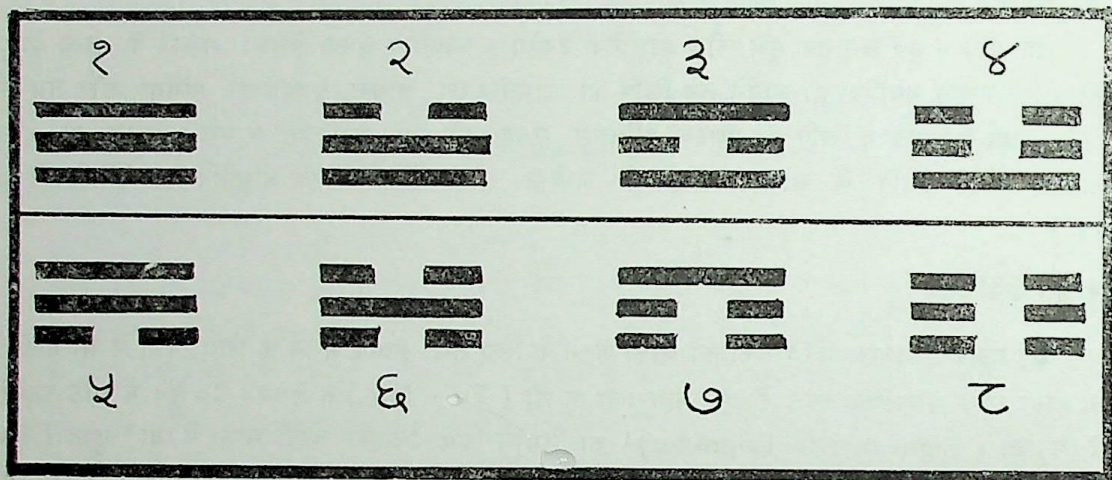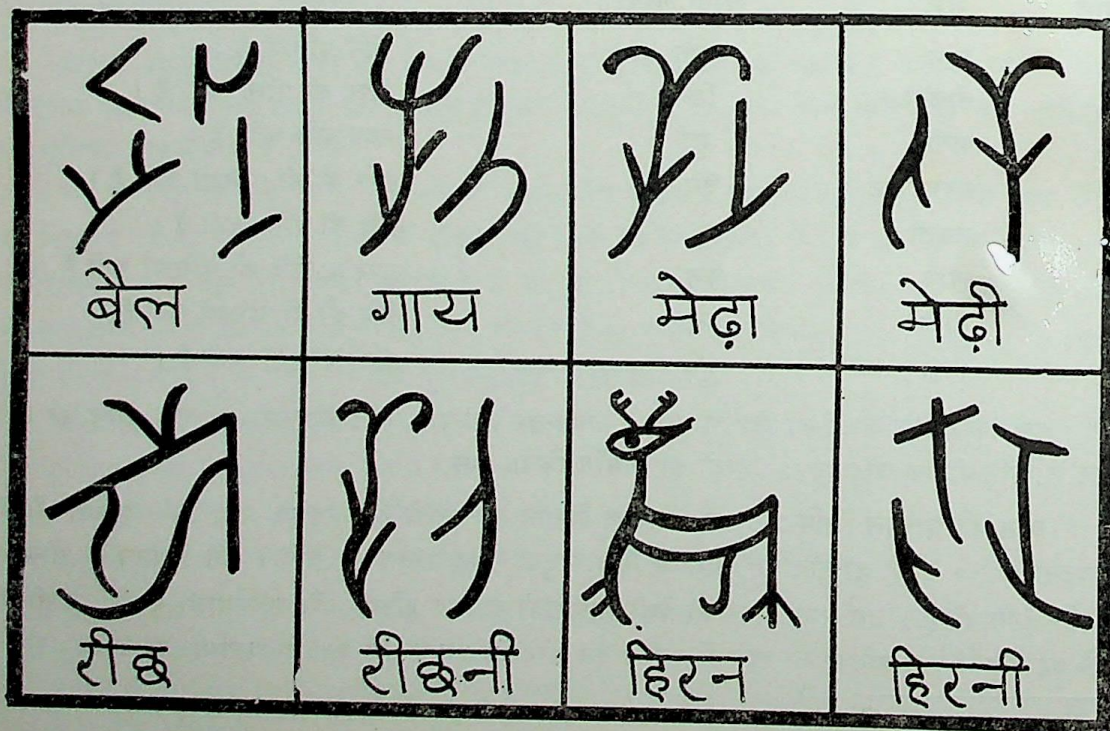
अनमोल उपचार के रूप में बेचा । एक रासायनिक की दूकान पर एक पुरातत्त्ववेत्ता पहुँच गया । जब उसने हड्डियों पर अंकित कुछ चिह्नों को देखा तो उसने उन चिह्नों को एक लिपि के अनुरूप मान लिया । अब पुरातत्त्ववेत्ताओं ने वे हड्डियाँ खरीदना आरम्भ कर दीं । लगभग ३० वर्ष बाद १८९९ में हड्डियों पर अंकित चिह्नों की व्याख्या की जा सकी ।

प्राचीन काल में इन हड्डियों के द्वारा भविष्यवाणी की जाती थी । जिस प्रश्न का उत्तर मांगा जाता था पुरोहित लोग हड्डी पर अंकित कर देते थे तदनन्तर उसको गर्म करते थे । गर्मी से हड्डी में जिस दिशा में दरार पड़ जाती थी उसी प्रश्न का उत्तर 'हाँ' या 'न' में माना जाता था । यह हड्डियाँ राजा के महलों मे रखी जाती थीं । यह राजा शांग वंश (१७६५ – ११२३ ई० पू०) के काल के थे । यह राजा खेती की फ़सल, युद्ध या राजनीति के विषय में प्रश्न पूछा करते थे । सूंग[1] ने अपनी पुस्तक में यह काल १७६६ – ११५० ई० पू० माना है । 'फ० सं० – २१६' पर दिये गये चित्र इसी पुस्तक[2] से लिये गये हैं ।

चीनी लिपि का कालानुसार विकास : जब से चीनी लिपि का जन्म हुआ तब से अब तक उसका विकास[3] होता रहा और सम्भवतः होता रहेगा, जब तक पूर्णतया यह ध्वन्यात्मक नहीं बन जाती अथवा जब तक पूर्णतया इसका रोमनीकरण नहीं हो जाता । आदि काल से अब तक उसके नामों में भी परिवर्तन होते रहे, जो निम्नलिखित हैं और 'फ० सं० – २१७' पर दिये गये हैं :—

१. **जिया गू वन** (Chia – Ku – Wên[4]) : इसके अर्थ हैं खोल (Shell) एवं हाड़ लिपि । खोल अधिकतर मृत कछुओं की पीठ के और हाड मृत बैलों के होते थे । इनको ओरैकिल बोन्स (Oracle Bones) अर्थात् आकाशवाणी द्वारा अंकित खोल या हाड़ । बाजार में इनको ड्रैगन[5] – बोन्स (Dragon Bones) के नाम से बेचा जाता था । इसमें ८०० मौलिक चित्र थे जिनका रूपान्तर करके अन्य शब्दों का निर्माण किया गया । इनकी संख्या ३४६९ तक पहुँच गई । इस लिपि का काल १०८० से ८०० ई० पू० तक माना जाता है ।

२. **डा जुआन** (Ta Chuan) : इस लिपि का विकास गू-वेन लिपि के द्वारा एक चीनी विद्वान् डाइ शी (Tai Hsi) ने ई० पू० की आठवीं श० में किया । इसका प्रयोग ६०० ई० पू० तक चलता रहा ।

३. **चाउ वन** (Ch'ou Wên) : इसका विकास सामन्त शाही चाउ वंश के शासन काल में हुआ इसको बड़ी – मुद्रा – लिपि भी कहते थे । इसका काल ६०० से ४०० ई० पू० माना जाता है । ली शी (Li Hsi) ने एक ३००० शब्दों का शब्द – कोष संकलित किया ।

४. **शियाओ जुआन** (Hsiao Chuan) : इसका विकास ४०० से २५० ई० पू० माना जाता है ।

५. **ली शू** (Li – Shu) : इसको कारापाल लिपि (Jailor Script)[6] भी कहते हैं । इसका आविष्कार चीन वंशीय शासक शेर हुआंग ती (Ch'in – Shih – huang – ti)[7] के शासन काल में हुआ ।

---

1. Sung, Y. F. : Chinese in 30 Lessons. (Hollywood 1945). p, – 26.
2. Chalfant, F. H. : Memories of the Carnegie Museum IV. (1906), p. – 32.
3. Blackney : A Course in the Analysis of Chinese Characters (Shanghai 1926), p. – 11.
4. W'en – 'वन' = साहित्य ।
5. 'ड्रैगन' चीन का पौराणिक जीवधारी माना जाता है । इसको स्वर्ग – नरक का चौकीदार मानते हैं । यह लम्बा सर्पाकार लम्बे नख वाला शेर के जैसा मुँह वाला भयानक पशु चित्रों में प्रदर्शित किया जाता है ।
6. Dr. Tan Chung : 'The Intricacies of Chinese Languages and Script' – Published in 'Organiser' – (Periodical) October, 29. 1978, p. – 11.
7. इसको 'शू हुआंग तो' भी कहते हैं ।

चीन की प्राचीनतम् लिपि

फलक संख्या – २१६
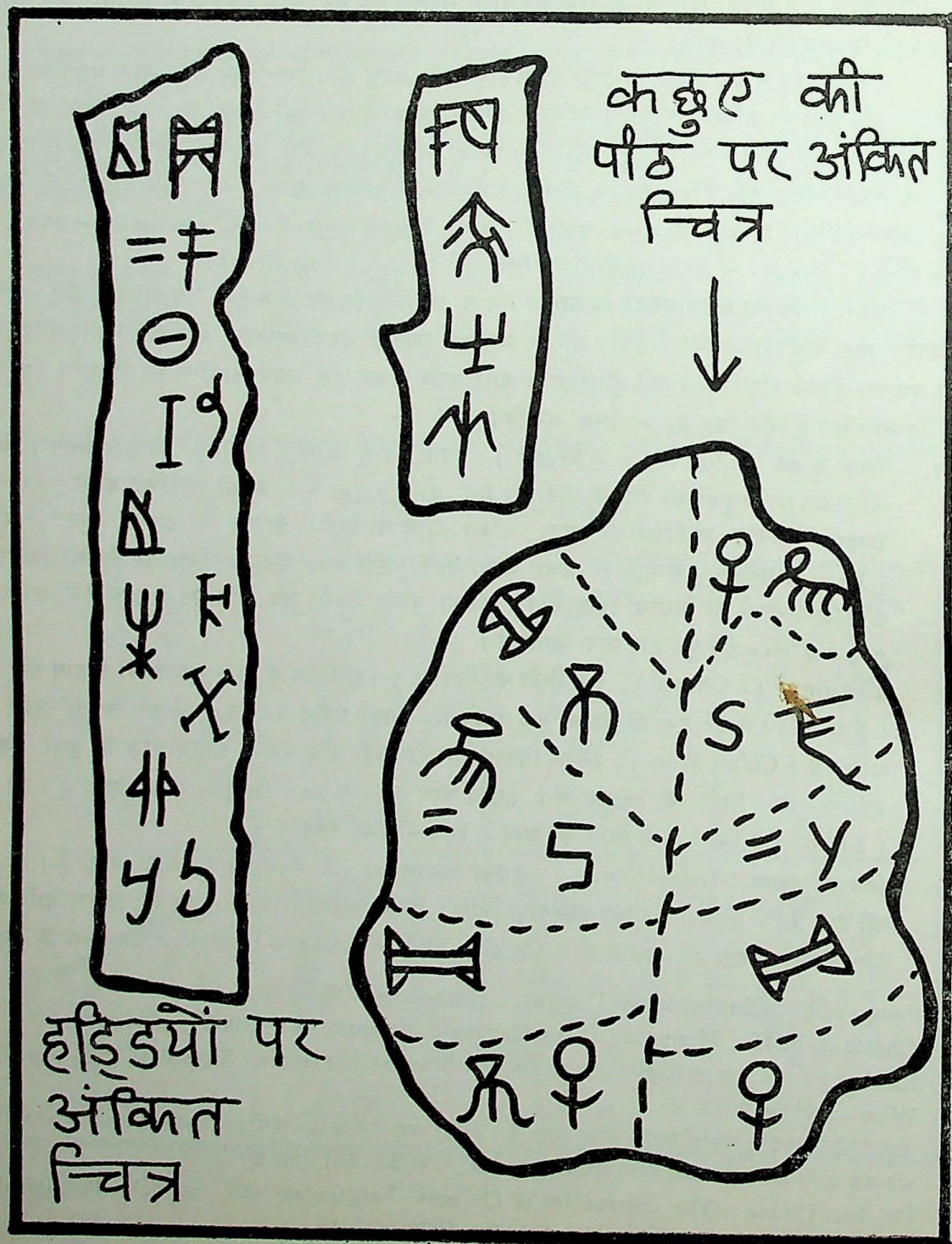
इसने बहुत से सुधार किये परन्तु अत्याचार भी बहुत किये। जब बन्दियों से कारागार भरने लगे, तो एक कारागार के पदाधिकारी जंग मियाओ (Cheng Miao) ने सारे बन्दियों को पंजीकृत करने के लिए कुछ रेखाओं (Strokes) का प्रयोग कर इस नई लिपि का आविष्कार किया। इसका काल २५० से १०० ई० सन् माना जाता है। रेखाओं (Strokes) का प्रयोग इस काल से ही आरम्भ हुआ। ईसा की प्रथम श० में शू शन (Shu – Shen) द्वारा १०,५१६ शब्दों का एक शब्द – कोष संकलित किया गया।

अन्त में अठारहवीं श० में सम्राट् कांग शी[1] (K'ang – Hsi) ने ४४४४ शब्दों के एक शब्द – कोष का निर्माण करवाया। गाइल्स[2] के शब्द – कोष में १०,८५९ शब्द हैं।

६. **त्साओ – शू** (Ts'ao – Shu) : त्साओ के अर्थ हैं 'घास' तथा 'शू' के अर्थ 'किताब'। इसका काल १०० ई० से २०० तक रहा।

७. **बा फ़न शू** (Pa Fen Shn) : इसका विकास एक विद्वान् ह्वांग ड्सी जंग (Huang Tsi Cheng) ने किया। इसका काल २०० ई० से ३०० ई० तक माना जाता है।

८. **काए – शू** (K'ai – Shu) : इसका विकास ३०० से ४०० ई० तक रहा। इसका प्रयोग सुलेख के लिए किया जाता था।

९. **शिंग – शू** (Hsing – Shn) : इसका विकास ४०० ई० से ८०० ई० तक होता रहा। इसका प्रयोग शीघ्र तथा घसीट लिखने के लिए किया जाता था।

इसी फलक पर ऊपर की पंक्ति में लिपि का रूपान्तरण ६ शब्दों (आकाश, अग्नि, पवन, जल, पर्वत, पृथ्वी) के प्रतिदर्श द्वारा दिया गया है। इन ६ शब्दों को कैसे लिखा जाता है, 'फ० स० – २२४' पर दिया गया है।

चीनी लिपि की ध्वनि – बल (टोन – Tone) पद्धति : चीनी लिपि में ध्वनि – बल अर्थात् टोन का प्रचलित होना विदेशियों के लिये, जो चीनी भाषा बोल तो लेते हैं परन्तु बोलने में किस प्रकार का कहाँ पर बल दिया जाये पूर्णतया नहीं जान पाते, इस कारण अनेक बार अर्थों में परिवर्तन हो जाता है। उदाहरणार्थ 'गान – बेई (Kan – pei)' के अर्थ हैं 'सद्भावना के लिए अतिथि के स्वास्थ्य के लिए मदिरा पान किया जाये (Toast for health) परन्तु इसके संक्षिप्त अर्थ हैं 'औंधे हो जाना (bottoms up)', जब एक अमेरीका के उच्च अधिकारी दम्पती अतिथि को टोस्ट द्वारा सद्भावना प्रदान की गयी तो उनके सचिव ने अंग्रेज़ी में चीनी भाषा का अनुवाद किया "हम इच्छुक हैं कि आप औंधे हो जायें।" इस प्रकार की अनेक घटनायें होती रहती हैं जो ध्वनि – बल के अन्तर के कारण घटित हो जाती हैं।
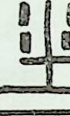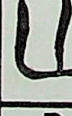
चीनी भाषा में अधिकांश चार टोन का प्रयोग होता है। वैसे पीकिंग की पूर्वकालिक मण्डारिन में पाँच टोन का भी प्रयोग किया जाता है। इन ध्वनियों (tones) को लिपि – बद्ध करना असम्भव है। इनका प्रयोग पाँचवीं श० में आरम्भ हुआ। उसका कारण था चीनी भाषा में एक ही ध्वनि वाले अनेक शब्दों (homophones) का उपस्थित होना। ध्वनि – बल के प्रयोग द्वारा उनमें अन्तर पड़ने लगा तथा उनके अर्थ भी शुद्ध होने लगे।

ध्वनि – बल (टोन) के प्रयोग के पूर्व, प्रोफ़ेसर टान चुंग के अनुसार 'ई (yi)' शब्द के निम्न – लिखित अर्थ थे :— डाक्टर, यन्त्र, कपड़े, कुर्सी, साँप, चींटी, दस करोड़, वर्तमान, हानि, तरल पदार्थ, बह

---

1. Williamson, H. R. : Teach yourself Chinese (1972), p. – 6.
2. Ibid.

चीनी लिपि का कालानुसार विकास

लिपि	काल से	काल तक	आकाश	अग्नि	पवन	जल	पर्वत	पृथ्वी
जिया-गू-वन	1200	700 ई.पू.						
डा जुग्रान	700	300 ई.पू.						
चाउ वन	300	400 ई.पू.						
शियाओ जुआन	400	250 ई.पू.						
ली-शू	250	100 ई.	天	火	風	水	山	地
त्साउ शू	100	200 ई.						
बा-फ़नशू	200	300 ई.	天	火	風	水	山	地
गाइ शू	300	400 ई.	天	火	風	水	山	地
शिंग शू	400	700 ई.						

निकलना, नियत, अन्तर, निर्भर, स्थानान्तरण, सरल, प्रसन्न, वशज, विदेशी, कल, स्वप्न, संक्रामक, वार्तालाप, अनुवाद, लटकाना, चमकना, दुम, पर, शेष, आशा, मित्रता, दमन इत्यादि।

एक अन्य चीनी विद्वान् के अनुसार 'शर (Shih)' शब्द के लिए २३९ संकेतात्मक चित्र (५४ प्रथम टोन में, ४० द्वितीय टोन में, ७९ तृतीय टोन में तथा ६६ चतुर्थ टोन में) प्रयोग किये जाते हैं। राज्य भाषा मण्डारिन में ६९ शब्द ऐसे हैं जिनका उच्चारण 'इ (i)' है, २९ ऐसे हैं जिनका उच्चारण 'गू (KU)' है तथा ५९ ऐसे हैं जिनका 'शर (Shih)' है। इसी से पाठक चीनी भाषा व लिपि सीखने की कठिनाई को समझ सकते हैं।

अमेरिका के बर्कले स्थित कैलीफ़ोर्निया विश्वविद्यालय के एक चीनी शिक्षक प्रो० युयेनरेन चाओ (Yuen Jen Ch'ao) ने एक चालीस शब्दों की कहानी लिखी जिसमें लड़का गेण्डे से खेलता है। यह कहानी केवल एक शब्द 'शी (Hsi)', जो पूर्वकालिक चीनी – इंगलिश शब्दकोष में मिलता है, को प्रयोग करके लिखी गई थी। इसमें 'शी' शब्द को भिन्न भिन्न टोन में ४० बार प्रयोग किया गया था। कितनी रोचक तथा आश्चर्यजनक कहानी होगी जो एक ही शब्द से लिखी गई।

चीनी लिपि के चार टोन : इन चार टोन का किस प्रकार उच्चारण किया जाये 'फ० सं० – २१८' पर रेखाकृति द्वारा दर्शाया गया है। इससे पाठकों को कुछ ज्ञान हो जायेगा कि टोन – पद्धति क्या वस्तु है। रेखाकृति में एक शब्द 'डू' लिया गया है और उसको एकसा, मोटे से छोटा, छोटे से मोटा तथा ऊपर को एकसा बनाया गया है। छोटे 'डू' की बारीक व ऊँची ध्वनि तथा मोटे 'डू' की मोटी व नीची ध्वनि निकालनी पड़ती है। प्रत्येक कालम में रेखाकृति एक बाण सहित दी है। उसके नीचे उस टोन का क्रम। फिर उसका चीनी भाषा में तथा रोमन लिपि में नाम दिया गया है। प्रत्येक नाम के ऊपर सीधी ओर अंग्रेज़ी के अंकों में टोन का क्रम तथा प्रत्येक रोमन लिपि के चीनी शब्द में स्वर के ऊपर टोन का चिह्न दिया है। उसके नीचे हिन्दी में नीचे लिखे चीनी शब्दों का उच्चारण दिया गया है। उसके नीचे रोमन लिपि के स्वरों पर लगाने के लिए प्रत्येक टोन का चिह्न और अन्त में चीनी लिपि में प्रत्येक टोन का नाम। यही पद्धति प्रत्येक कालम में दी गयी है। उसी 'फ० सं० – २१८' पर नीचे की ओर दो शब्दों (शर; ची) के प्रतिदर्श दिये हैं। इन्हीं दो शब्दों के प्रत्येक टोन में क्या अर्थ होते हैं चीनी – लिपि – चित्रों के नीचे दिये गये हैं। नीचे सीधी ओर एक शब्द (माई) दिया गया है जिसके टोन परिवर्तन से अर्थ भी उलटे हो जाते हैं।

प्रत्येक टोन के विषय में कुछ समझ लेने के पश्चात् यह जान लेना अति आवश्यक है कि टोन का शुद्ध प्रयोग बिना किसी चीनी शिक्षक के सीखा नहीं जा सकता और यदि किसी और से सीखा है तो कोई बड़ी भूल होने की सम्भावना अनिवार्य रूप से रहेगी।

प्रथम टोन : इसको 'ईन पिंग[1] (Yin P'ing) अथवा 'शांग पिंग शंग[2] (Shang P'ing Shêng) कहते हैं। इसके अर्थ हैं "एक समान भारी टोन" अथवा "ऊँची समान टोन"।

द्वितीय टोन : इसको सुंग की पुस्तक में 'यांग पिंग (Yang P'ing)' तथा विलियमसन की पुस्तक में 'शिया पिंग शंग (Hsia P'ing Shêng) कहते हैं। इसके अर्थ हैं "साफ़ तथा चमकीली।" इसमें प्रथम टोन के प्रकार से ध्वनि का प्रयोग करते हैं तत्पश्चात् उसको पतला करते चला जाना चाहिये। इसको नीची – समान ध्वनि में प्रयोग किया जाता है जैसा कि फलक पर दिया है।

1, Sung, Yu Feng : Chinese in 30 Lessons (1945), p. – 8.
Williamson, H. R. : Teach Yourself Chinese (1972), p. – 27.

तृतीय टोन : इसको सूंग व विलियमसन की दोनों पुस्तकों में केवल 'शांग शंग (Shang Shêng) ही सम्बोधित किया गया है। इसको "उठती टोन" या "शीघ्रता से उठायी जाने वाली ऊँची टोन" कहते हैं।

चतुर्थ टोन : इसको भी सूंग व विलियमसन की दोनों पुस्तकों में 'चू शंग (Ch'u Shêng)' ही सम्बोधित किया गया है। इसको "प्रक्षिप्त (departing or Projected) टोन" कहते हैं। इसमें 'डू' शब्द को तेज़ी से एकसा उठा कर समान ध्वनि में उच्चारण किया जाता है।

चीनी लिपि का वर्गीकरण : मूलतः २१४ चीनी शब्दों (Radicals) को छः बड़े वर्गों में विभाजित किया गया है। इनको पुनः अठारह उप – वर्गों में तथा ५०० अन्य छोटे छोटे वर्गों में विभाजित किया गया है। चेन च्याओ ने बारहवीं श० में अपने बृहत विश्लेषण को एक ग्रन्थ "तुंग चोह" में क्रम – बद्ध किया है, जिसमें प्रत्येक वर्ग में चीनी शब्दों की संख्या भी दी गई है। छः बड़े वर्ग[1] निम्नलिखित हैं :—

१. **वस्तु – चित्र** (Pictures of objects) : इन चित्रों को गू वन (Ku Wěn) कहते हैं जिसके अर्थ हैं 'प्राचीन साहित्य'। इस वर्ग में ६०८[2] शाब्दिक, चित्र हैं जिनमें कुछ 'फ० सं० – २१९' पर दिये गये हैं। यह चित्र चीनी लिपि के मूलाधार हैं। इस फलक में शब्दों का चित्रण चार कालम में किया गया है। प्रथम कालम में प्राचीन काल के शब्द, द्वितीय में अर्वाचीन काल के वही शब्द, तृतीय कालम में रोमन व हिन्दी में शब्दों का उच्चारण तथा चौथे में शब्दों के अर्थ दिये गये हैं। उच्चारण के शब्दों पर टोन का क्रम भी दे दिया गया है।

२. **सांकेतिक चित्र** (Symbolic Pictures) ; इन चित्रों को चीनी भाषा में जर शर (Chih – Shih) कहते हैं। यह लिपिवर्ग पहले से अधिक रोचक है। इसमें अमुक वस्तु का चित्र कुछ संकेत प्रदान करता है। उदाहरणार्थ 'चन्द्र' सायंकाल का तथा 'क्षितिज पर सूर्य' प्रातःकाल का द्योतक हो गया। 'रक्त भरा थाला' शपथ ग्रहण करने का द्योतक बना। इनकी संख्या २०७ है (फ० सं० – २२०)।

३. **संयुक्त – सांकेतिक चित्रों** (Symbolic Compounds) : को चीनी भाषा में ह्वे – ई (Hui – i) कहते हैं। इस वर्ग में दैनिक प्रयोगात्मक चित्रों को द्विक (double) कर दिया गया है। उदाहरणार्थ 'दो बच्चों' का चित्र बनाने से 'जुड़वाँ बच्चों' का बोध होता है। 'देखने' के शब्द को दो बार बनाने से 'साथ साथ देखना' आदि। इनकी संख्या ७४० है। (फ० सं० – २२१)।

४. **क्रम द्वारा निर्मित चित्र** (Pictures by Rotation) : शब्दों को क्रम से लेकर कुछ नये शब्दों का निर्माण किया गया है। इस वर्ग में ७३२ शब्द हैं। चीनी भाषा में इस वर्ग को जुआन – जू (Chuan – Chu) कहते हैं। इन शब्दों की दिशा परिवर्तित करने से दूसरे शब्दों का उद्भव हो जाता है। (फ० सं० २२२)।

५. **ध्वनि – सूचक चित्र** (Sound Indicating Signs) इनको चीनी भाषा में शिये शंग (Hsieh – Sheng) कहते हैं। यह लिपि – वर्ग प्रधान वर्ग है और इसी वर्ग में सबसे अधिक शब्द हैं जिनकी संख्या २१८२०[3] हैं (फ० सं० – २२२)।

---

1. इन वर्गों के फलकों के शब्दों के अर्थों के नीचे जो अंग्रेजी में क्रम संख्या दी गई है वह Mathews की English – Chinese Dictionary से ली गई है। यह शब्द कोष वेड (Wade) पद्धति पर निर्मित है।
2. कुछ विद्वान् इनकी संख्या ८०० मानते हैं।
3. According to Mrs. Chao, Ex – Lecturer of Allahabad University (Now in Canada)

चीनी लिपि में ध्वनि बल (टोन)

फलक संख्या – २१८
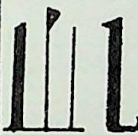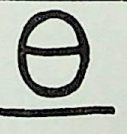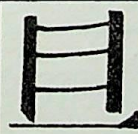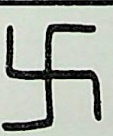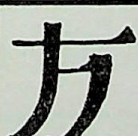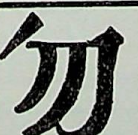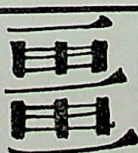
१. चीन के वस्तु -- चित्र

प्राचीन	अर्वाचीन	ध्वनि	अर्थ	प्रा०	अर्वा०	ध्व०	अर्थ
	子	Tzu^{3} इज़ू	शिशु		雨	Yü^{3} यू	वर्षा
	木	Mu^{4} मू	लकड़ी; वृक्ष; शाखा		犬	Ch'üan^{3} च्युएन	कुत्ता
	門	Mên^{2} मन	द्वार फाटक		巴	Pa बा	अजगर
	矢	Shih^{4} शर	तीर		手	Shou^{3} श्व	हस्त
	心	Hsin^{2} शीन	दिल		貝	Pei^{4} बेइ	कीमती कौड़ी
	言	Yen^{2} एन	शब्द; भाषण		田	T'ien^{2} टिएन	खेत

फलक संख्या – २१९

२. चीन के सांकेतिक चित्र

प्राचीन	अर्वाचीन	ध्वनि	संकेत	विवरण
	又	Tu⁴ डू	इंगित भाव	सीधा हाथ
	夕	Hsi⁴ शी	संध्या काल 2485	आरम्भिक चन्द्र
	皿	Wêng वंग	शपथ	रक्त भरा प्याला
	旦	Tan⁴ डैन	प्रातः काल 6037	सूर्योदय
	方	Fang¹ फ़हंग	क्षेत्र 1802	आकाश की चार दिशायें दर्शाता है
	勿	Wu⁴ वू	निषेध करना 7208	सतर्ककरण की पताका
	畺	Chiang¹ ज्यांग	सीमा 643	दो खेतों के मध्य की रेखा

फलक संख्या - २२०

३. संयुक्त सांकेतिक चित्र

प्राचीन	अर्वाचीन	ध्वनि	शब्द	विवरण
	孖	Tzu[1] ड्ज़ू	जुड़वाँ शिशु 6941	दो बच्चों का चित्र
	見見	Chien[4] ज्येन	साथ साथ देखना	देखने के दो चित्र
	立立	Ping[4] बिंग	साथ साथ 5292	दो मनुष्यों के साथ साथ चित्र
	巛	Ch'uan[1] च्वान	स्रोत 1439	तीन गढ़ों के चित्र
	東東	Tung[1] पूर्व	सर्वत्र 6605	दो बार 'पूर्व' का चित्र
	炎	Yen[2] येन	बहुत गर्म 7335	दो बार अग्नि-चित्र
	明	Ming[2] मिंग	प्रकाशमान् 4534	सूर्य व चन्द्र के चित्र
	鳴	Ming[2] मिंग	गाना 4535	मुंह व चिड़िया के चित्र
	聞	Wen[2] वेन	सुनना 7142	दो द्वार व कान के चित्र

फलक संख्या – २२१

४. क्रम द्वारा निर्मित चित्र

प्राचीन	अर्वाचीन	ध्वनि	विवरण
	司	Ssŭ 1 स्सू	एक पदाधिकारी 5585
	后	Hou 4 हो	राजकुमार 2144
	乏	Fa 2 फ़ः	पराजित होना 1761
	正	Chêng 4 जंग	ठीक या सीधा 351

५. ध्वनि - सूचक चित्र

चित्र	अर्थ	चित्र	अर्थ	चित्र	अर्थ
皇	उच्चासीन (exalted) +	火 3	अग्नि Huo होअ =	煌	चमकदार
分	भाग लेना (to share) +	言 2	बोलना Yen इयेन =	訜	गपशप
巫	जादूगर Wu - वू +	言 2	7334 बोलना =	誣	झूठ बोलना

फलक संख्या – २२२

इस वर्ग के शब्दों का निर्माण सबसे अधिक संख्या में हान वंश के शासन काल (२०६ ई० पू० से २२१ ई० तक) में हुआ है। इस वर्ग के जन्म के पूर्व चित्र भाव – सूचक होते थे। ध्वनि की प्रधानता पर कोई अधिक ध्यान नहीं देता था परन्तु शनैः शनैः विद्वानों का ध्यान ध्वनि की ओर आकर्षित हुआ। इस ज्ञान, खोज व शोध के कारण अब चित्रों में दो मुख्य तत्त्व हो गये। पहला निर्धारक तत्त्व (Determinative Element) जिससे भाव का तथा विचार का बोध होता था। दूसरा तत्त्व ध्वनि का था जो चित्र को ध्वनि प्रदान करता था। यह ध्वनि या तो अंश रूप में या पूर्ण रूप में दूसरे चित्र की ध्वनि से समानता रखती थी।

उदाहरणार्थ ध्वनि – सूचक चित्र में 'फ० सं० – २२२' एक चित्र उच्चासीन (exalted) का बना है। इस को चीनी भाषा में 'ह्वांग (Huang)' कहेंगे। इसमें भी दो चित्रों (सूर्य तथा पृथ्वी) का समावेश है जिससे किसी मनुष्य की महानता का बोध होता है। इस चित्र में अग्नि का शब्द (जिसकी ध्वनि है 'ख़ो') जोड़ दिया, इससे एक नया शब्द बन गया 'चमकदार' और इसकी ध्वनि हो गई ह्वांग। इसी प्रकार दूसरा शब्द है 'भाग लेना' ध्वनि है 'फ़िन', इसमें जोड़ दिया 'येन' अर्थात् बोलना, इससे बना 'गपशप करना' और इसकी ध्वनि हो गई 'फ़िन'। तीसरा शब्द हैं 'वू' अर्थ हैं जादूगर इसमें जोड़ा गया येन' अर्थात् 'बोलना'। इन दोनों शब्दों को जोड़ देने से बन गया 'झूठ बोलना'। इसका भी एक बड़ा रोचक कारण है। चीन में जादूगरों को झूठा समझा जाता है। इस कारण 'वू' शब्द का प्रयोग जादूगर के लिए किया गया। इस 'झूठ बोलना' के शब्द की ध्वनि हो गई 'वू'। (फ० सं० – २२२)।

६. **ग्रहण किये हुए चित्र** (Borrowings) : इस वर्ग को चीन की भाषा मे जिया – जीह' (Chia – Chieh) कहते हैं। इस वर्ग में दूसरे चित्रों को ग्रहण करके नये चित्रों का निर्माण किया गया है इसमें ५९८ शब्द हैं। (फ० सं० – २२३)।
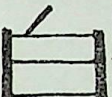
सुलेख (Calligraphy) : भिन्न भिन्न प्रकार की लिपियों का निर्माण चीन के सुलेखकों ने किया है जिनमें से कुछ 'फ० सं० – २२३' पर दी गईं हैं। केवल एक शब्द शीन (Hsin) अर्थात् 'हृदय'[1] को दस प्रकार के सुलेखों में दिया गया है।

इन्हीं सुलेखकों (Calligraphists) ने प्रत्येक चित्र लिखने के लिए एक चतुष्कोण निर्धारित किया है। प्रत्येक चित्र का चतुष्कोण लगभग उतना ही स्थान घेरता है जितने में चित्र पूरा हो जाये, परन्तु सब चतुष्कोण लम्बाई चौड़ाई में समानता रखते हैं।
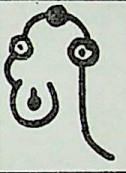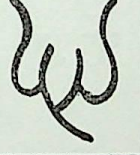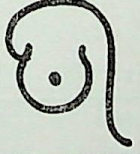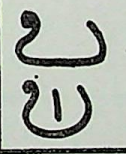
प्राचीन काल में लेखनी किसी धातु की बनाई जाती थी तदनन्तर बांस की लेखनी का प्रयोग होने लगा। लगभग २०० ई० पू० में तूलिका का प्रयोग आरम्भ हुआ। इस तूलिका को रेशम के रुओं से बनाया जाता था।

कागज़ का प्रयोग सर्वप्रथम ज़ाई – लून (Tsai – Lun) ने १०५ ईसवी में किया। इसका इतना प्रचलन बढ़ा कि आठवीं श० में एक कागज़ बनाने का कारख़ाना समरक़न्द में स्थापित हो गया। मुसलमानों ने चीन – निवासियों से ही कागज़ बनाना सीख कर ग्यारहवीं श० में उन्होंने स्पेन के निवासियों को सिखाया।

---

1. Faulmann : Das Buch der Schrift (Vienna, 1880), p. – 48

६. ग्रहण किये हुए चित्र

श्वेत (प्राचीन)	◇	श्वेत (अर्वाचीन)		चित्र का नाम पायी		ध्वनि अर्थात पो = चाचा

'हृदय' - विभिन्न प्रकार के सुलेखों में

	कैशू = आकार		सितारों की लिपि
	हीरों का आकार		बादल की लिपि
	चमत्कारी आकार		मेंढक के बच्चों की लिपि
	कर्ण आकार		क्रूर लिपि
	भव्य स्थानों का आकार		बर्तनों की लिपि

फलक संख्या – २२३

चीनी लिपि की लेखन – पद्धति : इसको दो प्रकार से लिखा जाता है। एक क्षैतिज (horizontal) दूसरा शिरोवृत्त (vertical)। क्षैतिज का प्रयोग हस्त – लेखन में तथा शिरोवृत्त का प्रयोग मुद्रण में किया जाता है, जैसे, समाचारपत्र, पुस्तकें तथा पाक्षिक आदि। क्षैतिज बायें से दायें तथा शिरोवृत्त ऊपर से नीचे लिखी जाती है परन्तु प्रथम खड़ी पंक्ति दायें से ही आरम्भ होगी और नीचे तक जाकर पुनः दूसरी पंक्ति पहली पंक्ति के साथ बाईं ओर से तथा ऊपर से आरम्भ होगी। इसका एक प्रतिदर्श 'फ० सं० – २२४' पर सीधी ओर दो खड़ी पंक्तियों में दिया गया है। प्रत्येक शब्द के साथ ऊपर सीधी ओर उस शब्द के टोन की क्रमसंख्या दी गई है। उसी के नीचे उसका उच्चारण हिन्दी में दिया गया है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक शब्द की बाईं ओर नीचे देवनागरी अंकों में क्रमसंख्या दे दी गई है जिसके द्वारा इन शब्दों के निम्नलिखित अर्थ तथा दोनों पंक्तियों के भावार्थ दिये गये हैं :—

हिन्दी	अंग्रेज़ी अर्थ	हिन्दी	क्र० सं०	अर्थ	अंग्रेज़ी अर्थ	हिन्दी	क्र० सं०
उच्चारण	(Fa – yin)	फ़ा ईन		इस	(So; i) =	सो ई	१
	Pronounce		८	कारण	*Therefore*		२
अनिवार्य	(pi) = *certainly*	बी	९	चीनी	(Chung; kuo	जुंग गुओ	३
	(hsü) = *necessary*	श्यू	१०	(भाषा)	*Chinese*		४
शुद्ध	(chun) = *exact;*	जन	११	शब्द	(Tzu) =	जू	५
	(ch'iao) = *correctly*	च्याओ	१२	तुम	*Characters*		
					(ti) = *you*	डी	६

उपर्युक्त १२ शब्दों के शाब्दिक अर्थ हुए :—

१ + २ = 'इस कारण'; ३ + ४ = 'चीनी भाषा'; ५ = 'शब्द', ६ = 'तुथ'; ७ + ८ = 'उच्चारण'; ९ + १० = 'अवश्य', 'अनिवार्य'; ११ + १२ = 'विशुद्ध'।

इस वाक्य के भावार्थ[1] हुए :—

"इस कारण आपको चीनी शब्दों का शुद्ध उच्चारण करना अनिवार्य है।"

पहली पद्धति (हस्त – लेखन के लिए) बायें से दायें, क्षैतिज (horizontal) चलती है। इसका प्रतिदर्श नीचे बाईं ओर दिया गया है। इस प्रतिदर्श का विवरण इस प्रकार हैं :—

प्रथम पक्ति में ऊपर चीनी शब्द जिसके ऊपर अंग्रेज़ी अंक में टोन की क्रम – संख्या, उसके नीचे अंग्रेज़ी में उसका उच्चारण, उसके नीचे हिन्दी में उसका उच्चारण फलक में ही दिया गया है। अब इन आठ शब्दों के शाब्दिक तथा भावार्थ निम्नलिखित हैं :—

1. Sung, Fu Feng : Chinese in 30 Lessons. p. – 56.

शब्द = व्हो	शिया वू	कैन	व्हो डी
अर्थ = मैं	अपराह्न	मिलने	अपने (मेरे)
शब्द = वंग यू			
अर्थ = मित्र			

भावार्थ—मैं अपने मित्र से अपराह्न मिलने गया।"

आठ पृथक् शब्द 'फ० सं० – २२४' पर ऊपर बाईं ओर दिये गये हैं। शब्दों के ऊपर सीधी ओर के अंग्रेज़ी अंक शब्दों की टोन – क्रम – संख्या तथा नीचे की ओर देवनागरी अंक शब्दों की क्रम – संख्या को बोध कराते हैं। शब्दों के केवल उच्चारण रोमन तथा हिन्दी में दिये गये हैं, उनके अर्थ क्रमानुसार निम्नलिखित हैं :—

१. स्वर्ग या आकाश; २. अग्नि; ३. पवन; ४. जल; ५. पर्वत; ६. पृथ्वी; ७. वर्षा; ८. चन्द्र या मास।

उपर्युक्त क्रमांक १ – ६ तक के शब्द, 'चीनी लिपि का कालानुसार विकास' की 'फ० सं० – २१७' पर दिये गये हैं परन्तु विवरण यहाँ दिया गया है।

लिपि का सरलीकरण : संसार की यही ऐसी लिपि है जो चित्रों से आरम्भ हुई और आज तक चित्रों द्वारा लिखी जाती हैं। यही ऐसी लिपि है जिसका जन्म से ही सरलीकरण आरम्भ हो गया और सरलीकरण द्वारा लिपि में परिवर्तन आते गये। इस परिवर्तनक्रम में पीछे छूटी हुई लिपि तिरस्कृत होती गई इसी कारण चीनी लिपि की कोई पुस्तक आलोचना से बच न सकी। इस सरलीकरण के केवल तीन प्रतिदर्श 'फ० सं० – २५५' के ऊपर बाईं ओर दिये गये हैं। आधुनिक युग में जब प्रत्येक कार्य में मनुष्य की गति बढ़ने लगी तथा प्रत्येक वाहन की गति भी चौगुनी होने लगी, तब लिपि की गति बढ़ना अनिवार्य हो गया। चीनी लिपि की गति को बढ़ाना असम्भव लगने लगा। १९५६ में चीनी सरकार ने सर्वप्रथम २३० चित्रों का सरलीकरण किया तत्पश्चात् ३५३ शब्दों का किया गया। इस परिवर्तन – क्रम में रेखाओं (Strokes) की संख्या को कम करके शाब्दिक – चित्रों का निर्माण किया गया तथा उनका प्रयोग प्राथमिक शालाओं में प्रारम्भ करवा दिया। साथ साथ लिपि में ध्वन्यात्मक पद्धति का प्रयोग तथा लिपि का रोमनीकरण भी आरम्भ हो गया।

चीनी भाषा की ध्वनियाँ : स्वरोत्पादन (Intonation) अर्थात् उच्चारण, चीनी – भाषा के, विद्यार्थी को चाहे वह चीन का हो या विदेश का, समक्ष एक समस्या खड़ा कर देता है। संकेतात्मक चित्रों के उच्नारणों में भिन्नता है। चीन देश के एक भाग में डसी शब्द का उच्चारण कुछ है तो दूसरे भाग में कुछ और। उच्चारण के अन्तर से अर्थ में अन्तर पड़ जाता है। चीनी स्वयं इस समस्या से दुखी हो जाते हैं जब वे एक स्थान से दसरे स्थान को जाते हैं।

लिपि के रोमनीकरण (Romanization) करने में चीनी भाषा क सब उच्चारणों को रोमन क २६ वर्णों में लिपि – बद्ध करने का प्रयास किया गया है। इन उच्चारणों की संख्या ४०९[1] है, जिनका कुछ स्वतन्त्र रूप से तथा कुछ सम्मिलन से ६२ पृथक् वर्णों द्वारा निर्माण किया गया है। इन ६२[2] मौलिक ध्वनियों को आधुनिक प्रचलित भाषा के दो भागों से, जिनको इनीशियल्स (Initials) तथा फ़ाइनल्स (Finals)

1. Williamson, H. R. : Teach yourself Books – Chinese (1972), page, – 22.
2. Ibid, p. – 22.

कुछ शब्द व वाक्य (क्षैतिज – शिरोवृत्त)

天 1 t'ien १. टीयेन	火 2 huo २. होअ्र	氣 4 ch'i ३. ची	水 3 shui ४. श्वे
山 1 shan ५. शैन	土 3 t'u ६. टू	雨 3 yü ७. इयू	月 4 yueh ८. युअ्र
我 3 Woh व्हो	下 4 hsia शिया	午 3 wu वू	看 4 K'an कैन
我 3 woh व्हो	的 1 ti डी	朋 2 pêng बंग	友 3 yu यू

發 1 ७. फ़ा	所 3 १ सो
音 1 ८. ईन	以 3 २ ई
必 4 ९. बी	中 1 ३ जुंग
須 1 १०. शू	国 2 ४ गुओ
準 3 ११. जन	字 4 ५ ज़ू
確 १२. च्याओ	的 1 ६ डी

फलक संख्या – २२४

कहते हैं, लिया गया है। क्रम से इनकी संख्या २४ तथा ३८ है। १९०६ में ५० इनीशियल्स और १२ फ़ाइनल्स[1] थे। फ़ाइनल्स में ११[2] स्वतन्त्र ध्वनियाँ हैं परन्तु उनमें भी कभी कभी सम्मिलन दृष्टिगोचर हो जाता है (फ० सं० – २२५)।

वैसे तो चीनी लिपि मोनो सिलेबिक (Mono – syllabic) कही जाती है और है भी, परन्तु गहरा विश्लेषण करने से उन चित्रों में द्वि – ध्वन्यात्मक (di – syllabic) तथा त्रै – ध्वन्यात्मक (tri – syllabic) चित्र मिल जाते हैं। कारण यह है कि जब किसी एक विचार (Concept) को व्यक्त करने के लिए एक से अधिक चित्रों को संयुक्त रूप से लिपिबद्ध किया जाता है, ऐसे चित्रों को इनीशियल तथा फ़ाइनल उच्चारणों के मध्य में रख दिया जाता है उनको मीडियल्स (Medials) के नाम से सम्बोधित किया जाता है।

चीनी लिपि का रोमनीकरण अमरीका व ब्रिटेन के अनेक विद्वानों[3] ने किया है। इनमें से सबसे प्रसिद्ध तथा प्रचलित रोमनीकरण सर टॉमस वेड (Sir Thomas Wade) का माना जाता है। वैसे संसार में लिपि का कोई ऐसा रोमनीकरण नहीं हो सका है जो इस लिपि की ध्वनियों को पूर्णतया व्यक्त कर सके। इसके अति – रिक्त आधुनिक काल में रोमनीकरण की दो अन्य पद्धतियाँ, जिनको चीनी सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त हुई है, जैसे, एक गोरीयून (Guoryun) की तथा दूसरी एल (Yale) विश्वविद्यालय की। इसी कारण दो प्रकार के शब्दकोष[4] भी प्रयोगात्मक माने जाते हैं।

इनीशियल्स की तालिका (वेड पद्धति)

उच्चारण			उच्चारण			उच्चारण		
क्रम	रोमन	हिन्दी	क्रम	रोमन	हिन्दी	क्रम	रोमन	हिन्दी
१ –	Ch.	ज	९ –	L.	ल	१७ –	T.	ड
२ –	Ch'.	च	१० –	M.	म	१८ –	T'.	ट
३ –	F.	फ़	११ –	N.	न	१९ –	Ts.	ड्ज़
४ –	H.	ह	१२ –	P.	व	२० –	Ts'.	ट्स
५ –	Hs.	श[1]	१३ –	P'.	प	२१ –	Tz.	ड्स
६ –	J.	र; य	१४ –	S.	स	२२ –	Tz'.	ट्ज़
७ –	K.	ग	१५ –	Sh.	श	२३ –	W.	व
८ –	K'.	क	१६ –	Ss.	स्स	२४ –	Y.	य

1. Forke, A. : Mitteilungem des Seminars für Orientalische Sprachen, Vol. IX (1906), p. – 404.
2. तालिका में तारे के चिह्न लगा दिये गये हैं।
3. Hillier; Goodrich; Sothill; Giles; Wells – Williams; Mac Gillivray etc.
4. Yutang, Lin : Chinese English Dictionary of Modern Usage (Chinese University – Hongkong – (1972).
4. Mathews., R. H. : Chinese English Dictionary – 214 Radicals – (Harvard University Press. – 1956). अब यह शब्दकोष अप्रचलित होने लगा।
5. चीन के कुछ भागों में 'स' उच्चारण किया जाता है।

फ़ाइनल्स की तालिका

	उच्चारण			उच्चारण			उच्चारण	
क्रम	रोमन	हिन्दी	क्रम	रोमन	हिन्दी	क्रम	रोमन	हिन्दी
२५[2] –	A.	आ	३८[3] –	Iao.	इयाओ	५१[4] –	Uai.	वाई
२६[2] –	Ai.	आइ	३९[3] –	Ieh.	इय	५२[4] –	Uan.	वैन
२७[2] –	An.	ऐन	४०[3] –	Ien.	इयन्			
२८[2] –	Ang.	आंग	४१ –	Ih.	इर्र	५३[4] –	Uang.	वांग
२९[2] –	Ao.	आउ	४२ –	In.	इन	५४[4] –	Ui.	ओइ
३०[2] –	E.	अर[1]	४३ –	Ing.	इंग	५५ –	Un.	अन
३१ –	Ei.	ए	४४[3] –	Io.	इअ	५६ –	Ung.	अंग
३२[2] –	En.	अन	४५[3] –	Iu.	इयु	५७[4] –	Uo.	वू
३३ –	Eng.	अंग	४६[3] –	Iung.	अंग	५८ –	Ü.	यो
३४[2] –	I.	ई	४७[2] –	O.	ऑ	५९[5] –	Üan.	योअन
३५[3] –	Ia.	इया	४८[2] –	Ou.	ओ	६०[5] –	Üeh.	योअ
३६[3] –	Iai.	याइ	४९ –	U.	ऊ	६१[5] –	Ün.	योइ्न
३७[3] –	Iang.	यांग	५०[4] –	Ua.	वा	६२[2] –	Erh.	अर्र

फलक संख्या – २२५

चीनी लिपि की ध्वन्यात्मक पद्धति – १ : इस लिपि का सर्वप्रथम 'ध्वन्यात्मक पद्धति' द्वारा सरलीकरण फ़ैन चिय (Fan – Ch'ieh) ने पाँचवीं व छठी शताब्दियों के मध्य किया। उस समय इसका प्रयोग नाम मात्र रहा। फ़ैन चिय ने रेखा – संकेतात्मक लिपि के कुछ शब्दों के एक भाग को लेकर एक चिह्न तथा उसी शब्द की ध्वनि को चिह्न के लिए निर्धारित कर इस पद्धति का आविष्कार किया। यह आविष्कार चीन में लिपि के लिए एक अनोखा आविष्कार था। इसके छः प्रतिदर्श 'फ० सं० – २२६' पर दिये गये हैं, जिनका विवरण निम्नलिखित ६ कालमों में दिया गया है :—

पहले कालम में : हस्त – लिखित शब्द हैं।

दूसरे कालम में : मुद्रित शब्द हैं।

तीसरे कालम में : शब्दों के टोन – क्रम हैं।

चौथे कालम में : शब्दों की ध्वनि ऊपर रोमनीकरण चीनी – भाषा में तथा नीचे हिन्दी में दी है।

पाँचवें कालम में : शब्दों के अर्थ इंगलिश व हिन्दी में दिये हैं।

छठवें कालम में : सरल चिह्न हैं, जिनकी ध्वनि शब्द की ध्वनि होगी।

---

1. 'र' की ध्वनि हल्की होगी, पूरी नहीं।
2. इस संख्या वाले फाइनल्स स्वतंत्र हैं जिनकी संख्या ११ है।
3. इस संख्या वाली ध्वनियों में मीडियल 'ई' (I) है।
4. इनमें मीडियल 'व' ऊ (U) है।
5. इनमें यो (ü) है।

ध्वन्यात्मक चिह्नों का आविष्कार

शब्द-१	शब्द-२	टोन	ध्वनि	अर्थ - विवरण	सरलीकरण
皮	皮	२	p'i पी	LEATHER; SKIN चमड़ा खाल	ㄆ
穌	穌	१	SU सू	TO REVIVE पुनरुद्धार करना	ク
女	女	३	nü न्यू	WOMAN (FEMALE) महिला	女
基	基	१	ch'i ची	A FOUNDATION आधार; नींव	丄
安	安	१	an ऐन	REST ; PEACE विश्राम शान्ति	冖
兒	兒	१	erh अर्र	SUFFIX (To Noun) परसर्ग (संज्ञा के साथ)	儿

फलक संख्या – २२६

इसी प्रकार की पद्धति को जापान ने भी अपनाकर एक वर्णात्मक लिपि का आविष्कार कर लिया। चीन में इसका प्रयोग अधिक प्रचलित नहीं हुआ फिर भी कहीं कहीं हुआ। बीसवीं श० में इसका पुनर्जन्म हुआ तथा होपेई प्रांत ने इसको पूर्णरूप से ग्रहण कर लिया। इसमें ५० इनीशियल (initials) चिह्न अर्थात् व्यंजन थे तथा १२ फ़ाइनल (finals) चिह्न अर्थात् स्वर थे। इसकी वर्णावली एक पुस्तक[1] से ली गई है और 'फ० सं० – २२७' पर दी गई है।

ध्वन्यात्मक पद्धति – २ : १९५६ में कुछ सुधार कर चीनी सरकार ने इस पद्धति की तीन तालिकायें प्रकाशित करवाई जिनमें क्रमानुसार २३०, २९९ तथा ५४ शब्द थे। साथ साथ एक तालिका प्राथमिक शालाओं के लिए भी प्रकाशित कराई गई। यह इस लिपि के सरलीकरण का दूसरा प्रयास था जो मुख्यतया राष्ट्रीय भाषा के लिए था। इसकी वर्णावली 'फ० सं० – २२८' पर दी गई है।

इस वर्णावली में निम्नलिखित तीन प्रकार के चिह्नों का समावेश था तथा इसको राष्ट्रीय वर्णावली[2] के नाम से सम्बोधित किया गया :—

१. २४ प्रथमाक्षरों (Initials) की व्यंजनात्मक ध्वनियाँ दी गई हैं।
२. १६ अन्तिमाक्षरों (Finals) की स्वरात्मक ध्वनियाँ दी गई हैं।
३. २२ अन्तिमाक्षरों (Finals) की संयुक्तात्मक ध्वनियाँ दी गई हैं।

इस पद्धति में टॉमस वेड (Thomas Wade, 1818 – 1895) की रोमनीकरण पद्धति का समावेश था।

ध्वन्यात्मक पद्धति – ३ : इस पद्धति में लिपि का पुनः सरलीकरण किया गया। इसमें केवल २१ व्यंजन तथा १५ स्वर अर्थात् कुल वर्णों की संख्या ३६ दी गई है। इसके साथ साथ अक्षरों का टोन तथा उच्चारण के प्रकार भी अंग्रेज़ी हिन्दी में दिये गये हैं। यह वर्णावली श्रीमती चाउ[3] द्वारा प्रस्तुत की गई है 'फ० सं०– २२९'। यह पद्धति आधुनिक है इसमें अक्षरों से शब्द बनाये जाते हैं। इसके दो उदाहरण 'गुओ' तथा 'रेन' के इसी फलक के मध्य में दिये हैं। लिपियों की रेखाओं (Strokes) में भी कमी की जा रही है। उपर्युक्त तीनों वर्णावलियों में चिह्नों की ध्वनियों को रोमन तथा हिन्दी अक्षरों में दिया गया है।

शाब्दिक – चित्रों को लिखने की पद्धति : चीनी लिपि में जिन रेखाओं द्वारा शब्द का निर्माण किया जाता है, उन रेखाओं को अंकित करने की एक निर्धारित विधि या पद्धति निश्चित है। उसी पद्धति के अनुसार मनुष्य को बचपन से रेखा अंकित करने का अभ्यास कराया जाता है। इसकी पद्धति निम्नलिखित है :—

प्रथम ऊपर की रेखा तत्पश्चात् नीचे की खींची जाये। इसी प्रकार बाईं ओर की रेखा पहले तथा सीधी ओर की बाद में। इस पद्धति का एक प्रतिदर्श 'फ० सं० – २३०' पर 'गुओ (Kuo)' शब्द द्वारा लिखा गया है। अंग्रेज़ी के अंकों द्वारा रेखा खींचने का क्रम दिया गया है।

इस फलक में 'गुओ (Kuo)' शब्द के दो प्रतिदर्श दिये गये हैं। एक पूर्वकालिक तथा एक आधुनिक जिसका सरलीकरण कर दिया गया है। पूर्वकालिक 'गुओ' को अंत में दिखाया गया है।

1. Gelb, I. J. : A study of Writing (London – 1963), p. – 88.
2. Jansen, H. : Sign, symbol and Script (London – 1970), p. – 181.
3. श्रीमती चाउ १९७७ में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के चीनी – विभाग में प्रवक्ता थीं। उन्हीं दिनों लेखक ने उनसे भेंट करके यह वर्णावली प्राप्त की। आजकल श्रीमती चाउ कनाडा में हैं।

चीनी लिपि की ध्वन्यात्मक पद्धति – १

p'u पू	pu बु	mu मू	fu फ़ू	wu वू	p'i पी	pi बी
mi मी	t'u टू	ts'u त्सू	ch'u चू	su सू	shu शू	tsu ड्ज़ू
tu डू	chu जू	ju रू	lu लू	nu नू	ts'e त्स	tse ड्ज़
sse स्स	te डर	t'e टर	ch'ih चर्र	chih जर्र	shih शिर	jih र्र
ti डी	t'i टी	le ल	na ना	ni नी	nü न्यु	lü ल्यु
ch'ü च्यु	chü ज्यु	hsü श्यु	yü इयु	li ली	chi जी	ch'i ची
hsi शी	yi इह	ku गू	k'u कू	hu हू	ko गो	k'o को
ho हो	ख़ाइनहस	a आ	ao औ	an ऐन	ang आं	ai आइ
eh अः	ei ए	ou ओ	en अन	eng अं	o ओअ	erh अर्र

चीनी लिपि की ध्वन्यात्मक पद्धति -- २

b ब्	p प्	m म्	f फ़्	v व्	d द्	t त्
n न्	l ल्	g क	k ख	ng अं	kh ख़	djj द्ज़
tjj त्ज्ञ	gn ग्न्	ch ज	dz द्ज़	tś त्श	ś श्	z ज़्
dz द्ज़	ts त्स	s स	24 INITIALS / FINALS 16	i ई	u ऊ	ü यी
a आ	o ओ	ö ओय	e अर	a-i ऐ	ā आ	au औ
ō ऊ	ān आं	ön एं	ang अं	öng ओं	ɔ ए	ia या
io यो	ie ये	iāi याइ	iau याउ	iu इयु	ien येन	iang यं
ing इंग	ua उआ	uo उओ	in इन	uai उआई	ui उई	uān उआं
un उं	uang उआंग	ung उंग	üe योय	üen यों	ün योन	üng यंग

फलक संख्या – २२८

चीनी लिपि की ध्वन्यात्मक पद्धति - ३

इनीशियल्स (INITIALS) - चार टोन सहित				
टोन-१	२	३	४	ध्वनियां
ㄅ ब्	ㄆ प्	ㄇ म	ㄈ फ़	Labials. ओष्ठीय
ㄉ द्	ㄊ त्	ㄋ न्	ㄌ ल्	Dentals. दन्त्य
ㄍ ग्	ㄎ क्	ㄏ ह्	गुओ GUO ㄍㄨㄛ	Gutturals. कंठ्य
ㄐ ज़्	ㄑ छ्	ㄒ श	रेन Jen ㄖㄣ	Palatals. तालव्य
ㄓ द्ज़्	ㄔ त्ज़्	ㄕ श्र	ㄖ र्	RETROFLEXES प्रत्यग् वक्रण
ㄗ त्ज़्	ㄘ थ्ज़्	ㄙ स्	DENTAL-SIBILANTS (२१) दन्त्य - ऊष्मीय (व्यंजन)	

फ़ाइनल्स (FINALS) - 15 - स्वर (VOWELS)				
ㄚ अ	ㄛ ओ	ㄜ ए	ㄦ ये	ㄞ ऐ
ㄟ अइ	ㄠ औ	ㄡ ओऊ	ㄢ आङ्	ㄣ एं
ㄤ अङ्	ㄥ ओङ्	ㄧ ई	ㄨ ऊ	ㄩ इऊ

फलक संख्या - २२९

इसी फलक पर सबसे नीचे क्षैतिज पद्धति में दो शब्द 'इंगलिशमैन' तथा 'चाइनामैन[1]'। इन शब्दों का विवरण इस प्रकार है :—(फ० सं० – २३० के नीचे)।

बाईं ओर से पहला शब्द है 'इंग (Ying)' दूसरा शब्द है 'गुओ (Kuo)' तथा तीसरा शब्द है 'रन (Jên)'। इंग = इंगलैण्ड, गुओ = देश; रन = मनुष्य। इसके भावार्थ हुए 'इंगलिशमैन (अंग्रेज)' बाईं ओर से पहला शब्द है 'जुंग (Chung)' दूसरा शब्द है 'गुओ (Kuo)' तथा तीसरा शब्द है 'रन (Jên)'। जुंग = केन्द्रीय अथवा चीन; गुओ = देश; रन = मनुष्य। भावार्थ हुए 'चीन (केन्द्र) का निवासी' अर्थात् 'चाइनीज़'।

आठ मौलिक रेखाएँ (Strokes) : चीन की सम्पूर्ण लिपि इन्हीं आठ मौलिक रेखाओं द्वारा लिखी जाती है। उनके नाम तथा चित्र 'फ० सं० – २३०' पर ऊपर सीधी ओर दिये गये हैं। चीनी लिपि में एक स्ट्रोक के शब्द से ३३ स्ट्रोक तक के शब्द लिखे जाते हैं। अधिकतर २० या २२ स्ट्रोक द्वारा ही बहुत से शब्द लिख लिये जाते हैं। इससे अधिक स्ट्रोक वाले शब्दों की संख्या न्यून है। एक से २० स्ट्रोक तक के शब्द 'फ० सं० – २३१' पर दिये गये हैं। इस फलक में चार कालम बाईं ओर तथा चार कालम सीधी ओर दिये गये हैं जिनका विवरण इस प्रकार है :—

प्रथम कालम : इसमें रेखाओं (स्ट्रोक्स) की संख्या दी गई जिनके द्वारा शब्द का निर्माण किया गया है।

द्वितीय कालम : इसमें चीनी लिपि में शब्द लिखे गये हैं।

तृतीय कालम : इसमें ऊपर की ओर शब्द का उच्चारण रोमन लिपि द्वारा लिखा गया है और उसी के सीधी ओर टोन की क्रम – संख्या दे दी गई है ताकि पाठक को ज्ञात हो जाये कि शब्द का उच्चारण किस टोन में होगा। उसी के नीचे हिन्दी में भी उच्चारण लिख दिया है।

चतुर्थ कालम : इसमें शब्दों के अर्थ हिन्दी में दिये गये हैं।

इस फलक पर दिये गये शब्द दो पुस्तकों[2] से लिये गये हैं।

चीनी लिपि के अंक : कुछ चीनी अंक[3] 'फ० सं० – २३२' पर दिये गये हैं। साथ के कालम में देवनागरी में उन अंकों के उच्चारण तथा अंक दे दिये गये हैं।

चीन के दक्षिणी भाग की लोलो लिपि

इस लिपि का नाम लोलो जाति[4] के नाम पर पड़ा। इस जाति की भाषा तिब्बत – बर्मी थी। यह जाति दक्षिणी चीन के यूनान (Yunnan) और ज़ेकवान (Szechwan) प्रान्तों में बसी हुई थी।

१८७३ में फ्रांस का एक ईसाई – धर्म – प्रचारक वीयाल (Vial) यहाँ आया और इनकी बोलियों का अध्ययन किया। उसी वर्ष एक दूसरा फ्रांस का धर्म – प्रचारक डी – ओलोन (d' Ollone) जिसने

1. 'चाइनामैन' लिखना चीननिवासी अपमानजनक समझते हैं इसको लिखना चाहिये 'चाइनीज़' अथवा 'चीनी' 'चाइना-मैन' लिखने की भूल कदापि न कीजियेगा।
2. Sung, Yu Feng : Chinese in 30 Lessons.
   Williamson, H. R. : Teach Yourself Chinese.
3. Sung : Chinese in 30 Lessons, p. – 15.
4. Henry, A. : 'The Lolo's and other Tribes of Western China.' Journal of Anthropologic Institute's Vol. 33 (1903), p. – 99.

लिपि का सरलीकरण आठ मौलिक स्ट्रोक

萬	万	मं	एक लाख से अधिक	१-बिन्दी	५-बाएँ स्ट्रोक
開	开	खै	खोलना	२-लेटी रेखा	६-दाएँ "
億	亿	ई	क्यों	३-खड़ी रेखा	७-चढ़ते "
				४-मुड़े स्ट्रोक	८-कांटे

रेखाओं (Strokes) का प्रयोग

दो शब्दों का प्रतिदर्श

फलक संख्या – २३०

रेखाओं का (ट्रोक) द्वारा शब्द -- निर्माण

क्र॰ सं॰	शब्द	ध्वनि	अर्थ	क्र॰ सं॰	शब्द	ध्वनि	अर्थ
१	一	I^{1} ई	एक	११	魚	Yü^{2} ईयु	मीन
२	二	Erh^{4} अर्र	दो	१२	黃	Huang^{2} हांग	पीला
३	子	Tzu^{3} ड्ज़ू	बेटा; बच्चा	१३	黽	Min^{3} मिन	मेंढक
४	文	Wên^{2} वन	साहित्य	१४	鼻	Pi^{2} बी	नाक
५	甘	Kan^{1} गैन	मीठा	१५	齒	Ch'ih^{3} चर	सामने के दांत
६	舟	Chou^{1} जॉ	नाव	१६	龍	Lung^{2} लंग	ड्रैगन
७	見	Chien^{4} जियन	देखना	१७	龠	Yo^{4} योअ	बांसुरी
८	金	Chin^{1} जिन	धातु; सोना	१८	虩	Hsia^{4} शिया	चौंकना
९	首	Shou^{3} शो	सिर	१९	議	I^{4} ई	परामर्श
१०	馬	Ma^{3} मा	घोड़ा	२०	織	Chih^{1} जर	बुनना

फलक संख्या – २३१

चीनी लिपि के अंक

一	i १ ई	七	ch'i ७ ची	二十	erh shih २० अर शर
二	erh २ अर	八	pa ८ बा	二十八	अर शर २८ बा
三	san ३ सैन	九	chiu ९ ज्यु	三十	san shih ३० सैन शर
四	ssŭ ४ स्सू	十	shih १० शर	三十九	सैन शर ३९ ज्यु
五	wu ५ वू	十一	shih i ११ शर ई	四十	ssŭ shih ४० स्सू शर
六	liu ६ ल्यू	十五	shih wu १५ शर वू	千	pai १०० बाई

फलक संख्या - २३२

इस जाति की दो भाषाओं का अध्ययन किया। वीयाल ने लगभग ४२५ चिह्नों को एकत्रित किया और डी०, ओलोन ने लगभग १०३० चिह्नों को एकत्रित किया।

लोलो लिपि का सबसे प्राचीन अभिलेख लू कुआन हीन (Lu - K' uan - hien) में यूनान से १९०६ में प्राप्त हुआ था, जिसका काल चीनी विद्वानों ने 'प्रथम मिंग सम्राट् हुंग वू (१३६८ - १३९८)' निर्धारित किया है। दूसरा अभिलेख यूनान के एक उपनगर त्सान - त्सही - अंगाइ (Tsan - Tsih - Ngai) से प्राप्त हुआ जो एक चट्टान पर उत्कीर्ण किया हुआ था। इसकी दिशा कुछ अंशों में ऊपर से नीचे तथा कुछ अंशों में बायें से दायें थी।

पहले अभिलेख का काल मिंग वंश के प्रथम शासक तथा संस्थापक हुंग - वू के शासनकाल (१३६८ से १३९८ तक) का तथा दूसरा शिलालेख १५३३ ई० का माना जाता है।

इस लिपि के उद्भव के विषय में निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कहा जा सकता परन्तु चीनी परम्परा के अनुसार एक आवी ने इसका आविष्कार किया था।

इस लिपि में वर्ण या अक्षर नहीं होते परन्तु एक चित्र या चिह्न ही एक ध्वनि द्वारा एक वस्तु या भाव का बोध कराता है। 'फ० सं० - २३३' पर वीयल द्वारा पहचाने गये कुछ चिह्न उनके उच्चारण के साथ दिये गये हैं। उसके पश्चात् डी० ओलोन द्वारा पहचाने गये चिह्न[1] दिये गये हैं। तीसरे कालम में कियाओ कियो (Kiao - Kio) भाषा के चिह्न तथा चौथे कालम में वेइ - निंग (Wei - Ning) भाषा के चिह्न दिये गये हैं। इन दोनों भाषाओं के चिह्नों का भी डी. ओलोन ने ही रहस्योद्घाटन किया है।

म्याओ - त्से लिपि

यह दक्षिण - पश्चिमी चीन की एक आदिवासी - जाति की लिपि है। यह जाति चीन के सुदूर दक्षिण - पश्चिमी पहाड़ियों में निवास करती थी। यहाँ भी धर्म - प्रचारक डी ओलोन पहुँचा और वहाँ के एक आदिवासी के सहयोग से उसने एक ३३८ चिह्नों का शब्द - कोष तैयार किया। उनमें से कुछ चिह्न 'फ० सं० - २३४' पर दिये गये हैं।

इसके उद्भव व विकास के विषय में कुछ ज्ञात नहीं।

मोसो लिपि

मोसो एक जाति का नाम है जो यूनान के उत्तर - पश्चिम की ओर निवास करती है तथा तिब्बत भाषा बोलती है। एक घुमक्कड़ विद्वान् तेरियन डी लकाउपेरी (Terrien de Lacouperie) ने इसकी लिपि के कुछ चिह्न १८८५ में रॉयल एशियाटिक सोसायटी के जर्नल (Journal of the Royal Asiatic Society) में प्रकाशित कराये। उन्हीं चिह्नों में से कुछ चित्रात्मक चिह्न 'फ० सं० - २३५' पर दिये गये हैं।

ची तान लिपि

चीन के उत्तर - पूर्व में एक छोटा सा राज्य ची तान (Ch'i - tan) था। यह राज्य तुंगूसी जाति का था। यह राज्य यू चेन (Yu - Chen) ने ११२५ में नष्ट कर दिया। यू चेन ने ची तान लिपि का आविष्कार १११९ में किया। ११३८ में इसको सरल बनाया गया तथा इसका नाम 'छोटी लिपि' रख दिया

1. Parker, E. H. : 'The Lolo - Written Characters' I. A. XXVII (1895), p. - 172.

चीन के दक्षिणी भाग की लोलो लिपि

शब्द	वीयल द्वारा चिन्ह	वीयल द्वारा उच्चारण	ओलोन द्वारा चि०	ओलोन द्वारा उच्चा०	कियाओ कियो चि०	कियाओ कियो उच्चा०	वेइ निंग चिन्ह	वेइ निंग उच्चा०
वर्ष		कोऊ K'OU		कोऊओ KOUO		कोऊ K'OU		क-आओ K'AO
जल		जे je		जेऊ jeuh		गोऊ gou		इए Yie'
हस्त		ले le'		लोऊ lou		लोऊ lou		ला la
माता		मा ma		मो mo		मू mu		मा ma
चन्द्र		ल्हा hla		ल्हो hlo		ल्हो hlo		ल्हो hlo
अश्व		मोन mon		ह्म hm		म् m'		मोन mon
पत्थर		लोउ lou				ल्लो llo		लो lo
आकाश		मोन mon		मेउ meu				मोन mon
पर्वत		पो po		बोह boh		बोउ bou		बो bo
देखना		ने ne'		च्लो Chlo		हेउ h'eu		ना na
एक		ती ti		त्से tse		त्से t'se		ता ta
दो		ग्नी gni		निक nic		न्जे nje		ग्नी gni
तीन		से se		सो so		सो so		सेउ seu
दस		त्से tse		त्सी tsi		त्सी tsi		त्सेउ tseu

फलक संख्या – २३३

दक्षिण -- पश्चिम चीन की म्याओ -- त्से लिपि

चिन्ह	उच्चा॰	अर्थ	चिन्ह	उ॰	अर्थ	चिन्ह	उ॰	अर्थ
	ह्री	चन्द्र		पा॰ के	आम्रो		मों के	जाम्रो
	ह्ले	अग्नि		त्सी ने	नर		ली ती	उंगली
	ने	घोड़ा		त्सी ने	मनुष्य		ई	एक
	क्यो	ग्राम		त्सों तो	नारी		आ ओ	दो
	चो	लिखना		तू लो	बाएँ हाथ		पी	तीन
	ढेऊ	पुस्तक		त्स ओं तो	स्त्री		क ऊ	दस

फलक संख्या – २३४

मोसो लिपि

फलक संख्या – २३५

गया परन्तु इसके साथ साथ ची तान लिपि भी चलती रही। ११८० में सम्राट् शर – त्सुंग (Shih – tsung) ने भी इस लिपि को मान्यता प्रदान की। १२३४ में मंगोलों ने यू चेन का वध कर दिया परन्तु ची तान लिपि का प्रयोग बना रहा। १६५० में मंचूरिया की लिपि ने इस का स्थान ग्रहण कर लिया।

काय जुंग जू (K'ai – jung – ju in Honan) होनान के एक नगर के निकट येन ताइ (Yen – ta'i) उपनगर से प्राप्त उपर्युक्त दी गई 'छोटी लिपि' के एक अभिलेख को १८८३ में देवेरिया (Deveria) ने प्रकाशित करवाया। तत्पश्चात् एक चीन – विशेषज्ञ (Sinologist) हर्थ (Herth) ने बड़ी कठिनाई से कुछ शासकीय प्रलेख प्राप्त कर लिये। यह प्रलेख चीनी तथा यूचेन लिपियों में लिखे हुए थे। डबल्यू० ग्रूबे (W. Grube) ने बड़े परिश्रम से २२ शासकीय प्रलेख का अध्ययन करने के पश्चात् अनुवाद किया। तदनन्तर इसके ८७० शब्दों का शोध करके ज्ञात हुआ कि यह लिपि अक्षरात्मक है। इसके लिखने की पद्धति ऊपर से नीचे तथा दायें बायें चीनी लिपि की तरह है।

इस लिपि के कुछ शब्द, जिनका ग्रूबे ने अनुवाद किया 'फ० सं० २३५' पर दिये गये हैं। वाक्य के अर्थ इस प्रकार किये जायेंगे :—"महाराजाधिराज ने आपके सूचनार्थ भेजा है (*His Majesty presents for your information*)"।

इसी 'फ० सं० – २३५' पर नीचे चीन की 'ऐन्द्रजालिक लेखन कला' (Magical Script) के कुछ उदाहरण (प्राचीन व अर्वाचीन काल के) दिये गये हैं।

पठनीय सामग्री

Bacot, J. : Les Mo – So (1913).

Blackney, R. B. : A Course in the Analysis of Chinese Characters (1926).

Brandt, J. J. : Introduction to Spoken Chinese (1944).

Creel, H. G. : The birth of China (1938).

Chalfant, F. H. : Early Chinese Writing (Memoires of the Carnegi Museum, 1911)

Chan, Shan Wing : Elementary Chinese (1951)

Chao, Y. R. : Language and Symbolic Systems (Cambridge – 1960)

Chih Pet Sha : A chinese First Reader (1948)

Gelb, J. I. : A study of writing (1965)

Fitzgeral, C. P. ; China – A short Cultural History.

Goodrich, L. C. ; A short History of Chinese People (1951).

Hopkins, L. C. : The Development of Chinese Writing (1910).

Karlgren, B. : Sound and Symbol in Chinese (1971)

" " : Philology and Ancient China (1926)

" " : The Chinese Language (N. Y. – 1949)

Latourette, K. S. : The Chinese – Their History and Culture (1946).

,, ,, : The Development of China (1946).

Laufer, B. : A Theory of the Origin of Chinese Writing (American Anthropologist – 1907).

,, ,, : The Nichols Mo – So Manuscript (The Geographical Review – 1916)

Mathews, R. H. : Chinese English Dictionary (Harvard Uni. Press – 1916)

Nehru, J. L. : Glimpses of World History.

Ollone, d.' H., M., G. : Mission d' Ollone (1909).

Owen, G. : The Evolution of Chinese Writing (1911).

Parker, E. H. : The Lolo Written Characters (The Indian Antiquary Vol. XXVII – 1895.)

Peisha, Chih : *A* Chinese First Reader (1948)

Sung, Yu Feng and Black, Robert : Chinese in 30 Lessons (1945)

T'oung Pao

Wieger, L. : Chinese Characters (1940).

Williamson, H. R. : Teach Yourself Chinese (1972).

□

मध्य एशिया

इसमें मंगोलिया, साइबेरिया, मंचूरिया, सोग्दिया आदि देशों की लिपियों का वर्णन दिया गया है।

मंगोलिया

मंगोल एक पर्यटनशील जाति थी जो मध्य एशिया के पठारों व साइबेरिया के मैदानों में घूमा करती थी। यह जाति किसी प्रकार से मुख्य नहीं समझी जाती थी। इस जाति के लोग इधर उधर प्रकीर्णित थे और इनमें किसी प्रकार की एकता का भाव नहीं था, परन्तु अकस्मात यह लोग आपस में एक हो गये और इन्होंने अपना एक नेता चुन लिया जिसका नाम 'बड़ा ख़ान' (एक पदवी) रखा गया। यह था तिमूचिन जो बाद में चंगेज़ ख़ान के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

इतिहास : इस जाति का इतिहास इसी ख़ान के काल से आरम्भ होता है। इसका जन्म ११५५ में हुआ और पदवी मिली जब यह ५१ वर्ष का था। चंगेज़ ख़ान के अन्तर्गत इस जाति के वीरों ने पृथ्वी को हिला दिया। पश्चिम में सीरिया तथा हंगेरी तक और पूर्व में चीन की सीमा तक इसने अपनी विजय पताका फहराई। शक्तिशाली वीर युवावस्था में ही युद्ध में रत रहते हैं और अन्त में विलासी हो जाते हैं परन्तु चंगेज़ ख़ान ने अपनी ५२ वर्ष की अवस्था में अपने पराक्रम का प्रदर्शन किया। संसार का यह पहला मनुष्य है जिसने अपने जीवन काल में इतने देशों को रौंद डाला।

इस जाति ने मंगोल वंश के नाम से चीन देश पर १२७९ से १३६८ तक शासन किया परन्तु इस जाति का अपना कोई देश न था। इनका एक मुख्य भूमि भाग अवश्य हो गया था जहाँ यह लोग स्थापित हो गये थे और उसी को मंगोलिया के नाम से सम्बोधित किया जाता था जो चीन साम्राज्य के अन्तर्गत था। उसका मुख्य नगर उर्गा (आ० उलान बतोर) था। आरम्भ में यह 'शम्मा' (आकाश) के पुजारी थे परन्तु बाद में यह बौद्ध धर्मानुयायी बन गये। इस धर्म के पूज्यनीय थे 'लामा' जिनको यह लोग जीवित बुद्ध भगवान् की तरह मानते थे।

जब चीन में मंचू राज्य का अन्त हुआ, १९११ की क्रान्ति हुई तो यहाँ के उपशासक स्वतन्त्र हो गये। परन्तु यह स्वतंत्रता उत्तरी मंगोलिया में हुई और तभी से दो भाग हो गये, उत्तरी और दणिक्षी मंगोलिया, अथवा बाहरी और भीतरी। यह भीतरी भाग चीन के अन्तर्गत रहा तथा बाहरी रूस के प्रभाव में आ गया। १९२४ में एक घोषणा के अनुसार यह देश पूर्ण स्वतंत्र हो गया परन्तु रूस के प्रभाव के कारण समाजवादी हो गया। इसको रूस से हर प्रकार का सहयोग प्राप्त होता रहा और उन्नति के पथ पर अग्रसर होता रहा।

मंगोलिया की लिपियाँ : मंगोल जाति ने केवल नर – संहार ही नहीं किया अपितु अपनी जाति के उत्थान के लिए कई प्रकार की लिपियों का भी निर्माण किया।

मंगोल जाति की उपजातियाँ, जिन्होंने अपनी लिपि का विकास किया
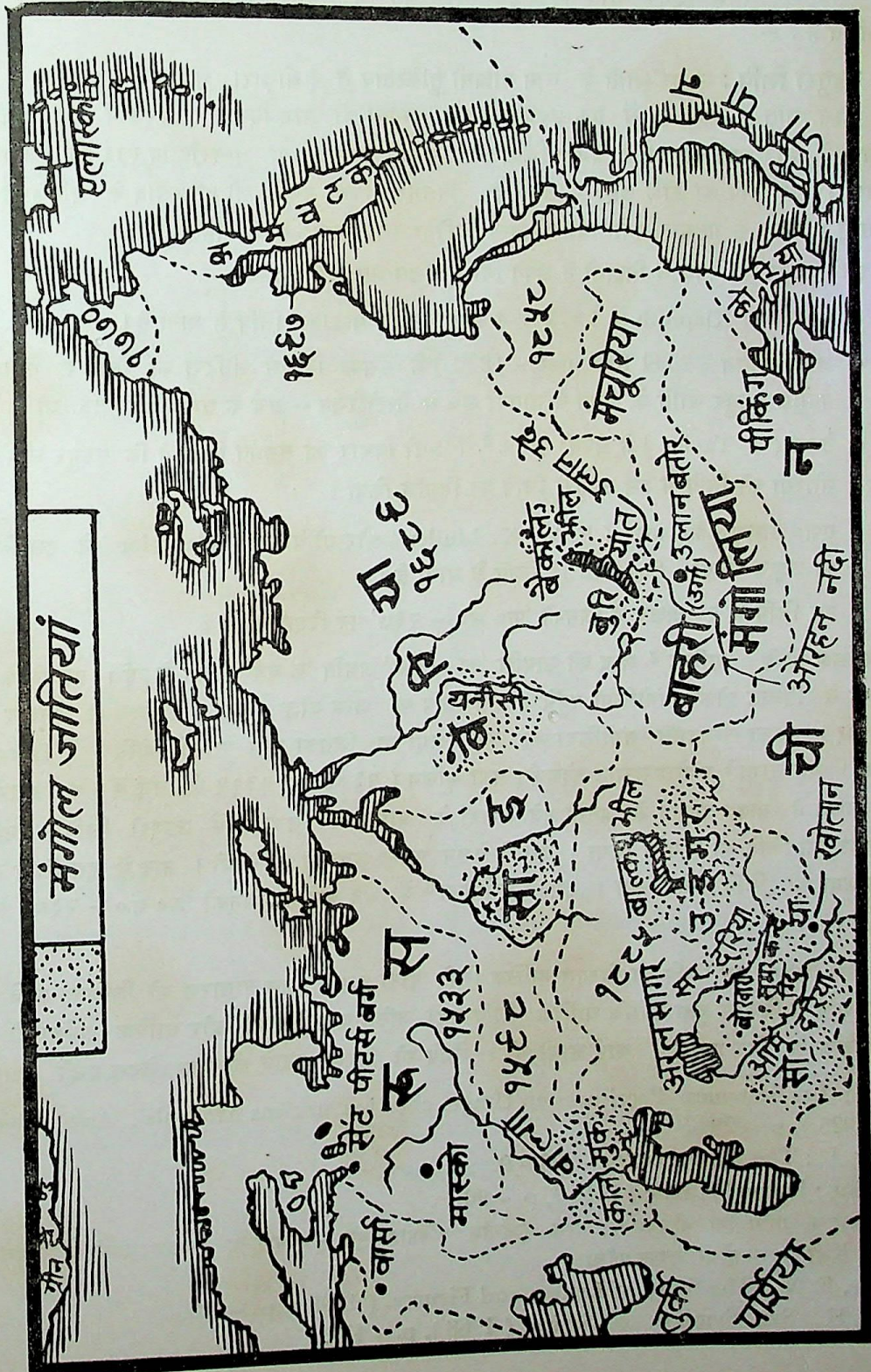
विश्व की प्रसिद्ध हिंसक जाति ने अहिंसक बौद्ध धर्म अपनाया। मंगोलिया की लिपियों का वर्णन निम्नलिखित है :—

उइगुरी लिपि : उइगुर जाति के लोग पश्चिमी तुर्किस्तान में (बोख़ारा, समरक़न्द एवं बल्ख़) रहा करते थे। इस जाति ने छठी ई० में एक उच्चकोटि की सभ्यता को जन्म दिया। १२२७ में इस लिपि का चंगेज ख़ान ने सारे मध्य एशिया में प्रयोग किया तथा इसको राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की लिपि का स्थान दिया। इस लिपि का काल ७५० – ७६० ई० निर्धारित किया गया है जो तुर्किस्तान के अभिलेखों पर आधारित है। पेल्यफ़ के अनुसार मंगोलिया की अन्य लिपियाँ इसी लिपि[1] से विकसित हुईं।

इसके उद्भव के विषय में विद्वानों ने अपने निम्नलिखित मत दिये हैं :—

- क्लाप्रोथ (Klaproth – 1812) ने इसका उद्भव मण्डायक लिपि से माना है।
- अबेल रेमूसत (Abel Remusat – 1820) ने इसका विकास सीरिया की लिपि से माना है क्योंकि उइगुर जाति के लोगों ने सातवीं श० में नेस्टोरियन – चर्च के धर्म को अपनाया था।
- टेलर (I. Taylor) ने अपनी पुस्तक[2] में इसी विचार का समर्थन किया है कि उइगुर लोगों ने सीरिया की लिपि से इस उइगुरी लिपि का निर्माण किया।
- एफ० डबल्यू० के० मूलर (F. W. K. Muller) और गौथिआट (Gauthiot) ने इस लिपि का उद्भव सोग्दी (Sogdian)[3] लिपि से माना है।

इस लिपि में २० अक्षर थे जिनको 'फ० सं० – २३७' पर दिया गया है।

गालिक लिपि : 'गालिक'[4] शब्द की उत्पत्ति 'का – लेख' अर्थात् 'क वर्ग' लेखन से हुई। इस लिपि के अक्षर भारत से तिब्बत होकर मंगोलिया पहुँचे। इस लिपि का जन्म बौद्ध – धर्म – साहित्य के अनुवाद के लिए हुआ था। इसका जन्मदाता मंगोलिया का एक लामा था जिसका नाम सोर्ज़ी ओसिर (Tsordji Osir) था। यह लामा[5] मंगोल सम्राट् ओलजैतू तथा कूलिंग (१३०७ एवं १३११ ई० सन् में) के अन्तर्गत था। इस लामा ने साक्य पण्डित के बनाये गये अक्षरों के आधार पर तथा इसमें उइगुरी लिपि के पाँच चिह्न जोड़कर इस लिपि का निर्माण किया। इसकी लेखन पद्धति ऊपर से नीचे थी। बाद में इस लिपि का स्थान मंगोलिया की लिपि ने ले लिया। इसकी वर्णमाला[6] में ४९ वर्ण थे जिनको 'फ० सं० – २३८' पर दिया गया है।

मंगोल लिपि : इस लिपि का विकास गालिक लिपि द्वारा हुआ। जन साधारण को शिक्षित करने के लिए इसका जन्म व विकास हुआ क्योंकि गालिक लिपि बड़ी जटिल व कठिन थी और धार्मिक कर्मकाण्डों के लिए व साहित्य के लिए प्रयोग में लाई जाती थी। लिपि को सरल बनाने के लिए केवल उन्हीं अक्षरों

1. Pelliof : 'Les Systemes d'ecritures en Usage chez les anciens Mongols', Asia Major II. (1925), p. – 284.
2. Taylor, I. : The Alphabet, p. – 308 – 9.
3. Gauthiot : Journal Asiatic (1911), p. – 90.
4. 'लामा' शब्द का प्रयोग तथा बौद्धधर्म का परम पूज्यनीय अधिष्ठाता बुद्ध – भगवान् का अवतार मानने का विश्वास मंगोलिया से ही आरम्भ होकर तिब्बत पहुँचा।
5. Skinner, F. N. : The Story of Letters and Figures. (1902), p. – 203.
6. Jansen, H. : Syn, Symbol and Script, (1968), p. – 417.

उइगुरी लिपि

अ आ	इ ई	उ ऊ	ए
ग क	य ज	र	ल
त	द	च	स
श	ज़	न	ब प
व	व	म	ह

फलक संख्या – २३७

गालिक लिपि

अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ए	ऐ	ओ
औ	अं	अः	क	ख	ग	घ	ङ	च
छ	ज	झ	ञ	ट	ठ	ड	ढ	ण
त	थ	द	ध	न	प	फ	ब	भ
म	य	र	ल	व	श	ष	स	ह
		क्ष	ज़	अई	श़			

फलक संख्या – २३८

को रखा गया जो भाषा के अनुसार प्रयोग में आते थे। इसको ऊपर से नीचे तथा बायें से दायें लिखा जाता था।

मंगोलिया में एक और लिपि भी प्रचलित थी जिसका विकास उइगुरी लिपि से तेरहवीं श० में किया गया तथा उसके पश्चात् सोग्दी लिपि का भी इसमें सम्मिश्रण हुआ।

'फ० सं० – २३९' पर मंगोल लिपि के दो प्रकार के वर्ण दिये गये हैं। ऊपर वाली लिपि की वर्ण – माला[1] मंगोलिया के दूतावास द्वारा नई दिल्ली से प्राप्त की गई है। इस लिपि को ऊपर से नीचे किस प्रकार मिला कर लिखा जाता है पृष्ठ के नीचे (सीधी ओर) 'खुदानन्द' शब्द लिख कर बतलाया गया है। दूसरे प्रकार की लिपि पृष्ठ के नीचे की ओर दी गई है जो उइगुरी लिपि से सम्बन्धित है। इस लिपि का एक पाठ[2] 'फ० सं० – २४०' दिया गया है जिसको ऊपर से नीचे तथा फिर बायें से दायें पढ़ा जायेगा और जिसके अर्थ निम्नलिखित हैं :—

"प्राचीन काल में कबालिक के नगर में सेन – तारोल्तू नाम का एक (ब्राह्मण) बरह्मिन था जो ब्रह्म विद्या के प्रत्येक विषय में निपुण हो गया था।"

इसी पृष्ठ पर सीधी ओर मंगोलिया की लिपि में अंक भी दिये गये हैं।

१९४१ से सीरिल लिपि का, जिसका प्रयोग रूस में होता है, प्रयोग आरम्भ हो गया।

कालमुक लिपि : कालमुक लोग पर्यटनशील थे। इनके घर नहीं तम्बू होते थे जिनको अपने साथ लिए फिरते थे और उन्हीं में रहते थे। यह लोग सतरहवीं शताब्दी में वॉल्गा नदी के दक्षिणी भाग में बस गये। वैसे तो यह मध्य – एशिया के मैदानों में फैले हुए थे परन्तु आपस के झगड़ों के कारण १६३६ में अपनी जन्म भूमि छोड़ कर रूस चले गये थे। अठारहवीं श० में रूस एवं पर्शिया के युद्ध में यह लोग रूस के लिए अच्छे योद्धा सिद्ध हुए। जब वहाँ की एक अन्य जाति से झगड़ा हो गया और इनके बहुत से साथी वीर – गति को प्राप्त हुए तो बचे – खुचे फिर पश्चिमी तुर्किस्तान में आकर बस गये। यह लोग बौद्ध – धर्म के पालनकर्त्ता थे।

लामा जया पण्डित ने १६४८ में इस लिपि का निर्माण मंगोलिया लिपि द्वारा किया[3]। इस लिपि का नाम 'तोदार हाई उदुक' रखा। इसमें २४ वर्ण होते थे जो 'फ० सं० – २४१' पर दिये गये हैं।

बुरियात लिपि : मंगोल जाति की अनेकों उपजातियों में से एक उपजाति का नाम बुरियात था जो साइबेरिया के मैदान में बैकाल झील के आसपास पहले घूमा करती थी परन्तु फिर उन्नीसवीं श० में उसी भू भाग में वस गई। इस उपजाति के लोग मुख्यतया पशु – पालन का कार्य करते थे। उनकी भाषा में अनेकों बोलियां प्रचलित थीं। सतरहवीं श० के अंत में इन लोगों ने बौद्ध धर्म के लामावाद को अपना लिया परन्तु बाद में रूस के प्रभाव में आकर यह लोग ग्रीक ऑर्थोडाक्स चर्च (Greek Orthodox Church) के ईसाई – धर्म के अनुयायी हो गये। इसी सतरहवीं श० में यह भू भाग एक आक्रमण द्वारा रूस के अधिकार में आ गया। १९२३ में इस भू भाग की सीमा निश्चित करके बुरियात ए० यस० यस० आर० (Buryat A. S. S. R.)[4] स्थापित कर दिया गया तथा रूस का अंग वन गया।

---

1. लेखक ने स्वयं दिल्ली स्थित मंगोलिया के राजदूत से १९७३ में प्राप्त की।
2. Sehmidt, I.J. : Grammar der Mongolian Spracha (St. Petersberg. – 1831), p. – 16.
3. Laufer, B. : Keleti Szemle, Vol. VIII, (1922). p. – 186.
4. Autonomous Soviet Socialist Republic.

मंगोलिया की दो प्रकार की लिपियाँ

अ	ए	इ	उ	ओ	ऊ	ब	बे	बी	बो	बु
बू	क़	क़ो	कू	गे	गो	गू	न	ने	नी	नो
नु	नू	ह	म	ल	छे	थ	द	च	स	य
फ़	फ	छ	श	व	ज़	दूसरा प्रकार	अ	ए	इ	ओ
उ	औ	ऊ	न	ब	क	ग	क़	ज	म	ल
र	त	द	य	स	श	च	व		खु क्षा न द	अक्षरों को मिला कर लिखा गया

मंगोल लिपि का एक प्रतिदर्श

अंक

अंक	नाम
१	नेरव
२	हयुर
३	कोरो
४	तुर
५	थाऊ
६	चुरगा
७	टोलो
८	नैम
९	पुस
१०	अरऊ

कालमुक लिपि

अ	ए	इ	ओ	उ
औ	ऊ	न	ब	प
क	ग	ज	म	ल
र	त	द	य	स
श	च	व	च़	

फलक संख्या – २४१

इस लिपि का निर्माण लामा नाग्द वां दोर्जे ने (रूसी भाषा में अग्वां दोर्जीव – Agvan Dordjiev) १९२० में किया परन्तु बुरियात लोग इसको अपना नहीं सके, तदनन्तर १९३१ में बुरियातियों ने रोमन लिपि का प्रयोग आरम्भ किया परन्तु यह लिपि भी प्रयोगात्मक न बन सकी। १९३७ में रूस की सीरिलिक लिपि अपना ली गई और यही राजकीय लिपि भी बन गई।

'फ० सं० – २४२' पर केवल वह लिपि दी गई है जो लामा दोर्जे ने तैयार की थी। इसमें २३ वर्ण थे। यहाँ की सीरिलिक लिपि जो मूलतः रूस ने अपनाई थी रूस की लिपि के वर्णन के साथ दी जायेगी।

तोख़ारी लिपि : तोख़ारी जाति के मंगोलों ने अपनी तोख़ारी भाषा के लिए बौद्ध साहित्य द्वारा भारतीय पद्धति पर, सातवीं व आठवीं श० के आस पास, पूर्वी तुर्किस्तान में इसका आविष्कार किया। ए० वान गबैन (A. Von Gabaln) ने इस लिपि के कुछ अभिलेख १९५१ में एक प्राचीन बौद्ध मठ से प्राप्त किये। इसकी वर्णमाला 'फ० सं० – २४३' पर दी गई है। तोख़ारियों ने अपने निवास के भू – भाग को तोख़ारिस्तान नाम दिया जिसकी राजधानी बल्ख़ थी।

मंचूरिया

इतिहास : मंचूरिया का दूसरा नाम मांचाओ कुओ (Manchoukuo) है। यहाँ के निवासी मूलतः मंगोल जाति की एक शाखा तुंगू जाति के थे। यह पर्यटनशील थे। सतरहवीं श० में इस जाति के एक नेता ली जू चेंग (Li Tz■ – Cheng) ने चीनी शासन के विरुद्ध विद्रोह कर दिया तथा स्वयं चीन – सम्राट् होने की घोषणा कर दी। इस विद्रोह में चीन साम्राज्य के उच्च सेना – पदाधिकारी भी भीतरी – रूस से सहयोगी थे। यही ली १६४४ में चीन के मंचू वंश का संस्थापक बना। इस देश का मुख्य नगर शीकिंग (Hsiking) था।

मंचू वंश के शासन के अन्तिम दिनों में मंचूरिया में रूस का प्रभाव बढ़ गया था। परन्तु यह प्रभाव रूस व जापान के १९०४ – ५ के युद्ध के पश्चात् कम हो गया और इसकी जगह जापान ने ले ली।

१९३० में जापान ने सैनिक आक्रमण करके मंचूरिया को अपने अधीन कर लिया। १९३२ में यह जापान का 'मांचाओ कुओ' के नाम से एक प्रांत बन गया। तत्पश्चात् यहाँ की जनसंख्या में जापानी अधिक संख्या में आ गये। जापान के साथ चीन का बर्षों युद्ध चलता रहा। साम्यवादी चीन का राज्य स्थापित होने के पश्चात् मंचूरिया फिर चीन देश में सम्मिलित कर लिया गया।

लिपि : तेरहवीं श० से मंचूरिया निवासियों ने मंगोलिया की भाषा व लिपि[1] का प्रयोग किया। जब चीन में मं चू वंश का शासन आरम्भ हुआ तब सतरहवीं श० में मंगोलिया की लिपि में सुधार किया गया तथा मंचूरिया की मुख्य भाषा के अनुसार यहाँ के एक विद्वान् दा – हाई ने एक स्वतंत्र लिपि का निर्माण किया। १९३७ के पश्चात् यहाँ की लिपि लोप हो गई और उसका स्थान चीनी लिपि ने ग्रहण कर लिया।

यहाँ की लिपि में २३ वर्ण[2] थे जो 'फ० सं० – २४४' पर दिये गये हैं।

---

1. Wylie, A. : 'A Discussion on the Origin of the Manchus and their written Character' – Chincse Researches, IV. (Shanghai – 1897).
2. Meillet – Cohen : Les langues du monde (1924), p. – 238.

बुरियाती लिपि

अ	ए	इ	ओ	उ
ऊ	औ	न	ब	प
च़	ग	क	म	ल
र	त	द	य ज	स
श	च	व		

फलक संख्या – २४२

तोखारी लिपि

अ		आ		इ		ई		उ		ऊ		ए	
ओ		ऐ		औ		ॠ		क		ख		ग	
घ		ङ		च		छ		ज		झ		ञ	
ट		ठ		ड		ढ		ण		त		थ	
द		ध		न		नं		प		फ		ब	
भ		म		य		र		ल		व		श	
ष		स		ह		मं		हं		ख़		ह्व	
क़		व		ड़		ळ		न्ह		म्ह		स्ह	
श्ह		ष्ह		थ्ह		था		थि		थी		थु	
थू		थे		थो		थै		थौ		थ्क		श्क़	

फलक संख्या – २४३

मंचूरिया की लिपि

अ	ए	इ	ओ	उ
अॅ	न	ब	प	च़
ग	क	ज	म	ल
र	त	द	य	स
श	च	व		

फलक संख्या – २४४

सोग्दिया

इतिहास : सोग्दिया (प्राचीन पर्शियन – सुगुदा; ग्रीक – सोग्दियाना) ई० पू० की पाँचवीं शताब्दी में प्राचीन पर्शियन साम्राज्य का एक प्रांत था। ई० पू० की दूसरी श० में ग्रीक शासकों ने इसको बैक्ट्रिया (बख्त्रिया) राज्य में सम्मिलित कर लिया। आधुनिक समरकन्द एवं बोख़ारा के भूमि – भाग को सोग्दिया कहते हैं। सोग्दिया के निवासी प्राचीन पर्शिया के ही निवासी थे जो पूर्वी तुर्किस्तान में वस गये थे। इनका मंगोल निवासियों के साथ सम्मिश्रण हो गया।

लिपि : सोग्दी भाषा का मध्य एशिया[1] में कई शताब्दियों तक प्रचलन रहा। मुलर को १९०९ में क़ारा बल्गासुन के निकट उत्तरी मंगोलिया में एक नवीं श० का त्रैभाषिक शिलालेख प्राप्त हुआ। इस भाषा का प्राचीनतम् अभिलेख तुन हुआंग नगर क एक घण्टा – घर पर अंकित सर आरेल स्टाइन (Sir Aurel Stein)[2] को १९०८ में प्राप्त हुआ जिसका काल ईसा की दूसरी श० माना जाता है। दो जर्मन विद्वानों यफ० सी० एन्द्रियास (F. C. Andreas) और एफ० डबल्यू० म्युलर (F. W. Mueller), न तथा एक फ्रांस के आर० गौथियत (R. Gauthiot) ने इस लिपि का रहस्योद्घाटन किया।

मुलर तथा अन्य विद्वानों ने इसका उद्भव अरमायक लिपि से माना है। इसमें २० वर्ण होते हैं। इस लिपि की वर्णमाला[3] ली काक (Le Coq)[4] ने १९१९ में तैयार की जो 'फ० सं० – २४५' पर दी गई है।

साइबेरिया

इतिहास : साइबेरिया को रूसी भाषा में सिबिर तथा संस्कृत में 'शिबिर' कहते हैं। यहाँ क प्राचीन मूल निवासी इनीसियन थे। तदनन्तर उग्रो – सम्योदी ई० पू० की तीसरी श० में आकर बस गये। १५८१ में कज़ाक यरमाक ने इस भू भाग को अपने अधीन कर लिया। कज़ाक के अर्थ हैं सवार'। इस जाति के लोग बड़े वीर योद्धा होते थे। अब यह लोग रूस के निवासी माने जाते हैं।

साइबेरिया की लिपियाँ : यहाँ दो प्रकार की लिपियों का विकास हुआ, एक यनिसी तथा दूसरी ओरहन। पहली यनिसी नदी के निकट मिलने से यनिसी नाम पड़ा तथा दूसरी ओरहन नदी के पास मिलने के कारण ओरहन लिपि नाम पड़ा।

यनिसी लिपि : इस लिपि का प्रथम अभिलेख एक जर्मन विद्वान्, जो साइबेरिया में प्राकृतिक अध्ययन करने आया था और जिसका नाम मेसरस्मिथ (Messer Schmidt – B. 1665, d. 1735) को १७२२ में यनिसी नदी एवं प्राचीन मंगोल – राजधानी काराकोरम के विध्वस्त नगर के निकट प्राप्त हुआ था। 'फ० सं० – २४६' पर यनिसी लिपि दी गई है।

---

1. मार्कोपोलो की यात्रा के विवरण प्रकाशित होने के पश्चात् योरोप के इतिहासकारों ने मध्य-एशिया के भूभाग को, जो चीन साम्राज्य का एक भाग था, कैथे के (CATHAY) नाम से सम्बोधित किया जिसमें काशगर, समरकन्द, खोतान आदि नगर सम्मिलित थे।
2. Stein, Aurel : Serindia, II, p. – 672.
3. Madden, F. Universal Palaeoraphy (1909), p. – 209.
4. Le Coq : Kurze Einführung indie uigurische schrift kunde Mitt. d. Sem. f. Orient Spr. XXII. plate – II (1919).

सोग्दी लिपि

अ आ	इ ई	उ ऊ	ए
ग क	य ज	र	ल
त	द	च	स
श	ज़	न	ब प
व	व	म	ह

फलक संख्या – २४५

साइबेरिया की यनिसी लिपि

अ	ए	इ ई	ओ उ	औ ऊ	य ज१	य ज२
ब १	ब २	च ज	क ग	द १	द २	य ए२
ग २	क २	को कू	ल १	ल २	म	न १
न २	न	अंच	अंग	प	क़	क़ो क़ू
र १	र २	स १	स २	श	इस लिपि में	३२ वर्ण हैं

फलक संख्या – २४६

ओरहन लिपि : इस लिपि का एक शिलालेख उसी जर्मन विद्वान् को ओरहन नदी के किनारे पर प्राप्त हुआ जो एक स्मारक पर उत्कीर्ण था। यह स्मारक ७३२ में चीन के सम्राट् ने तुर्किस्तान के राजकुमार कुल तिजिन के शुभागमन पर स्थापित करवाया था। यह अभिलेख ऊपर से नीचे तथा दायें से बायें की ओर अंकित था।

बहुत दिनों तक यह अभिलेख पढ़े नहीं जा सके। १८९३ में डेनमार्क के एक भाषा–विद्वान् वी. टामसेन (V. Thomsen) ने इन अभिलेखों के रहस्योद्घाटन में सफलता प्राप्त कर ली। इस लिपि में एक मुख्य बात यह थी कि अक्षर के नाम के पूर्व एक स्वर होता था। उदाहरणार्थ सेमेटिक लिपि में 'ल' और 'म' को 'लाम' तथा 'मीम' कहते हैं परन्तु इस लिपि में उनके नाम 'अल' तथा 'अम' होते हैं।

इन लिपियों के रहस्योद्घाटन कर्त्ताओं ने इनकी उत्पत्ति अरमायक लिपि द्वारा मानी है। जब स्टाइन द्वारा सोग्दी लिपि के विषय में ज्ञात हो गया तब साइबेरिया की लिपियों की उत्पत्ति का स्रोत भी गैन्थियट तथा टॉमसेन द्वारा इसी सोग्दी लिपि को मान लिया गया। परन्तु सोग्दी लिपि में अनेकों परिवर्तनों के पश्चात् तुर्किस्तान की भाषाओं के अनुकूल बनाया जा सका।
'फ० सं० – २४७' पर ओरहन लिपि की वर्णमाला दी गई है।

मनीकी लिपि

इतिहास : मानी का जन्म २१५ ई० में बेबीलोन में हुआ। लगभग ३० वर्ष की अवस्था से उसने अपने विचारों का प्रचार आरम्भ कर दिया और एक धर्म का प्रवर्त्तक बन गया। उसका कहना था दुनिया केवल दो बातों पर आधारित है—एक उजेला जो अच्छा है दूसरा अंधेरा जो बुरा है। यह धर्म ज़ोरोआस्टर (Zoroaster) अथवा ज़ोरथूस के धर्म से मिलता – जुलता था। इस धर्म के अनुयायी मनीकी पुकारे जाते थे।

मानी की मृत्यु के पश्चात् मनीकी अपना देश छोड़ कर भाग गये। वह पश्चिम की ओर गये तथा पूर्व की ओर गये। पूर्व में यह पूर्वी तुर्किस्तान में बस गये। यहाँ मनीकी बौद्ध धर्म के सम्पर्क में आये। चौथी श० में इन लोगों ने कुचा नगर में एक मठ का निर्माण कर लिया। सातवीं श० में यह मनीकी चीन पहुँच गये और वहाँ कई मठों का निर्माण किया।

लिपि : मनीकियों ने अपनी एक ऐसी लिपि का निर्माण किया जिसमें कुछ ध्वनियाँ पर्शिया की तथा कुछ ध्वनियाँ तुर्की भाषा की सम्मिलित की गईं परन्तु इस लिपि की उत्पत्ति अरमायक से की गई। इस लिपि के कई अभिलेख स्टाइन (A. Stein) को १९०८ में प्राप्त हुए। इस लिपि की वर्णमाला ए. वॉन गबैन (A. Von. Gabain) ने अपनी पुस्तक[1] में प्रस्तुत की है जो 'फ० सं० – २४८' पर दी गई है। इसको दायें से बायें की ओर लिखते थे।

---

1. Gabain : Alttürkische Grammatika (1951), p. – 17.
   Le Coq, A Von : 'Türkische Manichaica aus Chotscho Vol. III. (1922), p. – 34.

साइबेरिया की ओरहन लिपि

अ आ	ए	इ ई	ओ उ	औ ऊ	य ज१	य ज२
ब १	ब २	च.ज	क.ग	द १	द २	ए.१
ग २	क २	को कू	ल १	ल २	ल्द ल्ल	म
न १	न २	न	अंज	अंच अंग	न्त न्द	प
क़	क़ी	क़ो.क़ू	र १	र २	स	श

फलक संख्या – २४७

मनीकी लिपि

व	ह	द	ग-ज	ब	अ
म	क	य-ज	त	श़	ज़
क़	फ़	प	अॅ	स	न
	च	त	श	र	

फलक संख्या – २४८

Brinton, C. : A History of Civilization.
Coq, A. Von Le : Buried Treasures of Chinese Turkestan (1928).
Gabain, A. Von : Uigurica. IV. (Berlin - 1931).
" " : Alturkische Grammatik (1951.)
Gauthiot, R. : De l' alphabet Sogdien (Bulletin of the School of Oriental Studies – 1940).
Giles, H. A. : China and the Manchus (1912).
Henning, W. B. : Argi and Tokharians (Bulletin of the School of Oriental and African Studies – 1938).
Hosie, A. : *Manchuria* (1904).
Laufer, B. : A Summary of Mongolian Literature (1927).
Lessing, F. : Mongolen, etc. (1935).
Madden, F. : Universal Palaeography (1909).
Muellar, F. W, K. : Uigurica – I, II, III, (Berlin – 1931).
Poucha, P. : *Tocharica* (Archiv Orientalni – 1930).
Radlove, V. V. : Die altuerkishen Inschriften der. Mongolei (1899).
Ramstedt, G. T. : Kalmueckisch sprach Proben (1909).
Schmidt, I. J. : Grammar der Mongolian Spracha (St. Petersberg – 1831).
Skinner, F. N. : The Story of Letters and Figures (1902).
Stein, Sir Aurel : Sand Buried Ruins of Cathay.
" " : Inner – most Asia (1928),
Swain, J. E. : History of World Civilization.
Taylor, Issac : The Alphabet.
Whymant, A. N. T. : A Mongolian Grammar etc. (1926).

कोरिया

इतिहास

कोरिया के पौराणिक काल में एक राजा तांजुन था जिसके वंश ने ११२२ ई० पू० तक शासन किया। जब चीन में शांग वंश के शासन का अंत हो गया और चाउ वंश ११२२ ई० पू० में शासक बना तब एक चीनी उच्चपदाधिकारी की – त्से अपने पाँच सहस्र साथियों के साथ कोरिया आया और कोरिया के शासन को अपने हाथ में लेकर एक नये राजवंश की स्थापना की तथा अपनी एक नई राजधानी पियोंगयांग (Pyongyang) का निर्माण करवाया। इस वंश ने लगभग ९०० वर्ष तक राज्य किया।

लगभग २१० ई० पू० में उन चीनियों का यहाँ आगमन आरम्भ हो गया जो चीन के सम्राट् शू हुआंग ती के अत्याचारों से दुखी थे। इस आगमन में चीन के सैनिक भी सम्मिलित थे। इन सैनिकों को एकत्र करके एक सैनिक योद्धा वी मान् १९३ ई० पू० में की – त्से के राजवंश को हटा कर कोरिया पर शासन करने लगा।

ई० पू० की अंतिम शताब्दी में कोरिया तीन राज्यों में विभाजित हो गया।

१. **सिल्ला राज्य :** चिनहान (दक्षिण – पूर्वी कोरिया) में ५७ ई० पू० में **स्थापित** हुआ।
२. **कोज़ूरियो राज्य :** ३७ ई० पू० में स्थापित हुआ।
३. **पेक्वी राज्य :** माहन् (दक्षिण – पश्चिमी कोरिया) में १८ ई० पू० में स्थापित हुआ।

यह तीनों राज्य एक दूसरे पर आक्रमण करते रहते थे और यह आपस के युद्ध लगभग ७०० वर्ष चलते रहे। इस बीच जापान के भी आक्रमण होते रहे। अन्त में सिल्ला राज्य ने दोनों राज्यों को परास्त कर दिया और पूरे देश को एक सूत्र में बाँध दिया। सिल्ला का राज्य ९३५ ई० सन् तक शासन चलता रहा।

९१८ ई० में सिल्ला राज्य के एक सैनिक अधिकारी वांग कीन (Wang Kien) ने विद्रोह कर दिया जो बहुत दिनों चलता रहा। अन्त में ९३५ में सिल्ला के राजा ने राज्य त्याग दिया और वांग कीन राजा बन गया। इसके वंश ने १३९२ तक राज्य किया। इसी वंश के राज्य काल में इस देश का नाम कोज़ूरियो से कोरियो तथा कोरिया पड़ गया। इसी काल में बौद्ध धर्म की प्रबलता दृष्टिगोचर होने लगी जिससे भिक्षु राजनीति में भाग लेने लगे। १२३१ में मंगोलों ने कई आक्रमण किये और देश को नष्ट – भ्रष्ट किया। १३६४ में एक सैनिक अधिकारी जनरल ई – ताय – जो (yi – Tae – jo) ने मंगोलों को बुरी तरह परास्त किया। १३९२ में जनरल ई ने वांग वंश के शासक को राज्य त्याग कर देने पर विवश किया और स्वयं राजसिंहासनारूढ़ हो गया और अपने नाम पर नये राजवंश की स्थापना कर दी। इस वंश ने १९१० तक राज्य किया। चीन के मिंग सम्राट् ने इस राजवंश को मान्यता दी तथा कोरिया का नाम चाउशीन (चोज़ेन – Chosen) रखा। 'ई' राजा ने अपनी एक नई राजधानी का निर्माण करवाया जिसका नाम हानयांग

(आ० सिओल – Seoul) रखा। इस वंश के शासनकाल में कोरिया बहुत समृद्धिशाली हो गया परन्तु बौद्धधर्म पर बन्धन लगाया गया। जो भूमि बौद्ध मठों के नाम थी उसको जनता में विभाजित कर दिया गया।

१४२० में एक राजकीय महाविद्यालय स्थापित किया गया। १५० वर्ष तक शान्ति स्थापित रही और विद्वानों को शोध व खोज कार्य का अवसर मिलता रहा। १५९२ में जापान के शोगुन हिदेयोशी ने कोरिया पर आक्रमण कर दिया। १६२७ में मंचुओं (मंचूरिया निवासी) ने चीन पर आक्रमण करना आरम्भ कर दिये। इधर उन्होंने कोरिया पर भी आक्रमण किया तथा तात्कालिक शासक को मंचुओं को मान्यता देने पर विवश किया। मंचूओं ने १६४४ में चीन के मिंग वंश के शासक को परास्त कर मंचू वंश की स्थापना की।

१६५३ में कोरिया में विदेशी पहुँचे। हॉलैण्ड देश का एक जल पोत पानी में डूब गया जिसके ३६ बचे हुए नाविक सिओल लाये गये। उनको देश के बाहर जाने की अनुमति नहीं दी गई परन्तु तेरह वर्ष के पश्चात् आठ भाग जाने में समर्थ हो गये। १८३० में फ्रांस के ईसाई – धर्म – प्रचारक कोरिया आये। तदनन्तर अन्य पाश्चात्य विदेशी पहुँचे।

१८७६ में जापान ने कोरिया को एक सन्धि – पत्र पर हस्ताक्षर करने पर विवश किया जिसके अनुसार कूटनीतिक सम्बन्ध स्थापित हो गये। क्योंकि जापान व चीन दोनों ही कोरिया पर अपना अपना आधिपत्य जमाना चाहते थे परन्तु इन दो बड़े देशों ने निश्चय कर लिया कि कोरिया पर वे किसी प्रकार का अनुचित दबाव नहीं डालेंगे जिसको दोनों देशों ने नौ वर्षों तक मान्यता दी। १८९४ में कोरिया को जापान ने निवेदन के रूप में आज्ञा दी कि वह किसी विदेशी शक्ति का सहारा न ले। १८९५ में चीन ने कोरिया की पूर्ण स्वतंत्रता को स्वीकार कर लिया। परन्तु इस पूर्ण स्वतंत्रता को जापान ने स्वीकार नहीं किया और कोरिया को कुछ राजनैतिक सुधार करने पर विवश किया जिसके लिये जापान से एक मंत्री को राजदूत बना कर भेजा गया। इस सुधार के लिए जब वहाँ के राजा और रानी सहमत नहीं हुए तब दोनों का बध करवा दिया गया। तदनन्तर ई – ताए – वांग को राजा बनाया गया और जापान की इच्छानुसार सुधार किये गये तथा एक नये मंत्री – मण्डल की नियुक्ति की गई जिसमें सब जापानी पक्षवाले थे। ११ फरवरी १८९६ तक यह कूटनीति चलती रही। जब राजा यह सब सहन न कर सका तो रूस के दूतावास में शरण ली। रूस ने हस्ताक्षेप करके राजा को उसके अधिकार दिलवाये और जापान के पदाधिकारियों को निकाल कर रूस के राजनैतिक व सैनिक पदाधिकारियों को नियुक्त किया गया।

१८९७ में कोरिया का राजा महाराजा हो गया जिसने कोरिया के निरपेक्ष होने की घोषणा की। १९०४ की फरवरी में रूस – जापान युद्ध छिड़ गया और जापान ने कोरिया पर आक्रमण कर दिया। १९०५ में जापान ने कोरिया को अपने संरक्षण में लेकर सारे विदेशी विभागों के कार्यों का संचालन किया। २२ अगस्त १९१० को ई वंश का अंत हो गया और कोरिया जापान साम्राज्य का अंग बन गया। दूसरे महायुद्ध के अंत तक यह इसी प्रकार जापान के अधिकार में रहा।

महायुद्ध के समाप्त होने के पश्चात् कोरिया दो भागों में विभाजित कर दिया गया। उत्तरी भाग रूस के प्रभाव में साम्यवादी हो गया तथा दक्षिणी भाग अमेरिका के प्रभाव में राष्ट्रवादी हो गया। उत्तरी कोरिया की राजधानी पियोंगयांग तथा दक्षिणी कोरिया की सिओल बन गई। जून १९५० में उत्तरी कोरिया को मजबूर होकर दक्षिणी कोरिया पर आक्रमण करना पड़ा। १९५३ तक युद्ध चलता रहा और अंत में एक सन्धि – पत्र पर दोनों भागों के प्रतिनिधियों ने हस्ताक्षर कर दिये। अब दोनों भागों के शासक कोरिया के एकीकरण का प्रयत्न कर रहे हैं।

कोरिया

फलक संख्या – २४९

पुमसो लिपि

क	का	को	ख	खा	खो
ग	गा	अं	आं	न	ना
नो	द	दा	नं	नां	नों
नुं	प	पा	पो	फ	फा
		बो	बू		

फलक संख्या – २५०

ओनमुन लिपि

आ	ई	ब	अ	य	ओ	यो	इये	ए
उ	यू	क	न	त	ल.रन	म	प	स.द
च	छ	थ	फ	ख	अं	ह		

पूर्व ध्वनियों के योग से नये स्वर

अ + ई = ऐ	उ + ई = उई	ए + ई = ऐ
ओ + ई = ओई	य + ई = यई	यू + ई = यूई
इये + ई = इयेई	यो + ई = योई	न + ओ + अं = नोगं

ओनुमन लिपि का पाठ

कनसहान	क ई	기	थ अ	타	क अ	가
इयेंहोरन्नोंमी	र	ㄹ	म	ㅁ	न	ㄴ
पपंबल थमहाथक	अं ई	이	ह आ	ㅎ	स अ	사
हमचेंगी साचए	न अ	나	त अ	다	ह आ	ㅎ
नक्रोल कीरी	न	ㄴ	क अ	가	न	ㄴ
ननकमहनचीरा	क अ	가	ह अ म	함	इये अं	여
(इसके अर्थ हैं)	म	ㅁ	चए	정	ह ओ	호
एक चालाक कुत्ता,	ह अ	ㅎ	अंएई	에	र अ न	랑
जो खाने के लिये तड़प	न	ㄴ	स अ	사	न ओ म	놈
रहा था, एक गढ़े में गिर	च ई	지	च ए	체	अं ई	이
गया जिससे निकलने का	र अ	라	न अ	나	प अ	바
रास्ता कठिन था।			औंल	올	पअं बल	볼

फलक संख्या – २५१ क

कोरिया की लेखन कला

पुमसो लिपि : ईसा की प्रथम शताब्दी में यहाँ चीन की लेखन कला सिखाई गई जो सातवीं श० तक प्रयोग में लाई गई। ६९२ ई० में एक कोरिया के विद्वान् सेलचोंगने, जो सिनमुन नरेश के दरबार का एक मंत्री भी था, एक नए प्रकार की पुमसो लिपि का निर्माण किया जो कोरिया की भाषा की ध्वनियों को उपयुक्त रूप से व्यक्त कर सके। इसका प्रयोग पन्द्रहवीं श० तक चलता रहा परन्तु कुछ परिस्थितियों के कारण यह लिपि सर्वप्रिय न हो सकी। इसके वर्ण 'फ० सं० – २५०' पर दिये गये हैं।

ओनमुन लिपि : १४४३ में ई राजवंश के राजा सी – चोंग ने एक अन्य लिपि का आविष्कार किया जिसका नाम ओनमुन रखा। ओनमुन का अर्थ कोरिया की भाषा में 'जनता की लिपि' है जो पूर्णतया वर्णात्मक है तथा लिखने में, पढ़ने में, सीखने में एवं मुद्रण में बड़ी सरल प्रतीत होती है। १४४६ में यह शालाओं में सिखाई जाने लगी।

इसको ऊपर से नीचे तथा दाएँ से बाएँ की ओर लिखा जाता था परन्तु अब इसका प्रयोग बाएँ से दाएँ होने लगा है। इसके अतिरिक्त कुछ नये अर्धस्वरों का भी निर्माण किया गया है वैसे मूलतः इसमें १७ व्यंजन और आठ स्वर थे। इसकी वर्णमाला तथा एक वाक्य 'फ० सं० – २५१, २५२' पर दिये गये हैं। यह वाक्य एक पुस्तक[1] से लिया गया है।

पठनीय सामग्री

Allen, A. B. : Romance of the Alphabet (1937).
Diringer, D. : The Origins of Alphabet (Antiquity – 1943).
Eckardt, P. A. : Ursprung der Koreanischen Schrift (1928).
Hooke, S. H. : The Early History of writing (Antiquity – 1937).
Mecune, G. M. : Notes on the Early History of Korea (1952)
Mason, W. A. : A History of the Art of Writing (1920).
McCune, G. M. : System de transcription de l' alphabet Coreen (Journal Asiatic 1933),
Osgood, C. : The Koreans and their culture (1951).
Ramstedt, G. J. : A Korean Grammar (1939).

1. Ecardt, A. : Korean conversations grammatik (1923), p – 203.

□

जापान

इतिहास

जापान का इतिहास पौराणिक कथाओं से आरम्भ होता है। यह कथायें दो पुराणों – कोजिकी और निहोंगी में मिलती हैं। यह दोनों पुराण आठवीं शताब्दी में रचे गये। इन्हीं पुराणों के अनुसार जापान की भूमि तथा जापानियों की उत्पत्ति देवताओं द्वारा मानी जाती है। जिसमें पहली मुख्य सूर्यदेवी[1] (जापानी नाम अमातिरासू) थी तथा दूसरा उसका भाई देवता (सुसन्नू) था। जापान का सर्वप्रथम मानव सम्राट् जिम्मू तेन्नू जो ११ फरवरी ६६० ई० पू०[2] को राजसिंहासनारूढ़ हुआ।

जापान के मूल निवासी ऐनु थे। सम्भवत: बाद में कोरिया तथा मैलेशिया से लोग पहुँचे और बस गये और उन्होंने ही मूल निवासियों को उत्तर की ओर खदेड़ दिया। ऐनु के रंग गोरे तथा शरीर पर बहुत बाल होते थे इसी से उनकी जाति की भिन्नता ज्ञात होती थी।

लगभग २०० ई० पू० के एक सम्राज्ञी, जिसका नाम जिंगो था जापान पर शासन करती थी। तब जापान का नाम यमातो (yamato) था। यमातो के निवासियों ने अपने सम्बन्ध कोरिया से अच्छे रखे। जापान को आरम्भ में जो कुछ प्राप्त हुआ वह चीन से कोरिया द्वारा हुआ। लगभग ४०० ई० में चीनी लिपि कोरिया से जापान पहुँची और ५५२ ई० में कोरिया के पैक्ची शासक ने बुद्ध की एक स्वर्ण – मूर्ति जापान को भेंट की तथा साथ में बहुत से बौद्ध – भिक्षु भी भेजे।

जैसा कि अन्य देशों में भी हुआ, जापान का इतिहास भी पारस्परिक युद्धों का इतिहास है। जापान में कौटुम्बिक नेता होते थे। उनके कुछ क्षेत्र होते थे जो एक छोटे राज्य के राजा के समान होते थे। उनके अपने सैनिक होते थे। इन्हीं राज्यों में सत्ता को प्राप्त करने के कारण युद्ध होते थे। इसी कारण जापानी लड़ाकू हुआ करते थे। यह सैनिक अपने नेता के बड़े सेवक तथा आज्ञाकारी होते थे और कौटुम्बिक नेता को देवता का अवतार मानते थे। यह बात शिन्तो धर्म ने इनको सिखाई थी। जब जापान में बौद्ध – धर्म पहुँचा तो बौद्ध – धर्म तथा शिन्तो – धर्म के अनुयायियों में युद्ध होने लगे और अन्त में (५८७ ई० में) बौद्ध – धर्म के अनुयायियों की विजय हुई।

जापान के इतिहास में जापान का महाराजा देवता का अवतार माना जाता है, उसकी ओर कोई दृष्टि उठाकर देख नहीं सकता परन्तु स्वयं महाराजा की कोई सत्ता नहीं थी। वह शक्तिशाली कौटुम्बिक नेताओं के हाथ में कठपुतली की भाँति रहता था। यही कौटुम्बिक नेता महाराजा को राजसिंहासन पर आरूढ़ करने वाले तथा उससे उतारने वाले होते थे। यही जापान के वास्तविक शासक थे।

1. जापान में सूर्य को देवी मानते हैं जिसको अपने भाई के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करना पड़े।
2. यह तिथि काल्पनिक प्रतीत होती है।

जापान के महाराजा योमी के मरणोपरांत सोगा वंश के नेताओं में जो बौद्ध – धर्म – अनुयायी थे, और मानो नोबे वंश के नेताओं में, जो शिन्तो – धर्म – अनुयायी थे, सत्ता प्राप्त करने के लिए युद्ध हुआ जिसमें सोगा वंश की विजय हुई। परन्तु इसी युद्ध काल में सुजून महाराजा का वध कर दिया गया। तत्पश्चात् राजकुमारी सुयीको को सिंहासनारूढ़ कर दिया गया जिसने ५९३ तक शासन किया।

महाराजा योमी के एक पुत्र शोतुकू तैशी था। इसी ने मोनो नोबे के वंश को पराजित किया था। इसका नाम उमयादो भी था जिसके अर्थ थे 'अस्तबल में जन्म लेने वाला राजकुमार' क्योंकि जब इसकी माँ घोड़ों का निरीक्षण कर रही थी तब इसका जन्म हुआ था। सुयीको के पश्चात् राज सत्ता शोतुकू तैशी के हाथ में आई। यह बड़ा योग्य शासक था। इसी ने बुद्ध भगवान् का होरियूजी का विशाल मन्दिर निर्माण करवाया जिसकी भव्यता आज तक प्रसिद्ध है। इसी ने बौद्ध – धर्म – साहित्य को लिखवाया तथा अपने देश के इतिहास को आरम्भ करवाया। इसी ने देश के विधि – संहिता का निर्माण करवाया।

६२१ में इसकी मृत्यु होने पर इसकी माँ को सिंहासन पर बिठा दिया परन्तु राज सत्ता सागो – नो – ईरुका के हाथ में रही। इसी काल में सोगा वंश के विरुद्ध एक विद्रोह खड़ा हो गया जिसका नेता नाकातोमी वंश का युवक कामातोरी था और जो शिन्तो – धर्म – अनुयायी था। इसका नाम फुजी वारा पड़ गया। इसने तात्कालिक साम्राज्ञी के भ्राता राजकुमार कारू तथा उसके पुत्र राजकुमार नाका को अपनी ओर कर लिया। कामातोरी ने अपनी कूटनीति से सोगा – नो – ईरुका का वध राजकुमार नाका के द्वारा करवा दिया और सम्राज्ञी से राजत्याग करवा दिया तथा ६४५ में राजकुमार कारू को सिंहासनारूढ़ करवा दिया। अब राजकुमार कारू का नाम कोतोकू पड़ गया। महाराजा कारू नाममात्र का शासक था परन्तु कामातोरी की राजनीतिज्ञता के कारण जापान के राज्य में एकता आने लगी और चीन के सम्राट ने जापान राज्य को मान्यता प्रदान कर दी। जापान सरकार को चीनी शासन के ढाँचे पर चलाया गया।

जब महाराज कोतोकू (कारू) का स्वर्गवास हो गया और राजकुमार नाका ने राजसिंहासन पर बैठने से मना कर दिया तब उसी सम्राज्ञी कोज्यूको को जिससे राजत्याग करवाया गया था और जो राजकुमार नाका की माँ थी, पुनः राजसिंहासन पर बिठा दिया गया तथा उसका नाम साइमी रख दिया गया। ६६१ में इस सम्राज्ञी का स्वर्गवास हो गया और तब नाका को तेंची के नाम से राजसिंहान पर बैठना पड़ा। नाका की मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्र को एक ओर करके उसके भाई को महाराज तेम्मू के नाम से गद्दी पर बिठा दिया गया जिसने ६८६ ई० तक राज्य किया। तेम्मू के मरणोपरांत महाराजा बनाने की समस्या इस कारण खड़ी हो गई कि तेम्मू के पुत्र आहोत्सू का वध कर दिया गया था। इस कारण तेम्मू की पत्नी को सम्राज्ञी बना दिया गया जिसने ६९७ में राजत्याग कर दिया। तत्पश्चात् तेम्मू के पौत्र मोम्मू को चौदह वर्ष की आयु में महाराजा बना दिया गया। इसका बीस वर्ष की अवस्था में स्वर्गवास हो गया। तदनन्तर उसकी मां जेम्म्यो सम्राज्ञी बनी। अभी तक यह परम्परा चली आती थी कि महाराजा के स्वर्गवास होने पर नई राजधानी का निर्माण होता था। निर्माणकर्ताओं को बड़ा कष्ट होता था। इस कारण सम्राज्ञी जेम्म्यो ने ७१० में नारा की नवीन – निर्मित राजधानी को स्थिर कर दिया। अब प्रत्येक क्षेत्र में चीन का अनुसरण किया जाने लगा।

७२० में सम्राज्ञी के मरणोपरांत शोमू को सम्राट् बना दिया गया। ७४९ में उसने राजत्याग कर दिया और अपनी पुत्री कोकेन को सम्राज्ञी बनवाया। ७५२ में उसने भी राजत्याग दिया और बौद्ध – भिक्षुणी बन गई। तदनन्तर कई राजा गद्दी पर बिठाये गये और उतारे गये। अंत में ७८२ में एक महाराजा सिंहासन

पर बिठाया गया जिसका नाम क्वाम्मू था। नारा से ७८४ में राजधानी हटा कर नागाओका बनाई गई और ७९४ में क्योतो बनाई गई। सम्राट् क्वाम्मू का देहांत ८०५ से हो गया।

इसके उपरांत एक नये कुटुम्ब फुजीवारा ने केन्द्रीय शासन को अपने हाथ में ले लिया। इस फुजीवारा वंश के शासन – कर्त्ताओं ने भी सम्राटों को कठपुतली ही बनाकर रखा। जब चाहा जिसको चाहा गद्दी पर बिठाया और उतारा। राजगद्दी से हटाये गये सम्राट् बौद्ध – भिक्षु बन जाया करते थे और राजनीति की गतिविधियों में छिप कर भाग लिया करते थे। इन सम्राटों का नाम 'वानप्रस्थी सम्राट्' पड़ गया और बौद्ध – मठ राजनीति के अड्डे बनने लगे।

इसी समय एक नया वर्ग दृष्टिगोचर होने लगा। इस वर्ग के लोग एक बड़ भू – भाग के स्वामी थे तथा वीर सैनिक भी थे। फुजीवारा – कुटुम्ब के शासकों ने इन लोगों को कर – वसूल – करने – वाला बना दिया। इस कारण शनैः शनैः इनकी शक्ति बढ़ने लगी। इनका नाम 'दाइमो' पड़ गया। यह लोग अपनी एक सेना भी रखने लगे। इतना ही नहीं, केन्द्रीय सरकार के आदेशों का उल्लंघन भी करने लगे तथा परस्पर युद्ध करने लगे। इनमें से दो मुख्य कुटुम्बों, ताएरा और मीनामोतो, ने तात्कालिक सम्राट् की फ़ुजीवारा शासकों को हटाने में बड़ी मदद की परन्तु फ़ुजीवारा की सत्ता को लेने के लिए परस्पर लड़ने लगे। इस प्रकार फ़ुजीवारों का ११५६ में अंत हो गया और ताएरा कुटुम्ब ने मीनामोतो को परास्त कर दिया। उसके कुटुम्ब के अन्य सम्बन्धियों को भी समाप्त कर दिया ताकि भविष्य में किसी प्रकार का भय न रहे परन्तु चार बच्चे बच गये जिसमें से एक बाहर वर्षीय बालक योरीतोमो भी था। अब ताएरा कुटुम्ब निश्चिन्त होकर शासन करने लगा जिसका मुखिया कियोमोरी था।

जब योरीतोमो बड़ा हुआ तब उसने अपनी शक्ति बढ़ाई। ११८५ में तायरा कुटुम्ब के शासकों को परास्त कर सत्ता अपने हाथ में ले ली। सम्राट को कुछ शान्ति मिली और उसने प्रसन्न होकर योरीतोमो को एक उच्च पदवी 'सेइ – ई – ताइ – शोगुन' से ११९२ में सुशोभित किया। इस पदवी को वंशानुगत बना दिया। उसने कामाकूरा में एक सैनिक मुख्यालय 'बकूफ़ू' का निर्माण करवाया। वह न तो सम्राटों को अपनी उंगलियों पर नचाना चाहता था और न अपनी शक्ति का कोई अनुचित लाभ उठना चाहता था। वह अपने भू – सामन्तों के निकट रहना चाहता था। सम्राट् ने प्रसन्न होकर उसको आरक्षक – विभाग तथा माल विभाग का भी प्रबन्धकर्ता बना दिया। शोगुन का प्रथम शासन काल १३३३ ई० तक, अर्थात् १५० वर्ष, बड़ा शान्तिमय रहा। मंगोलों के दो आक्रमण १२७४ तथा १२८१ में हुये परन्तु दोनों में वे पराजित कर दिये गये।

इसी काल में जापानियों ने चीन से चीनी बर्तन बनाना सीखा। ११९१ में एक बौद्ध – भिक्षु चीन से चाय का पौधा लाया।

१३१८ में एक नये सम्राट दाइगो द्वितीय ने राजसिंहासन सुशोभित किया। इसी ने होजो तोकीमासा के मरणोपरांत अशिकागा तकाउजी को शोगुन की पदवी दी। इसने १३३८ से शासन का भार सँभाला।

१५७३ तक राज्य शान्तिपूर्वक चलता रहा। तत्पश्चात् फिर पारस्परिक झगड़े होने लगे जो लगभग १०० वर्ष तक चलते रहे। इसी बीच कोरिया पर भी आक्रमण किये गये परन्तु कोरिया ने सामुद्रिक युद्ध में जापान को परास्त कर दिया।

उन्हीं दिनों जापान के इतिहास में तीन प्रसिद्ध व्यक्ति आये। नोबुनागा, हिदेयोशी तथा तोकूगावा इयेयासू इन तीनों व्यक्तियों के सहयोग से जापान में एकता का भाव दृष्टिगोचर होने लगा। परन्तु पारस्परिक झगड़ों से सबसे अधिक लाभ तोकूगावा इयेयासू ने उठाया और बहुत से भूभाग का स्वामी हो गया। उसने एदो

जापान
लगभग ४००० द्वीप
५०० द्वीप निवास योग्य
जापान सागर
होकैदो
उत्तरी
प्रशांत
महासागर
टोक्यो
कामाकुरा
क्योतो
योकोहामा
नारा
(८वीं शती की राजधानी)
वाकायामा
हिरोशीमा
कोबे
नागासाकी

फलक संख्या - २५२

नाम का एक नगर निर्माण कराया जो आज टोकियू के नाम से प्रसिद्ध है और संसार का सबसे बड़ा नगर है। ईये यासू १६०३ में शोगुन हो गया जिसके वंशजों ने २५० वर्ष शासन किया।

१५४२ में (गृहयुद्ध काल) में पुर्तगाली सबसे पहले जापान आये। यही लोग सर्वप्रथम जापान में तोपें और बन्दूकें लाये। १५९२ में स्पेन से तदनन्तर हालैण्ड एवं इंगलैण्ड से व्यापारी आने लगे। १५४९ में ईसाई धर्म का प्रचार होने लगा। बौद्ध धर्म के मठ राजनीति के अड्डे समझे जाते थे इसी कारण ईसाई – धर्म – को प्रोत्साहन दिया जाने लगा ताकि बौद्ध धर्म की शक्ति कम हो। १५८७ में ईसाई – धर्म – प्रचारकों को बीस दिन के अन्दर जापान छोड़ने का आदेश दे दिया गया। इयेयासू की मृत्यु के पश्चात् उन सब को ईसाई – धर्म छोड़ना पड़ा जिन्होंने इसको पहले ग्रहण कर लिया था। १६३६ तक सारे विदेशियों को जापान के बाहर निकाल दिया गया केवल कुछ हालैण्ड निवासी बच गये जिनको नागासाकी में बन्दी के रूप में रहने दिया गया। अब न कोई जापान से बाहर जा सकता था और न जापान में आ सकता था।

१८५३ में अमरीका से एक जलपोत जापान आया। अमरीका के राष्ट्रपति ने जापान से अपने बन्दरगाह खोलने का निवेदन किया था। जापान ने प्रथम बार स्टीमर देखा था। शोगुन शासक इस बात पर सहमत हो गये और दो बन्दरगाह विदेशी व्यापारियों के लिये खोल दिये गये। यह समाचार सुनते ही अंग्रेज, रूसी एवं डच्छ इत्यादि आना आरम्भ हो गये। विदेशों से सन्धियाँ हुईं और शोगुनो ने अपने को सम्राट मानकर सन्धि पत्रों पर हस्ताक्षर किये। इसके कारण विदेशियों ने आन्दोलन किया। कुछ विदेशी मारे गये तब उन लोगों ने नौ सेना का आक्रमण किया। स्थिति और बिगड़ गई और जापान के शोगुन शासकों को अपने कार्य से त्यागपत्र देना पड़ा। तोकूगावा कुटुम्ब का ईये यासू १६०३ में शोगुन हुआ था और उसके कुटुम्ब का शासन १८६७ में समाप्त हो गया। लगभग एक सहस्र वर्ष के पश्चात् महाराजा ने, जो अभी तक शासनकर्ताओं के हाथ में कठपुतली की भाँति एक नाममात्र के महाराजा थे, अब स्वतन्त्रता की साँस ली। इस समय एक चौदह वर्षीय बालक सम्राट मुत्सी हितो के नाम से राजसिंहासनारूढ़ हुआ जिसने १९१२ तक शासन किया। इस शासन काल को जापानी भाषा में 'मेईजी' (प्रकाशित राज्य या ज्ञानवर्धक) कहते हैं। वास्तव में जापान ने विदेशी नौसेना की विजय तथा अपनी पराजय से अपने को बड़ा हीन समझा और निश्चय किया कि वह ऊपर उठेगा उन्नति करेगा। इसी निश्चय के कारण जापानी योरोप और अमरीका गये और वहाँ जाकर जो कुछ सीखा उससे अपने देश को उद्योग तथा विज्ञान के पथ पर अग्रसर किया।

सामन्तवाद का अंत कर दिया गया। राजधानी को क्योतो से एदो लाया गया और उसका नाम परिवर्तित करके टोकियो रखा गया। एक विधान बनाया गया। दो सभाओं का निर्माण हुआ। अब जो भी परिवर्तन होते सब सम्राट् के नाम पर होते थे। अब सम्राट् की मान्यता इतनी बढ़ा दी गई कि उसकी पूजा की जाने लगी। एक दिन था कि जापान ने सब कुछ चीन से सीखा था परन्तु अब वह प्रत्येक बात में चीन से आगे था। चीन विदेशों द्वारा दबाया जा रहा था इधर जापान अपनी शक्ति बढ़ा रहा था।

जापान के कुछ मछियारों को चीन ने पकड़ लिया तथा वध कर दिया। इस बात पर जापान ने चीन से क्षतिपूर्ति की माँग की। जब चीन ने इसको देने से मना किया तो जापान ने आक्रमण की धमकी दी। चीन दक्षिण में फ्रांस की सेना से उलझा था। १८७४ में उसने जापान को क्षतिपूर्ति का धन दे दिया। अब जापान ने कोरिया से कुछ झगड़ा मोल लिया और उसको व्यापार करने की अनुमति देने पर विवश किया। कोरिया के न मानने पर जापान ने आक्रमण कर दिया। इस समय कोरिया चीन के अन्तर्गत था। इस कारण उसने चीन से सहायता की याचना की परन्तु चीन ने अपनी असमर्थता प्रगट की और हथियार डाल देने की सलाह दी।

१८८२ में कोरिया ने अपनी पराजय मान ली। अब कोरिया दो देशों के अन्तर्गत हो गया। १८९४ में जापान ने चीन पर आक्रमण कर दिया। इसके फलस्वरूप कोरिया को स्वतंत्रता प्राप्त हुई परन्तु जापान के प्रभाव में जापान को फारमूसा द्वीप आदि चीन से प्राप्त हो गये। १९०४ – ५ में रूस से युद्ध हुआ और जापान की विजय हुई। संसार की आँखें खुलीं और जापान की इतनी शीघ्र उन्नति पर आश्चर्य प्रगट होने लगा। १९११ में चीन में साम्राज्यवाद का अंत हो गया और लोकतंत्रवाद आ गया। तत्पश्चात् प्रथम महायुद्ध आरम्भ हो गया, जापान ने भी जर्मनी के विरुद्ध अपनी घोषणा की। जर्मनी के पास चीन का शान्तुंग प्रांत था इस कारण जापान ने चीन के उस भू भाग को ले लिया तथा चीन को अपनी २१ 'मांगों' को मानने पर विवश किया। अन्य देशों ने आपत्ति की, कुछ संशोधन हुये फिर १९१५ में जापान ने अपनी मांगें किसी प्रकार पूरी कीं। चीन में जापान के लिए घृणा के भाव जागृत होने लगे।

१९१७ में रूस में क्रान्ति हो गई। १९२२ में एक सभा वाशिंगटन बुलाई गई जिसमें चार बड़ी शक्तियाँ सम्मिलित हुईं—अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस तथा जापान और सन्धि हुई कि कोई देश किसी देश के उपनिवेश को लेने का प्रयास नहीं करेगा। फिर भी जापान ने १९३१ में मंचूरिया को अपने अधीन कर लिया। १९३२ में चीन पर आक्रमण कर दिया। १९४१ में दूसरे महायुद्ध में जर्मनी से मिल गया और अमेरिका पर आक्रमण कर दिया। दक्षिण – पूर्वी – एशिया के देशों को अपने अधीन करता हुआ भारत पर भी एक दो आक्रमण किये। १९४५ के दो अणुबमों ने जापान को परास्त होने पर विवश किया। जापान को अमेरिका ने बहुत दबा कर रखा। १९४७ में एक नया विधान लागू किया गया।

यह वही जापान है जिसने दूसरे देशों से ही सब कुछ सीखा, वही जापान जो दो अणुबमों द्वारा नष्ट किया गया, हर प्रकार के बन्धनों से जकड़ा गया परन्तु आज वही जापान प्रगतिशील देशों को बहुत सी बातें सिखा रहा है। यह सब उसके देश-प्रेम तथा बलिदान की भावना का फल है।

लेखन कला

जापान के सम्बन्ध चीन से ईसा पूर्व काल से लगभग दूसरी शताब्दी से आरम्भ हुये। ईसा की प्रथम शताब्दी में सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थापित हुए।

दैवी लिपि : एक जापानी विद्वान् हिराता ने अपनी पुस्तक शुइजी हिबूमीदेन (१८१९) में इसको प्राचीनतम् लिपि माना है। कीतासाते ने इसको अहिरू लिपि के नाम से सम्बोधित किया। १४४० में इस लिपि के अनेक अभिलेख मन्दिरों से प्राप्त हुये। १७७० में एक बौद्ध भिक्षु ने इसको प्रकाशित[1] किया और इसको चीनी लिपि के जापान आने के पूर्व का माना है।

४०४ ई० में महाराजा ओजिन (२७० – ३१२ ई०) ने अपने पुत्र उत्तराधिकारी को शिक्षा देने के लिये चीनी भाषा व साहित्य के दो महान् विद्वानों - अचोकी और वानी को, जो कोरिया के निवासी थे, नियुक्त किया। तभी से उच्च वर्ग के जापानियों में शिक्षा का प्रसार होने लगा और चीनी भाषा व लिपि को लोग सीखना आरम्भ कर दिये। छठी शताब्दी में जब चीन से कोरिया के द्वारा जापान में बौद्ध – धर्म तथा उसका साहित्य जापान पहुँचा और चीन में बौद्ध – धर्म – साहित्य का अनुवाद चीनी भाषा में होने लगा तो जापानी भाषा के साथ चीनी भाषा को सीखना अनिवार्य कर दिया गया और इस प्रकार शनैः शनैः चीनी

1. Kochachiro Miyazaki : 'Jindai nomoji' (Script Signs from the time of Gods) Tokyo – 1942.

जापान की प्राचीनतम दैवी लिपि

क	की	को	कू	स	सी
सो	सू	र	री	रो	रू

फलक संख्या – २५३

भाषा विद्वानों की तथा उच्चवर्ग की भाषा बन गई। तभी से चीनी लेखन – कला की पद्धति भी जापान में आई – तूलिका (फ़ूदे), स्याही (सूमी) तथा स्याही का पत्थर (सुजूरी) प्रयोगात्मक बने ।

कताकाना लिपि : अब एक कठिनाई होने लगी भाषा की। उदाहरणार्थ जो चीनी चित्र नारी के लिए बनाया जाता है उसको चीनी भाषा में 'नू' कहते हैं परन्तु जापानी भाषा में 'मे' कहते हैं इसी प्रकार मनुष्य के चित्र को चीन में ' रेन या ज़ेन' कहते हैं परन्तु जापान में 'हितो' कहते हैं और 'बाल' के चित्र को चीन में 'माओ', जापान में 'मो'। कठिनतायें सदैव आविष्कारों की जननी कहलाई है। इन कठिनाइयों ने जापानियों को एक अक्षरात्मक (Syllabic) लिपि के विकास करने का अवसर प्रदान किया और इस प्रकार एक वर्ण - माला तैयार कर ली गई जिसको 'काना'[1] के नाम से सम्बोधित किया जाने लगा जिसके अर्थ हैं 'चीनी चित्रों (चिह्नों) का ध्वन्यात्मक रूप में प्रयोग'।

इसका निर्माण ठीक उसी प्रकार हुआ जिस प्रकार मिस्र की चित्रात्मक लिपि से फ़िनीशिया के निवासियों ने एक ध्वन्यात्मक लिपि का निर्माण किया था। चीन के चित्रों से एक भाग लेकर उसको वही ध्वनि प्रदान की जो उस चित्र की थी। इस प्रकार से चीनी लिपि का सरलीकरण किया गया। इसका आविष्कार एक विद्वान् मंत्री कीबी – नो मकीबी ने आठवीं श० के मध्य में किया। इस वर्णमाला की ध्वनियों एवं वर्णों का निर्माण चीन की काइ – शू लिपि द्वारा किया गया था और इसका नाम 'कताकाना' रखा गया। इसकी वर्णमाला[2] 'फ० सं० – २५३, २५४' पर दी गई है। आधुनिक काल में कुछ ध्वनि – परिवर्तन किये गये परन्तु अक्षरों को उसी प्रकार रखा गया। उदाहरण के लिए देखिये — सवर्ग में 'सी' की ध्वति को 'शी' का उच्चारण कर दिया, इसी प्रकार तवर्ग में 'ती' व 'तू' का 'ची' व 'त्सू' (चू) और हवर्ग में 'हू' का 'फू' कर दिया। इस लिपि का प्रयोग १९४७ से लगभश समाप्त सा हो गया है। अब उसका स्थान 'हीरागाना'[3] लिपि ने ले लिया है। वर्तमांन काल में कताकाना का प्रयोग केवल विदेशी नामों के लिखने के लिए किया जाता है, जैसे, भारत, फ्रांस, अमरीका आदि।

1. 'काना' शब्द 'कन्ना' से तथा 'कारी न' से, जिसके अर्थ हैं छिपे नाम'
2. Lange : Einführung in die Japanishe Schrift (Berlin – 1896), p. – 13.
3. 'गाना' तथा 'काना' समान शब्द हैं। काना शब्द कन्ना (**Kanna**) से और 'कन्ना' 'कारी न' से जिसके अर्थ हैं पेछि नाम।

कताकाना लिपि के अक्षर

अर्थ	काइ शू	कता०	अक्षर	अर्थ	काइ शू	कता०	अ०
आदरबोधक	阿	ア	अ	आवश्यक	須	ス	सू
सर्वनाम	伊	イ	ई	काल (पीढ़ियों के लिये)	世	セ	से
आश्रय	宇	ウ	उ	पहले से	曾	ソ	सो
नदी	江	エ	ए	अत्याधिक	多	タ	त
में	於	オ	ओ	विरोध करना	干	チ	ची
अधिक	加	カ	क	थूकना	津	ツ	त्सू
उत्तम	幾	キ	की	आकाश	天	テ	ते
बहुत दिनपूर्व	久	ク	कू	पृथ्वी	土	ト	तो
अनुरक्षण करना	介	ケ	के	परन्तु; कैसे	奈	ナ	न
स्वयं	己	コ	को	दास	仁	ニ	नी
घास	草	サ	स	भद्रस्त्री	奴	ヌ	नू
पहुंचना	之	シ	शी	बच्चा	子	ネ	ने

फलक संख्या – २५४

क्रमशः

कताकाना लिपि के अक्षर

अर्थ	काइशू	कता०	अ०	अर्थ	काइशू	कता०	अ०
जैसे भी	乃	ノ	नो	वीर	勇	ユ	यू
प्रकाश	八	ハ	ह	साथ में	與	ヨ	यो
तुलना करना	比	ヒ	ही		良	ラ	र
नहीं	不	フ	फ़ू	लाभ	利	リ	री
बर्तन	皿	ヘ	हे	बहा ले जाना	流	ル	रु
	保	ホ	हो	सद्व्यवहार	礼	レ	रे
अन्त	末	マ	म	संगीत का स्वर ज्ञान	呂	ロ	रो
नदी	三美	ミ	मी	दिन; सूर्य	日	ワ	व
कृषि-फल	牟	ム	मू	चतुर	慧	ヱ	वी
सबसे ऊंचा	女	メ	मे	नामों मे प्रयोगात्मक	伊	ヰ	वे
बाल; पर	毛	モ	मो	साधारण	乎	ヲ	वो
भी	也	ヤ	य			ン	अं

फलक संख्या – २५४ क

हीरागाना लिपि : का विकास[1] नवीं श० के आरम्भ में हुआ। इसका निर्माण – कर्ता एक विद्वान् बौद्ध-भिक्षु कोबो – दैशी (Kobo – daishi) था। इसका विकास चीन की एक शीघ्र लिखने वाली लिपि त्साउ – शू (T'sao – Shu) से किया गया जिसको जापानी भाषा में 'सो – शो' कहते हैं। चीनी भाषा में 'त्साउ' को 'घास' कहते हैं। इस लिपि की वर्णमाला 'फ० सं० – २५५, २५६' पर दी गई है।

कताकाना और हीरागाना लिपियों में ४७ अक्षर थे। आधुनिक काल में एक 'अं' की ध्वनि जोड़ने से दोनों में ४८, ४८ अक्षर हो गये। इन में 'ई' की ध्वनि से 'यी' का 'ए' की ध्वनि से 'ये' तथा 'उ' की ध्वनी से 'वू' का काम निकाल लिया जाता है। इन लिपियों[2] में मूलतः नौ व्यंजन थे जिनमें पांच स्वरों—'अ, ई, उ, ए, ओ' की ध्वनियाँ जोड़ कर वर्णमाला बनाई गई थी। परन्तु बाद में पाँच व्यंजन और जोड दिये गये जिससे कुल मिलाकर चौदह व्यंजन हो गये। तत्पश्चात् संयुक्त व्यंजनों का प्रयोग भी प्रचलित होने लगा। पाँच व्यंजन तथा संयुक्त व्यंजन 'फ० स० – २५७' पर दे दिये गये हैं।

१८७२ तक चीनी लिपि, जो जापान में प्रयोग की जाती थी, अपरिवर्तित रही। १९०० में चीनी चित्रों को घटा कर २००० कर दिया गया और १९५० में केवल १८५० रह गये जो आज भी पाठशालाओं में सिखाये जाते हैं। परन्तु समाचार – पत्रों द्वारा तथा जापानियों द्वारा अब भी तीन सहस्त्र से कम प्रयोग नहीं होते।

चीनी चित्र व जापानी ध्वनियों के मिश्रण से एक बात नई उत्पन्न हुई। एक उच्चारण के अनेकों अर्थ बनने लगे जैसे 'शू' के लगभग ५२ अर्थ हैं इसी प्रकार 'को' के ५५ अर्थ हैं। इस कठिनता को दूर करने के लिए चीनी लिपि बड़ी उपयोगी सिद्ध हुई। जापानी लिपि में 'यो' उच्चारण के चार चित्र हैं जो चीनी लिपि से लिये गये। यदि चीनी लिपि हटा दी जाए तो जापानी भाषा अधूरी रह जाये। वैसे तो एक शब्द के कई अर्थ अन्य भाषाओं में भी पाये जाते हैं परन्तु इतनी बड़ी संख्या में मिलना कठिन है।

१८८४ में एक 'रोमाजी काइ (रोमन स्क्रिप्ट सोसायटी'[3]) स्थापित हुई। इस सोसायटी ने जापानी भाषा का रोमन – करण करना आरम्भ किया। इस कार्य में एक अमरीका के धर्म – प्रचारक जे० सी० हेपवर्न (B – 1815, D – 1811) ने बड़ा परिश्रम किया। हेपबर्न ने १८८६ में एक जापानी – अंग्रेज़ी शब्द कोष (Japanese English Dictionary) भी प्रकाशित किया। १९३७ में इसको राजकीय मान्यता प्रदान कर दी गई और इस लिपि का नाम 'कोकूतेई – रोमाजी – पद्धति' (Official Roma Script) रखा गया।

जापान की लेखन पद्धति

जापानी लिपि बाएँ से दाएँ की ओर लिखी जाती है। यह भी चीनी लिपि की भाँति पहले तूलिका से लिखी जाती थी परन्तु अब लेखनी (पेन) से भी लिखी जाती है। इसमें स्ट्रोकों का प्रयोग होता था परन्तु अब घसीट रूप में परिवर्तित हो चुकी है। यद्यपि चीन की के – ऐ – शू से निर्मित कताकाना वर्णमाला अधिक सरल थी परन्तु फिर भी कताकाना का प्रयोग समाप्त करके त्साउ – शू या सो – शो चीनी लिपि से निर्मित हीरागाना का प्रयोग ही किया जाता है जो लिखने में कताकाना से अधिक कठिन प्रतीत होती है।

---

1. Hoffmann : A Japanese Grammar (Leyden – 1876), P. – 59.
2. कताकाना और हीरागाना लिपियों के अक्षर 'जापानी वार्तालाप' (Text for April – September 1971 – Radio Japan) पुस्तिका से तथा अन्य चीनी चित्र 'जापानी शब्दकोष' से लिये गये हैं।
3. Romaji Kai Roman Script Society.

हीरागाना लिपि के अक्षर

विवरण	साउशू	हीरा०	अ०	विवरण	साउशू	हीरा०	अ०
जैसे भी	乃	の	नो	वीर	不	ぷ	पू
प्रकाश	波	は	ह	साथ मे	与	よ	यो
तुलना करना	比	ひ	ही		良	ら	र
नहीं	不	ふ	फू	लाभ	利	り	री
बर्तन	部	へ	हे	बहा ले जाना	留	る	रू
	保	ほ	हो	सद्व्यवहार	礼	れ	रे
अन्त	末	ま	म	संगीत का स्वर ज्ञान	呂	ろ	रो
नदी	美	み	मी	दिन ; सूर्य	和	わ	व
कृषि-फल	武	む	मू	चतुर	為	ゐ	वी
सबसे ऊंचा	女	め	मे	नामों में प्रयोगात्मक	恵	ゑ	वे
बाल; पर	毛	も	मो	साधारण	遠	を	वो
भी	也	や	य			ん	अं

फलक संख्या – २५६

हीरागाना व कताकाना के आधुनिक वर्ण

ध्व॰	हीरा॰	कता॰	ध्व॰	हीरा॰	कता॰	ध्व॰	हीरा॰	कता॰	ध्व॰	हीरा॰	कता॰
गी	ぎ	ギ	बी	び	ビ	स्यो	しよ	シヨ	ऱ्यू	りゆ	リユ
गू	ぐ	グ	बू	ぶ	ブ	च	ちや	チヤ	ऱ्यो	りよ	リヨ
गे	げ	ゲ	बे	べ	ベ	चू	ちゆ	チユ	ग्य	ぎや	ギヤ
गो	ご	ゴ	बो	ぼ	ボ	चो	ちよ	チヨ	ग्यू	ぎゆ	ギユ
ग	が	ガ	प	ぱ	パ	न्य	にや	ニヤ	ग्यो	ぎよ	ギヨ
ज़	ざ	ザ	पी	ぴ	ピ	न्यू	にゆ	ニユ	ज्य	じや	ジヤ
ज़ी	じ	ジ	पू	ぷ	プ	न्यो	によ	ニヨ	ज्यू	じゆ	ジユ
ज़ू	ず	ズ	पे	ぺ	ペ	ह्य	ひや	ヒヤ	ज्यो	じよ	ジヨ
ज़े	ぜ	ゼ	पो	ぽ	ポ	ह्यू	ひゆ	ヒユ	ब्य	びや	ヒヤ
ज़ो	ぞ	ゾ	क्य	きや	キヤ	ह्यो	ひよ	ヒヨ	ब्यू	びゆ	ヒユ
द	だ	ダ	क्यू	きゆ	キユ	म्य	みや	ミヤ	ब्यो	びよ	ヒヨ
दे	て	デ	क्यो	きよ	キヨ	म्यू	みゆ	ミユ	प्य	ぴや	ピヤ
दो	ど	ド	स्य	しや	シヤ	म्यो	みよ	ミヨ	प्यू	ぴゆ	ピユ
ब	ば	バ	स्यू	しゆ	シユ	ऱ्य	りや	リヤ	प्यो	ぴよ	ピヨ

फलक संख्या – २५७

इसमें एक स्ट्रोक से २३ स्ट्रोक तक के शब्द प्रयोग किये जाते थे जिसमें से १ से १० स्ट्रोक तक के शब्द तथा एक शब्द २३ स्ट्रोकों का भी 'फ० सं० – २५८ दिये गये हैं।

चीनी काइशू लिपि से जापानी वर्णों का विकास : इस विकास के विषय में पिछले पृष्ठों पर कुछ प्रकाश डाला गया है। जब चीनी लिपि का सरलीकरण किया गया तब चीनी काइशू लिपि के चित्रात्मक व भावात्मक शब्दों के एक भाग को ले लिया गया और जो उस शब्द की ध्वनि थी — अर्थात् उच्चारण – वही ध्वनि उस भाग को दे दी गई और इस प्रकार अक्षरों का आविष्कार किया गया। तत्पश्चात् उन अक्षरों को और भी सरल किया गया। यह वर्णन कताकाना लिपि के विषय में है जिसका प्रयोग १९४७ से कम कर दिया गया है। 'फ० सं० – २५९' पर (ऊपर की ओर) विकास पद्धति के कुछ उदाहरण निम्नलिखित प्रकार से दिये गये हैं: —

- पहले कॉलम में काइशू लिपि के चित्र हैं।
- दूसरे कॉलम में उसके हिन्दी में अर्थ[1] दिये गये हैं।
- तीसरे कॉलम में प्राचीन काल के अक्षर हैं।
- चौथे कॉलम में आधुनिक काल के अक्षर हैं।
- पांचवें कॉलम में अक्षर, जो निर्माण किये गये, दिये हैं।

पाँचवें कॉलम के अक्षर उन चित्रों के उच्चारण हैं जो पहले कॉलम में दिये गये हैं।

चीनी शब्द व अर्थ : चीन की काइशू लिपि के तीन चित्र 'फ० सं – २५९' की बाइ ओर दिये गये हैं, जो इस प्रकार हैं :—

- पहले कॉलम में चित्र या शब्द हैं।
- दूसरे कॉलम में ऊपर उनके चीनी भाषा में उच्चारण दिये हैं। उसी के नीचे उन शब्दों के अर्थ भी दिये गये हैं।
- तीसरे कॉलम में जापान की 'कनोन भाषा' में उच्चारण दिये गये हैं जिसके अर्थ वही हैं जो हिन्दी में लिखे हैं – जैसे पहले शब्द का अर्थ 'वृक्ष' है।
- चौथे कॉलम में जापान की 'कुन भाषा' में उच्चारण दिये गये हैं।

जापानी अक्षर – विन्यास (Spelling) **:** 'फ० सं० – २५९' के दाईं ओर अक्षर – विन्यास दिये हैं। इसमें — कताकाना व हीरागाना — दोनों लिपियों के अप्रचलित तथा प्रचलित शब्द — "ईमासू" (अर्थ 'वहाँ है') तथा "ईहोन" (अर्थ 'चित्रों की पुस्तक') — दिये गये हैं।

जापानी लिपि के कुछ उदाहरण : 'फ० सं० – २६०' पर दिये गये हैं। उनको पढ़ने से पता लगता है कि जापानी भाषा की व्याकरण हिन्दी भाषा की व्याकरण से कुछ मिलती है। परन्तु लिपि के कुछ वर्ण ऐसे भी हैं जिनको वाक्यों में प्रयोग ता किया जाता है परन्तु उनके कुछ अर्थ नहीं निकलते, जैसे 'नो' 'वा' 'का' इत्यादि। जापान ही ऐसा देश है जिसमें एक वाक्य लिखने के लिए कभी कभी तीन प्रकार की (चीनी, कताकाना, हीरागाना) लिपियों का प्रयोग किया जाता है। इस फलक पर उदाहरणार्थ वाक्य दिये गये हैं। जापानी इस प्रकार नहीं लिखते। जापान के एक प्रोफ़ेसर ने लेखक को यह प्रतिदर्श लिख कर दिये।

1. चीनी भाषा में एक शब्द के अनेक अर्थ होते हैं। इस कारण अर्थ में अन्तर हो सकता है।

जापानी भाषा के कुछ शब्द व स्ट्रोक

शब्द	अर्थ	हिन्दी में	शब्द	अर्थ	हिन्दी में
一	१ ई	एक	車	७ कुरुमा	पहिया
人	२ हितो	व्यक्ति	門	८ मोन	फाटक
下	३ शिता	नीचे	美	९ बी	सुन्दरता
天	४ तेन	स्वर्ग	馬	१० उमा	घोड़ा
玄	५ ज़ेन	काला	變	११ हेन	आश्चर्यजनक
舟	६ फ़ून	नाव			

फलक संख्या - २५८

चीनी काइशू लिपि से जापानी अक्षरों का विकास

चित्र	अर्थ	प्रा०	आ०	अ०	चित्र	अर्थ	प्रा०	आ०	अ०
阿	मान सूचक	阝	ア	अ	於	में -अन्दर	方	オ	ओ
伊	यह	亻	イ	ई	己	स्वयं	コ	コ	को
宇	छत	宀	ウ	उ	日	दिन	冂	ワ	व
江	नदी	江	エ	ऐ					

चीनी शब्द व अर्थ

शब्द	चीनी हिन्दी	जापानी कनोनां	कुन
木	मू वृक्ष	बोकू	की
米	बेई चावल	बेई	कोमे
金	चिन धातु	किन	काने

जापानी अक्षरविन्यास

अप्रचलित शब्द	काता काना	हीरा गाना
इमासू	イマス	います
इहोन	エホン	えほん
प्रचलित शब्द		
इमासू	イマス	います
इहोन	イホン	いほん

इमासू = वहां है
इहोन = चित्रों की पुस्तक

फलक संख्या – २५६

जापानी लिपि के मिश्रित प्रतिदर्श

कांजी (चीनी लिपि) व हीरागाना मिश्रित वाक्य

最寄りの郵便局はどこですか。

मो यो री नो यू बिंक यो कू वा दोको देसू का ?

निकटतम (कांजी) डाक घर (कांजी) कहां है? (विराम)

कांजी, कताकाना व हीरागाना मिश्रित वाक्य

小切手をクリアするにはどの

कोगी ते ओ कूरीआ सू रु नी व दोनो

चेक (clear) पास (कता०) होने को कितना

位時間が掛かりますか。

कु रा ई जीकन गा का कारी मा सू का

समय लगेगा ?

कांजी व हीरागाना	वाक्य : हम बम्बई से दिल्ली आए।
	私達はボンベイカラデリー来ました。
	वाताकुशीताची व बम्बई खारा देहली कीमाशीता
कांजी व कताकाना	私達はボンベイからデリーに来ました。

पठनोय सामग्री

Brinkley, F. : A History of Japanese People (1915).

Chamberlain, B. H. : A Practical Introduction to the Study of Japanese Writing (1905)

Daniels, O. : Dictionary of Japanese (Sosho = Ts'ao – shu) Writing Forms (1944)

Innes, A. R. : Japanese Reading for Beainners – 5, Vols. (1934).

Isemonger, N. E. : The Elements of Japanese Writing (1943),

Kennedy, G. A. : Introduction to Kana Orthography (1942)

Sansom, G. B. : Japan. A short Cultural History (1928).

Yamagiva, J. K. : Introduction to Japanese Writing (1948).

□ □ □

अध्याय : ५

दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों की लेखन कला का इतिहास

दक्षिण – पूर्वी एशियाई देश

ब्रह्मा[1]

इतिहास : ईसा की पाँचवीं से सातवीं शताब्दी के प्राचीन अभिलेखों से, जो प्रोम से प्राप्त हुए और जो पियू भाषा तथा कदम्ब लिपि में उत्कीर्ण थे, पता लगता है कि ब्रह्मा में पियू जाति का राज्य था। करेन और मोन जातियों ने उनको आठवीं श० में परास्त कर दिया और वे नानचाउ के शान राज्य की ओर स्थानांतर कर गये। ८३२ में नानचाउ ने करेन की राजधानी को नष्ट कर दिया और नागरिकों को भगा दिया गया। करेन लोग दूसरी जातियों में घुल मिल गये।

उसी काल में मोन और तैलंग आये और उन्होंने श्याम देश का बहुतसा भूभाग अपने अधिकार में कर लिया। उनका मुख्य केन्द्र पागन था।

पागन वंश : ब्रह्मा निवासी तिब्बत के पूर्वी पर्वतों से आये और उन्होंने पागन वंश की नींव डाली। इस वंश का राज्य १०४४ से १२८७ तक रहा। अराकान राज्य की स्थापना की। उनके राजा अनिरुद्ध ने दक्षिण की ओर प्रस्थान किया और थातोन का राज्य अपने अधीन कर लिया। यह मोन संस्कृति का मुख्य केन्द्र था। चीन के मंगोल सम्राट कुबलई खान ने अपने राजदूतों को पागन की राजनिष्ठा प्राप्त करने के लिए पागन दरबार में भेजा परन्तु जूते पहने राजदरबार में आने के अपराध में उनका वध कर दिया गया। इस बात पर मंगोल सैनिकों ने पागन को १२८७ से १३०१ तक घेरे रखा तत्पश्चात् वे वापस चले गये।

शान वंश : इसका राज्य १२८७ से १५३१ तक रहा। इस काल में राज्य विभाजित हो गया। यह लोग श्याम देश के निवासी थे परन्तु भाषा ब्रह्मा की थी। ये बौद्ध – धर्म के अनुयायी थे।

तुंगू वंश : इसका शासन १५३१ से १७५२ तक रहा। इस वंश ने ब्रह्मा निवासियों को पुनः शक्तिशाली बना दिया। इसके एक नरेश बेइनंग ने १५५० से ८१ तक शासन किया और शान एवं तैलंग[2] का दमन किया। राजा थालून (१६२९ – ४८) ने अपनी राजधानी पीगू को छोड़ कर आवा बनाई।

अलंग पाया वंश : इसने १७५२ से १८८५ तक राज्य किया। अलंग पाया एक ग्राम का मुखिया था जिसने इस वंश की स्थापना की। इसने पीगू पर अपना अधिकार कर लिया। तैलंगों का ऐसा दमन किया कि पुनः शक्तिशाली न बन सके। इसने मणिपुर पर भी आक्रमण किया परन्तु १७६० में उसका स्वर्गवास हो गया। तत्पश्चात् इस वंश के शासकों ने अनेकों युद्ध किये और अपनी सत्ता स्थिर रखी।

1. इस देश का भारतीय नाम 'स्वर्ण भूमि' था। दूसरी शताब्दी से यहाँ हिन्दू राज्य था जो यहाँ की उत्तरी जातियों द्वारा नष्ट कर दिया गया।
2. तैलंग भारत के दक्षिणी भाग तिलंगाना के निवासी थे।

ब्रह्मा

फलक संख्या – २६१
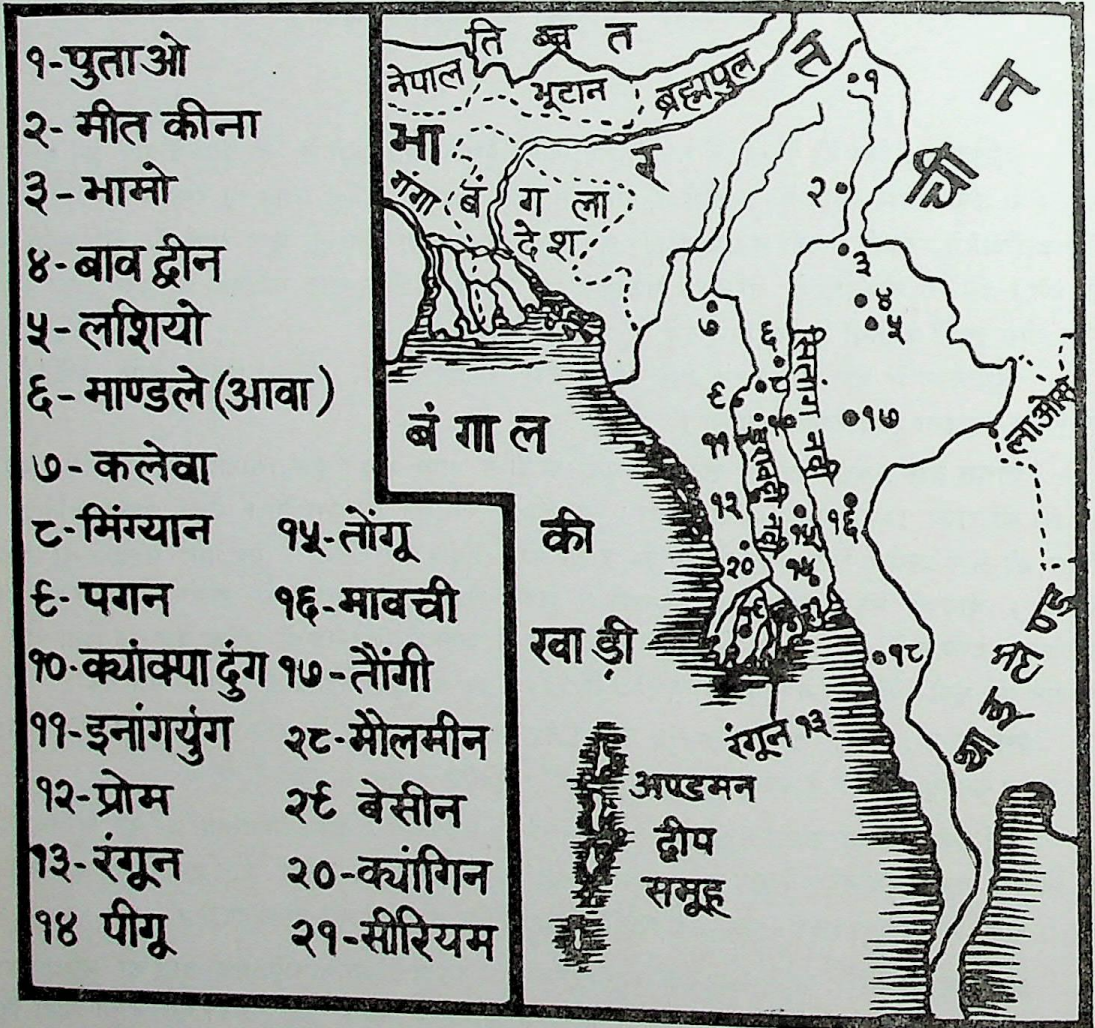
इसी काल में पश्चिम से विदेशियों ने सीरियम और वेसीन में अपनी कोठियाँ बनाईं। परन्तु जब तैलग से १७५६ में युद्ध हुए तो फ्रांस वालों ने तैलंग की सहायता की इसी कारण अलग पाया ने उनके जलपोत तथा तोपें छीन लीं।

ब्रह्मा निवासियों ने १७८५ में अराकान परास्त किया और आसाम व मणिपुर में १८१९ में अहोम राज्य स्थापित किया। १८२४ – २६ के ब्रह्मा युद्ध के समाप्त होने पर अंग्रेजों के साथ एक सन्धि हुई परन्तु ब्रह्मा ने उसको मान्यता नहीं दी। १८५२ में एक और युद्ध हुआ और अंग्रेजों ने पीगू को अपने अधीन कर लिया। राजा मिण्डान (१८५२ – ७८) ने इन अंग्रेज़ों का स्वागत किया तथा देश को आधुनिकता प्रदान की। १८७८ में थीबा अपने दर्जनों सौतेले भाई बहनों का वध करने के पश्चात् राजसिंहासन पर बैठा। इसने अंग्रेजों से कुछ धन की मांग की। धन न मिलने पर फ्रांस से मांग की। इस बात को ब्रिटिश सरकार सहन न कर सकी। थीबा ने इस पर अंग्रजों के लकड़ी काटने वाले मज़दूरों तथा ठेकेदारों को बन्दी बना लिया। जब नहीं छोड़ा तो अंग्रेजों ने तीसरा युद्ध १८८५ में आरम्भ कर दिया। ब्रह्मा की पराजय हुई और ब्रिटिश शासन आरम्भ हो गया जो १९४५ तक रहा।

१९३७ तक ब्रह्मा भारत सरकार का एक प्रांत रहा। १९४२ में जापान ने आक्रमण कर दिया और १९४५ में स्वतंत्र हो गया और १९४८ में गणतंत्र राज्य स्थापित हो गया।

लेखन कला

ब्रह्मा में लेखन कला का विकास भारत की लिपियों द्वारा हुआ। बौद्ध धर्म के साथ बौद्ध धर्म की भाषा 'पाली' भी बारहवीं श० के अंत में यहाँ पहुँची। प्राचीनतम पाली अभिलेख एक स्तम्भ पर उत्कीर्ण किया हुआ प्राप्त हुआ, जिसका नाम 'मियाज़ेदी स्तम्भ' है। इस पर तीन प्रकार की लिपियाँ दी हुई हैं। इसका काल १०८४ निर्धारित किया गया है।

निम्नलिखित पाँच लिपियाँ अगले फलकों पर दी गईं हैं जो इस प्रकार हैं :—

१. **चतुष्कोण पाली :** जो शिलाओं पर उत्कीर्ण की जाती थी। इसको ब्रह्मा की भाषा में क्योकत्स कहते हैं (फ० सं० – २६२)।
२. **सुलेख पाली :** जो पुस्तकों पर सुलेख में लिखी जाती थी (फ० स० – २६३)।
३. **आधुनिक गोलाकार लिपि :** जिसको ब्रह्मी भाषा में त्स – लोह (tsa – louh) कहते हैं। इसको आज भी प्रयोग करते हैं (फ० सं० – २६४)। इसके संयुक्त वर्ण 'फ० सं० – २७३' पर दिये गये हैं तथा एक पाठ 'फ० सं० – २७४' पर दिया गया है।
४. **पेगुअन लिपि :** इसका विकास ब्रह्मा की प्राचीन लिपि से ही किया गया है परन्तु 'मोन' जाति की भाषा की ध्वनियों के अनुसार इसको संशोधित करके पीगू लिपि बनी। पीगू को तैलंगों की, छठी श० में राजधानी बनाया गया (फ० सं० – २६५)।
५. **चकमा लिपि :** खामी – चकमा जाति (Tribe) ने, जो दक्षिण – पूर्वी बंगाल (आ० बंगला देश) में निवास करती थी, इसका आविष्कार लगभग सोलहवीं – सत्रहवीं शताब्दी में किया। इसके वर्ण दीवान कृष्टो चन्द्र द्वारा, जो स्वयं चकमा जाति के थे, प्राप्त किये गये तथा प्रकाशित[1] हुए। उन्होंने इस लिपि के वर्ण तथा पाठ सुरक्षित रखे। इसके वर्ण तथा एक लघु – पाठ 'फ० सं० – २६६' पर दिये गये हैं।

---

1 Grierson's L. S. I. Vol. V. Part. 1. p. – 339.

चतुष्कोण पाली लिपि

अ	इ	उ	ए	आ	क	ख	ग
घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट
ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध
न	प	फ	ब	भ	म	य	र
ल	व	श	ष	स	ह	इस लिपि में	३८ वर्ण हैं

फलक संख्या – २६२

सुलेख पाली लिपि

अ	आ	इ	उ	ए	क	ख	ग
घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट
ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध
न	प	फ	ब	भ	म	य	र
इस लिपि में		ल	व	स	ह	३६ वर्ण हैं	

फलक संख्या – २६३

आधुनिक गोल लिपि एवं अंक

अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ए	ऐ	ओ
औ	क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज
झ	ञ	ट	ठ	ड	ढ	ण	त	थ
द	ध	न	प	फ	ब	भ	म	य
र	ल	व	स	ह	ळ	अंक १ से १० तक		

१-टै	२-हिने	३-तडु	४-लेह	५-ण	६-छऊ	७-रवों	८-शो	९-को	१०-टख

फलक संख्या – २६४

प्राचीन पेगुअन लिपि

अ	आ	इ	उ	ए	क	ख	ग
घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट
ठ	ड	ढ	ण	त	द	ध	न
प	फ	ब	भ	म	य	र	ल
व	श	ष	स	ह	इस लिपि में ३८ वर्ण हैं		थ

फलक संख्या - २६५

चकमा लिपि

अ		औ		झ		द		र		की	
आ		क		ञ		ध		ल		कु	
इ		ख		ट		न		व		कू	
ई		ग		ठ		प		श		को	
उ		घ		ड		फ		ह		कौ	
ऊ		ङ		ढ		ब		का		के	
ए		च		ण		भ		कि		कै	
ऐ		छ		त		म					
ओ		ज		थ		य					

चकमा का प्रतिदर्श

एक | जना | तुन | दिब | पू | एल

अर्थ: एक मनुष्य के दो पुत्र थे।

फलक संख्या – २६६

थाईलैण्ड

इतिहास : ५७५ ई० में श्याम[1] (वर्तमान – थाईलैण्ड) में लाओस की सर्वप्रथम राजधानी मुआंग – लंफ़न (लेबांग या हरी बुन चाई) के नाम से स्थापित की गई । इसी काल में यहाँ कई जातियों का सम्मिश्रण आरम्भ हो गया । जब कुबलई ख़ान ने लाओ – ताई को दक्षिण – पश्चिमी चीन से निष्कासित कर दिया तब श्याम में कई छोटे छोटे राज्य स्थापित हो गये ।

१२८४ के एक सुखोताई अभिलेख से ज्ञात हुआ कि एक नरेश राम कम्हेंग ने अपने राज्य का विस्तार किया और लिगमोर को अपने राज्य में सम्मिलित कर लिया । सानो के छोटे राज्य पर भी आक्रमण करके श्याम देश का राज्य पूर्णरूप से स्थापित हो गया । १३५० में सानो के ध्वंसावशेषों पर अयोथ्या (अयोध्या का अपभ्रंश) राजधानी का निर्माण हुआ ।

श्याम ने कम्पूचिया पर आक्रमण कर दिया और अंकोर को अपने अधिकार में कर लिया और लगभग ९०००७ नागरिकों को बन्दी बना कर स्थानान्तर करवा दिया । श्याम और कम्पूचिया के युद्ध लगभग ४०० वर्षों तक चलते रहे और अंत में कम्पूचिया श्याम का एक अंग बन गया । १८२८ तक लुआंग प्रबंग और वीन चांग के मुख्य नगरों पर भी श्याम का पूर्ण अधिकार हो गया ।

पन्द्रहवीं एवं सोलहवीं श० में ब्रह्मा और पीगू निवासियों ने श्याम पर कई आक्रमण किये । १५५५ में श्याम ब्रह्मा देश का एक अंग बन गया । कुछ वर्षों पश्चात् श्याम देश के एक वीर नेता फ़ा – नरेत ने कम्पूचिया तथा लाओस[2] को अपने अधीन करने के पश्चात् पीगू पर भी आक्रमण कर दिया । १७६७ में ब्रह्मा ने अयोथ्या को भी नष्ट कर दिया । अयोथ्या के नष्ट होने के पश्चात् सेना के एक जनरल फ़ाया – तख – सिन ने बैंकॉक को अपनी राजधानी बनाया परन्तु पागल होने के कारण उसका वध कर दिया गया । तदनन्तर फ़ाया – चक्करी ने एक नये राजवंश को स्थापित किया । उसने तेन्नासरिन पर आक्रमण भी किया ।

१५११ में पह पुर्तगाली आये । सतरहवीं श० में डच्छों ने उनको निकाल कर स्वयं व्यापारिक अधिकार प्राप्त कर लिये । श्याम ने अपने अधीन एक छोटे राज्य केदा के एक द्वीप पुलो पिनांग को १७८६ में एक कोठी बनाने के लिये ईस्ट इण्डिया कम्पनी को दे दिया । १८२४ में डच्छ और ब्रिटिश को सन्धियों के अनुसार व्यापारिक अधिकार दे दिये गये । फ्रांस और ब्रिटेन में भूमि प्राप्त करने के कारण अनेकों झगड़े हुए । १९१७ में श्याम ने प्रथम महायुद्ध में जर्मनी के विरुद्ध भाग लिया ।

श्याम नरेश राम चतुर्थ के मरणोपरांत उसका भाई प्रजाधिपाक १९२५ में राजसिंहासनारूढ़ हुआ । २४ जून १९३२ को एक क्रान्ति हुई तथा एक संवैधानिक राजतंत्र स्थापित किया गया । प्रजाधिपाक ने राजत्याग कर दिया । तत्पश्चात् उसका दस वर्षीय भतीजा आनन्द महीडोल नरेश बना दिया गया । दिसम्बर १९४१ में जापानी सेना ने श्याम पर अधिकार कर लिया और २५ जनवरी १९४२ को ब्रिटेन से युद्ध करने की घोषणा कर दी गई । युद्ध के पश्चात् अनेकों देशों के साथ सन्धियां हुईं ।

१९४९ में इसका नाम थाईलैण्ड रख दिया गया ।

1. यह देश पहले कम्बोज हिन्दू राज्य के अधीन था परन्तु दक्षिणी चीन से थाई जाति के आने पर (ग्यारह श० में आई) हिन्दू राज्य समाप्त हो गया ।
2. लाओस को फ्रेंच भाषा में 'लाओ' कहते हैं । अन्तिम 'स' फ्रेंच में मूक होता है ।

श्याम व हिन्द-चीन के देश (कम्पूचिआ, लाओस, वियेतनाम)

फलक संख्या – २६७

श्याम - कम्बोडिया -- लाओस -- उ० एवं द० वियेतनाम
१६०० ई० में
वर्तमान काल में
चीन
ब्रह्मा (ब्रिटिश अधीन)
रंगून
श्याम
बैंकाक
टोंगकिंग
हनोइ
हैनान
लुअंग-प्रबंग
अन्नाम
लाओस
कोचीन चीन
सइगान
नोमपेन्ह
मलक्का
सुमात्रा
अण्डमान द्वीप
नीकोबार द्वीप
फ्रांस के अधीन
उत्तर वियतनाम
हनोइ
हैपांग
लुअंगप्रबंग
वियेनतेन
थाइ लैण्ड (श्याम)
बैंकाक
अंगकोर
कम्बोडिया
नोमपेन्ह (खमेर)
सइगान
दक्षिण वियतनाम
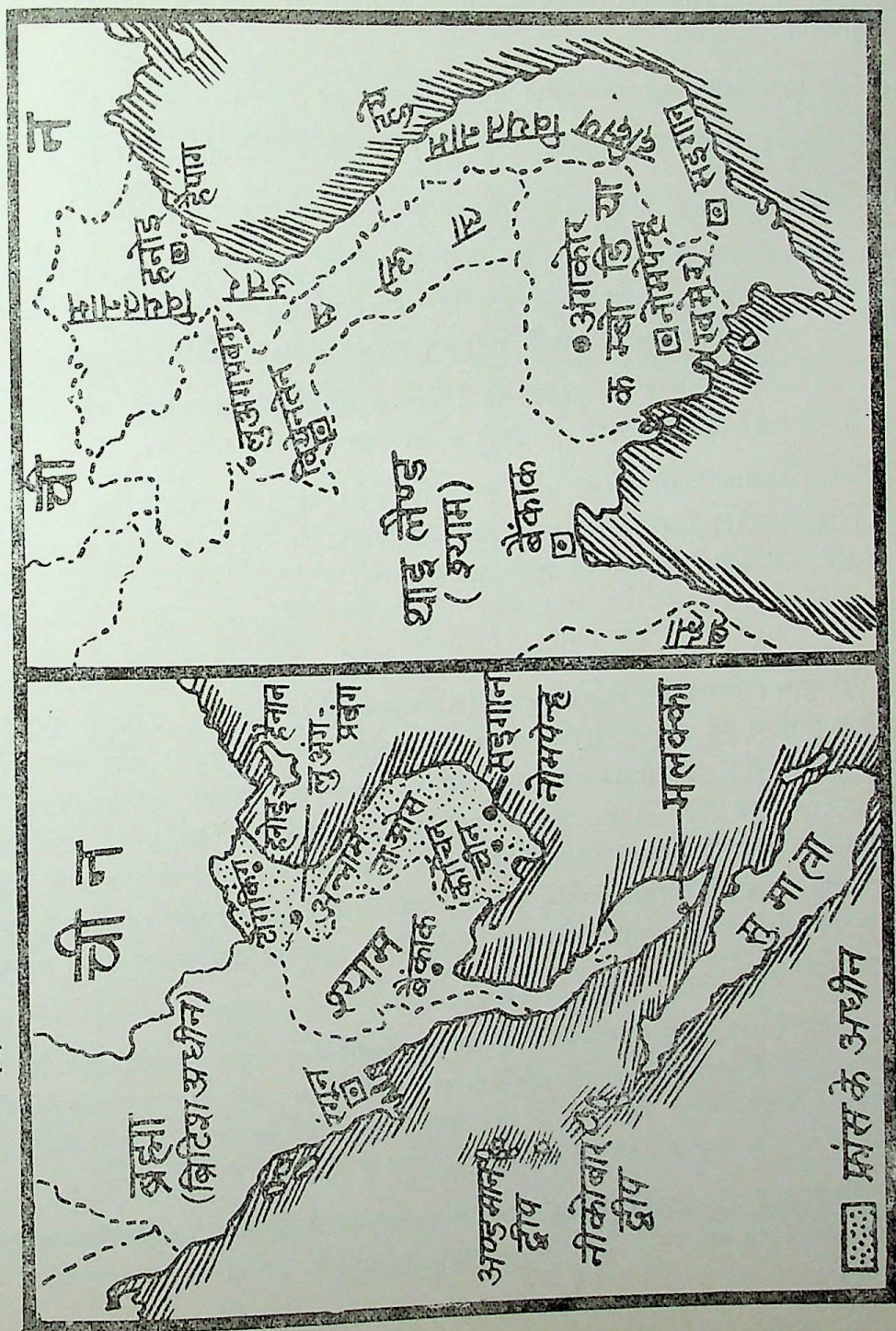
लेखन कला : श्याम की प्राचीन लिपि भी भारत से ब्रह्मा के द्वारा विकसित हुई। पाली चतुष्कोण लिपि **में** कुछ परिवर्तन करके प्रयोगात्मक बनाई गई। वे भी कई प्रकार की थीं, जो निम्नलिखित हैं :—

१. **बोरोमात लिपि :** यह प्राचीन लिपि पाली से विकसित हुई (फ० स० – २६९)।

२. **पातीमोखा लिपि :** यह हस्तलिखित पुस्तकों के लिये पाली से ही विकसित हुई (फ० सं० – २७०)।

३. **प्राचीन थाई लिपि :** राजा रूआंग द्वारा दसवीं श० में आविष्कार हुआ (फ० सं० – २७१)।

४. **आधुनिक लिपि :** यह शीघ्र – लिखित लिपि बोरोमात से सुखोताई नरेश राम खोमहेंग द्वारा तेरहवीं श० में विकसित हुई। इसी नरेश के शासनकाल के एक अभिलेख से ज्ञात हुआ। इसमें स्वर पृथक नहीं हैं उनकी मात्रायें व्यंजनों में लगा दी जाती हैं (फ० सं० – २७२, २७३)।

'फ० सं० – २७२' पर अंक भी दिये गये हैं। आधुनिक लिपि में एक ध्वनि के कई अक्षर हैं। इसी फलक के नीचे ब्रह्मा देश की आधुनिक गोल लिपि के कुछ संयुक्त वर्ण भी दिये गये हैं।

श्याम की भाषा में भी चीन की भाषा जैसी ध्वनिबल (Tone) की पद्धति वर्तमान है। इन ध्वनि – बल के चिह्नों का प्रयोग न करने के कारण किसी विदेशी विद्यार्थी को, जो श्याम की भाषा एवं लिपि सीख रहा हो शुद्ध लिखना या पढ़ना असम्भव प्रतीत होता है।

लाओस

इतिहास : लगभग ७१३ में लाओशियनों (Laotians) ने नानचाउ के राज्य को स्थापित किया। ८७७ में नानचाउ के एक नरेश ने चीन के सम्राट् की एक पुत्री से विवाह किया। खेमर एवं थाई लोगों ने लाओस पर ग्यारहवीं से तेरहवीं श० तक राज्य किया। अब इसकी राजधानी लुआंग – प्रवंग बन गई। १३५६ से १००६ तक साम – से न – ताई ने राज्य किया और लाओशियनों को उनका राज्य वापस कर दिया तथा निष्कंटक राज्य किया। लाओशियनों ने कई शताब्दियों तक थाई और ब्रह्मा से युद्ध किया। अठारहवीं श० के अंत से लाओस के एक बड़े भाग पर श्याम का शासन रहा। अन्नाम ने इस देश के दक्षिण – पूर्वी भाग पर अपना शासन स्थिर रखा। १८३० के पश्चात् लाओस सरकार ने भी अन्नाम को कर देना आरम्भ कर दिया।

१८९३ में फ्रांस ने देश के कई नगरों पर अपना अधिकार कर लिया। ए० जे० एम पैवी (A. J. M. Pavie) ने, जो श्याम के दरबार में एक मंत्री था श्याम को ४८ घण्टे की अंतिम चेतावनी दी कि वह लाओशियन के शासन क्षेत्र को खाली कर दे और उसकी धन देकर सहायता करे। तभी से लाओस फ्रांस के संरक्षण में आ गया। जुलाई १९४९ में यह देश पूर्ण स्वतंत्र हो गया।

लेखन कला : लाओस की लिपि का विकास प्राचीन थाई लिपि से हुआ। इसकी ध्वनि पद्धति पर श्याम की ध्वनि पद्धति का प्रभाव पड़ा है। इस प्रभाव से भाषा में सरलता के स्थान पर अधिक जटिलता आ गई है।

'फ० सं० – २७५' पर लाओस की लिपि दी गई है।

बोरोमात

अ	आ	इ	उ	ए	क	ख
ग	घ	ङ	च	छ	ज	ञ
ट	ठ	ड	ढ	ण	त	थ
द	ध	न	प	फ	ब	भ
म	य	र	ल	व	स	ह

फलक संख्या – २६९

पतीमोखा लिपि

अ	इ	उ	ए	आ	क	ख
ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ
ञ	ट	ठ	ढ	ण	त	थ
द	ध	न	प	फ	ब	भ
म	य	र	ल	व	स	ह

फलक संख्या – २७०

प्राचीन थाई लिपि

क	ख	ग	घ	ङ	च	
छ	झ	ट	ठ	ड	ढ	
ण	त	थ	द	ध	न	
प	फ	ब	भ	म	य	
र	ल	व	श	ष	स	ह

फलक संख्या – २७१

आधुनिक थाई लिपि

कॉ	ก	झ	ช	थ़ा	ฑ	न	น	म्म	ม	स	ส
ख	ข	स़	ซ	ठ	ฒ	व	บ	ज़	ย	ह	ห
ख़ा	ค	श	ฌ	ना	ณ	प	ป	र	ร	र	ฬ
ख़ो	ฆ	ज	ญ	ड	ด	फ	ผ	ल	ล	ऑ	อ
गों	ง	द	ฎ	त	ต	फ़	ฝ	व	ว	हा	ฮ
च	จ	त	ฏ	ट	ท	फ़ा	พ	स	ศ	थ	ฤ
छ	ฉ	थ	ฐ	ध	ธ	फा	ฟ	स	ษ	फ	ภ

अंक	नंगो १	संगो २	साम ३	सी ४	हा ५	हो ६	चेद ७	पैद ८	काउ ९	सिप १०
	๑	๒	๓	๔	๕	๖	๗	๘	๙	๑๐

फलक संख्या – २७२

आधुनिक थाई लिपि के संयुक्त अक्षर

ना	नि	नी	नइ	नई
नु	नू	ने	नय	नै
नॉ	नो	नौ	नों	पुनः चिन्ह

ब्रह्मा की गोल लिपि के संयुक्त अक्षर

ग	गा	गि	गी	गु	गू
गे	गै	गो	गौ	गं	गः

कुछ लिपियों के पाठ

जावा की दूसरी लिपि का पाठ

ही कू दी ह र नः प्रू म सा

ही-कू दी ह र नः नू प्र म सास्त्र जावा

स्त्र जा वा {यह जावा की व्याकरण है} अर्थ

आधुनिक थाई लिपि

त आ अ न पे न ख न ग न

पिता अन एक ग़रीब (मनुष्य) था

आधुनिक ब्रह्मा की गोल लिपि का एक पाठ

लिप्यंतर = स इन या तञ दो गो पी इन्नया कउंग गउंग तइन पे ब अ त एत मवए हमउ कउंग गउंग य बा ज़े अ क आ क अत त ईन अ लोक पे त आ बा

अर्थ = लोगों का अच्छा पालन पोषण हो, उनका अच्छा रहन सहन हो, उनको सदैव व्यस्त रखो.

लाओस की लिपि

अ	इ	उ	ए	क	ख
ङ	च	ट	ड	न	प
फ	ब	म	य	र	ल
व	श	ष इस वर्ण का प्रयोग नहीं है	स	ह	इस में २२ वर्ण हैं

फलक संख्या – २७५

कम्पूचिया

इतिहास : लगभग ईसा की प्रथम शताब्दी में फ़ौनान[1] राज्य स्थापित था। उसी काल में भारत की संस्कृति का भी पदार्पण हुआ। चानकिंग तथा चम्पा के राज्य इस देश के विरोधी थे। ईसा की तीसरी शताब्दी से भारत के साथ अच्छे सम्बन्ध स्थापित हो गये। चौथी तथा पाँचवी श० में भारतीयों की एक बड़ी संख्या यहाँ आकर बस गई। फ़ौनान राज्य का अंतिम नरेश कौन्दिया था जिसकी मृत्यु ५१४ में हो गई। रुद्रवर्मन के राजसिंहासनारूढ होने में कुछ नियमों को तोड़ा गया जिसके कारण फ़ौनान राज्य विभाजित हो गया।

चेन-ला राज्य मीकांग नदी पर स्थित हौनान राज्य का एक उपराज्य था जो इस विभाजन के कारण स्वतन्त्र हो गया। इस राज्य के नरेश अपने को एक पौराणिक देवी – देवता, मीरा और कम्बू क वंशज मानते थे जिससे कम्बोज एवं कम्बोडिया तथा अब कम्पूचिया के नाम उत्पन्न हुए। यहाँ के निवासी खेमिर जाति के थे। चेन – ला राज्य की एक राजकुमारी ने रुद्रवर्मन के पौत्र भाववर्मन प्रथम से विवाह किया। नवीं श० में खेमिर राज्य शक्तिशाली हो गया।

जयवर्मन द्वितीय ने ८०२ में अंकोर – वंश की नींव डाली और ८५० तक राज्य किया। यकोवर्मन प्रथम ने ८८९ से ९०० तक राज्य किया। इसकी माँ फ़ौनान राज्य की थी। इसने यशोधर पुर की स्थापना की। इसके बाद सूर्यवर्मन ने १०१० से १०५० तक शासन किया।

१०८० में महीधरपुर के एक वंश ने राज्य किया जिसका तीसरा शासक सूर्यवर्मन द्वितीय था जिसने १११३ से ११४६ तक राज्य किया। इसने अन्नाम देश से ११२८ से ११३८ तक युद्ध किया। ११३२ में चीन के साथ भी युद्ध किया तथा ११४५ में चम्पा राज्य को दो वर्ष के लिये अपने अधीन कर लिया। इसी ने अंकोर का निर्माण करवाया। इसके मरणोपरांत इसका चचेरा भाई सिंहासन पर बैठा। अभी तक राजा शैव तथा वैष्णव धर्मानुयायी थे परन्तु जब धरनीन्द्र वर्मन राजा बना तब वह बौद्ध – धर्म का अनुयायी हो गया।

११७७ में चम्पा ने अंकोर पर आक्रमण किया परन्तु जयवर्मन सप्तम ने अपनी नौसेना द्वारा उसको परास्त किया। तेरहवीं श० में चीन में मंगोल वंश का शासन आरम्भ हो गया। चीन के दक्षिणी भाग युनान के बहुत से लोग भाग कर कम्पूचिया आ गये। १२८३ में मंगोल सेना ने आक्रमण किया जिसको परास्त होना पड़ा। दो वर्ष बाद जयवर्मन अष्टम् (१२४३ – ९५) ने कुबलई खान को कर देना आरम्भ कर दिया। १२९६ में थाई जाति के लोग इस देश में आकर बसन लगे। १३५१ में लम्पोंग राजा हुआ जिसको अंकोर से १३५७ में निकाल दिया गया। कुछ दिनों के लिए अंकोर थाई लोगों के अधिकार में रहा। सूर्यवर्मन तृतीय (१४०५ – १४५० तक) ने अपनी एक राजधानी का तौलेसप में निर्माण करवाया।

---

1. चीनी लोग कम्बोज के हिन्दू राज्य को फ़ौनान के नाम से सम्बोधित करते थे। दक्षिण भारत के कौण्डिन्य नामक ब्राह्मण ने यहां हिन्दू राज्य की स्थापना लगभग दूसरी शताब्दी में की थी। शनैः शनैः यह राज्य अति शक्तिशाली हो गया। यशोवर्मन प्रथम तथा सूर्यवर्मन द्वितीय यहां के अत्यन्त प्रभावशाली तथा वीर राजा थे : पन्द्रहवीं श० में अन्नामियों तथा थाई लोगों के आक्रमणों ने इस राज्य को छिन्न-भिन्न कर दिया, परन्तु इसका पूर्णतया विनाश नहीं हुआ।

   इसी प्रकार भारतीय राजाओं ने चम्पा में भी एक उपनिवेश लगभग दूसरी शताब्दी में स्थापित किया। यहाँ के तीन मुख्य नगर ३८० ई० में यहां के प्रभावशाली राजा भद्रवर्मा के अधीन थे जिनके नाम अमरावती, विजय तथा पांडुरंग थे। बारहवीं श० में कम्बोज से तथा तेरहवीं में चीन के मंगोल वंश से घोर युद्ध हुए और यह राज्य चीन के तत्पश्चात् अन्नाम के अन्तर्गत हो गया।

पन्द्रहवीं श० में अन्नामियों ने चम्पा पर आक्रमण कर दिया। सतरहवीं श० में अन्नामियों ने खेमिर को अपने अधीन कर लिया। अठारहवीं श० में कम्पूचिया अन्नाम का एक अंग बन गया। सोलहवीं श० में पुर्तगाली जलपोत यहाँ आये। तत्पश्चात् फ्रांस ने नोरदम प्रथम (१८५९ – १९०४) को अपने संरक्षण में आने के लिए विवश किया और कम्पूचिया फ्रांस के अन्तर्गत हो गया। ८० वर्ष तक यह हिन्द – चीन का एक अंग बन कर फ्रांस के संरक्षण में रहा। इन्हीं दिनों इसकी राजधानी नोम पेन (Pnom Penh) में बनाई गई। १९०४ से १९४१ तक फ्रांस और श्याम का युद्ध चलता रहा। दूसरे महायुद्ध में जापान का अधिकार हो गया। जो १९४५ में जापान के आत्मसमर्पण पर समाप्त हो गया। ८ नवम्बर १९४९ को देश पूर्ण रूप से स्वतन्त्र हो गया।

लेखन कला : कम्पूचिया की लिपि भारत की लिपि से श्याम देश की लिपि के द्वारा विकसित हुई। यहाँ दो प्रकार की लिपियों ने जन्म लिया, जो निम्नलिखित हैं :—

१. **मूल अक्षर**[1] **:** उसको खेमिर (Khmer) लिपि के नाम से भी सम्वोधित किया जाता है। इसका विकास आठवीं श० में हुआ (फ० सं० – २७६)।

२. **संशोधित लिपि :** उपर्युक्त लिपि में संशोधन करके इस लिपि का अठारहवीं श० में विकास हुआ। शीघ्रता से लिखने के कारण इसका आविष्कार किया गया (फ० सं० – २७७)।

३. **आधुनिक लिपि :** यह लिपि आजकल प्रचलित है।[2] नीचे अंक भी दिये गये हैं (फ० सं० – २७८)। आधुनिक लिपि की ध्वनियाँ कुछ अनोखी लगती हैं। चीनी एवं भारतीय ध्वनियों का सम्मिश्रण प्रतीत होता है। उसमें स्वर अलग नहीं दिये हैं केवल एक अक्षर 'अ' है उसी में स्वरों की मात्रायें अन्य व्यंजनों की तरह लगा कर उच्चारण कर लिया जाता है।

फ़िलिपाइन्स

इतिहास : तीसरी से पन्द्रहवीं श० तक मलाया से आये हिन्दू राजाओं का यहाँ राज्य था। तत्पश्चात् चोन के अधीन रहा।

इस द्वीपसमूह का नाम स्पेन के शासक फ़िलिप द्वितीय के नाम पर रखा गया। इसमें लगभग ७०९० द्वीप हैं।

१९ मार्च १९२१ को यहाँ सबसे पहला योरोप निवासी फरदीनन्द मैगेलन (Ferdinand Magellan) पहुंचा। ईसा की दूसरी शताब्दी में सबसे पहले यहाँ हिन्दू संस्कृत मलाया प्रायद्वीप एवं जावा स आई। एक स्पेन निवासी लेगाज़पी (Legazpi) यहाँ अप्रैल १५६४ में पहुँचा पवन्तु उसको पुर्तगालियों से झगड़ा करना पड़ा। १५७१ में लेगाज़पी ने मनीला को प्रशासकीय केन्द्र बनाया। १६०० तक और कई द्वीप स्पेन के अधिकार में आ गये। इन द्वीपों का प्रशासक लेगाज़पी का पौत्र जुआन डो सलकैंडो (Juan de Salcedo) हो गया।

१५७४ में चीन ने आक्रमण कर दिया। परन्तु उसको विफल कर दिया गया। १५७१ में मुसलमान मुख्य विरोधी के रूप में यहाँ आये परन्तु कुछ झगड़ों के पश्चात् उन्होंने आत्मसमर्पण कर दिया।

---

1. इसकी वर्णमाला फ़ौलमान (Faulmann) ने अपनी पुस्तक 'Das Buch der. Schrift (1880), p. – 152 – 3' में दी है
2. इसकी वर्णमाला स्ववं लेखक ने दिल्ली में कम्पचिया के दूतावास जाकर तैयार की।

मूल अक्षर लिपि

अ	आ	इ	उ	ए	क	ख	ग
घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट
ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध
न	प	फ	ब	भ	म	य	र
ल	व	श	ष	स	ह	इस लिपि में ३८ वर्ण हैं	

फलक संख्या – ६७६

(ख्मेर)

कम्पूचियन - देवनागरी वर्णमाला

~~संशोधित शोध लिपि~~

अ	आ	इ	उ	ए	क	ख	ग
घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट
ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध
न	प	फ	ब	भ	म	य	र
इस लिपि में	ल	व	श	ष	स	ह	३८ वर्ण हैं

फलक संख्या – २७७

फ़िलिपाइन द्वीप-समूह

फलक संख्या – २७९

स्पेन में मुसलमानों को मूर कहते थे परन्तु यहाँ उनको मोरो सम्बोधित किया गया। १५७९ में फ्रांसिस्को डी साण्डे (Fransisco de Sande) को जो यहाँ का गवर्नर (१५७५ से १५८० तक) था फिर एक युद्ध इन मोरों से करना पड़ा और उनकी पुनः पराजय हुई। तत्पश्चात् मोरो लोग जलपोतों को लूटने का कार्य करने लगे। १८५० में मोरों के मुख्य गढ़ को, जो उन्होंने टोन्किल द्वीप पर बनाया था, नष्ट कर दिया गया और जोलो के नगर पर अधिकार कर लिया गया।

१५९६ में डच्छ आये। १७६२ में अंग्रेज आये और उन्होंने मनीला पर अधिकार कर लिया परन्तु १७६३ में पेरिस की सन्धि द्वारा पुनः स्पेन को वापस कर दिया। १८९८ में क्यूबा में कुछ झगड़े होने के कारण तथा क्यूबा की राजधानी तथा बन्दरगाह में खड़े अमरीका की नौ सेना के युद्धपोत को आग लगा देने के कारण स्पेन – अमरीका का युद्ध आरम्भ हो गया। स्पेन परास्त हुआ तथा पेरिस में एक सन्धि – पत्र पर हस्ताक्षर होने के पश्चात् १८९९ में स्पन ने क्यूबा तथा फिलिपाइन द्वीप समूह अमरीका के अधिकार में दे दिया।

१९४१ में यह जापान के अधिकार में आ गया। १९४५ में जापान की पराजय तथा समर्पण के कारण यह द्वीपसमूह पुनः अमरीका के अधीन हो गया।

४ जुलाई १९४६ को इसको पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान कर दी गई।

लिपि : यहाँ की जातियों में से एक जाति का नाम तगोला था। ये जातियाँ हिन्दू राजाओं के साथ मलाया से आई थीं और यहाँ आकर बस गई। यहाँ की प्राचीन लिपि तगाला थी। इसके विषय में अधिक ज्ञात नहीं हो सका। इसका स्थान रोमन लिपि ने ले लिया। (फ० सं० – २८०)।

हिन्देशिया

इतिहास : ईसा की आरम्भिक शताब्दियों में यहाँ हिन्दू संस्कृति विद्यमान् थी। भारत से पुरोहित तथा व्यापारी वर्गों ने अपनी विचारधारा का यहाँ प्रचार किया।

पन्द्रहवीं श० में यहाँ मुसलमान आये और सोलहवीं श० में योरोप निवासी आये परन्तु नीदरलैण्ड के डच्छ लोगों ने सबको बाहर निकाल कर अपना प्रभुत्व जमा लिया।

१९२२ में यहाँ के लगभग ३००० छोटे बड़े द्वीप नीदरलैण्ड की छत्रछाया में आगये और ईस्ट इण्डीज़ के नाम से ज्ञात हो गये। १९४२ तक यह नीदरलैण्ड सरकार के उपनिवेश के रूप में रहा। १९४२ – ४५ के बीच सरकार के विरुद्ध एक क्रान्ति हुई जिसमें देश के नेताओं ने बड़े त्याग किये और देश को १७ अगस्त १९४५ में गणतन्त्र राज्य घोषित कर दिया। डच्छ ने इसको नहीं माना और चार वर्ष तक युद्ध चलता रहा तत्पश्चात् यह देश २७ दिसम्बर १९४९ को पूर्ण स्वतन्त्र हो गया।

लेखन कला : इसका इतिहास इस देश के कुछ मुख्य द्वीपों में आरम्भ हुआ जिसके विषय में आगे विस्तार से दिया गया है।

जावा

इतिहास : योरोप निवासियों के आने के पूर्व यहाँ सर्वप्रथम भारत के हिन्दू ईसा की प्रथम शताब्दी में पहुँचे। पहले वे व्यापारी होकर आये तत्पश्चात् धर्म – प्रचारक बन कर आये। भारतीयों ने यहाँ के मूल –

तगाला लिपि

अ	इ	उ	क	ग
ङ	त	द	न	प
ब	म	य	ल	व
इस लिपि में	स	केवल	ह	१७ वर्ण हैं

फलक संख्या – २८०

हिन्देशिया द्वीप समूह

(लगभग ३००० द्वीप)
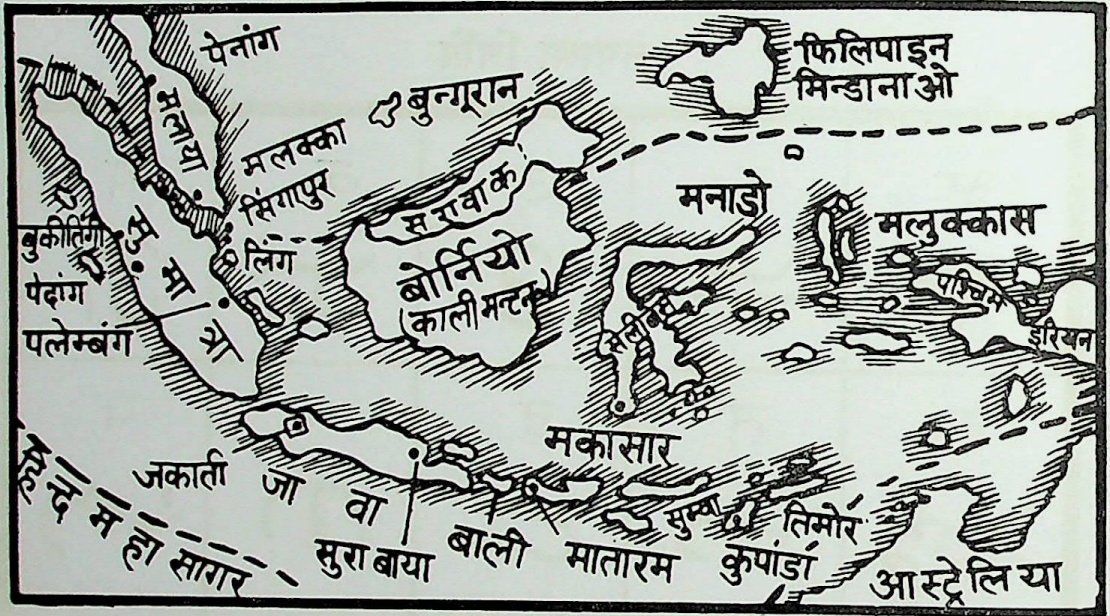
हिन्देशिया का जावा द्वीप
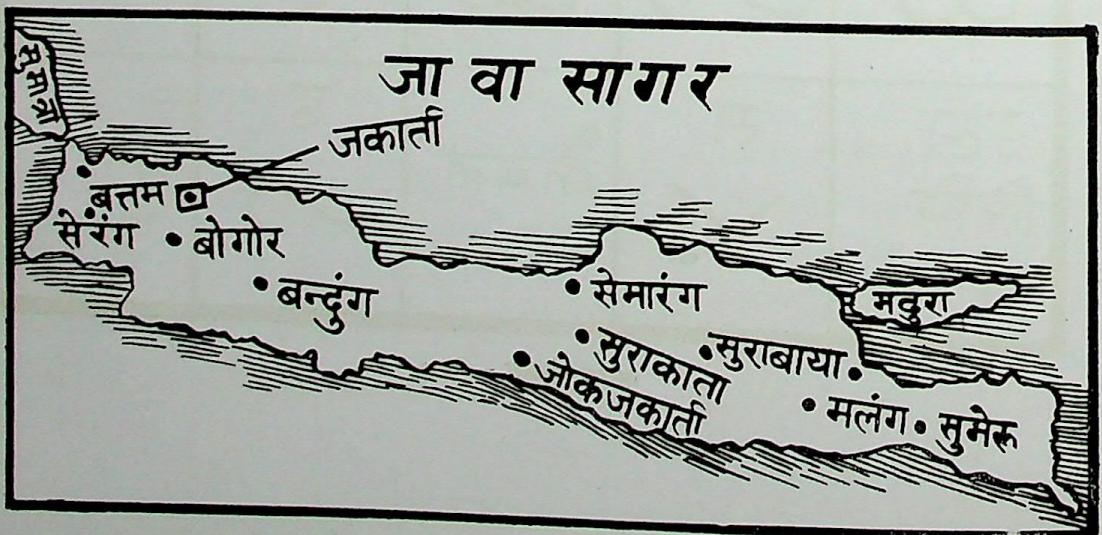
निवासियों से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किये और अपनी संस्कृति का प्रसार किया परन्तु उन्होंने राज्य नहीं किया। उन्होंने अपना एक सांस्कृतिक तथा राजनैतिक केन्द्र ९२८ में मध्य जावा के मातारम नगर में स्थापित किया।

अनेकों राज्य स्थापित हुए और समाप्त हुए परन्तु उनमें सबसे अच्छा तथा प्रसिद्ध राज्य मजापाहित राज्य था जो १२९३ से १५२० तक चलता रहा। अन्य जातियाँ सामुद्रिक लूटमार करती थीं। वैसे जावा अन्य द्वीपों की तुलना में सबसे अधिक सभ्य था। मजापाहित राज्य समाप्त होने के पश्चात् जावा पुनः कई राज्यों मे विभाजित हो गया। तदनन्तर इस्लाम आया और यहाँ के निवासी मुसलमान हो गये।

१५११ में पुर्तगाली आये। १५९६ में डच्छ व्यापारी आये १६०२ में डच्छ ईस्ट इण्डिया कम्पनी का निर्माण हुआ। १६१० में डच्छ का पहला गवर्नर जनरल नियुक्त हुआ जिसको जजाकार्ता के निकट शासकीय मुख्यालय निर्माण करने की अनुमति मिल गई। १६१९ में जजाकार्ता नगर को भी ले लिया गया जो आज जकार्ता के नाम से सम्बोधित किया जाता है।

१७४५ में पूर्ण जावा पर डच्छ का अधिकार मान लिया गया। मातारम का राज्य १७५५ में तथा बन्ताम का राज्य १८०८ में डच्छ के अधीन हो गया। १८७० में जनता को व्यापार करने का अधिकार दे दिया गया और १८७२ में दण्ड – संहिता (Penal Code) का प्रयोग आरम्भ हो गया। १९२२ में सब द्वीपों को मिला कर एक देश का रूप दे दिया गया जो १९४२ तक नीदरलैण्ड (हालैण्ड) राज्य का एक अंग या उपनिवेश बना रहा। १९४२ से १९४५ तक दूसरे महायुद्ध में जापानियों के अधिकार में रहा।

१७ अगस्त १९४५ को यहाँ गणतन्त्र राज्य स्थापित कर लिया गया परन्तु नीदरलैंड की सरकार से चार वर्ष युद्ध चलता रहा। अन्त में २७ दिसम्बर १९४९ को यह पूर्ण स्वतन्त्र हो गया।

लिपि : यहाँ की प्राचीन लिपि का जन्म ईसा की दूसरी शताब्दी में हिन्दुओं के द्वारा हुआ। इसका नाम 'कवि' लिपि था। इसका सबसे प्राचीन अभिलेख मध्य जावा केदू प्रांत के चंगल नगर से प्राप्त हुआ है जिसमें ७३२ ई० का वर्ष दिया गया है। इस लिपि में संस्कृत शब्दों का प्रयोग अधिक था। सम्भवतः महाकाव्यों के कारण इसका नाम 'कवि' पड़ गया।

इसी से दूसरी लिपि का, जो यहाँ लगभग ३० वर्ष पहले तक प्रयोग होती रही, उद्भव हुआ जिसको आधुनिक लिपि कह सकते हैं परन्तु अब यहाँ रोमन अक्षरों का प्रयोग होता है।

यह दोनों लिपियां 'फ० सं० – २८२ व २८३' पर दी गई हैं।

दूसरी लिपि का एक वाक्य का प्रतिदर्श "यह जावा की व्याकरण है" 'फ० सं० – २७४' पर दिया गया है।

सुमात्रा

इतिहास : इसका प्राचीन नाम अदलस था। पेडांग के प्राचीन शिलालेखों से ज्ञात हुआ कि इसका नाम 'प्रथम जावा' था। मार्कोपोलो ने इसको जावा माइनर के नाम से सम्बोधित किया था।[1] इस द्वीप के विषय में योरोप निवासियों को एक इटली के यात्री लुदोविको दी वरथेमा (Ludovico di Varthema) के द्वारा

---

1. यहाँ श्री विजय का साम्राज्य लगभग दूसरी से पन्द्रहवीं शताब्दी तक रहा जो मुसलमानों के आगमन द्वारा समाप्त हो गया।

कवि लिपि की वर्णमाला

अ	इ	उ	क	ख	ग	घ	ङ
च	छ	ज	झ	ञ	ट	ठ	ड
ढ ड एक है	ण	त	थ	द	ध	न	प
फ	ब	भ	म	य	र	ल	व
इस लिपि	में	श	ष	स	ह	३६	वर्ण हैं

फलक संख्या – २८२

जावा की दूसरी लिपि

अ	इ	उ	ए	ओ
क	ग	ङ	च	ज
ञ	ट	ड	त	द
न	प	ब	म	य
र	ल	व	स	ह

फलक संख्या – २८३

बटक लिपि

अ	इ	उ	ए	ओ
क	ग	ङ	च	ज
ञ	त	द	न	प
ब	म	य	र	ल
इस लिपि में	व	स	ह	२३ वर्ण हैं

फलक संख्या – २८४

रेदज़ांग एवं लेम्पोंग लिपियां

ध्वनि	रेदज़ांग	लेम्पोंग	ध्वनि	रेदज़ांग	लेम्पोंग
अ			प		
क			ब		
ग			म		
ङ			य		
च			र		
ज			ल		
ञ			व		
त			स		
द			ह		
न				१६ वर्ण हैं	१६ वर्ण हैं

फलक संख्या – २८५

बुगिनी-मकासार लिपि

अ	क	ग	ङ	च
ज	ञ	त	द	न
प	ब	म	य	र
ल	व	स	ह	इस में १९ वर्ण हैं

फलक संख्या – २८६

१५०५ में ज्ञात हुआ जिसने इसका नाम सुमात्रा रखा। १५०९ में पुर्तगालियों ने एक कोठी निर्माण करवायी परन्तु उसी शताब्दी के अन्त में डच्छ द्वारा निष्कासित कर दिये गये। तीन शताब्दियों तक डच्छ अपनी श्रेष्ठता स्थापित करने के लिए लड़ते रहे परन्तु आचिन (अजतेह Ajteh) पर अधिकार न कर सके।

१६०२ में अंग्रेज आचिन आये और उनके नेता सर जॉन लैन्कास्टर (Sir John Lancaster) का भव्य स्वागत किया गया। १६६४ में इन्द्रपुर पर तथा १६६६ में पेडांग पर डच्छ ने अपना अधिकार जमा लिया। ब्रिटिश ने बेंकुलेन पर १६८५ में अधिकार जमा लिया। डच्छ और ब्रिटिश में निरन्तर झगड़े होते रहे और अपनी श्रेष्ठता जमाते रहे। कुछ दिनों पश्चात् दोनों देशों में सन्धि हो गई। ब्रिटिश ने सुमात्रा की भूमि छोड़ दी और मलेक्का को डच्छ ने छोड़ दिया। इस प्रकार लूट के माल के विभाजन की तरह दूसरे देशों की भूमि विभाजित हो जाती थी।

लेखन कला : यहाँ तीन प्रकार की लिपियाँ प्रचलित थीं। दक्षिण पूर्व सुमात्रा में दो – एक रेदजांग तथा दूसरी लम्पोंग-लिपियाँ थीं तथा मध्य सुमात्रा में बटक लिपि का प्रयोग किया जाता था। बटक सुमात्रा के मूल निवासी थे। बाद में इन्होंने ईसाई धर्म अपना लिया। इन्हीं के नाम पर लिपिका नाम पड़ा। यह तीनों लिपियाँ 'फ० सं० २८४, २८५' पर क्रमानुसार दी गई हैं।

सिलेबीस

इतिहास : इसका स्थानीय नाम सुलावेसी था। इस द्वीप में छः विभिन्न जातियाँ निवास करती थीं जिनके नाम थे तोआला, तोराजा, बुगीनेसी, मकासार, मिन्हायसी और गोरन्तलीस।

१५१२ में पुर्तगालियों ने इसको ढूंढ निकाला। मकासार जाति का सुल्तान, जो दक्षिण सिलेबीस में गोवा राज्य का शासक था, पुर्तगालियों तथा अंग्रेजों से प्रसन्न था। इससे डच्छ क्रोधित हुए और सुल्तान को सतरहवीं श० में (पुर्तगालियों की सहायता मिलने पर भी) परास्त कर दिया और १६६७ में गोवा राज्य को समाप्त करके १९११ में डच्छ के उपनिवेशों में सम्मिलित कर लिया गया। अब यहाँ के निवासी मुसलमान हैं और यह हिन्देशिया का एक प्रांत बन गया।

लेखन कला : यहाँ की लिपि का नाम बुगिनी मकासार है। इसका विकास, एच० कर्न (H. Kern-१८८२) के अनुसार, जावा द्वीप की कवि लिपि से हुआ जो 'फ० सं० २८६' पर दी गई हैं।

पठनीय सामग्री

Boudet, P. and Bourgeois, R. : Bibiliographic de l' Indo – Chine Franeaise (1933).

Bowring, Sir John : The Kingdom and People of Siam – 2 Vols. (1857.)

Bradley, C. B. : The Proximate Source of the Siamese Alphabet (Journal of Siam Society – 1913).

Chhabra, B. C. : Expansion of Indo – Aryan Culture During Pallava Rule As Evidenced by Inscriptions (Journal of the Rule Asiatic Society, Bengal – 1935).

Christia, j, L. Modern Burma (1942).
Coedes, G. : Inscriptions du cambodge (1937).
Crosby, J. : Siam (1945).
Diringer, David : The Alphabet – A Key to the History of Mankind.
Duroiselle, Ch. : Mon Inscriptions (Epigraphica Birmanica 3. Vols – 1928).
Faulmann : Das Buch der Schrift (1880).
Forbes, W. C. : The Phillipine Islands (1929).
Frankfurter, O. : Elements of Siamese Grammar (1900).
Gardner, F. : Phillipine Indic Studies (1943).
Grierson, G. A. : Linguistic Survey of India – Vol. II (1904).
Harvey, G. E. : History of Burma upto 1824 (1925).
Humphrey, H. N. : Origin and Progress of the Art of Writing.
Laubach, F. C. : The People of the Phillipines (1925).
Lendoyro, C. : Tagalog Language (1909).
Leob, E. M. : Sumatra – Its History and People (1935).
Marsden, W. : History of Sumatra (1911).
Martin, W. J. : Origin of Writing.
Mc Farland, G. B. : Thai – English Dictionary (1941).
Nyein, Tun : Inscriptions Pagan, Pinya and Ava. (1899)
Raffles, Sir S. : History of Java (1930).
Sahni, Swarn, : Book of Nations.
Strange, E. F. : Alphabets (1928).
Thompson, V. L. : Thailand – The New Siam (1941).
Tin, Pe Maung and Luce, J. : Inscriptions of Burma (1939).
Wallace, A. R. : The Malay Archipelago (1890).
William, A. M. : A History of Writing (1924)

□ □ □

अध्याय : ६

अफ्रीका महाद्वीप के देशों की लेखन कला का इतिहास

मिस्र

इतिहास

मिस्र का प्राचीन इतिहास जानने के लिए तीन साधन उपलब्ध हुए हैं। पहले साधन में स्मारक चिह्न (Monuments), मन्दिर, समाधियाँ जिनमें विशाल पिरेमिड भी सम्मिलित हैं तथा संस्मरणात्मक अभिलेख प्राप्त हुए। दूसरे साधन में उत्खनित पुरातात्त्विक सामग्री जो पुरातत्त्ववेत्ताओं के प्रयत्नों द्वारा प्राप्त हुई है। तीसरे साधन में प्राचीन इतिहासकारों के विवरण मिले। उन तीन इतिहासकारों के नाम उल्लेखनीय हैं, जो निम्नलिखित हैं :—

१. हेरोडोटस (Herodotus), जिसका जन्म हेलीकारनेसस नगर (एशिया माइनर के पश्चिमी किनारे पर स्थित था) में हुआ था, ४५० ई० पू० में मिस्र आया था। उसने विचरण करके मिस्र का वर्णन लिखा है।

२. डायडोरस सोकुलस (Diodorus Soculus) जिसने मिस्र का वर्णन किया है।

३. मनेथो (Manetho) की वंशावली, जिसमें उसने मिस्र के शासकों को ३१ वंशों में विभाजित किया है। मनेथो की वंश परम्परा को आज सभी प्राचीन इतिहासकारों ने मान्यता प्रदान की है तथा मिस्र के इतिहास में सदैव उसीको आधार मानकर वृत्तांत लिपिबद्ध किये गये। ई० पू० की तीसरी शताब्दी में मनेथो मिस्र धर्म का एक पुजारी था और उसने, टॉलेमी द्वितीय फ़िलेडीफ़स (Ptolemy II Philadephus), जो २८३ से २४६ ई० पू० तक मिस्र का शासक था, की आज्ञानुसार ग्रीक भाषा में मिस्र का इतिहास लिखा।

ई० पू० की लगभग नवीं सहस्राब्दी में जब कि नील नदी के किनारों पर कीचड़ व दलदल रहा करती थी, पश्चिमी एशिया तथा अफ्रीका के निवासी इसके दोनों किनारों पर आकर बसने लगे। वह लोग किस जाति से सम्बन्धित थे तथा उनके रहन – सहन के क्या ढंग थे, निश्चय रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। अफ्रीका तथा पश्चिमी एशिया के रक्त मिलन से मिस्र देश की एक नई जाति का जन्म हुआ। शनैः शनैः यह लोग उन्नति की ओर अग्रसर होने लगे। खेती तथा व्यापार करने लगे। छोटे छोटे नगरों का जन्म होने लगा जो नगर राज्यों में परिवर्तित होने लगे। इस ७५० मील लम्बे देश को यातायात के साधनों की अनुपस्थिति में एक सूत्र में बाँधना असंभव था। इस कारण उत्तरी मिस्र के निवासियों ने अपना राजनैतिक केन्द्र बेहृदेत (Behdet), आधुनिक दमनहुर (Damanhur) को बनाया तथा दक्षिणी मिस्र निवासियों ने अपना मुख्य नगर आधुनिक लुक्सर (Luxor) के समीप नगादा (Nagada) को बनाया। इन दो राज्यों को एक उत्तरी मिस्र के शासक ने ई० पू० ४१४० में एक सूत्र में बाँधने का प्रयत्न किया परन्तु कुछ दिनों पश्चात् यह देश फिर विभाजित हो गया।

इस बार उत्तरी मिस्र की राजधानी बूटो (Buto), नील नदी के डेल्टा में स्थापित हुई तथा पे (Pe) में राजमहल का निर्माण हुआ। दक्षिणी मिस्र की राजधानी नेखेब (Nekheb) आधुनिक एल काब (El Kab) में स्थापित हुई तथा नील के पश्चिमी किनारे पर नेखेन (Nekhen) में राजमहल का निर्माण हुआ। उत्तरी भाग के शासक लाल मुकुट धारण करते थे तथा उनका राज – चिह्न 'मधुमक्खी' था और दक्षिणी शासक श्वेत मुकुट धारण करते थे तथा उनका राज – चिह्न 'लिली पौधे की शाख' था।

प्रथम वंश (३११० से २८८४ ई० पू० तक) : मनेथो के अनुसार दोनों राज्यों का एकीकरण करने वाला मेने (Mene), मेनेज़ (Menes) या नारमर (Narmer) था। इसके तीन नाम थे। यह एक शक्तिशाली छोटा राजा था और दक्षिणी मिस्र में नील के पश्चिमी किनारे पर स्थित अबाइडोस (Abydos) के निकट थीबिज़ नगर का निवासी था। मेने प्रथम वंश का संस्थापक था। ३११०[1] ई० पू० में यह प्रथम वंश का प्रथम शासक बना। इसने दोनों राज्यों के एकीकरण के साथ साथ एक समन्वयात्मक 'श्वेत भवन' (White House) निर्माण करवाया जिसके चारों ओर एक नगर बस गया। मिस्री भाषा में इस नगर का नाम मेन – नेफ़र था जो बाद में ग्रीक भाषा में मेम्फ़िस के नाम से प्रसिद्ध हुआ। यही नगर दोनों राज्यों की राजधानी बनी। श्वेत भवन के दो फाटक बनाये गये जो दो राज्यों के एकीकरण के प्रतीक थे। मेने ने दोनों मुकुटों को एक बनाकर धारण किया और दोनों राजचिह्नों को भी मिलाकर प्रयोग किया। इस वंश में आठ शासक हुए। अन्तिक शासक का नाम 'केबेह' (Kebeh) अथवा 'का' (Ka) था।

द्वितीय वंश (२८८३ से २६६५ ई० पू० तक) : इस वंश का संस्थापक नेटरबाउ (Neter bau) था जिसने २८८३ से २८११ ई० पू० तक शासन किया। इस वंश में १० शासक हुए। इस वंश का अन्तिम शासक नेबका (Nebka) था जिसने २६८३ से २६६५ ई० पू० तक राज्य किया।

तृतीय वंश (२६६४ से २६१५ ई० पू० तक) : इस वंश के शासन काल से 'प्राचीन राज्य' माना जाता है। इस वंश का संस्थापक ज़ोसेर (Zoser अथवा Djoser) था, जिसने २६६४ से २६४६ ई० पू० तक राज्य किया। इसका प्रधानमन्त्री एक महान् वास्तुशिल्पी था। इसीकी सम्मति से ज़ोसेर ने सक्कारा (Sakkara) में एक सीढ़ीदार पिरेमिड[2] (Terraced Pyramid) बनवाया जिसकी ऊँचाई २०० फुट

---

1. प्रथम वंश के स्थापन काल में विद्वान् एकमत नहीं हैं। अनेक मत हैं :—

३११० — रुडोल्फ़ एन्थोस (Rudolf Anthes) का जो पेनसेल्विनयन विश्वविद्यालय में प्राच्य – मिस्र – शास्त्र का प्राध्यापक था। (अमेरिकाना विश्वकोष से लिया है)।

३१८८ — यह काल ग्लेनविल्ले ने अपनी पुस्तक (Legacy of Egypt) में दिया है।

३००० — यह काल कार्ल रिचर्ड लेप्सियस द्वारा निर्धारित किया गया है।

३४०० — कुछ विद्वानों ने माना है तथा २८५० ई० पू० कुछ अन्य ने।

इसके अतिरिक्त शासकों के नामों के वर्णविन्यास में भी स्वरवर्गों की अनुपस्थिति के कारण बहुत अन्तर आया ग्रीक निवासियों ने आकर मिस्र के नगर व शासकों के नामों में और अन्तर उत्पन्न कर दिया। उदाहरणार्थ :—

मिस्री भाषा — ख़ूफ़ू या कूफ़ू, ओनू, पर रेमेसीस, मेनकौरे आदि।
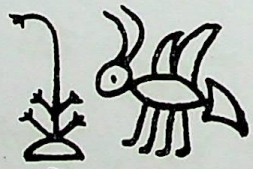
ग्रीक भाषा — क्योप्स, हेलियोपोलिस, टैनिस, माइसेरीनस आदि।

2. पिरेमिड बनने से पूर्व मिस्र के छोटे बड़े राज्यों के शासक अपने मक़बरे बनवाते थे जो मस्तबा (Mastaba) के नाम से प्रसिद्ध थे। जब राजा अधिक सम्पन्न तथा शक्तिशाली हो गये तो यह मक़बरे भी भव्य होने लगे। धार्मिक विश्वास के अनुसार मरणोपरान्त भी मनुष्य एक दूसरे प्रकार के जीवन में रहता है इसी कारण उसके दैनिक जीवन की सारी आवश्यक वस्तुओं तथा सोना-चाँदी के भूषणों आदि के साथ दफ़न किया करते थे। यह ऊपर से नोकदार ढलवाँ होकर चारों ओर चार त्रिकोण बनाकर भूमि पर लगकर बहुत चौड़ा हो जाता था।

मिस्र

भूमध्यसागर
सिकन्द्रिया
रोसेटा
बूटो
साइस
काहिरा
मेफ़िस
अरवेतातेन
थीबीज़
एलीफ़ेन्टाइन
अस्वन
फ़िलाई
अबुसिम्बल
लाल सागर
नू बि या
मिरोइ
नपाता
नीली नील
महाप्रपात
अवारिस - टैनिस
बुबास्तिस
दमनहुर
नौक्रेटिस
गीज़ा
हेलियो पोलिस
सक्कारा
काहिरा
मेन्फ़िस
दाशुर
सि ना इ
लिश्त
म्योरिस झील
मेइदुम
हवारा
इलाहुन
हिरेक्लियोपोलिस
अखेतातेन
हरमोपोलिस
असीयुत
थीनिस
अबाइडोस
मदीनत अबू
थीबीज़
नगादा
कर्नाक
लुक्सर
नेखेब
नेखेन
------ उत्तर दक्षिण विभाजन
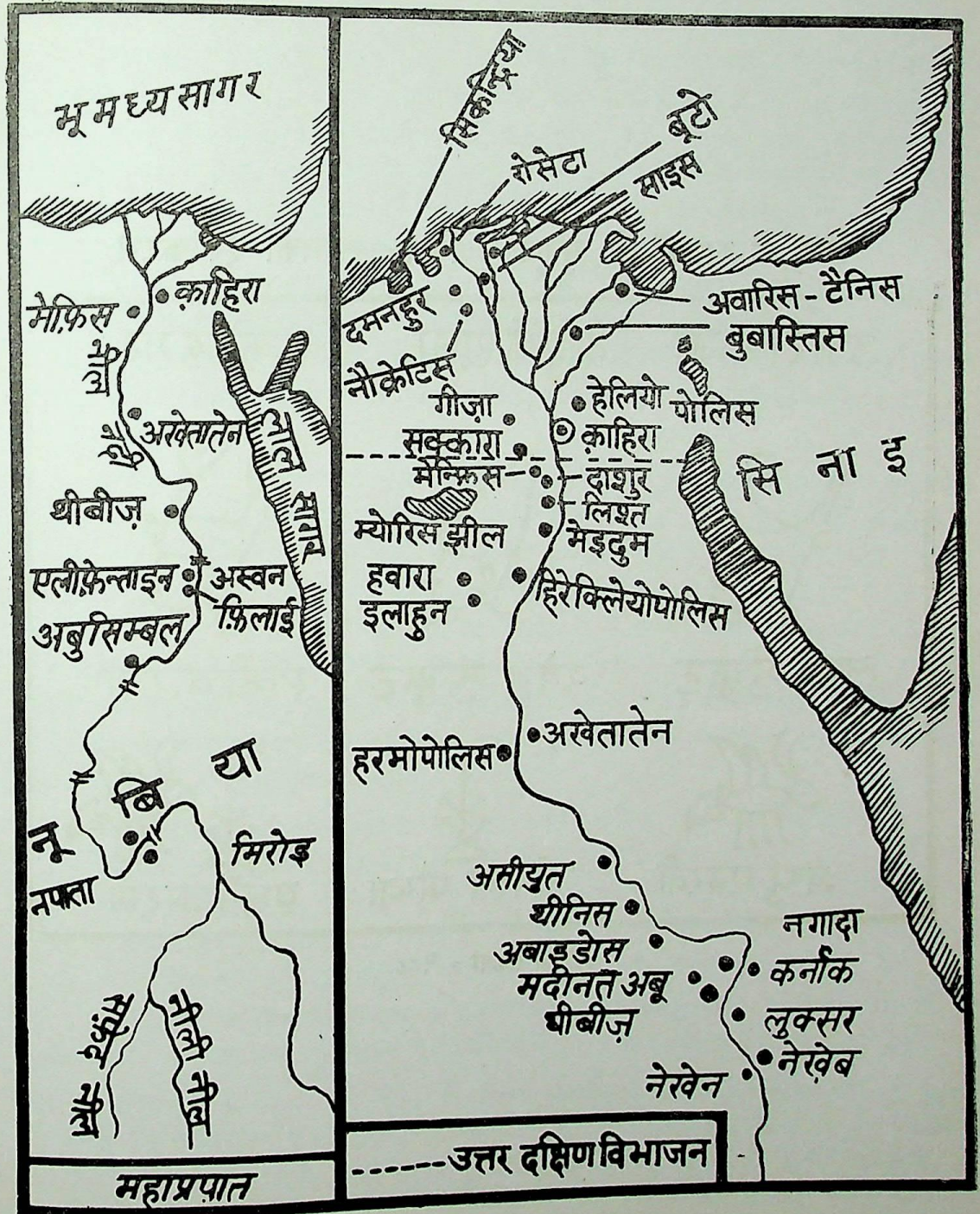
मिस्र के राज्यों के मुकुट व चिन्ह—उनका एकीकरण

फलक संख्या – २८८

थी। यह मिस्र के इतिहास में सर्वप्रथम एक महान् निर्माण – कार्य था। इसी युग से मिस्र के निवासियों में एक राष्ट्रीय धारणा जागृत होने लगी। इस वंश में चार शासक हुए। इस वंश के अन्तिम शासक हूनी (Huny ने २६३८ से २६१५ ई० पू० तक शासन किया।

चतुर्थ वंश (२६१४ से २५०२ ई० पू० तक) : हूनी का जामाता स्नेफ़ू (Snefru) इस वंश का संस्थापक था जिसने २५९१ ई० पू० तक राज्य किया। इसने दो पिरेमिड बनवाये। एक दाशुर के निकट तथा एक मेइडुम (Meidum) में। इसका उत्तराधिकारी ख़ूफ़ू (Khufu) था। इसने अपने शासनकाल (२५९० – २५६८ ई० पू० तक) में एक विशालतम पिरेमिड गीज़ा में निर्माण करवाया। यह ४८१ फ़ुट ऊँचा तथा तलों पर ७५५ फ़ुट चौड़ा था। इसने ३१ एकड़ भूमि घेर रखी थी। इसमें २० लाख चौकोर पत्थर लगाये गये थे। प्रत्येक पत्थर का वज़न लगभग ढाई टन (१०० मन) होता था। इन पत्थरों को इस सुन्दरता से जोड़ा गया है कि कहीं कहीं पर तो जोड़ भी नहीं दिखायी देता है।[1] इस वंश का शासनयुग 'पिरेमिड युग' के नाम से सम्बोधित किया जाता है। इस ख़ूफ़ू का उत्तराधिकारी ख़ेफ़्रे (Khefre) था जिसने एक सबसे छोटा पिरेमिड तथा एक विशाल स्फिंक्स (Sphinx) बनवाया। स्फिंक्स एक विशाल बैठा शेर था पर उसका मुँह मनुष्य का था। इसका अन्तिम शासक शेपसेस काफ़ (Shepses Kaf) था। इस वंश में कुल ८ शासक हुए।

पाँचवाँ वंश (२५०१ से २३४२ ई० पू० तक) : इस वंश का संस्थापक सूर्य देवता रा (Ra) या रे (Re) के मन्दिर का, जो हेलियोपोलिस (Heliopolis) में स्थित था, मुख्य पुरोहित था। इसका नाम युसेरकाफ़ (Userkaf) था। हेलियोपोलिस को मिस्री भाषा में ओनू (Onu) कहते थे। युसेरकाफ़ ने २५०१ से २४९१ ई० पू० तक राज्य किया। इस शासक ने तथा इसके पुत्र सहुरे (Sahure) ने मिस्र की नौ सेना में वृद्धि की। मिस्र की जनता पर करों का बहुत बोझ पड़ने लगा। इस वंश में कुल ९ शासक हुए। अन्तिम शासक का नाम युनिस (Unis) था जिसने २३७१ से २३४२ तक राज्य किया। इस वंश के शासन काल में पुरोहितों, सामंतों तथा सेनापतियों की महत्त्वाकांक्षायें बढ़ने लगीं और केन्द्रीय शासक की शक्तियाँ शनैः शनैः कम होने लगीं। इस वंश का तीसरा शासक 'रा' (सूर्यदेवता) का पुत्र माना गया। दो छोड़कर ७ शासकों ने पिरेमिड की बजाय 'रा' के मन्दिर बनवाये।

छठवा वंश (२३४१ से २१८१ ई० पू० तक) : इस वश के शासक निम्नलिखित थे :—

१. **तेती प्रथम** (Teti I) संस्थापक – २३४१ से २३२८ तक।
२. **पेपी प्रथम** (Pepi I) – २३२७ से २२७८ तक।
३. **मेरेन्रे प्रथम** (Merenre I) – २२७८ से २२७३ तक।
४. **पेपी द्वितीय नेफ़ेरकारे** (Pepi II Neferkare) – २२७२ से २१८२ तक।

इस शासक ने मिस्र के इतिहास में (सम्भवतः विश्व के इतिहास में) सबसे अधिक वर्षों तक अर्थात् ९० वर्ष तक राज्य किया। (कुछ विद्वान् ९४ वर्ष मानते हैं)। यह बाल्यकाल में ही सिंहासनारूढ़ हुआ।

---

1. यह पिरेमिड संसार के सात चमत्कारों में से एक है। कितना आश्चर्य लगता है कि इतने भारी पत्थरों को ५०० फुट ऊँचे उठाकर किस प्रकार जमाया होगा जब कि उठाने के लिए वर्तमान – युग के साधन – क्रेन या ट्राली – नहीं थे। फिर यह पत्थर सैकड़ों मील की दूरी से लाये जाते थे। वर्तमान – युग के वैज्ञानिकों ने अनुमान लगाया है कि यह पत्थर गोल लकड़ियों पर सरकाये जाते होंगे। लाखों मजदूर काम करते थे। मिस्र के निवासी दास नहीं थे इस कारण युद्ध से बन्दी या कारागार से कैदी इस मजदूरी को किया करते थे।

५. मेरेन्रे द्वितीय (Merenre II) २१८२ से २१८१ तक।

यह इस वंश का अन्तिम शासक था जिसने केवल एक वर्ष ही राज्य किया।

सातवाँ वंश (२१८० से २१७५ ई० पू० तक) : इस वंश के शासकों ने किसी प्रकार का कोई ऐसा स्मारक निर्माण नहीं करवाया अथवा कोई अभिलेख उत्कीर्ण नहीं करवाया जो उनके शासन काल को या उनके नामों को प्रमाणित करता। इस वश के शासनकाल में केन्द्रीय शासन का अन्त दृष्टिगोचर होने लगा। इसी कारण यह भी ज्ञात नहीं कि कितने शासक हुए।

आठवाँ वंश (२१७४ से २१५५ ई० पू० तक) : इस वंश में आठ शासक हुए जो नाममात्र के शासक थे। इस वंश के पश्चात् ही मिस्र छोटे छोटे राज्यों में विभाजित हो गया और केन्द्र शिथिल हो गया।

नवाँ वंश (२१५४ से २१०० ई० पू० तक) : इस वंश के संस्थापक के विषय में कुछ ज्ञात नहीं। इसकी राजधानी हिरेविलयोपोलिस (Herecleopolis) थी। इस वंश में १३ शासक हुए जो सत्ताहीन थे।

दसवाँ वंश (२१०० से २०५२ ई० पू० तक) : इस वंश का संस्थापक खेत्ती द्वितीय (Khetty II) था।

इसके पश्चात् चार अन्य शासकों ने नाममात्र के लिए शासन किया। उत्तर में गृह – युद्ध आरम्भ हो गया तथा अराजकता फैलने लगी। हिरेविलयोपोलिस की राजधानी नष्ट भ्रष्ट हो गयी।

ग्यारहवाँ वंश (२१३४ से १९९२ ई० पू० तक मध्य राज्य) : इधर दक्षिण में सेहरतवी इन्तेफ़ प्रथम (Sehertawi Intef I) ने, जो हिरेक्लियोपोलिस के अन्तर्गत एक नोमार्क (नोम = प्रांत; नोमार्क = प्रांत – पति) था स्वतन्त्र हो गया और २१३४ में इस वंश की स्थापना की और पूरे दक्षिणी मिस्र का शासक बन बैठा तथा थीबीज़ (Thebes) को अपनी राजधानी बनाया। इन्तेफ़ ने २१३२ तक ही शासन किया। तदनन्तर इस वंश में तीन अन्य शासक हुए जिन्होंने २०६२ ई० पू० तक राज्य किया। पाँचवें शासक मेन्तुहोतेप प्रथम (Mentuhotep I) ने २०६२ से २०६१ तक शासन किया। मेन्तुहोतेप द्वितीय ने गृहयुद्ध का अन्त करके मिस्र का फिर एकीकरण किया। इसने २०११ ई० पू० तक राज्य किया। उसके पुत्र मेन्तुहोतेप तृतीय ने २०१० से १९९९ तक शासन किया। तदुपरांत मेन्तुहोतेप चतुर्थ व पंचम ने १९९२ तक राज्य किया जो उल्लेखनीय नहीं है।

बारहवाँ वंश (१९९१ से १७८६ ई० पू० तक) : इस वंश का संस्थापक मेन्तुहोतेप पंचम का प्रधानमन्त्री था। इसका नाम अमेनेमहत प्रथम (Amenemhat I) था। इस वंश के निम्नलिखित शासकों ने राज्य किया :—

१.	**अमेनेमहत प्रथम**	—	१९९१ से १९६२ ई० पू० तक।
२.	**सेसात्रीज़ प्रथम** (Sesostris I)[1]	—	१९६१ से १८२८ तक।
३.	**अमेनेमहत द्वितीय**	—	१९२८ से १९९५ तक।
४.	**सेसात्रीज़ द्वितीय**	—	१८९४ से १८७९ तक।
५.	**सेसात्रीज़ तृतीय**	—	१८७८ से १८४३ तक।
६.	**अमेनेमहत तृतीय**	—	१८४२ से १७९७ तक।
७.	**अमेनेमहत चतुर्थ**	—	१७९६ से १७९० तक।
८.	**सेबेकनेफ़्रूरे** (Sebeknefiure)	—	१७८९ से १७८६ तक।

1. Sesostris is also mentioned as Senwosre by Jacoba in his bock – THE STORY OF EGYPT (1964) and Senusret as Well.

अमेनेमहत प्रथम ने एक नवीन राजधानी का निर्माण उत्तर में नील के पश्चिमी किनारे पर इथ Ith at Tawi) आधुनिक लिश्त में करवाया। १९६२ ई० पू० में राजमहल में ही इसका वध कर दिया गया।

सेसात्रीज़ प्रथम ने नूबिया (Nubia) की सोने की खानों को अपने अधीन कर लिया। सेसात्रीज़ द्वितीय ने अपना पिरेमिड इलाहून (Illahun) में बनवाया।

सेसात्रीज़ तृतीय ने मिस्र के ख़ज़ानों को सोने चाँदी से भर दिया। उसने नील को लाल सागर से एक नहर द्वारा मिलाया जिससे दक्षिण एशिया से व्यापार में बहुत प्रगति हुई। इसने ३००० कमरों का विशाल भवन बनवाया।

उसके पुत्र अमेनेमहत तृतीय ने महान् निर्माण कार्य सम्पन्न किये। इसने म्योरिस झील के चारों ओर एक दीवाल खड़ी करवाई तथा एक नहर से उसको नील नदी से मिला दिया जिसके द्वारा २७००० एकड़ ज़मीन सींची जाने लगी। सिनाइ की ताँबे की खानों[1] से भी राज्य को अच्छा धन प्राप्त होता था।

अमेनेमहत की मृत्यु के पश्चात् फिर गृहयुद्ध आरम्भ होने लगा। सेबेकनेफ़्रे इस वंश की अन्तिम नाममात्र शासिका थी (इतिहासकारों में मतभेद है कि शासिका ने शासन किया भी या नहीं)। इसने दो पिरेमिड भी बनवाये, एक दाशुर में और दूसरा हवारा (Hawara) में। मिस्र फिर छोटे छोटे राज्यों में विभाजित होने लगा। केन्द्रीय शासन नाममात्र का रह गया। इस वंश ने २१५ वर्ष राज्य किया।

तेरहवाँ वंश (१७८५ से १६७७ ई० पू० तक) : इस वंश के शासकों के नाम ज्ञात नहीं। इन्होंने थीबीज़ को राजधानी बनाया। इनका राज्य दक्षिण में रहा। इनका शासन नाममात्र रहा। थीबीज़ इनकी राजधानी थी।

चौदहवाँ वंश (१७८५ से १६०३ ई० पू० तक) : इस वंश के शासकों ने अपनी राजधानी साइस (Sais) में बनाई। शासकों के नाम ज्ञात नहीं।

पन्द्रहवाँ वंश (१६७८ से १५७० ई० पू० तक) : इस वंश के संस्थापक हिक्सॉस (Hyksos) थे। हिक्सॉस को मिस्र की भाषा में हिकाउ खासुत (Hikau Khasut) अर्थात् 'विदेशी शासक' कहते थे। संस्थापक का नाम ज्ञात नहीं। दो अन्य शासक इसी जाति के हुए जिनके नाम ज्ञात नहीं। इन तीन शासकों ने १६७८ से १६४७ ई० पू० तक राज्य किया। मनेथो के कथनानुसार इन आक्रमणकारियों को कहीं भी लड़ना नहीं पड़ा। इन लोगों को 'गड़रियों का राजा' के नाम से भी इतिहासकारों ने सम्बोधित किया है। इन लोगों ने अपनी राजधानी अवारिस (Avaris) को बनाया।

इस वंश का चौथा राजा खियान (Khian) था जिसने १६४७ से १६०७ ई० पू० तक राज्य किया। पाँचवें शासक ने, जिसका नाम ज्ञात नहीं १६०७ से १६०३ ई० पू० तक राज्य किया। इस वंश का छठा तथा अन्तिम शासक औसेरें अपोपी (Ausere Apopi) था जिसने १६०३ से १५७० ई० पू० तक राज्य किया।

सोलहवाँ वंश (१६७७ से १६४७ ई० पू० तक) : इस वंश में नाममात्र के लिए अनेक शासक हुए जिनके नाम ज्ञात नहीं। इनकी राजधानी भी थीबीज़ थी।

सत्रहवाँ वंश (१६४६ से १५७० ई० पू० तक) : इस वंश का संस्थापक सेनेख़ेन्त्रे (Senekhentre)

1. इन खानों में कनआन के निवासी काम करते थे जिन्होंने मिस्र की चित्र लिपि के चिह्नों को हिब्रू नामों से सम्बोधित किया।

था । इसके पुत्र सेकेन्सुरे (Sekensure) ने हिक्सॉस के राज्य पर आक्रमण किया परन्तु परास्त हुआ। तत्पश्चात् इसके पुत्र कामोस (Kamos) ने हिक्सॉस के जनरल तेती से हर्मोपोलिस के उत्तर में स्थित नेफ़ेरूसी (Neferusi) में युद्ध किया और हिक्सॉस परास्त हो गये। इसी समय से हिक्सॉस की शक्ति का अन्त होने लगा।

हिक्सॉस के शासन काल में, जो लगभग सौ वर्ष रहा, मिस्र निवासियों ने रथों को बनाना सीखा तथा घोड़ों का पालन – पोषण सीखा। यह कार्य मिस्र के लिए अनोखा था क्योंकि इसके पूर्व मिस्र में रथ तथा घोड़े नहीं थे। उनके राज्य से एक प्रकार की जागृति उत्पन्न हुई। हिक्सॉस ही अपने साथ मिस्र में घोड़े लाये थे क्योंकि यह लोग पर्वत निवासी थे।

अठारहवाँ वंश (१५७० से १३०४ ई० पू० तक) : इस वंश में निम्नलिखित चौदह शासक हुए :—

१.	एहमोस (Ahmose)	—	१५७० से १५४५ तक।
२.	अमेनहोतेप प्रथम (Amenhotep I)	—	१५४५ से १५२५ तक।
३.	टुटमोस प्रथम (Thutmose I)	—	१५२५ से १५०८ तक।
४.	टुटमोस द्वितीय	—	१५०८ से १४९० तक।
५.	हतशेपसुत (Hatshepsut)	—	१४८४ से १४६९ तक।
६.	टुटमोस तृतीय	—	१४९० से १४३६ तक।
७.	अमेनहोतेप द्वितीय	—	१४३६ से १४११ तक।
८.	टुटमोस चतुर्थ	—	१४११ से १३९७ तक।
९.	अमेनहोतेप तृतीय	—	१३९७ से १३७० तक।
१०.	अमेनहोतेप चतुर्थ	—	१३७० से १३५५ तक।
११.	सेमेनखरे (Semenkhare)	—	१३५५ से १३५२ तक।
१२.	टुट-अंख-आमेन (Tutankhamen)	—	१३५२ से १३४३ तक।
१३.	अयी (Ay)	—	१३४३ से १३३९ तक।
१४.	होरेमहेब (Horemhab)	—	१३३९ से १३०४ तक।

इस वंश का संस्थापक अहमोस था। यह कामोस का पुत्र था। इस शासक ने मिस्र को फिर एक सूत्र में बाँध दिया। इसने हिक्सॉस की राजधानी अवारिस को तीन वर्ष तक घेरे रखा। तदनन्तर उसको नष्ट – भ्रष्ट कर दिया। लगभग दो लाख चालीस हजार हिक्सॉस मिस्र छोड़कर चले गये। अहमोस ने एक सैनिक – राज्य स्थापित किया। दो सेनायें, उनके दो जनरल तथा दो प्रधानमन्त्री – उत्तर व दक्षिण के लिए पृथक् पृथक् नियुक्त किये। इसने छोटे छोटे राज्यों को समाप्त कर उनकी भूमि को राजकीय खाते में लिखवा दिया। छोटे छोटे राजाओं को अपने अधीन कर उनको भिन्न भिन्न विभागों का अध्यक्ष नियुक्त कर दिया। इसी वंश के शासन काल से शासकों का नाम फ़राओ[1] (Pharaoh) पड़ने लगा। इसके शासन से मिस्र का

1. फ़राओ, पर – ओ (per – o) या पर – आ (Per – aa) के शब्द से बाइबिल में फ़राओ (Pharaoh) लिखा जाने लगा। मिस्र की भाषा में पर – ओ के अर्थ हैं 'विशालघर' (Great House) अर्थात् विशालघर का निवासी। प्रत्येक फ़राओ किसी न किसी मुख्य देवता का पुत्र माना जाता था। उत्तर में सूर्य देवता को 'रा' कहते थे और दक्षिण में 'अमोन'। जब दोनों राज्यों का एकीकरण हुआ तो देवताओं का भी एकीकरण हो गया और सूर्यदेवता 'अमोन रा' के नाम से पूजा जाने लगा।

साम्राज्य स्थापित हो गया। उत्तर में सीरिया तक तथा दक्षिण में नूबिया तक अहमोस का राज्य रहा। इसकी महारानी का नाम अहमीज़ नेफरतारी (Ahmes Nefertari) था। मिस्र के इतिहास में यह पहली महारानी थी जो राजकाज में अहमोस का हाथ बँटाती थी और अहमोस की अनुपस्थिति में पूर्णतया राज्य करती थी। उसने एक पुत्र को जन्म दिया जो अमेनहोतेप के नाम से प्रसिद्ध हुआ। अहमोस ने लगभग २५ वर्ष तक राज्य किया।

इसके मरणोपरांत अमेनहोतेप प्रथम सिंहासनारूढ़ हुआ। इसने २० वर्ष राज्य किया। इसके कोई पुत्र न था। फ़राओ की एक मुख्य पत्नी तथा अनेक उप पत्नियाँ होती थीं। मुख्य पत्नी अहोतेप द्वारा एक पुत्री राजकुमारी अहमोस उत्पन्न हुई तथा उप पत्नी से टुटमोस जिसको टुटमोसिस (Tutmosis) अथवा टुटमिस (Tutmis) भी लिखते हैं – उत्पन्न हुआ। टुटमोस का विवाह सौतेली बहन अहमोस से हो जाने पर उसे राजवंश में सम्मिलित कर लिया गया।

टुटमोस अमेनहोतेप के मरणोपरांत फ़राओ बना और टुटमोस प्रथम के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उसने कारकेमिश तक अपने राज्य का विस्तार किया और अधीन राजाओं से कर भी वसूल किया। इसके भी कोई पुत्र न था परन्तु एक पुत्री हतशेपसुत थी जो पुत्र के समान रहती थी। इसके भी एक उप पत्नी से पुत्र था जिसका नाम टुटमोस द्वितीय था। हतशेपसुत का विवाह टुटमोस द्वितीय से कर दिया गया। इनके दो पुत्रियाँ हुईं परन्तु उप पत्नी से एक पुत्र हुआ। टुटमोस द्वितीय की मृत्यु के पश्चात् टुटमोस तृतीय शिशु था। शिशु राजसिंहासनारूढ़ तो हुआ परन्तु राजकाज हतशेपसुत ही देखा करती थी। इसने १५ वर्ष शासन किया। उसने अनेक भवन तथा मन्दिरों का निर्माण करवाया और अपना नाम अमर करने के लिए प्रत्येक भवन पर अपना नाम उत्कीर्ण करवाया। हतशेपसुत की मृत्यु के पश्चात् टुटमोस तृतीय शासक बना। वह अपनी सौतेली माँ से घृणा करता था इस कारण उसने हतशेपसुत का नाम प्रत्येक भवन से साफ करवा दिया। सारा मिस्र छेनी व हथौड़े की ध्वनि से गूँज उठा। इस प्रकार उसका नाम मिस्र के इतिहास से मिटाने की चेष्टा की गयी।

टुटमोस तृतीय को इतिहासकारों ने 'मिस्र के नेपोलियन' की उपाधि दी है। इसने पश्चिमी एशिया पर कई आक्रमण किये। इसके आक्रमण में २५००० सैनिक थे। इसने पराजित देशों की जनता के साथ मानवता का व्यवहार किया। पराजित राजाओं के पुत्रों को अपने देश में लाकर उनको अपने अधीन राज्य करने की प्रणाली से अवगत कराया। वह अपने साथ बहुत सा सोना, चाँदी, बैल व घोड़े लाया। सहस्त्रों लोगों को बन्दी बनाकर लाया। लौटने पर इसका भव्य स्वागत किया गया। मिस्र के कोषागार धन से भर गये। इसने फ़िनीशिया पर अपनी नौसेना द्वारा आक्रमण किया। नगर राज्यों को परास्त कर फिर धन एकत्रित किया। उसका मृतक शरीर क़ाहिरा (Cairo) के संग्रहालय में सुरक्षित है। इसने ५४ वर्ष राज्य किया।

इसके पुत्र अमेनहोतेप द्वितीय ने भी कई आक्रमण करके मिस्र की समृद्धि बढ़ायी। अनेक आन्दोलन-कर्ताओं को मौत के घाट उतारा। इसने २५ वर्ष राज्य किया।

अमेनहोतेप का पुत्र टुटमोस चतुर्थ फ़राओ हुआ। उसने मितन्नी राज्य की राजकुमारी से विवाह किया और केवल चौदह वर्ष राज्य किया। इसके मरणोपरांत इसका पुत्र अमेनहोतेप तृतीय शासक बना। इसने लगभग २७ वर्ष राज्य किया। इसीके शासन काल में विदेशों से अच्छे सम्बन्ध रहे। अनेक राजदूतों का आना जाना होता रहता था। मिस्र का यह सुनहरा युग था। लोग समृद्धशाली हो रहे थे। हर ओर

शान्ति थी। व्यापारियों के काफ़िले बिना किसी भय के इधर उधर आ जाकर व्यापार किया करते थे। मन्दिरों और भवनों के निर्माण हो रहे थे। पदाधिकारी ईमानदारी से कार्य कर रहे थे। इसी काल को अमरना (Amarna Age) काल भी कहा गया है क्योंकि इसी आधुनिक उपनगर तेल – एल – अमरना (Tell – El – Amarna) में कीलाक्षरों की पाटियाँ उत्खनन द्वारा प्राप्त हुईं। पश्चिम एशिया के देश अपने पत्रों को कागज़ पर नहीं चाक मिट्टी (Clay) की पाटियों पर उत्कीर्ण करवाते थे जब कि मिस्र में कागज़ का प्रयोग होता था। इस शासक के अन्तिम काल में पतन के बादल दृष्टिगोचर होने लगे। मिस्र के उपनिवेशों पर हित्तियों के आक्रमण होने लगे और जब वहाँ के शासकों (मिस्र के अधीन) ने सहायता की याचना की तो मिस्र शान्त रहा।

अमेनहोतेप तृतीय के स्वर्गवास होने पर अमेनहोतेप चतुर्थ सिंहासनारूढ़ हुआ। इसने १५ वर्ष राज्य किया। यह बड़ा विचारक तथा क्रान्तिकारी था। यही संसार का सर्वप्रथम शासक एकेश्वरवादी[1] था। इसने अन्य देवताओं की पूजा को बन्द करा दिया। इसने हेलियोपोलिस के मन्दिर के 'रा' (सूर्य देवता) के पुजारी तथा थीबीज़ के मन्दिरों के 'अमोन' के पुजारियों को निकालकर मन्दिर बन्द करा दिये। इसने एक ईश्वर निर्धारित किया जिसका नाम 'अतेन' रखा। वह अतेन भगवान् की व्याख्या इस प्रकार करता था "वह सूर्य के प्रकाश की भाँति एक प्रकाश है और उसकी किरणें भगवान् के हाथ हैं जो सारे संसार में प्रति प्राणी पर कृपा रखते हैं।" उसने अपना नाम अमेनहोतेप (अमेन[2] = करुणा का सागर) से अखेनातेन अर्थात् अखेन + अतेन ('अतेन' भगवान् को प्रसन्न करनेवाला) रख लिया और अपने इस नये नाम के भगवान् का एक विशाल मन्दिर करनाक (Karnak) व लुक्सर (Luxor) के मध्य बनवाया। साथ ही साथ अपने लिए एक विशाल भवन व उसके तीन ओर एक राजधानी का निर्माण करवाया। इसका नाम अखेत अतेन अर्थात् 'अतेन की क्षितिज' रखा। यह राजधानी मध्य मिस्र में नील के पूर्वी किनारे पर थीबीज़ से ३०० मील उत्तर में स्थित थी। इसीका आधुनिक नाम तेल – एल – अमरना पड़ा जहाँ से लगभग ३०० पत्र चाक मिट्टी की पाटियों पर अंकित प्राप्त हुए। जिस प्रकार हतशेपसुत ने अन्य शासकों के नाम मिटवा कर अपना नाम उत्कीर्ण करवाया, टुटमोस तृतीय ने हतशेपसुत का नाम मिटवाकर अपना नाम अंकित करवाया उसी प्रकार अखेनातेन ने मन्दिरों व भवनों से अन्य देवताओं के नामों को मिटवाना आरम्भ कर दिया। एक बार फिर सारा मिस्र छेनी व हथौड़े की ध्वनियों से गूंज उठा। पुजारियों को पदच्युत कर दिया गया और वह स्वयं 'अतेन' का मुख्य पुजारी बना।

इस युग में उसके इस कृत्य को महान् कहा जा सकता है परन्तु ऐसे युग में, जब सारा मिस्र देश बहुदेववादी था, इस कार्य को सराहा नहीं जा सकता था। उसका यह कृत्य बड़ी घृणा की दृष्टि से देखा जाने लगा। लोग भय के कारण दिखाने के लिए एकेश्वरवादी बने परन्तु मन से बहुदेववादी रहे। अपने देवताओं की छिप छिपकर पूजा करते रहे। निष्कासित पुजारी वर्ग अपने अनुयायियों को भड़काते रहे। इसने कोई युद्ध नहीं किया। वह धर्म परिवर्तन में रत रहा। साम्राज्य का अन्त होने लगा। पराजित नरेश स्वतन्त्र होने लगे।

---

1. इसके पूर्व भी एक उर नगर (मेसोपोटामिया) का निवासी इब्राहीम (Abraham) एकेश्वरवादी हुआ था और उसको अपना घर व देश त्याग देना पड़ा। परन्तु वह शासक नहीं था।
2. सम्भवतः 'अमेन' से 'आमेन' 'आमीन' बन गया।

अखेनातेन को कोई पुत्र न था। उन्हें दो पुत्रियाँ थीं। एक का नाम मेरी अतेन था। अखेनातेन ने अपनी इसी पुत्री का विवाह एक समृद्धशाली व्यक्ति सेमेनख़रे से कर दिया और अपना सह – शासक बना कर उत्तराधिकारी नियुक्त कर दिया। अखेनातेन के स्वर्गवास होने पर सेमेनख़रे शासक बना जो केवल तीन वर्ष शासन करने के पश्चात् मृत्यु का ग्रास हो गया।

इसके मरणोपरांत अखेनातेन का दूसरा जामाता टुट – अंखातेन सिंहासनारूढ़ हुआ। कुछ दिनों तक इसने नयी राधधानी अखेतातेन से राज्य किया परन्तु बाद में इसने राजधानी छोड़ दी और पहले की राजधानी थीबीज़ से शासन आरम्भ कर दिया। शनैः शनैः अखेनातेन का एकेश्वरवाद समाप्त हो गया। प्राचीन मन्दिरों में फिर बहु देवताओं की पूजा आरम्भ हो गयी। टुट – अंखातेन ने अपना नाम परिवर्तित करके टुट अंखामुन कर लिया। सारे प्राचीन मन्दिरों से अतेन का नाम मिटाया जाने लगा। अखेनातेन की नई राजधानी अखेतातेन वीरान हो गई। अमुन देवता तथा 'रा' देवता की पूजा फिर से होने लगी।

टुट – अंखामेन ने ९ वर्ष राज्य किया। यह अपने काल का कोई प्रसिद्ध फ़ेराओ नहीं था परन्तु इस युग में इसने प्रसिद्धि प्राप्त की क्योंकि इसकी क़ब्र किसी लुटेरे के हाथ नहीं लगी। इसके मकबरे का पता २६ नवम्बर १९२२ में हावर्ड कार्टर[1] (Howard Carter) को लगा। इसके मकबरे के उत्खनन से लगभग साठ सहस्र वस्तुएँ प्राप्त हुईं जो आज भी क़ाहिरा के संग्रहालय में सुरक्षित हैं।

टुट की मृत्यु के पश्चात् अयी, जो एक पुजारी तथा टुट का परामर्शदाता था, फ़ेराओ बनाया गया जिसने केवल चार वर्ष शासन किया तत्पश्चात् होरेमहेब, जो अखेनातेन के शासनकाल में मुख्य – सैनिक – अधिकारी था शासक बना। इसने अखेनातेन की बनवाई हुई अनेक 'अतेन' की मूर्तियों को नष्ट करवाया तथा थीबीज़ में 'अतेन' का मन्दिर तुड़वाया और 'अतेन' व अखेनातेन के नाम को नष्ट करने का कार्य पूरा कर दिया। होरेमहेब एक अच्छा शासक सिद्ध हुआ। इसने घूसखोरी को नष्ट करने के लिए बड़े कड़े कानून बनाये। अधिक कर वसूल करने वालों की नाक काटने की आज्ञा जारी की और न्यायाधीशों का वेतन बढ़ाया ताकि घूस न लें।

उन्नीसवाँ वंश (१३०४ से ११८१ ई० पू० तक) : इस वंश में सात निम्नलिखित शासक हुए :—

१.	**रेमेसीज़ प्रथम** (Ramesses or Rameses I)	—	१३०४ से १३०३ तक
२.	**सेती प्रथम** (Seti I)	—	१३०३ से १२९० तक
३.	**रेमेसीज़ द्वितीय**	—	१२९० से १२२३ तक
४.	**मेरेनटा** (Merenptah)	—	१२२३ से १२११ तक
५.	**अमेवेसीज़** (Amenesses)	—	१२११ से १२०६ तक
६.	(नाम ज्ञात नहीं)	—	१२०६ से ११९४ तक
७.	**रेमेसीज़ सीटा** (Rameses Siptah)	—	११९४ से ११८१ तक

इस वंश का संस्थापक हिक्सॉस की राजधानी अवारिस का एक प्रसिद्ध सैनिक था जिसने हिक्सॉस को निकालने में अहमोस की बड़ी सहायता की थी। इसका नाम रेमेसीज़ प्रथम था। होरेमहेब के स्वर्गवास होने पर यह फ़ेराओ बनाया गया। इसने अपना सह – शासक अपने पुत्र सेती को बनाया। इसने केवल एक

1. कार्टर एक पुरातत्व वेत्ता था जो उत्खनन कार्य में वर्षों से संलग्न था। एक सम्पन्न व्यक्ति लार्ड कर्नावन (Lord Cornavon), जो इंगलैण्ड का निवासी था, इसको आर्थिक सहायता देता रहता था।

वर्ष शासन किया और परलोक सिधार गया। तदनन्तर सेती प्रथम सिंहासन पर बैठा। इसने पश्चिम एशिया पर आक्रमण करने की योजना बनाई। सड़कों को फिर से ठीक कराया गया, कूओं को खुदवाया गया तथा सेना के जाने के रास्तों पर छोटे-छोटे किलों को ठीक कराया गया। तदनन्तर इसने सेना को आगे बढ़ाया। इसकी विजय हुई और बहुत-सा धन लेकर लौटा। इसने नील नदी को लाल सागर से मिलाने वाली नहर को फिर ठीक करवाया। इस कार्य को एशियाई युद्ध – बन्दियों ने पूरा किया। सेती ने १३ वर्ष राज्य किया।

सेती के पश्चात् इसका पुत्र रेमेसीज़ द्वितीय फ़ेराओ बना। इसने १२८८ ई० पू० में पैलेस्टाइन पर आक्रमण किया। रेमेसीज़ ने हिताइत नरेश खत्तुसिली (हत्तुसिली), जो मुवात्तलीस का भ्राता था, से सन्धि कर ली क्योंकि इन दोनों शासकों को असीरिया की बढ़ती हुई शक्ति का भय था। इस सन्धि को स्थिर करने के लिए रेमेसीज ने खत्तुसिली की पुत्री से विवाह कर लिया। यह भवनों व मूर्तियों का महान् निर्माणकर्ता था। इसने नूबिया में (अबू सिम्बल – Abu Simbel, आधुनिक नाम है) चार विशाल मूर्तियाँ बनवाईं जिनकी ऊँचाई ६५ फुट थी। जब अरब वहाँ पहुँचे तो मूर्तियों की गर्दनों तक रेत व मिट्टी चढ़ चुकी थी जिसको महीनों में साफ किया गया।

सम्भवतः इसी काल में हज़रत मूसा (Moses) ने अपनी जाति हेब्रू को मिस्र से स्वतन्त्रता दिलवाई और वे लोग कनआन में जाकर बस गये तथा अपना राज्य स्थापित कर लिया।

रेमसीज़ की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र मेरेनटा शासक बना। इसने सीरिया व लेबेनान को फिर परास्त किया। इस युद्ध में योरोपीय देशों के निवासी भी सैनिक के रूप में उपस्थित थे। इधर लीबिया ने मिस्र पर आक्रमण कर दिया। मेरेनटा ने इसको समाप्त किया। इसमें लगभग ९००० आदमी मारे गये। इसने लगभग १२ वर्ष राज्य किया परन्तु इसके मरणोपरान्त अराजकता फैलने लगी। उधर अकाल पड़ा इधर छोटे छोटे शासकों ने अपने अपने इलाकों से केन्द्रीय शासन का अन्त कर दिया। प्रत्येक शक्तिशाली अपने पड़ोसी के रक्त का प्यासा होने लगे।

तदोपरान्त तीन फ़ेराओ शासक बने परन्तु नाममात्र को। आठवाँ तथा अन्तिम शासक रेमेसीज़ सीटा था। इन चारों फ़ेराओं ने केवल अपनी राजधानी में ही राज्य किया। सारे मिस्र में अराजकता फैली हुई थी।

बीसवाँ वंश (११८१ से १०७५ ई० पू० तक) : इस वंश में दस निम्नलिखित शासक हुए :—

१.	सेतनख़्त (Setnakht)	—	११८१ से ११७९ ई० पू० तक
२.	रेमेसीज़ तृतीय	—	११७९ से ११४७ ,, ,, तक
३.	,, चतुर्थ	—	११४७ से ११४१ ,, ,, तक
४.	,, पंचम	—	११४१ से ११३७ ,, ,, तक
५.	,, षष्ठम	—	११३७ से ११३२ ,, ,, तक
६.	,, सप्तम	—	११३२ से ११२५ ,, ,, तक
७.	,, अष्टम	—	११२५ से ११२४ ,, ,, तक
८.	,, नवम	—	११२४ से ११०५ ,, ,, तक
९.	,, दशम	—	११०५ से ११०२ ,, ,, तक
१०.	,, एकादश	—	११०२ से १०७५ ,, ,, तक

उन्नीसवाँ वंश समाप्त होते ही एक शक्तिशाली शासक ने राज्य की बागडोर सँभाली और बीसवें वंश का संस्थापक हुआ। इसके पुत्र रेमेसेज़ तृतीय ने अराजकता का अन्त कर दिया। इसने एक विशाल तथा सुन्दर मन्दिर का मदीनत – अबू में निर्माण करवाया। रेमेसीज़ चतुर्थ ने लगभग २९ गज़ लम्बे पत्रा पर अपने पिता के कृत्यों को लिखवाया। इसके अन्तिम शासक के काल में डाकू और लुटेरे शासकों के प्राचीन मकबरों को नष्ट करके गड़े हुए धन को लूटना आरम्भ कर दिये।

इक्कीसवाँ वंश (१०७५ से ९४० ई० पू० तक) : इस वंश में पाँच शासक हुए और राज्य फिर दो भागों में विभाजित हो गया। थीबीज़ में तो मुख्य पुजारी हेरीहोर (Herihor) शासक हुआ और इक्कीसवें वंश की नींव डाली। इसने १०७५ से १०४४ ई० पू० तक शासन किया। तदनन्तर इसका पुत्र पियांखी (Piankhy) शासक बना और उसके पश्चात् उसका पुत्र पिनोजदेम (Pinojdem) शासक बना। उत्तर में रेमेसीज़ एकादश का प्रांतपति स्मेन्दीज़ (Smendes), जिसको मिस्री भाषा में नेसूबेनेबदेद (Nesubenebded) कहते हैं, टैनिस[1] की उपराजधानी से राजकीय कार्य किया करता था स्वतन्त्र हो गया और स्वयं फ़ेराओ बन गया। इसका पुत्र सुसेमीज़ (Pusemes) स्मेन्दीज़ का उत्तराधिकारी बना। थीबीज़ के शासक पिनोजदेम ने सुसेमीज़ की पुत्री से विवाह करके मिस्र का फिर एकीकरण कर दिया। इस प्रकार इस वंश में पाँच शासक हुए और अन्त में एक हो गये।

बाइसवाँ वंश (९४० से ७३० ई० पू० तक) : इस वंश में नौ शासक हुए। कई शासकों के नाम ज्ञात नहीं और न उनका शासन काल ज्ञात है। २१वें वंश के शासन काल में लीबिया (Libya) के निवासी उत्तरी भाग में बस गये। यह लोग अच्छे सैनिक थे इसी कारण डेल्टा के गढ़ों के कमाण्डर नियुक्त किये गये थे। इन्हीं में से एक कमाण्डर हिरेक्लियोपोलिस में आकर बस गया था। इसका पुत्र शिशांक (Sheshonk) या शिशाक (Shishak) बड़ा शक्तिशाली था। वह बुबास्तिस (Bubastis) या बास्त (Bast) के गढ़ का कमाण्डर था। अवसर को देख कर अपने को स्वतन्त्र घोषित करके डेल्टा का नरेश बन गया। अपने पुत्र ओस्कोर्न (Oskorn) को मुख्य पुजारी नियुक्त किया और बुबास्तिस को ही अपनी राजधानी बनाया। इस वंश का अन्तिम शासक शेशांक चतुर्थ था।

तेईसवाँ वंश (८१७ से ७३० ई० पू० तक) : इस वंश का संस्थापक पेदूपास्त (Pedupast) था जिसने थीबीज़ को परास्त कर इस वंश की नींव डाली। इस वंश में छः शासक हुए ओस्कोर्न चतुर्थ था। इस वंश के शासनकाल में एक और छोटा राज्य मेम्फ़िस से असीयुत (Assiut) तक स्थापित हो गया था।

चौबीसवाँ वंश (७३० से ७१५ ई० पू० तक) : इस वंश का संस्थापक तेफ़नख्त था। यह साइस (Sais) नगर का एक प्रभावशाली व्यक्ति था। जब गृहयुद्ध चल रहा था तब इसने शेशांक चतुर्थ (२२वें वंश का अन्तिम शासक) को परास्त कर सिंहासनारूढ़ हो गया और बाद में मेम्फ़िस व हिरेक्ल्योपोलिस को अपने अधीन कर उत्तरी मिस्र का शासक बन गया। परन्तु पच्चीसवें वंश के संस्थापक पियांखी ने इसको परास्त कर दिया और डेल्टा को अपने अधीन कर लिया। जब वह दक्षिण की ओर चला गया तो डेल्टा में फिर अराजकता फैलने लगी। इसी अवसर को तेफ़नख्त ने हाथ से न जाने दिया और वह फिर शासक बन गया। उसने उत्तरी मिस्र पर अपना अधिकार कर लिया। इसके मरणोपरान्त इसका पुत्र बोक्कहोरिस (Bocchoris) शासक बना। यही इस वंश का अन्तिम शासक था। इस वंश में केवल दो ही शासक हुए।

---

1. हिक्सॉस की नष्ट – भ्रष्ट राजधानी अवारिस के अवशेषों पर टैनिस (Tanis) का नगर सम्भवतः रेमेसेज़ द्वितीय ने बसाया था जो डेल्टा की उपराजधानी हो गया था।

पच्चीसवाँ वंश (७५१ से ६६३ ई० पू० तक) : इस वंश का संस्थापक एक नूबिया[1] निवासी प्रभावशाली व्यक्ति पियांखी था। यहाँ के नीग्रो निवासियों ने मिस्र का धर्म अपना लिया था। इसकी राजधानी नपाता (Napata) थी। इसी ने तेफ़नख्त की बढ़ती सेना को परास्त किया। पियांखी के उत्तराधिकारी ने बोक्कहोरिस को परास्त किया जो डेल्टा का शासक था। इसका नाम शबाका (Shabaka) था। इसी समय असीरिया के शासक सेनाख़रिब ने सीरिया पर आक्रमण कर दिया। मिस्र को उसके आक्रमण से बचाने के कारण शबाका ने असीरिया की सेना पर आक्रमण कर दिया परन्तु असीरिया की सेना में एक महामारी फैलने के कारण सेनाख़रिब को असीरिया वापस लौटना पड़ा।

शबाका की मृत्यु पर उसका पुत्र शबातका (Shabataka) शासक बना, तदनन्तर पियांखी का दूसरा पुत्र तहारका (Taharka) शासक बना। इसने टैनिस को अपनी राजधानी बनाया।

अबकी बार असीरिया के नरेश अशुरहेदन ने मिस्र के राज्य को, जो सदैव सीरिया का सहायक बना रहता था, पूर्णतया नष्ट करने की ठान ली और ६७१ ई० पू० में आक्रमण कर दिया। वह नगरों को परास्त करता हुआ मेम्फ़िस पहुँच गया। तहारका का कुटुम्ब बन्दी बना लिया गया परन्तु तहारका नूबिया की ओर भाग गया। सारे मिस्र ने अपनी पराजय मान ली। साइस व थीबीज़ के शासकों ने भी अधीनता स्वीकार कर ली।

अशुरहेदन की मृत्यु पर तहारका ने फिर मिस्र को जीत लिया परन्तु असीरिया के नये शासक अशुर–बनीपाल ने फिर आक्रमण कर दिया और तहारका को फिर दक्षिण की ओर भागना पड़ा। बक्कहोरिस के पुत्र नीको ने अशुरबनीपाल की बड़ी सहायता की जिससे प्रसन्न होकर उसने नीको (Necho) को बहुत से उपहार भेंट किये और उसको साइस का शासक बना दिया। अशुरबनीपाल ने थीबीज़ को ऐसा नष्ट किया कि वह अपनी प्राचीन ख्याति को फिर प्राप्त न कर सका। असीरिया ने फिर कभी मिस्र पर आक्रमण नहीं किया क्योंकि वह स्वयं बेबीलोनिया के शासक नेबूपलासर द्वारा नष्ट कर दिया गया।

इस वंश का अंतिम नरेश तानूतामोन (Tanutamone) था जिसने केवल एक वर्ष राज्य किया।

इस वंश के निम्नलिखित शासक थे :—

१.	पियांखी	—	७३० से ७१६ तक
२.	शबाका	—	७१६ से ७०१ तक
३.	शबातका	—	७०१ से ६८९ तक
४.	तहारका	—	६८९ से ६६३ तक
५.	तानूतामोन	—	६६३ से ६६२ तक

छब्बीसवाँ वंश (६६२ से ५२५ ई० पू० तक) : इस वंश के निम्नलिखित शासक थे :—

१.	नीको[2] या नेकाउ	—	६६२ से ६०९ तक
२.	सामतिक प्रथम (Psamtik)	—	६०९ से ५९४ तक
३.	सामतिक द्वितीय	—	५९४ से ५८८ तक
४.	एप्रीज़ (Apries)	—	५८८ से ५६८ तक
५.	अमासिस द्वितीय (Amasis II)	—	५६८ से ५२६ तक
६.	सामतिक तृतीय	—	५२६ से ५२५ तक

1. इसी नूबिया को आज इथीओपिया (Ethiopia) कहते हैं।
2. कुछ विद्वानों का मत है कि सामतिक प्रथम इस वंश का संस्थापक था।

इस वंश का संस्थापक नीको था। उसके मरणोपरांत उसके पुत्र सामतिक प्रथम ने सैनिकों को जमा किया और असीरिया के निवासी सैनिकों को मिस्र से बाहर निकाल दिया। इसी काल में ग्रीस के निवासी बड़ी संख्या में यहाँ आकर बसने लगे। उन्होंने अपना एक नगर भी स्थापित कर लिया जिसका नाम नौक्रेटिस (Naucratis) था। अब कला का तथा व्यापार का केन्द्र नील नदी से हटकर डेल्टा में आ गया था। यही केन्द्र अब मिस्र की सभ्यता का भी प्रतिनिधित्व करने लगा था। इसकी राजधानी साइस थी। अब यहाँ सुन्दर भवनों व मन्दिरों का भी निर्माण होने लगा था। सामतिक तृतीय के शासनकाल में पर्शिया की एक विशाल सेना ने, जिसका नेतृत्व कैम्बेसिज़ कर रहा था, ५२५ ई० पू० में आक्रमण कर दिया और सारे देश को अपने अधीन कर लिया।

सत्ताइसवाँ वंश : (५२५ से ४०४ ई० पू० तक)—इस वंश के शासक पर्शिया के शासक थे जो निम्नलिखित हैं :—

१.	**कम्बेसिज़**	—	५२५ से ५२२ ई० पू० तक
२.	**डैरियस प्रथम**	—	५२२ से ४८६ ,, ,, तक
३.	**ज़रक्सीज़ प्रथम**	—	४८६ से ४६५ ,, ;, तक
४.	**आर्तज़रक्सीज़ प्रथम**	—	४६५ से ४२४ ,, ,, तक
५.	**डैरियस द्वितीव**	—	४२४ से ४०४ ,, ,, तक

कैम्बेसिज़ और डैरियस प्रथम ने तो बड़ी उदारता से मिस्र पर शासन किया परन्तु अन्य पर्शिया के शासकों ने बड़े अत्याचारात्मक ढंग से राज्य किया। आन्दोलन व क्रान्तियाँ आरम्भ हो गयीं। इनमें ग्रीस निवासियों ने मिस्र वालों का साथ दिया क्योंकि वह तो पहले से ही पर्शिया से द्वेष रखते थे। एक नौसेना का वेड़ा भी मिस्र की सहायता के लिये पहुँच गया। जिसके कारण पर्शिया के शासकों का शासन ४०४ ई० पू० में समाप्त हो गया।

अट्ठाइसवाँ वंश (४०४ से ३९८ तक) : इस वंश का संस्थापक अमेनरतायस (Amenertais अथवा Amyrtaios) था तथा अंतिम शासक भी था। इस वंश का केवल यही शासक था। तदनन्तर जो शासक बने वह मिस्र के राजवंश के न थे।

उन्तीसवाँ वंश (३९८ से ३७८ ई० पू० तक) : इस वंश के निम्नलिखित शासक हुए :—

१.	**नेफरीतिस प्रथम** (Neferitis I)	—	३९८ से ३९३ तक
२.	**मौथिस – अखोरिस** (Mouthis – Akhoris)	—	३९३ से ३९१ तक
३.	**सामोथिस** (Psammouthis)	—	३९१ से ३९० तक
४.	**हकोरिस** (Hakoris)	—	३९० से ३७८ तक
५.	**नेफरीतिस द्वितीय**	—	३७८ से ३७८ तक

उपर्युक्त शासकों ने ग्रीस निवासियों की सहायता से नाममात्र शासन किया। अन्तिम शासक ने केवल तीन माह ही शासन किया।

तीसवाँ वंश (३७८ से ३४१ ई० पू० तक) : इस वंश के निम्नलिखित शासक हुए :—

१.	**नेक्तानेबो प्रथम** (Nectanebo)	—	३७८ से ३६० तक
२.	**तिपास** (Teos)	—	३६० से ३५९ तक
३.	**नेक्तानेबो द्वितीय**	—	३५९ से ३४१ तक

इस वंश में तिपास ने ही एशिया के कुछ भागों को अपने अधीन किया परन्तु तिपास के भ्राता ने उसके विरुद्ध एक षड्यन्त्र रचा जिसके कारण तिपास को भाग कर पर्शिया के शासक आर्तज़रक्सीज़ तृतीय की शरण में जाना पड़ा और सिंहासन पर उसका भ्राता नेक्तानेबो द्वितीय ने अधिकार कर लिया। यही शासक इस वंश का अन्तिम शासक था।

एकतीसवाँ वंश (३४१ से ३३२ ई० पू० तक) : इस वंश के शासक पर्शिया के भी निम्नलिखित शासक थे :—

१.	आर्तजरक्सीज़ तृतीय	—	३४१ से ३३८ तक
२.	आर्सीज़	—	३३८ से ३३६ तक
३.	डैरियस तृतीय	—	३३६ से ३२२ तक

आर्तज़रक्सीज़ के आक्रमण ने मिस्र की स्वतंत्रा का अंत कर दिया जो लगभग बीसवीं सदी में प्राप्त हुई।

३३२ में सिकन्दर ने पर्शिया को परास्त कर मिस्र में पदार्पण किया और ग्रीस लौटने की योजना लनाई। उसने अपने राज्य को अपने सैनिक अधिकारियों में विभाजित करके उनको प्रांतपति नियुक्त कर दिया परन्तु उसके मरणोपरांत वे स्वतंत्र शासक बन गये। मिस्र में इसको कोई युद्ध नहीं करना पड़ा। उसने सिकन्द्रिया (Alexandria) नगर का निर्माण करवाया। कहा जाता है कि उसको यहीं दफ़नाया गया परन्तु उसके मकबरे का पता नहीं लगा। मिस्र का उसने अपने एक जनरल टालेमी लैगास (Ptolemy Lagos) को प्रांतपति बना दिया।

ग्रीक वंश (३३२ से ३० ई० पूर्व तक) इस वंश के निम्नलिखित शासक हुए :—

१.	सिकन्दर तृतीय	—	३३२ से ३२३ तक
२.	अर्रहीडियस (Arrhidaeus)	—	३२३ से ३१६ तक
३.	सिकन्दर चतुर्थ	—	३१६ से ३०४ तक
४.	टॉलेमी लैगास	—	३०४ से २८३ तक
५.	,, द्वितीय फ़िलेडिलफ़स (Philadelphus)	—	२८३ से २४६ तक
६.	,, तृतीय योरीगेटिस प्रथम (Euergetes I)	—	२४६ से २२२ तक
७.	टॉलेमी चतुर्थ फ़िलोपेतर (Philopatar)	—	२२१ से २०५ तक
८.	,, पंचम एपीफेन्स (Epiphanas)	—	२०५ से १८० तक
९.	,, षष्टम फ़िलोमेतर (Philommetor)	—	१८० से १४५ तक
१०.	,, सप्तम यारोगेहिस द्वितीय	—	१४५ से ११६ तक
११.	,, अष्टम सोतर (Soter)	—	११६ से १०७ तक
१२.	,, नवम सिकन्दर प्रथम	—	१०७ से ८८ तक
१३.	,, दशम सोतर द्वितीय	—	८८ से ८० तक
१४.	,, एकादश सिकन्दर द्वितीय	—	८० से ५१ तक
१५.	,, द्वादश	इन तीनों ने	
६.	,, त्रयोदश	क्लियोपेत्रा[1] (Cleopeatsa)	—५१ से ३० ई० पू० तक
१७.	,, चतुर्दश	के साथ राज्य किया	

1. इसका उच्चारण 'क्लियोपेट्रा' तथा 'क्लयापेद्रा' भी हैं।

सिकन्दर की ३२३ ई० पू० में बेबीलोन में मृत्यु के पश्चात् उसके सेनापतियों में युद्ध आरम्भ हो गया। कुछ सैनिक अधिकारियों ने सिकन्दर के भ्राता आदि का वध कर दिया और टॉलेमी लैगास मिस्र का शासक बना। इसने मिस्र के देवताओं की पूजा की। मिस्र की संस्कृति को अपनाया। नये-नये नगरों का निर्माण किया। सिकन्द्रिया में एक विशाल पुस्तकालय तथा एक विशाल संग्रहालय स्थापित किया। टॉलेमी द्वितीय भी अपने पिता की भाँति विज्ञान तथा कला का संरक्षक था। उसने भी कोई युद्ध नहीं किया। उसने एक जलदीप (लाइट हाउस) का सिकन्द्रिया में निर्माण करवाया तथा लगभग बीस सहस्र पुस्तकें लिखवाईं।

टॉलेमी तृतीय पर्शिया पर आक्रमण करके बहुत सा धन लूट कर लाया। चतुर्थ बड़ा अत्याचारी था इसी कारण उसके मरणोपरांत जनता ने उसकी पत्नी तथा उसके अन्य साथियों का वध कर दिया परन्तु संरक्षकों ने उसके पुत्र को बचा लिया जो टॉलेमी पंचम बना। वह भी अपने पिता की तरह बड़ा भोगी था। इन दिनों रोम की शक्ति बढ़ती जा रही थी।

टॉलेमी एकादश की पुत्री का संरक्षक पाम्पेइ (Pompey) बना जो अपने भ्राता टॉलेमी द्वादश के साथ सह – शासक बनी परन्तु उनके सम्बन्ध अच्छे न थे। पाम्पेइ अपने विरोधी जूलियस सीज़र (Julius Caesar) के साथ युद्ध करने गया जब पाम्पेइ हार गया तो भाग कर अपने पालक – पुत्र टॉलेमी द्वादश से सहायता की याचना की परन्तु टॉलेमी ने उसका वध करवा दिया। सीज़र पाम्पेइ का पीछा करते करते मिस्र पहुंचा और वह क्ल्योपेत्रा से प्रेम करने लगा और उसको सहयोग भी दिया। टॉलेमी ने सीज़र पर आक्रमण कर दिया और परास्त होकर नदी में डूब गया। सीज़र ने क्ल्योपेत्रा के ११ वर्षीय छोटे भाई को टॉलेमी त्रयोदश के नाम से शासक बनाया जिसका क्ल्योपेत्रा ने अपने संकेत से वध करवा दिया। क्ल्योपेत्रा ने तब अपने पुत्र को, जो सीज़र द्वारा उत्पन्न हुआ था, टॉलेमी चतुर्दश के नाम से शासक बनाया।

४४ ई० पू० में ब्रूटस ने सीज़र का वध कर दिया जिसके कारण रोम में गृह – युद्ध आरम्भ हो गया। क्लयोपेत्रा ने ब्रूटस का पक्ष लिया परन्तु जब सीज़र के मित्र मार्क एन्टोनी (Mark Antony) द्वारा ब्रूटस की हार हुई तो एन्टोनी ने क्ल्योपेत्रा को बुलवाया, यह कारण पूछने कि उसने क्यों ब्रूटस का पक्ष लिया। क्ल्योपेत्रा अपनी भव्यता के साथ एक सुसज्जित नौका पर एन्टोनी से मिलने गयी जो उसकी सुन्दरता पर मोहित हो गया और उसी के साथ अपना जीवन भोग – विलास में बिताने के लिए मिस्र चला आया।

आक्टेवियस (Octavius) सीज़र का दत्तक पुत्र था। वह रोम में शक्तिशाली हो गया और ३२ ई० पू० में युद्ध के लिए तत्पर हो गया। इधर एन्टोनी ने भी एक नौसेना तैयार की और उसके साथ क्ल्योपेत्रा ने भी अपनी नौसेना को भी जोड़ दिया। युद्ध में एन्टोनी हार गया। इस कारण एन्टोनी और क्ल्योपेत्रा ने आत्महत्या कर ली।

तत्पश्चात् ३० ई० पू० से मिस्र रोम के साम्राज्य में मिला लिया गया जिसका सम्राट आक्टेवियस बना और अपना नाम सीज़र आगस्टस रख लिया।

मिस्र रोम के अन्तर्गत:[1] अब आगस्टस मिस्र को अपनी व्यक्तिगत भूसम्पदा मानने लगा। अब मिस्र में रोमनों को उच्च पदों पर नियुक्त किया जाने लगा। रोमन सम्राट के प्रतिनिधि के रूप में प्रशासक (Prefect) नियुक्त किये जाने लगे जो मिस्र के नरेश माने जाने लगे। उनकी तालिका निम्नलिखित है:—

१. **कार्नेलियस गैलस** (Cornelius Gallus) जिसने फ़िलाई को अपनी राजधानी बनाया।

1. यह पाठ लिया गया है : – 'Encyclopaedia Britannica, Vol. VIII P. – 63.

२. **गैलेरियस** (Gailerius), जिसने केवल छः माह शासन किया।

३. **गाइयस पत्रोनियस** (Gaius Petronius) जिसने नहरों को साफ़ करवाया तथा इथियोपिया के आक्रमणों को रोका।

४. **क्लाडियस** (Claudius) ने मिस्र के लिये भारत से मसालों का व्यापार आरम्भ कर दिया जिससे अरब देशों को बड़ी आर्थिक हानि उठानी पड़ी।

५. **अवीदियस कैसियस** (Avidius Cassius) ने सीरिया तथा मिस्र की सेना लेकर इथियोपिया पर आक्रमण कर दिया तथा रोम के विरुद्ध क्रान्ति करके स्वयं रोम – सम्राट बन गया। जब १७५ ई० में मार्कस औरेलियस (Marcus Aurelius) तत्कालीन रोमन सम्राट, जब मिस्र आया तो कैसियस का वध उसी के सहयोगियों द्वारा कर दिया गया।

६. **कैरेकला** (Caracalla) ने २०२ ई० में ईसाईयों पर बड़े अनर्थ किये। अनेक युद्ध करने योग्य नवयुवकों का वध करवा दिया।

७. **देकियस** (Decius) ने २५० में पुनः ईसाईयों को यन्त्रणायें देना आरम्भ कर दिया।

८. **एमीलियेनस** (Aemilianus) जिसने अपना नाम एलेक्जेन्डर रखकर एलेक्जेन्ड्रिया में अपने आपको रोमन सम्राट घोषित कर दिया। तत्कालीन रोमन सम्राट गैलियेनस (Gallienus) ने उसको परास्त कर दिया।

९. **औरेलियन** (Aurelian) ने २७३ में, पालमीरा की महारानी जेनोबिया (Zenobia) ने मिस्र को परास्त कर अपने अधिकार में कर लिया था, पुनः मिस्र को अपने अधिकार में कर लिया।

१०. **प्रोबस** (Probus) ने इथियोपिया की जन जातियों को जो सदैव मिस्र पर आक्रमण करती थी, दूर खदेड़ दिया। अब प्रशासक गवर्नर कहलाये जाने लगे।

अब मिस्र में आये दिन क्रान्तियाँ यहूदियों व ईसाईयों में मार – काट तथा रोमन व ईसाईयों में बैर, क्योंकि रोमन बहु – मूर्ति – पूजक थे तथा ईसाई एकेश्वरवादी, बढ़ने लगे। उधर दक्षिण की जन जातियों के आक्रमण पुनः आरम्भ हो गये। धर्म और राजनीति में कोई अन्तर न रहा। प्रतिदिन अराजकता बढ़ती गई तथा एक लम्बे काल तक गृह – युद्ध चलता रहा। जनता असुरक्षित हो गई। मिस्र रोमन राज्य का अंग न रहा। पर्शिया के सम्राट खुशरों ने ६१६ में मिस्र पर आक्रमण कर दिया और दस वर्ष राज्य किया। रोमन सम्राट हिरेक्ल्यस (Heraclius) ने पुनः मिस्र पर अधिकार कर लिया जो शनैः शनै संकुचित होकर केवल एलेकजेन्ड्रिया पर रह गया।

६३९ में खलीफ़ा उमर ने ४००० योद्धाओं के साथ मिस्र पर आक्रमण किया। ६ जून ६४० में पुनः खलीफा उमर ने १२,००० सैनिकों को भेजा जो हेल्योपोलिस पहुँच गये। युद्ध हुआ और ८ नवम्बर ६४१ को मिस्र परास्त हो गया। इस युद्ध में ईसाईयों (Copts) ने मुसलमानों को पर्याप्त सहयोग दिया परन्तु विजय के पश्चात् मुसलमानों ने ईसाईयों तथा रोमनों के साथ निष्ठुरता का व्यवहार किया।

६४२ में मक्का के ख़लीफ़ा ने अपना एक सूबेदार नियुक्त कर दिया। ६६१ से ७५० तक यह डैमसकस के उम्मियाँ के वंशज ख़लीफ़ा का एक प्रांत रहा तदनन्तर यह अब्बास के वंशज ख़लीफ़ाओं के, जो बग़दाद से शासन करते थे, अधीन हो गया। जब ख़लीफ़ा की सत्ता क्षीण होने लगी तो मिस्र प्रांत के तथा अन्य प्रांतों

के प्रान्तपति अपनी सत्ता बढ़ाने लगे। मिस्र के प्रान्तपति अहमद इब्न तुलुन ने एक शासक वंश की स्थापना की जिसने ८६८ से ९०५ ई० तक मिस्र में शासन किया। लगभग ३० वर्ष के पश्चात् एक तुर्क वंश की नींव पड़ी जिसने ९३५ से ९६९ तक मिस्र पर शासन किया।

इस वंश के पश्चात् ट्यूनीशिया के फ़ातिमी खलीफ़ाओं का शासन आरम्भ हुआ। यह खलीफ़ा शिया जाति से सम्बन्धित थे। इस वंश ने ९६९ से ११७१ ई० तक राज्य किया। इस वंश के शासकों ने मिस्र में बड़े बड़े काम किये। इसी वंश के एक सेनापति जव्हार ने ९६९ में क़ाहिरा तथा अल-हज़र मसजिद का निर्माण करवाया। इसका राज्य केवल ९७२ तक रहा। क़ाहिरा ही कायरो के नाम से आधुनिक मिस्र की राजधानी स्थापित हुई। एक अन्य शासक अल हकीम ने (९९६ से १०२१ तक), जो एक पागल शासक माना जाता है. गिरजाघर की एक पवित्र समाधि को १००९ में नष्ट – भ्रष्ट कर दिया जिसके कारण धार्मिक युद्ध[1] हुए।

इस वंश के पश्चात् सुन्नियों के वंशों ने (अयूबी तथा ममलूकी) १५१७ तक राज्य किया। अंतिम ममलूकी शासक सुल्तान तुमन बे एक तुर्की सुल्तान सलीम प्रथम द्वारा २२ जनवरी १५१७ ई० को क़ाहिरा के समीप परास्त किया गया। यह पराजय सुल्तान तुमन के एक सैनिक उच्च पदाधिकारी खैर बेग के कारण हुई क्योंकि वह तुर्की सेना से मिल गया।

अब मिस्र पर तुर्की प्रान्तपति शासन करने लगे जिनको 'पाशा' के शब्द से सम्बोधित किया जाता था। इन पाशाओं के शासनकाल में मिस्र अवनति की ओर अग्रसर होने लगा जो अवनति अठारहवीं श० में अराजकता में उसी प्रकार परिवर्तित हो गई जैसी छठे वंश के शासनकाल के पश्चात् हुई थी। विरुद्ध टोलियों के झगड़े सड़कों पर होते रहते थे। इस अराजकता का अन्त नेपोलियन ने अपने एक आक्रमण द्वारा कर दिया। इस आक्रमण ने योरोप निवासियों को मिस्र का एक व्यवस्थित तथा वैज्ञानिक ज्ञान प्रदान किया तथा मिस्र को योरोपीय शासन तथा सभ्यता का सर्वप्रथम अवसर प्रदान किया। १८०१ में अंग्रेजों के आक्रमण ने फ्रांस की सेना को परास्त किया तथा उनको मिस्र छोड़ना पड़ा।

१८०५ में अल्बेनिया का मेहमत अली (मोहम्मद अली) पाशा बना जिसने इस शासक वंश की स्थापना की और १८४८ तक शासन किया। १८१८ में इसने वहाबियों की एक क्रांति का दमन किया। नूबिया तथा सुडान के राजाओं को शान्त किया। १८३२ में उसके पुत्र इब्राहीम पाशा ने सीरिया को परास्त किया तथा १८४० तक उसको अधीन रखा परन्तु फ्रांस व ब्रिटेन की सेनाओं ने जो तुर्की के पक्ष में युद्ध कर रहीं थीं सीरिया को स्वतन्त्र करा लिया। अब मिस्र के पाशा वंशानुगत शासन करने लगे। १८८२ में ब्रिटेन ने सिकन्द्रिया पर बम फेंके और मिस्र को अपने अधीन कर लिया। ब्रिटेन ने स्वयं शासन नहीं किया परन्तु पाशा ही, जो अब खेदिव के नाम से ज्ञात होने लगे, उसके संरक्षण में आ गये। तदनन्तर १९२२ में फ़ुआद प्रथम मिस्र का स्वतन्त्र शासक हुआ। तत्पश्चात् उसका पुत्र फारुख़ प्रथम गद्दी पर विराजमान हुआ। द्वितीय महायुद्ध में मिस्र की सरकार ने जापान व जर्मनी के विरुद्ध युद्ध करने की घोषणा कर दी।

२६ जुलाई १९५२ को जनरल मोहम्मद नजीब के नेतृत्व में एक सैनिक क्रान्ति हुई और फारुख़ गद्दी व मिस्र छोड़कर भाग गया और अपने पुत्र, जो एक शिशु था, फ़ुआद द्वितीय को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त

---

1. Crusades.

कर गया। १८ जून १९५३ को मिस्र एक गणतन्त्र राज्य घोषित कर दिया गया। नजीब उसका प्रथम प्रधान मंत्री तथा राष्ट्रपति नियुक्त हुआ। १९५४ में जमल[1] अब्दुल नासिर ने सत्ता अपने हाथ में ले ली। १९७० में इसकी मृत्यु के पश्चात सादात राष्ट्रपति बने। इस्राइल से सन्धि करने के कारण उनका वध कर दिया गया।

कुछ शासकों व नगरों के नाम जिनको ग्रीक भाषा में परिवर्तित किया गया

शासकों के नाम

ग्रीक भाषा	मिस्री भाषा
१. मेनेज़ (Menes)	नारमर (Narmer)
२. केयोप्स (Cheops)	खूफ़ू (Khufu)
३. केफ़्रेन (Chephren)	खफ़्रे (Khafre)
४. पेपी प्रथम (Pepi I)	मेरीरे (Meryre)
५. पेपी द्वितीय (Pepi II)	नेफ़ेरकारे (Neferkare)
६. बोक्क होरिस (Boce horis)	बेकेन्रेनिफ़ (Bekenrenef)
७. नीको (Necho)	वाह इब रा (Wah – ib – ra)
८. सामतिक द्वितीय (Psamtik II)	नेफ़्रेत इब रा (Nefret – ib – ra)
९. एप्रीज़ (Apries)	हा इब रा (Haa – ib – ra)
१०. अमासिस (Amasis)	खेनुम इब रा (Khnum – ib – ra)
११. सामतिक तृतीय (Psamtik III)	अंख का इब रा (Ankh – ka – ib – ra)
१२ अखोरिस (Akhoris)	हेकर (Haker)
१३. नेक्तानेबो प्रथम (Nectanebo I)	नेख़्त नेबेफ़ (Nekht Nebef)
१४. नेक्तानेबो द्वितीय (Nectanebo II)	नेख़्त होर हेब (Nekht – hor – heb)

नगरों के नाम

ग्रीक भाषा	मिस्री भाषा
१. टैनिस (Tanis)	पर रेमेसीज़ (Per Ramses)
२. नौक्रेटिस (Naucratis)	पर मेरी (Per Meri)
३. बुबास्तिस (Bubastis)	बास्त (Bast)
४. हेल्योपोलिस (Heliopolis)	ओनु (Onu)
५. मेम्फ़िस (Memphis)	मेन नेफ़र (Men Nefer)
६. हेरेकानपोलिस (Hierokonpolis)	नेख़ेन (Nekhen)
७. एल काब (El Kab)	नेख़ेब (Nekheb)
८. लिश्त (Lisht)	इथ एत तवी (Ith – at – Tawi)
९. थीबीज़ (Thebes)	वेसी (Wesi)

1. जमल के अर्थ हैं 'ऊँट'। अब्दुल नासिर बहुत लम्बा होने के कारण ऊँट अब्दुल नासिर के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

कुछ अन्य शब्द

भारतीय भाषा	मिस्री भाषा
१. देखना	मा (आंख का चित्र)
२. रोना	रेम (रोने के लिए आंसू)
३. चलना	ई (दो पैरों का चित्र)
४. तीर	ज़िन
५. पेपर (पेपीरी)	प-पी-युर (coptic = पापीऊर)
६. हवाबील पक्षी और बड़ा	वर (पक्षी का चित्र)
७. गुबरीला	ख़ेपर
८. कान	मसदर या स्दम = सुनना
९. मुँह	हर (मुँह का चित्र)
१०. दिन	हर वू
११. पक्षी का पर	श्वेत
१२. टोकरी	नेबेत
१३. भगवान	नेब

मिस्र देश की लेखन कला

जिस प्रकार अन्य प्राचीन देशों में लेखन कला का जन्म चित्रों द्वारा हुआ उसी प्रकार मिस्र में भी दैनिक प्रयोग में आने वाली वस्तुओं के चित्रों द्वारा लेखन कला का जन्म हुआ। इसका आरम्भिक काल विद्वानों ने लगभग ३५०० ई० पू० माना है क्योंकि यह प्रमाणित हो चुका है कि मेने के शासनकाल में यहाँ चित्र – लिपि प्रचलित थी। ग्रीस निवासियों ने इसका नाम हेरोग्लिफ़िक्स (Hieroglyphics) अथवा हैरोग्लिफ़्स (Hieroglyphs) रखा जिसके अर्थ हैं 'उत्कीर्ण की हुई पवित्र लिपि' (Hieros = पवित्र; Glyphein = उत्कीर्ण करना)। इसका यह नाम इसलिये ही पड़ा क्योंकि यह मन्दिरों पर उत्कीर्ण की जाती थी। यूनानी भाषा में इसका नाम हैरोग्लिफ़िकन (Hieroglyphikon) था। इसका अन्तिम पाठ २४ अगस्त ३९४ ई० में लिखा गया तत्पश्चात् इसका ज्ञान लोप हो गया। लगभग १६०० वर्ष पश्चात् इस चित्र लिपि को जानने की उत्कण्ठा पुनः जागृत हुई और संसार के विद्वान् इसको पढ़ने का प्रयास करने लगे।

१४१९ में : सर्वप्रथम होरापोलो (Horapollo) की लिखी एक पुस्तक[1] बोन्देलमोन्ते (Boundelmonte) को ग्रीस के एक द्वीप अन्द्रोस में प्राप्त हुई जिसमें इस चित्र लिपि के विषय में विस्तार से लिखा गया था। इसको १४०५ में ऐलडस (Aldus) द्वारा प्रकाशित किया गया।

१४३५ में : सर्वप्रथम सीरियक (Cyriac)[2] मिस्र आया और उसने उसी पुस्तक (होरापोलो की) को अपने एक मित्र निकोलो निकोली (Niccolo Nicoli) को फ़्लोरेन्स में भेज दी।

1. Pope, M. : The Story of Decipherment (London – 1975), p. – 24.
2. Pope, M. : The Story of Decipherment (1975), p. – 11.

१५५६ में : सर्वप्रथम दो विद्वान मिस्र आये। एक जी० वी० पी० बोल्ज़नी (G. V. P. Bolzani), जिसने अपने पढ़ने के प्रयास के निष्कर्ष एक पुस्तक[1] में प्रकाशित किये जो बाद में असंगत, अशुद्ध तथा क्रमहीन सिद्ध हुए। दूसरा पीरियस वलेरियेनस (Pierius Valerianus), जिसने अपना शोध कार्य एक पुस्तक[2] में प्रकाशित किये।

१६३१ में : एन० कासीन (N. Caussin) आया उसने इस लिपि के कुछ चित्र लेकर एक पुस्तक[3] प्रकाशित की।

१६३६ में : एक जिसूट[4] (Jesuit) अथानासियस किर्चर[5] (Athanasius Kircher) ने, जो गणित का प्राध्यापक था, अपना कॉप्टिक (Coptic) लिपि पर शोध कार्य १६४३ में रोम में प्रकाशित कराया। यह प्रथम विद्वान् था जिसने कॉप्टिक की व्याख्या की। तदनन्तर उसने हेरोग्लिफ़्स को पढ़ने का प्रयास किया और तीन खण्डों में उनको १६५० में प्रकाशित किया। इस शोध कार्य के कारण वह मरणोपरांत (१६८० – मृत्यु) भी कई वर्षों तक एक महान् मिस्रवेत्ता माना जाता रहा क्योंकि उस समय उसके शोध कार्य[6] का कोई खण्डन करने वाला नहीं था परन्तु उन्नीसवीं श० में उसका यह शोध कार्य निरर्थक सिद्ध हुआ। किर्चर के इस कार्य का और कुछ लाभ तो न हुआ परन्तु उसके कार्य ने विद्वानों तथा वैज्ञानिकों के मन में उस ओर शोध कार्य करने की एक जागृति तथा उत्सुकता अवश्य उत्पन्न कर दी।

१७१५ में : चैम्बरलेन (Chamberlayne) ने एक पुस्तक[7] १५२ भाषाओं में प्रकाशित की जिसके द्वारा मिस्र की कॉप्टिक भाषा अनेक योरोपीय निवासियों को ज्ञात हो गई।

१७४० में : एक अंग्रेज पादरी विलियम वर्बर्टन (Willam Warburton, १६९८–१७७९) मिस्र आया और चित्र लिपि को देखकर कहा कि यह चित्र केवल संकेतात्मक चित्र नहीं हैं और न उत्कीर्ण – पाठ केवल धार्मिक हैं। यह तो पूर्ण लिपि है।

१७४२ : अब्बे बार्थेलेमो (Abbe Barthelemy) ने हेरोग्लिफ़्स लिपि के कुछ चिन्हों की ध्वनियों को पहचानने[8] का प्रयास किया।

---

1. Bolzani, G. V. P. : Hieroglyphica (1557)
2. Valerianus, P. : The Hieroglyphs (1556) – Printed in Basle.
3. Caussin, N. : de Symbolica Aegyptiorum Sapientia (The Symbolic Wisdom of Egypt – Cologne)
4. ईसाई धर्म की एक शाखा का नाम है जिसको इग्नेशस लोयला (Ignatius Loyala) ने १५३४ में आरम्भ किया था।
5. इस शब्द का यूनानी भाषा में अर्थ 'अमर' है।
6. Kircher, A. : Prodromus Coptus Sive Aegyptiacus (Introduction to Coptic or Egyptian), 1643.
   ,, ,, : Lingua Aegyptiaca Restituta (The Egyptian Language Restored) – 1650.
7. ,Lords Prayer in 152 language'.
8. Doblhofer, E. : Voices in stone (1961), p. – 44.

१७४५ में : मेरकटी (Mercati) ने भी मिस्र की इस गूढ़ चित्र लिपि पढ़ने के प्रयास किये जो निष्फल सिद्ध हुए।

अठारहवीं श० में : विद्वानों की एक होड़ सी लग गई और निम्नलिखित विद्वान् इस क्षेत्र में चित्र लिपि के गूढ़ाक्षरों के रहस्योद्घाटन के लिए सलग्न हो गये :—

पी० लुकास (P. Lucas), आर. पौकोकी (R. Pococke), सी० नीब्हुर (C. Niebuhr) यफ० यल० नॉर्डन (F. L. Norden), ए. जॉर्डन (A. Gordon), यन. फ्रेरेट (N. Freret), पी० ए० यल० डी ओरिग्नी (P. A. L. D' Origny), जे० डी० मार्शम (J. D. Marsham), सी० डी गेबेलिन (C. De Gebelin), जे० एच० शूमेकर (J. H. Sehumacher), जे० जी० कोच (J. G. Koch), टी० सी० टाइकसेन (T. C. Tychsen), पी० ई० जबलोन्सकी (P. E. Jablonski), जे० जे० बार्थेलेमी (J. J. Barthelemy), डी गुइग्नीस (De Guignes) तथा जी० ज़ोयगा (G. Zoega)। इन विद्वानों के प्रयास चित्रलिपि की समस्या को सुलझा न सके। उनके शोध विवादास्पद रहे। इतना अवश्य निष्कर्ष निकला कि इस लिपि में जो चित्र गोल घेरों (कार्टूश – Cartouches) के अन्दर उत्कीर्ण हैं वे फ़ेराओं या शासकों एवं शासिकाओं के नाम हैं।

(कार्टूश) एक रस्सी का गोला सा था जो उन शासकों का नाम घेरे हुए होती थी और उसमें एक ग्रन्थि सी लगाकर रस्सी को सीधा कर दिया जाता था। इससे यह सिद्ध किया गया कि रस्सी सूर्य देवता की गोलाई का प्रतीक थी तथा सूर्य, जो मिस्र देशवासियों का मुख्य देवता था और वहाँ का शासक उसका पुत्र माना जाता था, शासक को अपने घेरे में सुरक्षित रखा करता था। जब नाम कुछ बड़े होने लगे तो उस ग्रन्थि की गोलाई भी कुछ लम्बी होने लगी। 'फ० सं० – २८६' पर क्लयोपेत्रा का कार्टूश दिया गया है।

फलक संख्या – २८९

जुलाई १७९८ में जब नेपोलियन इंगलैण्ड पर आक्रमण न कर सका तो उसने इंगलैण्ड के पूर्वी उपनिवेशों पर अपना अधिकार जमाने का विचार किया और अपनी नौ सेना को लेकर मिस्र पहुंचा। उस समय ममलूक[1] मिस्र का, तुर्की की नाममात्र अधीनता में, शासक था। मिस्र बिलासी – जीवन का अभ्यस्त हो चुका था इस कारण उसने नेपोलियन के समक्ष तुरन्त समर्पण कर दिया। नेपोलियन की सेना में केवल सैनिक ही नहीं थे अपितु उच्च कोटि के विद्वान तथा वैज्ञानिक भी थे। उनकी सभायें होती थीं और उनमें नेपोलियन स्वयं एक सदस्य के रूप में भाग लिया करता था।

उसी सभा के एक सदस्य कैप्टन बोस्सार्ड (Captain M. Boussard) अथवा बोखार्ड (Bouchard) ने अपने निरीक्षण में नील नदी के रोसेटा (Rosetta) मुहाने से पाँच मील दूर जहाँ पर रशीद[2] नाम का
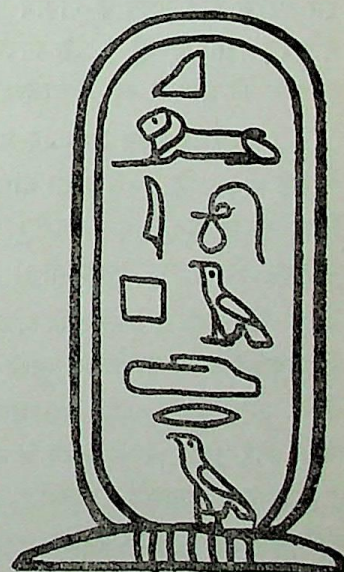
1. काकेशस पर्वत के निवासी दास।
2. बोस्सार्ड ने इसका नाम परिवर्तित करके फोर्ट सेंट जूलियन रख दिया।

एक गढ़ खण्डहर के रूप में स्थित था, उत्खनन कार्य[1] आरम्भ किया जिसके फलस्वरूप २ अगस्त १७९९ में एक काले पत्थर की शिला प्राप्त हुई। यह शिला ३ फुट ९ इंच लम्बी, २ फुट ४½ इंच चौड़ी तथा ११ इच मोटी थी। इस पर तीन प्रकार की लिपियाँ अंकित थीं। ऊपरी भाग में हेरोग्लिफ्स की १४ पंक्तियाँ सीधे से बाईं ओर उत्कीर्ण थीं। मध्य भाग में डिमॉटिक की ३२ पंक्तियाँ तथा निचले भाग में ग्रीक लिपि की ५४ पंक्तियाँ, जिसमें से २६ नष्ट हो चुकी थीं, अंकित थीं। ऊपर एवं नीचे के भाग तो कुछ अंशों में विकृत हो गये थे परन्तु मध्य का भाग पूर्णतया सुरक्षित था। तत्पश्चात् इस शिलालेख की प्रतिलिपियाँ बनवाई गयीं और उनको विद्वानों के पास शोध करने के लिए भेजा गया। नवम्बर १८०१ में नेलसन के नेतृत्व में ब्रिटेन का एक जहाज़ी बेड़ा सिकन्द्रिया पहुँच गया। कुछ नाममात्र का युद्ध हुआ। नेपोलियन अपनी पराजय को निश्चित समझ कर अपनी सेना को छोड़ कर थल के मार्ग से फ्रांस चला गया। इसकी सेना ने आत्म - समर्पण कर दिया। उपर्युक्त शिला खण्ड जो फ्रांस भेजा जा रहा था १८०२ में इंगलैण्ड पहुँच गया जो रोसेटा शिला खण्ड के नाम से प्रसिद्ध हुआ तथा ब्रिटिश संग्रहालय के आतिथ्य में सुरक्षित हो गया।

ग्रीक लिपि को पढ़ने पर ज्ञात हुआ कि २७ मार्च १९६ ई० पू० मिस्र के पुरोहितों की एक सभा जिसमें टॉलेमी पंचम को उसके सिंहासनारूढ़ होने पर सम्मानित किया गया था, मेम्फ़िस में हुई थीं जिसमें अन्य राजाज्ञाओं के साथ टॉलेमी पंचम एपीफ़ेन्स का यह भी अनुमोदन था कि घोषणा की प्रतिलिपियाँ मिस्र के सभी मन्दिरों में स्थापित कर दी जायें। उस काल की राजकीय भाषा ग्रीक थी इस कारण राजाज्ञा उसी में मुख्यतया अंकित की गई थी परन्तु उस समय व्यापारिक लिपि डिमाटिक तथा धार्मिक लिपि हैरोग्लिफ़्स थी, इस कारण ग्रीक लिपि के भावार्थ रूप में वह घोषणा इन दो लिपियों में भी अंकित की गई। पुरोहित मिस्र में सदैव सत्तावान् रहे हैं इस कारण सबसे ऊपर पुरोहितों की लिपि अंकित कराई गई थी। अब की बार इंगलैण्ड की ओर से उस शिलालेख की प्रतिलिपियाँ विद्वानों के पास पेरिस एवं अन्य स्थानों को भेजी गई।

रहस्योद्घाटन : १८०२ में सिल्वेस्त्रे दि सेसी (Sylvestre de Sacy) ने ग्रीक लिपि के पाठ की सहायता से कई नाम पढ़ने में सफलता प्राप्त की जिनमें टॉलेमी का नाम भी था। अब उसने हैरोग्लिफ़्स के कुछ चिह्न भी पहचान लिए थे परन्तु वह इसके अतिरिक्त आगे कोई प्रगति न कर सका और उसने वहीं अपने परिश्रम को विराम लगा दिया।

दि सेसी ने अपने सारे शोध का ब्योरा एक स्वीडन निवासी विद्वान् को सौंप दिया जो उस समय पेरिस में भाषाओं के ज्ञानार्जन में व्यस्त था। उस विद्वान का नाम जे, डी. ओकरब्लाड (J. D. Akerblad) था। उसने अपना शोध आरम्भ किया और उसने तुलनात्मक रूप से सर्वप्रथम डिमॉटिक को पढ़ने का प्रयास किया और कुछ नाम पहचानने में सफल हुआ। उसी पर उसने निष्कर्ष निकाला कि डिमॉटिक लिपि वर्णात्मक है जो बाद में असत्य सिद्ध हुआ। जब ओकर ब्लाड अपने निष्कर्ष दी सेसी के पास ले गया तो उसने अपनी शंका प्रगट की। इससे ओकर ब्लाड हताश हो गया और अपना शोध समाप्त कर दिया।

रोसेटा के प्रस्तर के रहस्योद्घाटन की समस्या अब अन्य विद्वानों के समक्ष पहुँची और उन्होंने लगभग १० वर्ष अपनी अटकलें लगायीं। उदाहरणार्थ काउण्ट एन० जी० दी पालिन (Count N. G. de Polin) ने अपना मत प्रकट किया कि उसने एक ही दृष्टि में उसके अर्थ समझ लिए हैं परन्तु उन अर्थो में कुछ त्रुटियाँ अवश्य रह गई हैं। एक दूसरे विद्वान अबे तैन्दू दि सेन्ट निकोलस (Abbe Tardeau de St. Nicolas) ने

---

1. Doblhofer, E. : Voices in Stone (1961), P. – 49.

अपने वक्तव्य में कहा कि मिस्र की चित्र लिपि कोई लिपि – पद्धति नहीं है अपितु मन्दिरों आदि को सुसज्जित करने का एक साधन मात्र है। १८०६ में एक ऐसे ही प्राच्य वेत्ता वैरन वॉन हैमर पर्गस्टाल (Baron Von Hammer Purgstall) ने मिस्र के एक प्राचीन अभिलेख का अनुवाद एक अरब के सहयोग से १८२१ में किया, जो पूर्णतया भ्रमपूर्ण निकला।

अब इस प्रस्तर की समस्या टॉमस यंग (Thomas Young) के, जो कैम्ब्रिज में एक भौतिकशास्त्री थे, पास आयी। यंग का जन्म मिल्वर्टन (Milverton)–सोमरसेट (Somerset) में १७७३ में हुआ था। २० वर्ष के होने तक लगभग १२ भाषाओं का ज्ञाता हो गया था। १७९८ में सौभाग्य से इसको अपने चाचा की सारी चल अचल सम्पत्ति प्राप्त हो गयी जिसके कारण उसको अन्य विषय भी अध्ययन करने का अवसर प्राप्त हुआ। उसने रोसेटा की प्रतिलिपि में से मध्य का डिमॉटिक भाग निकाल कर उसको पृथक कागज़ों पर चिपकाया और दाएँ से बाएँ पढ़ने का प्रयास किया। अब उसने ग्रीक लिपि के भाग को काट कर उसके साथ चिपकाया जिसके विषय में वह निश्चित हो गया कि यह डिमॉटिक का भाग ग्रीक लिपि से समानता रखता है। परन्तु यह पद्धति हैरोग्लिफ़्स के विषय में प्रयोग न कर सका क्योंकि ऊपर का भाग दाएँ तथा बाएँ दोनों ओर से कुछ अंशों में नष्ट हो चुका था। उसने सेसी व ओकरब्लाड की भाँति तुलना की और दो नामों को पहचाना, 'ऐलेक्ज़ेण्डर और एलेक्ज़ेण्ड्रिया'। उसने एक और शब्द 'किंग' पहचाना और देखा कि ग्रीक लिपि में ३७ बार इसका प्रयोग किया गया है जब कि डिमॉटिक में केवल ३० बार ही है। शब्द 'टॉलेमी' एक में ११ बार तथा दूसरी में १४ बार आया है। अब उसने एक ग्रीक डिमॉटिक शब्दावली बनाई जिसमें ८६ शब्द थे और वे सब ठीक सिद्ध हुए। १८१४ में सोसायटी फ़ार एन्टीक्वेरीज़ (Society for Antiquaries) के समक्ष उसने रोसेटा प्रस्तर के मध्य डिमॉटिक भाग का पूरा अनुवाद सुना दिया। इस अनुवाद में उसके प्रमाणों तथा अनुमानों का सम्मिश्रण था क्योंकि वह यह नहीं समझ सका कि यह डिमॉटिक पाठ ग्रीक पाठ का अनुवाद नहीं है।

जब उसने हैरोग्लिफ़्स पर अपना शोध किया तो उसने कई त्रुटियाँ कीं। एक तो उसको यह ज्ञात नहीं था कि मिस्र की लिपि में स्वरों का प्रयोग नहीं किया जाता दूसरे उसने कुछ चिह्नों को अनुमान से पढ़ा जो प्रगति में बाधाजनक हुए। तब भी ब्रिटेनिका के विश्व कोष[1] के १८१९ के संस्करण में उसने अपने शोध के विषय में हैरोग्लिफ़्स के रहस्योद्घाटन करने को एक विधि दर्शायी तथा यह भी बताया कि यह लिपि किस किस प्रकार से लिखी गयी है और वह पूर्णतया वर्णात्मक नहीं है। अंक केवल खड़ी लकीरों से बनाये गये हैं और बहुवचन बनाने के लिए चिह्न को तीन बार अंकित किया जाता है अथवा तीन खड़ी लकीरें खींची जाती हैं। दो भिन्न चिह्नों की एक ध्वनि भी हो सकती है। इतने परिश्रम के पश्चात् वह प्रगति न कर सका और शोध कार्य त्याग दिया।

इधर एक अन्य विद्वान् जीन फ्रैंको शैम्पोलियों (Jean Francois Champollion) भी इस कार्य में संलग्न था जिसको रोसेटा प्रस्तर की समस्या सुलझाने तथा मिस्र की लिपि का रहस्योद्घाटन करने का श्रेय प्राप्त हुआ। शैम्पोलियों का जन्म फ़िगीक (Figeac) में १७९० में हुआ। १२ वर्ष की आयु से ही उसको प्राच्य भाषाओं में अभिरुचि उत्पन्न होने लगी। १८०१ में जब उसका भ्राता उसको ग्रैनोबिल (Grenoble) अपने साथ लाया, तब उसका परिचय एक विख्यात गणितज्ञ जीन बैप्टिस्ट फ़ोरियर (Jean Baptiste Fourier) से हुआ। फ़ोरियर नेपोलियन के विद्वानों की सभा का एक सदस्य था और वह उसके साथ मिस्र

1. Encyclopaedia Britannica – 1819 Ed.

गया था। फ़ोरियर ने अपना मिस्री पुरातत्व का संग्रह दिखाया। उसमें मिस्र की प्राचीन लिपियों की वस्तुयें भी थीं जिनकी ओर शैम्पोलियों विशेष रूप से आकर्षित हुआ। उसी समय से उसने उस अज्ञात लिपि के रहस्य का उद्घाटन करने की ठान ली।

अब उसने भाषाओं का तथा इतिहास का अध्ययन आरम्भ कर दिया और पेरिस चला गया जहाँ उसका परिचय दि सेसी से हुआ और उसे रोसेटा – प्रस्तर के अभिलेखों को देखने का अवसर प्राप्त हुआ। वह दि सेसी का शिष्य बन गया। १८ वर्ष की आयु में वह ग्रेनोबिल में १८०९ में इतिहास का प्राध्यापक नियुक्त हो गया। परन्तु कुछ वर्षों के पश्चात् उसको पदच्युत कर दिया गया क्योंकि उसकी नैपोलियन के लिए सहानुभूति प्रतीत की गयी। १८१७ में वह पुनः ग्रैनोबिल आया और उसकी एकादमी आफ़ साइन्सेज़ (Academy of Sciences) में पुस्तकालयाध्यक्ष के रूप में नियुक्ति हो गयी परन्तु वह पुनः राजद्रोह के दोषारोपण में निर्वासित कर दिया गया। वह तुरन्त पेरिस भाग गया।

इस विपत्ति काल में भी शैम्पोलियों मिस्र तथा उसकी गूढ़ लिपि की समस्या को सुलझाने में संलग्न रहा। इसके लिए सर्वप्रथम उसने कॉप्टिक भाषा व लिपि का गहन अध्ययन किया। १८२२ के आरम्भ में उसने अकादमी (Academie des Inscriptions et Belles-lettres) के सदस्यों के समक्ष मिस्र की चित्र लिपि के ध्वन्यात्मक चिह्नों की तालिका प्रदर्शित की जिसमें उसने कार्टूशों के अन्दर अंकित चिह्नों के वर्णात्मक रूपों की घोषणा की तथा उनके गूढ़ रहस्योद्घाटन सम्बन्धी अपनी योग्यता का भी वर्णन किया।

इस शोध की सफलता उसको फ़िलाइ के शिलास्तम्भ (Philae Obelisk) द्वारा प्राप्त हुई। यह स्तम्भ १८१५ में डब्ल्यू० जे० बेंक्स (W. J. Bankes) को फ़िलाइ में टूटा हुआ प्राप्त हुआ था। यह स्तम्भ टॉलेमी षष्टम द्वारा १७३ ई० पू० में फ़िलाइ के मन्दिर के सामने स्थापित कराया गया था। इसमें हैरोग्लिफ़्स तथा ग्रीक लिपि में यह राजाज्ञा उत्कीर्ण की हुई थी कि "मन्दिर के दर्शन करने आने वाले यात्रियों को भोजन तथा ठहरने का स्थान प्रदान किया जायेगा"। उसको बेंक्स अपने निवास स्थान डोरसेट को ले गया। इसी स्तम्भ लेख की प्रतिलिपि शैम्पोलियों के पास भी अन्य विद्वानों के साथ भेजी गयी थी। इसमें क्ल्योपेत्रा का नाम भी अंकित था। इस प्रकार शैम्पोलियों ने लगभग ८० कार्टूश के चिह्नों को पहचान लिया जिनमें ग्रीक व रोमन शासकों के नाम थे।

अभी तक उसने ग्रीक – वंश के पूर्व के शासकों के नाम ज्ञात नहीं किये थे। १४ सितम्बर १८२२ का दिन शैम्पोलियों के लिए एक अविस्मरणीय दिवस था। इस दिन उसको जीन निकोलस हुईओत (Jean Nicolas Huyot) एक शिल्पकार द्वारा एक मन्दिर की अभिलेखों की कई प्रतिलिपियाँ प्राप्त हुईं। यह सब अभिलेख बहुत प्राचीन थे। इसमें भी अनेक कार्टूश थे। मनेथो की वंशावली तथा बाइबिल की हज़रत मूसा की घटनायें भी उसके समक्ष थीं। इन अभिलेखों में उसने दो शासकों के नाम देखे जिनके चिह्न 'फ० सं० – २९४' पर दिये गये हैं। शैम्पोलियों ने पहले नाम का पहला चिह्न 'रा' 'रे', (सूर्य) तथा बाद के दो चिह्न 'स' 'स' पढ़ लिए। अब समस्या आयी बीच के चिह्न के लिए। कॉप्टिक में 'ms' के अर्थ होते थे 'उत्पन्न हुआ' व 'mas' के अर्थ होते थे 'बच्चा'। तभी वह समझ गया 'सूर्य का बच्चा' या 'सूर्य पुत्र' अर्थात् रेमेसीज़ (Rameses अथवा Ramesses)। इसी प्रकार दूसरे चित्र में पक्षी का पहला चित्र 'टाट देवता' का द्योतक था अर्थात् 'टाट देवता का पुत्र' टुटमिस (Thotmss)

अपनी इस सफलता के निष्कर्षों को उसने अपनी पुस्तक (Precis du Systeme hieroglyphique)

को १८२४ में प्रकाशित कराया और संसार को चकित कर दिया। उसने इस पुस्तक में सिद्ध कर दिया कि मिस्र की लिपि अति जटिल है। इस लिपि में तीनों प्रकार (चित्रात्मक, संकेतात्मक तथा ध्वन्यात्मक— Pictographic, Ideographic and Phonetic) के चिह्न न केवल एक अभिलेख या वाक्य में दृष्टिगोचर होते हैं अपितु शब्दों में भी वर्तमान होते हैं।

१८२४ से अपनी मृत्यु (१८३२) तक वह हैरोग्लिफ्स के ज्ञान की वृद्धि करने में अनवरत प्रयास करता रहा। इसी सन्दर्भ में वह फ्रांस सरकार द्वारा मिस्र भेजा गया जहाँ जाकर वह अभिलेखों की प्रतिलिपियाँ लेता रहा तथा उनका अध्ययन भी करता रहा। इसी सलग्नता के काल में उसका स्वर्गवास हो गया। तत्पश्चात् उसके भ्राता ने पेरिस से १८४१ में 'मिस्र की व्याकरण (Grammaire Egyptienne)' तथा १८४३ में 'मिस्र का शब्दकोष' (Dictionnaire Egyptien) प्रकाशित किये जो शैम्पोलियों को अमर बना गये तथा विश्व के समक्ष एक देश की अज्ञात प्राचीन संस्कृति व इतिहास को ज्ञात बना गये।

इतने परिश्रम पर भी बहुत से विद्वान् जैसे, ए० डब्ल्यू० स्पोह्न (A. W. Spohn), जी० सेफ़ार्थ (G. Seyfarth), जे० क्लाप्रोथ (J. Klaproth) तथा सी० सिमोनाइड्स (C. Simonides) शैम्पोलियों के प्रामाणिक शोधकार्य के निष्कर्षों से सहमत नहीं हुए, परन्तु इटली के दो विद्वानों, एच० रोसेलिनी (H. Rosellini) तथा रिचर्ड लेप्सियस (Richard Lepsius) ने इस शोधकार्य की बड़ी प्रशंसा की। १८६६ में जर्मन विद्वानों के एक दल, जिसमें लेप्सियस भी था, ने टैनिस के समीप एक चूने के पत्थर की पाटिया (Slab) उत्खनित की। यह शिलालेख कैनोपस (Canopus)[1] की राजाज्ञा थी जिसमें टॉलेमी तृतीय को एक कृतज्ञ पुरोहित द्वारा मानपत्र भेंट किया गया था। संयोगवश १५ वर्ष के पश्चात् इसी प्रकार का शिलालेख जी० मैस्प्रो (G. Maspero) को प्राप्त हुआ जिस पर वही शब्द उत्कीर्ण थे। इन दोनों शिलालेखों पर तीनों लीपियाँ उत्कीर्ण थीं (ऊपर ३७ पंक्तियाँ हैरोग्लिफ़्स की, नीचे ७६ पंक्तियाँ ग्रीक लिपि की तथा ५७ पंक्तियाँ डिमॉटिक लिपि की)।

उन्नीसवीं श० के अन्त तक हैरोग्लिफ़्स का ज्ञान वैज्ञानिक रूप धारण कर चुका था। उसमें लेषमात्र भी अनुमान व संशय का स्थान न था। लुडविग स्टर्न (Ludwig Stern) एवं एडोल्फ़ अर्मन (Adolf Erman) के व्याकरणीय अध्ययन ने तथा कर्ट सेथे (Kurt Sethe), सर एच० टॉम्पसन (Sir H. Thompson), एच० ग्रेपो (H. Grapo), डब्ल्यु स्पीगेलबर्ग (W. Spigelberg) तथा एस० दि बक (S. de Buck) के अनुक्रमिक कृत्यों ने शैम्पोलियों के शोध की न केवल पुष्टि की अपितु भावी पीढ़ी के विद्यार्थियों के लिए लिपि के अध्ययन को पर्याप्त सरल बना दिया।

लिपि की कुछ विशेषतायें : विविध विद्वानों के १५० वर्ष के अथक परिश्रम द्वारा मिस्र की रहस्यमयी हैरोग्लिफ़्स तथा अन्य लिपियों के विषय में निम्नलिखित रहस्य प्रकाश में आये :—

१. **हैरोग्लिफ़्स :** एक पवित्र लिपि मानी जाती थी। इसका प्रयोग, मन्दिरों के दिवालों पर, शासकों की समाधियों तथा शव-पेटियों पर, पिरेमिड की भीतरी दीवालों पर तथा अन्य शिलास्तम्भों आदि पर उत्कीर्ण करने में किया जाता था।

२. **इस लिपि :** का जन्म कब और कैसे हुआ, निश्चय रूप से ज्ञात नहीं हो सका। इसी कारण धार्मिक

1. Decrees of Memphis and Canopus – 3 Vols. – (London 1904).

विश्वास के अन्तर्गत यह धारणा बन गई कि इसका जन्मदाता एक देवता था जिसका नाम टाट (Thoth) था। इस देवता का सिर एक पक्षी (Ibis) का तथा शरीर मनुष्य का था।

३. इस लिपि : का प्रयोग सम्भवतः ३५०० ई० पू० से (प्रथम वंश में यह लिपि वर्तमान थी) आरम्भ हुआ और ४०० ई० तक होता रहा। तदनन्तर इसका कोई ज्ञाता न रहा।

४. इस लिपि : के उत्कीर्ण करने की विविध प्रणालियाँ थीं। उदाहरणार्थ ऊपर से नीचे (इसमें प्रथम खड़ी पंक्ति दाएँ ओर होती थी तथा दूसरी प्रथम खड़ी पंक्ति के बाएँ ओर से आरम्भ की जाती थी जिस प्रकार चीनी लिपि लिखी जाती थी), दाएँ से बाएँ[1] तथा ग्रीक वंश के शासन काल से कभी बाएँ से दाएँ भी अंकित की जाती थी।

५. इस लिपि : में तीन प्रकार के चिह्नों का प्रयोग होता था।

१. चित्रात्मक : जिसमें किसी वस्तु या प्राणी का चित्र उसी वस्तु या प्राणी का बोध कराता था।

२. संकेतात्मक : जिसमें चित्र या चिह्न किसी भाव का संकेत करता था।

३. ध्वन्यात्मक : जिसमें चित्र या चिह्न किसी ध्वनि का प्रतिनिधित्व करता था।

६. इस लिपि : में ध्वन्यात्मक चित्र या चिह्न तीन प्रकार के थे :—

१. एक वर्णिक (Uniconsonantal) : जो केवल एक ध्वनि के लिए एक वर्ण रखते थे। इनकी संख्या २४ थी।

२. द्विवर्णिक (Biconsonantal) : जो एक ध्वनि के लिए दो वर्ण रखते थे। इनकी संख्या ७५ थी परन्तु लगभग ५० प्रयोग में आते थे।

३. त्रैवर्णिक (Triconsonantal) : जो एक ध्वनि के तीन[2] वर्ण रखते थे।

७. इस लिपि : में केवल व्यंजनों (Consonants) का ही प्रयोग होता था जिस प्रकार उस काल की पश्चिम एशियाई देशों की सेमिटिक लिपियों में होता था। वैसे तो यह पद्धति बड़ी कठिन व जटिल प्रतीत होती है परन्तु उस भाषा के प्रयोग करने वालों को कोई कठिनाई प्रतीत नहीं हुई होगी।[3]

८. इस लिपि : में किसी शब्द को लिखने के लिए वर्णों के प्रयोग के साथ साथ कभी कभी उस शब्द के निर्धारक (determinative—भाव को संकेत करने वाला) चित्र को भी अंकित कर दिया जाता था और उस चित्र के नीचे एक खड़ी लकीर भी खींच दी जाती थी जो इस बात को प्रमाणित करती थी कि अमुक चित्र वर्ण नहीं अपितु निर्धारक है।

---

1. लगभग २००० ई० पू० से प्रयोग में आई।
2. They are also called Uniliteral, Biliteral and Triliteral.
3. आज भी भारत में उर्दू लिपि के प्रयोग में यही पद्धति प्रचलित है। इसका एक अन्य उदाहरण I. J. Gelb ने अपनी पुस्तक 'A Study of Writing' में इस प्रकार दिया है : – Writing without vowel can also be read with ease – 'n rdng ths sntnc u wll fnd th bst prf tht th nglsh lngug cn b wrttn wtht vwls' – (In reading this sentence you will find the best proof that the English language can be written without vowels).

९. **संसार :** की यह सर्वप्रथम वर्णात्मक लिपि थी परन्तु इसके लिखने की प्रणालियों के कारण तथा निर्धारक चित्रों का व ध्वन्यात्मक (वर्ण) चित्रों का साथ साथ प्रयोग होने की जटिलता के कारण इसका प्रयोग मिस्र के अतिरिक्त किसी अन्य देश की भाषा के लिए प्रयोगात्मक नहीं बनाया जा सका ।

१०. **संसार :** की यही सर्वप्रथम लिपि थी जिसके वर्णों द्वारा (पूर्णतया नहीं) उत्तरी सेमिटिक लिपियों का उद्‌भव हुआ परन्तु भाषा की भिन्नता के कारण उन वर्णों के नामों को परिवर्तित कर दिया गया ।

११. **ए० एच० गार्डिनर व सेथे के अनुसार :** इस लिपि में लगभग ७०० चित्र व चिह्न हैं जिनको २० वर्गों में विभाजित किया गया है । उदाहरणार्थ ६३ चिह्न मानव शरीर के अंगों के, ५५ चिह्न मानव जीवन के आजीविका के, ५२ चिह्न स्तन वाले (mammals) प्राणियों के, ३९ चिह्न पक्षियों के, २० चिह्न क्रीड़ा व वादक यंत्रों आदि के मुख्य वर्ग हैं ।

१२. **इस लिपि :** का एक दूसरा रूप भी था जो कागज़ पर शीघ्रता से लिखने के लिए प्रयोग किया जाता था । उसका नाम हेरेटिक (Hieratic) था । इसको भी धार्मिक क्षेत्र में ही प्रयोग किया जाता था जिसके कारण इसको भी पवित्र लिपि माना जाता था । इसके उद्‌भव के विषय में निश्चित रूप से कहना संभव नहीं है । कुछ विद्वानों का मत है कि यह प्रथम वंश में भी वर्तमान थी तथा कुछ विद्वानों का मत है कि इसका विकास पंचम वंश के शासन काल (२५०० ई० पू०) से दृष्टिगोचर होने लगा ।

१३. **इन दोनों लिपियों :** का प्रयोग पुरोहित वर्ग द्वारा किया जाता था । नव दीक्षित पुरोहितों को इनके लिखने की शिक्षा देने के लिए मन्दिरों में पाठशालायें स्थापित की गयीं थीं ।

१४. **पच्चीसवें वंश :** के शासन काल (७५१ से ६६३ ई० पू० तक) में जन साधारण के प्रयोग के लिए एक तीसरी लिपि का हेरेटिक से आविष्कार किया गया । उस काल के अनुसार यह हेरेटिक का सरल रूप था जिसका प्रयोग प्रायः व्यापारिक क्षेत्र में अधिक होता था । जनसाधारण के लिए ग्रीक भाषा में एक शब्द डिमॉस (Demos) था, उसी से इस लिपि का नाम भी डिमॉटिक रख दिया गया । नामकरण सम्भवतः ई० पू० की तीसरी शताब्दी में हुआ ।

१५. **प्रथम वंश :** के शासन काल में एक ध्वनि वाले व्यंजन – वर्ण, जिनकी संख्या २४ थी, निर्धारित कर लिए गए थे परन्तु पांचवें वंश के शासन काल में ६ अन्य सम – ध्वनि वाले वर्णों[1] (चित्रों) का आविष्कार कर लिया गया ।

१६. **इस लिपि :** को पढ़ने में दो बातों का ध्यान रखा जाता था :—

(क) क्षैतिज पंक्तियों (horizontal) की लिपि की दिशा (दाएं से बाएं या बाएं से दाएं) जानने के लिए चित्रों के मुख की दिशा देखी जाती थी यदि मुख बायीं ओर हो तो बाएं से अथवा मुख दाईं ओर हो तो दाएं से पढ़ी जाती थी ।

(ख) दो व्यंजनों के मध्य अधिकतर 'ए' या 'ई' की ध्वनि का प्रयोग किया जाता था, जैसे 'Rmss' = 'Remeses' ।

---

1. Homophones.

अगले चित्रों का विवरण

मिस्र के कुछ संकेतात्मक शब्द[1] **:** (फ० सं०–२९०) आरम्भ काल में चित्रों की संख्या लगभग दो सहस्र थी परन्तु जब लिपि का सरलीकरण होने लगा तथा चित्रात्मक से लिपि संकेतात्मक की ओर अग्रसर होने लगी तब इनकी संख्या कम होने लगी। चित्रों के संकेत निर्धारित[2] होने लगे।

'फ० सं०—२९०' पर प्रथम पंक्ति के चित्र केवल चित्रात्मक (Pictographic) हैं तथा प्रत्येक चित्र एक शब्द है इसका काल लगभग ३४०० ई० पू० माना जाता है। इसमें चित्रों के नीचे दो पंक्तियाँ हैं। प्रथम में मिस्र की भाषा में नाम दिए हैं और इसी के नीचे हिन्दी भाषा में उसी चित्र के नाम दिये हैं। उस काल में ऐसे लगभग ७०० चित्रात्मक शब्द थे।

द्वितीय पंक्ति में वही चित्र कुछ सकेत देने लगे और इसको संकेतात्मक (Ideographic) लिपि कहने लगे। अब आँख केवल आँख का चित्र नहीं रहा अपितु उसके अर्थ 'देखना' हो गया तथा दो टांग का चित्र 'चलना' हो गया।

तृतीय पंक्ति में गुणवाची शब्द दिए गये हैं। चित्र भौतिक हैं पर उनसे अभौतिक भाव निकलता है।

चतुर्थ पंक्ति में निर्धारक (Determinatives) शब्दों का निर्माण किया गया है। चित्र बना देने से पूरा भाव व्यक्त हो जाता था। इस प्रकार लिपि का विकास हुआ जिसका काल गार्डिनर ने अपनी पुस्तक[3] में दिया है:—

१. प्राचीन लिपि :	३४००	से	२४०० ई० पू०
२. मध्यकालीन लिपि :	२४००	से	१३५० ई० पू०
३. अन्तिम काल की लिपि :	१३५०	से	७०० ई० पू० तक।
			और ७०० ई० पू० से ४०० ई० तक।

हैरोग्लिफ़्स के वर्ण (डिरिंजर द्वारा) : (फ० सं०—२९१) इस चित्र में वह २४ वर्ण दिए गये हैं जो प्रथम वंश के शासनकाल में प्रयोगात्मक बनाये गये। इनमें केवल व्यंजनों का ही प्रयोग होता था। प्रत्येक वर्ण[4] के चित्र का नाम तथा हिन्दी व रोमन लिपि में उसकी ध्वनि दी गई है। प्रत्येक वर्ण के लिए एक चित्र[5] है।

हेरोग्लिफ़्स के वर्ण (वैलिस बज द्वारा) **:** (फ० सं०—२९२) इस चित्र में हैरोग्लिफ़्स की वर्णमाला में ६ नये वर्ण जोड़े गये हैं। पाँचवें वंश में ३० वर्ण हो गये थे। ल, ओ, ऊ, न, श, प नये हैं। कुछ समध्वनियों वाले भी जोड़े गये।

ध्वनियाँ व चित्र :[6] (फ० सं०—२९३) इस चित्र में ऊपर की ओर वाले द्विवर्णिक (Bi-consonantal)

---

1. Jansen, H. : Syn, Symbol and Scripts Page—58, (1970).
2. Determinatives.
3. Gardiner, A. H. : Egyptian Grammar (1927).
4. Friedrich, J : Extinct Languages Page—12, (1962).
5. Uniconsonantal.
6. Erust Doblhofer : Voices in Stones (1955).

चित्र हैं,[1] मध्य वाले कुछ अन्य सम – ध्वनि वाले चित्र हैं जो ग्रीक काल में जोड़े गये तथा नीचे वाले त्रैवर्णिक चित्र या वर्ण[2] हैं।

हैरोग्लिफ़्स के कुछ शब्द :[3] (फ० सं०—२९४) इस चित्र के ऊपर की ओर के शब्दों में प्रथम नाम 'टॉलेमी' का है जो सर्वप्रथम दि सेसी ने पढ़ा था और इसी नाम के द्वारा शैम्पोलियों ने नीचे के नाम 'क्ल्योपेत्रा' की तुलना की थी। 'P', 'O', 'L', वर्णों को वह जानता था बाद में नाम को पहचानने पर और वर्ण जान गया। क्ल्योपेत्रा में पहला वर्ण 'C' है जो 'क' की ध्वनि के समान है और सातवें अक्षर को 'द' की ध्वनि वाले चित्र से अंकित किया गया है। संभवतः उस काल में क्ल्योपेद्रा ही उच्चारण करते हों। 'रेमेसीज़' व 'टुटमस' के नाम शैम्पोलियों ने १४ दिसम्बर १८२२ को पहचाने।

अतिरिक्त वर्ण व कुछ शब्द : (फ० सं० – २९५) इसमें चित्र की वर्णात्मक ध्वनि, चित्र का नाम तथा उसका हिन्दी नाम फलक के सीधी ओर कुछ शब्द, उनके लिखने की अनोखी पद्धति, साथ में निर्धारक चित्र, उसका मिस्री भाषा में नाम, किन वर्णों से शब्द का निर्माण हुआ हिन्दी में उसके अर्थ आदि प्रत्येक शब्द के साथ दिये गए हैं। शब्द 'दिन (Day)' (फ० सं०–२९४) जिसको मिस्र की भाषा में 'हर वू (Har Wu)[4]' कहते हैं परन्तु लिखा जाता है 'HRW' बिना स्वरों के चार प्रकार से। उसी के नीचे एक वाक्य दिया है जिसका अंग्रेजी भाषा में अर्थ है 'A man lives when his name is pronounced' अर्थात् 'मनुष्य, नाम से जीवित रहता है'। इन दोनों (शब्द व वाक्य) में वर्ण तथा निर्धारक शब्द भी दिये गये हैं। उनके पास या नीचे एक खड़ी लकीर अंकित कर दी जाती थी जो सूचित करती थी कि यह चित्र ध्वन्यात्मक वर्ण नहीं अपितु निर्धारक चित्र है। इसी कारण दिन के 'सूर्य' का तथा नाम व मनुष्य के लिए मनुष्य का चित्र भी अंकित कर दिया गया है।

इस चित्र में ऊपर से नीचे तक लिपि को सरलता से पढ़ने के कारण बाएँ से दाएँ की ओर बना लिया गया है। हैरोग्लिफ़्स में जब बाएँ से दाएँ लिखा जाता है तो चित्रों की दिशा बाईं ओर होती हैं और जब दाएँ से बाएँ लिखा जाता है तो दाईं ओर होती है।

हैरोग्लिफ़्स तथा हेरेटिक के कुछ प्रतिदर्श : बायीं ओर ऊपर से (फ० सं० – २९६):—

शब्द	उच्चारण	अर्थ
उबन	उबेन	सूर्योदय
इतन	इतेन	सूर्य का चक्र
पद	पेद	घुटना
रआमपत	रामपेत	आकाश में सूर्य
हरउ	हेरु, हर वू	दिन

इसके नीचे हेरेटिक (हैरोग्लिफ़्स का घसीट रूप) के दो काल की लिपि में एक शब्द 'हर वू' (दिन) लिखा गया है। उसमें सं० – १ में आरम्भिक हेरेटिक तथा सं० – २ में पुराकालीन हेरेटिक का

1. Friedrich, J, : Extinct Languages p-7, (1962).
2. Triconsonantal.
3. P. E. Cleator : Lost Languages—Page 49-51 (1957).
4. Gardiner, A. H. : Egyptian Grammar P – 27, (1927).

प्रतिदर्श है। इसी 'फ० सं० – २९६' पर सीधी ओर हैरोग्लिफ़्स तथा साथ साथ हेरेटिक भी दी गई है, दोनों ऊपर से नीचे लिखे[1] गये हैं जो इस प्रकार पढ़े जायेंगे :–

शब्द		अर्थ
न खे़म्म	=	दूर ले जाना; बचाना।
पीटना	=	निर्धारक शब्द है।
स	=	वह (स्त्री)
ह – न – अ; हीना	=	(सब) के साथ
आँख (निर्धारक)	=	देखना
र – त; इर्रत	=	स्त्री, पुरुष
स्त्री – पुरुष	=	निर्धारक शब्द हैं
नब + त; नेबेत		
निर्धारक + अक्षर	=	सब
र	=	को
स	=	वह (स्त्री)

इसका अनुवाद होगा—'उस (स्त्री) को बचाओ, उन सब स्त्री पुरुषों से, जो उसको (स्त्री) पीट रहे हैं'।

हैरोग्लिफ़्स का घसीट रूप हेरेटिक : (फ० सं० – २९७) इस चित्र में हैरोग्लिफ़्स के कुछ वर्णों का घसीट रूप[2] दिया गया है। इसमें बाएं से प्रथम कॉलम में चित्रों की ध्वनि (Phonetic value) दी है, दूसरे में वर्ण, तीसरे और चौथे कालम में परिवर्तन तथा पाँचवें में पूर्ण परिवर्तित रूप दिया गया है। हेरेटिक का कब निर्माण हुआ यह बिषय विवादास्पद है। कुछ विद्वानों का मत है कि हैरोग्लिफ़्स के साथ ही इसका भी प्रयोग होता था।

हैरोग्लिफ़्स एवं हेरेटिक का एक अभिलेख : (फ० सं०–२९८) इस अभिलेख[3] में ऊपर हेरोग्लिफ़्स (सरलीकरण के लिए बाएं से दाएं कर लिया गया है) तथा नीचे हेरेटिक, जो दाएं से बाएँ लिखी है, दी गई है।

मिस्र की डिमॉटिक[4] : जन साधारण के लिए डिमॉटिक का आविष्कार ई० पू० की सातवीं श० में हुआ। इसका प्रतिदर्श[5] तथा वर्ण 'फ० सं० – २९९' पर दिए गये हैं।

कॉप्टिक लिपि : (फ० स०–३००) पर कॉप्टिक लिपि की वर्णमाला[6] दी गई है। 'कॉप्टिक' अरबी शब्द 'क़िब्त' से गलत उच्चारण करके 'क़ोब्त' शब्द से बना। 'क़िब्त' शब्द 'इजिप्शियन' (Egyptian) के संक्षिप्त रूप गि़प्तियस (Gyptios) से बना।

---

1. यह पाठ लेखक ने स्वयं काहरा (Cairo, Egypt) के मुख्य निदेशक के सहयोग से एक हैरोग्लिफ़्स के प्रवक्ता द्वारा १९७५ में प्राप्त किया।
2. Möller, G. :Hieratische Paläographie (2 nd. Ed.) 1927, P – 36.
3. Doblhofer, E. : Voices in Stone (1961), P-81.
4. इसकी वर्णमाला लेखक ने स्टाकहोम में प्राचीन मिस्री संग्रहालय से प्राप्त की जो यहाँ दी गयी है।
5. Erman : Die Hieroglyphen-p. 7.
6. Stegemann, V. : Koptische Palaeographie (Heidelburg – 1936), p-211,

मिस्र लिपि का क्रमशः विकास

फलक संख्या – २९०

हैरोग्लिफ्स के वर्ण (डिरिंजर द्वारा)

W व बटेर का बच्चा	Ā आ अग्रभुज	Y इ नर्कुल	A अ गिद्ध
M म उल्लू	F फ़ नाग	P प बैठने का स्टूल	B ब पैर
Ḥ ह	H ह	R र	N न पानी
S' स्स तह किया कपड़ा	S स चटकनी	H̲ ख योनि द्वार	H̲ ख़ आंवल
G ज जग	K क	Q क़	Š श तालाब
D̲ ज़ अस्त्र	D द हथेली	T̲ च पशु की गलफांस	T ट रोटी

फलक संख्या – २९१
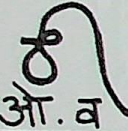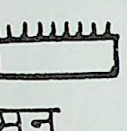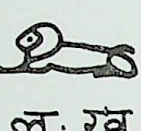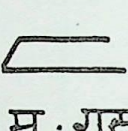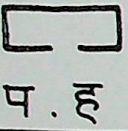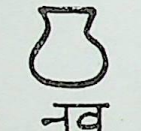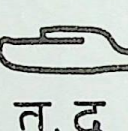
हैरोग्लिफ्स के वर्ण (वैलिस बज द्वारा)

U ऊ	I ई	I ई	A अं
N न	O ओ	L ल	U ऊ
K क	M म	M म	T थ
Ś श	B ब	S स	Q क़
T ट	N न	P प	Ś श
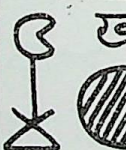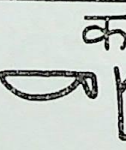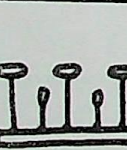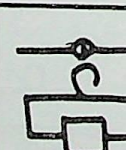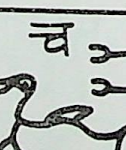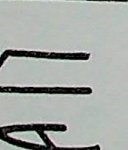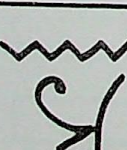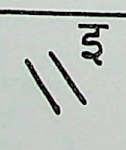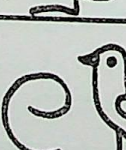
६ अक्षर और जोड़े गये = ल. ओ. ऊ. न. श. प.

ध्वनियाँ व चित्र

एक चित्र दो ध्वनियाँ

फलक संख्या – २९३

हैरोग्लिफ्स के कुछ शब्द

फलक संख्या – २९४
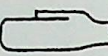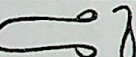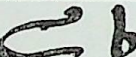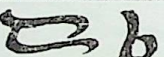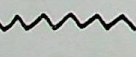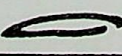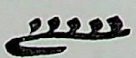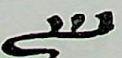
कुछ अतिरिक्त वर्ण व कुछ शब्द

इ द्वैत का प्रयोग	म मेर प्रेम	इव आना
इ द्वैत का प्रयोग	म मा हंसिया	श म शेम जाना
व ओ उ बटेर का बच्चा	ख़ ख़ेव कमल	अ न मुड़ना
ल, र लियो रेव	क का प्रार्थना	स फ़ सेफ़ कल
व ओ उ वेव फन्दा	श श्वेत पर	न म इ मिन आज
न नेत लाल मुकट	श शा ताल	प स द पेसदे चमकना
थ थेथी फन्दा	न नत मटका	
म इम दो पसली	ड डेव पर्वत	

फलक संख्या – २९५

हेरोग्लिफ्स तथा हेरेटिक के कुछ प्रतिदर्श

हेरोग्लिफ्स का घसीट रूप - हेरेटिक

अ				
क				
द				
ह				
फ़				
ख़				
च				
इ				
ग				
ल				
म				
न				
ज़				
क़				
र				
श				

फलक संख्या – २९७

हेरोग्लिफ्स एवं हेरेटिक का एक अभिलेख

फलक संख्या - २९८

डिमॉटिक की वर्णमाला
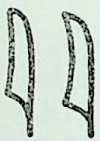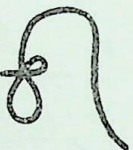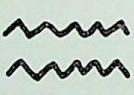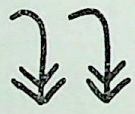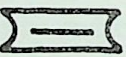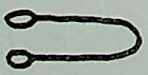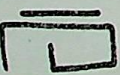
अ	ब	ग क	द	ए	इ	ई	ल	
म	न	ओ	प	र	स	त	उ	
फ़	ख	प्स	व	श	फ़	ज	व	ती

डिमॉटिक एवं कॉप्टिक के प्रतिदर्श

कॉप्टिक लिपि की वर्णमाला

ध्व०	नाम	वर्ण	ध्व०	नाम	वर्ण	ध्व०	नाम	वर्ण
अ	अल्फा	Ⲁ	ल	लूला	Ⲗ	ख	किज	Ⲭ
ब	वीदा	Ⲃ	म	मीज	Ⲙ	प्स	एब्सी	Ⲯ
ग	गामा	Ⲅ	न	नी	Ⲛ	उ	उ	Ⲱ
द	डेल्टा	Ⲇ	क्स	एक्सी	Ⲝ		डिमॉटिक से FROM DEMOTIC	
ए	एजे	Ⲉ	ऊ	ओन	Ⲟ	श	शेइ	Ϣ
	सोन	Ⲋ	प	बेज	Ⲡ	फ़	फ़ेइ	Ϥ
ज़	ज़ादा	Ⲍ	र	रोन	Ⲣ	ख़	ख़ेइ	Ϧ
इ	हाधा	Ⲏ	स	सम्मा	Ⲥ	ह	होरी	Ϩ
त ह	तुत्ते	Ⲑ	त	दाउ	Ⲧ	ज	जंजिया	Ϫ
ज ऊ इ	जोदा	Ⲓ	ई	हे	Ⲩ	श	शीमा	Ϭ
क	कब्बा	Ⲕ	फ़	फ़िज	Ⲫ	त	ती	Ϯ

फलक संख्या – ३००
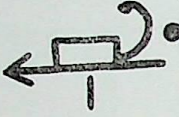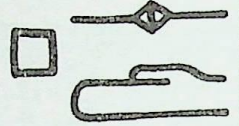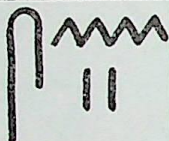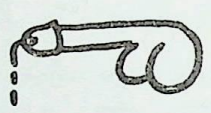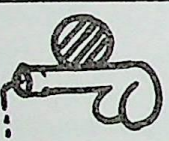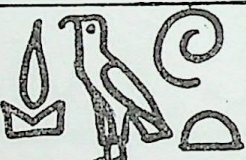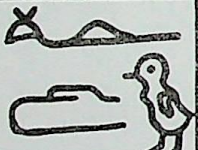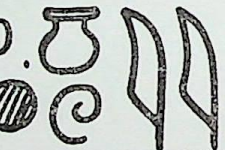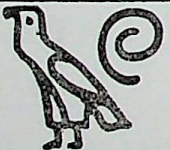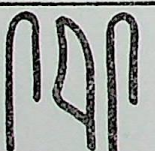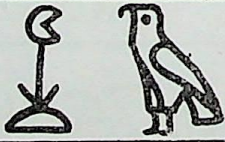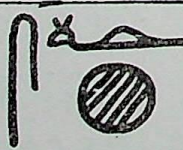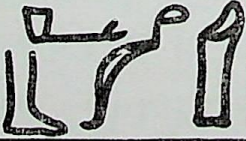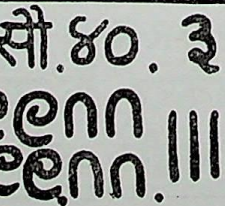
मिरोइटिक लिपि की वर्णमाला

अ	ए	ऐ	ई	इ	व
व.ब	प	म	न	नं	र
ल	ख	ख़	स	श	क
क़	त	ते	तै	ज़	

फलक संख्या – ३०१

मिरोइटिक डिमॉटिक की वर्णमाला तथा अभिलेख

अ	ए	ऐ	ई	इ	व	ब	प	म	न	नं	र	ल
a	e	ê	i	y	w	v-b	p	m	n	ñ	r	l

ह	ख़	स	श	क	क़	त	ते	तै	ज़
h(y)	h	s	š	k	q	t	te	tê	z

अभिलेख – दाएँ से बाएँ ←

Ê K I : N H Z I T K T : I Y E R E S A : I S Ê W

L To R.= IKÊ T(A)QTIZ HN ASEREYI WESI

PROTECT TAKTIZ AMON OSIRIS ISIS

←

I L H Z E : Y E R TE I N M A : Ê L E K R E : R K Ê Z

EZHLI AMNTARES ERKELE ZEQR

BORN AMNTARES BEGOTTEN ZEKARER

ज़केरर के पुत्र अमोनतारिस की आइसिस, ओसाइरिस व तक्तीज़ अमोन (देवता) रक्षा करते हैं।

फलक संख्या – ३०२

मिस्री लिपि के अंक

१ उअ्रा	९ पेसेत
२ सेन	१० मेत
३ ख़ेमेत	२० टाउट
४ फ़ेतू	८०
५ आउ	१०० शा
६ सिस	१००० ख़ा
७ सेफ़ेख़	१०,००० टाब
८ ख़ेमेनु	१०ह़. २ह़. ५सौ. ४०. ३

फलक संख्या – ३०२

ग्रीस के निवासी जो मिस्र में आकर बसने लगे थे ५६ ई० में सेन्ट मार्क (St. Mark) द्वारा ईसाई बनाये गये थे और बाद में काप्ट्स के नाम से ज्ञात होने लगे थे। इन्होंने अपनी एक लिपि को जन्म दिया। इनकी भाषा में मिस्र व ग्रीक का मिश्रण था और मुख्य बोलियाँ, सेहीदिक (Sahidic), अख़्मिनिक (Akhminic जिसमें पर्शियन के शब्दों का मिश्रण था) और फ़यूमिक (Fayumic जो मिस्र के फ़यूम प्रांत में बोली जाती थी – मियोरिस झील के निकट थी), भी सम्मिलित थीं।

जब मिस्र अरबों के अधीन हुआ तब वहाँ के लगभग सभी निवासियों ने इस्लाम धर्म अपना लिया परन्तु इन ईसाईयों ने नहीं अपनाया जिसके कारण यह लोग मुसलमान शासकों द्वारा निम्न नागरिक समझे जाते थे। इनके गिरजाघरों को नष्ट किया गया। इनके क्रास व चित्र नष्ट किये गये। इनको काली पगड़ियाँ पहननीं पड़ती थीं और भारी क्रास गले में लटकाने पड़ते थे परन्तु फिर भी इन्होंने इस्लाम धर्म नहीं अपनाया।

१३४८ में धर्म युद्ध (Crusades) आरम्भ हो गये। बाद में अपनी जान के भय से कुछ ने इस्लाम अपनाया।

काप्टिक लिपि के सबसे प्राचीन अभिलेख ईसा की दूसरी शताब्दी के प्राप्त हुए परन्तु लिपि इससे पहले आरम्भ हो चुकी थी। सातवीं श० में अरबी ने कॉप्टिक की जगह लेली परन्तु धार्मिक क्षेत्रों में इसका प्रयोग अब भी काप्ट्स (ईसाईयों) द्वारा किया जाता है। दशवीं श० तक इसका प्रयोग होता रहा।

स्पीग्लिबर्ग के अनुसार इसमें २४ चिह्न कुछ नाममात्र परिवर्तित करके ग्रीक लिपि से लिए गये हैं, एक नये वर्ण का निर्माण किया गया है। इस प्रकार २५ हो गये। इसमें ७ चिह्न डिमॉटिक से लेकर जोड़ दिये। इस तरह कुल मिलाकर इसमें ३२ वर्ण[1] हो गए।

शैम्पोलियाँ ने इसी का सर्वप्रथम अध्ययन किया था।

मिरोइटिक लिपि की वर्णमाला : (फ० सं०—३०१) इस चित्र में २३ वर्णों वाली मिरोइटिक वर्णमाला[2] दी गई है। मिस्र के दक्षिण में एक देश नूबिया था जिसमें अफ़्रीका निवासी रहा करते थे। उनको मिस्र के शासकों ने कई बार अपने अधीन किया, उनकी सोने की खानों से सोना लेते रहे तथा उनको निम्न कोटि के नागरिक मानते रहे। युद्ध में उनकी सेना अधिक होती थी क्योंकि मिस्र के निवासी विलासी थे। मिस्र ने सबसे पहले १९०० ई० पू० में नूबिया को परास्त किया और १४५० में उसको मिस्र का एक उपनिवेश बना लिया।

८५० ई० पू० में एक नये राज्य की स्थापना की गई जिसकी राजधानी नपाता थी और नदी के पार एक उप – राजधानी मिरोइ थी। यहाँ पहले तो मिस्र की लिपि का ही प्रयोग होता था परन्तु जैसे जैसे यह देश स्वतन्त्र होता गया इसने अपनी एक नवीन लिपि – मिस्र की पद्धति पर – का निर्माण कर लिया।

इस देश का पुरातात्विक सर्वेक्षण लेप्सियस ने १८४४ में तथा जी० रीन्सर (G. Reinser) ने १९२१ – २३ में किया। इस सर्वेक्षण के द्वा रा हैरोग्लिफ् स तथा मिरोइटिक दोनों के अभिलेख प्राप्त हुए। इनको एच० ब्रुगश (H. Brugsch १८८७) ने अधूरा पढ़ा तथा ग्रिफ़िथ ने पूर्णतया इसका रहस्योद्घाटन

---

1. Stegemann, V. : Koptische Palaeographie (Heidelberg - 1936), p – 271
2. Erman, A. : Die Hieraglyphen (1927), P-37.

किया। विद्वानों के मतानुसार मिरोइटिक का जन्म व विकास नवीं शताब्दी ई० पू० से आरम्भ हो गया था और ७०० ई० पू० तक पूर्णतया प्रयोगात्मक हो गई।

जिस प्रकार मिस्र में घसीट रूप हेरेटिक विकसित हुआ उसी प्रकार मिरोइटिक का घसीट रूप डिमॉटिक लगभग ७ वीं शती में विकसित हुआ। उस काल में नूबिया वंश का शासन पूर्ण मिस्र पर था। तभी घसीट – रूप की आवश्यकता प्रतीत हुई। मिरोइ नगर को अक्सुम के शासक ऐज़नीज़ (Aeizanes) ने ३५० ई० में नष्ट कर दिया।

मिरोइ की डिमॉटिक : 'फ० सं० – ३०२' पर डिमॉटिक की वर्णमाला[1] दी गई है। ग्रिफ़िथ के मेमुयार्स (Memoirs) से दी गई है (चित्र के नीचे देखिये)।

अभिलेख दाएँ से बाएँ दिया गया है। उच्चारण रोमन वर्णों द्वारा दिया गया है जिसमें उसी के नीचे बायीं ओर से लिखे गये हैं। चतुर्थ पंक्ति में अंग्रेजी में अनुवाद दिया गया है तथा पूरे अभिलेख का हिन्दी में अनुवाद कर दिया गया है। इसका अन्तिम प्रयोग ११ दिसम्बर ४५२ ई० को हुआ तदनन्तर यह लोप हो गई।

मिस्र के प्राचीन अंक : लिपि के साथ साथ गणित आदि का भी विकास हुआ जिसके लिए अंकों का आविष्कार किया गया। 'फ० स० ३०३' पर मिस्रीलिपि के अंक[2] दिये गये हैं। इस फलक में १६ कालम हैं जिनमें निम्नलिखित अंक दिए गये हैं:—

१. पहले अंक : उसका उच्चारण तथा उसको लिपि में कैसे लिखा जाय। उदाहरणार्थ । = उआ (एक) चित्रलिपि में उसी के आगे लिखा है।

इसी प्रकार दस कालमों में दस तक के अंक दे दिए गये हैं।

११. इस कालम में बीस के अक तथा उनकी लिपि है।

हेरेटिक के अंक

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १०

फलक संख्या – ३०३ क

१२. इसमें अस्सी के अंक दिए गये हैं।

१३. में सौ का अंक है।

---

1. Griffith : Meroitic Inscriptions, Vol. 1. xix. Memoires of Archaeological Survey of Egypt. (London. 1911), page – 73.

2. Budge, E.A.W. : Easy Lessons in Egyptian Hieroglyphics (1922), P–38.

१४. में एक सहस्र का।
१५. में दस सहस्र का।

१६. १२५४३ को हैरोग्लिफ़्स में किस प्रकार लिखा जाएगा – दिया गया है।
इसके अतिरिक्त हेरेटिक के अक 'फ॰ स० – ३०३ क' पर दिये गये हैं।

पठनीय सामग्री

Aldred, Cyril : Egypt – to the end of the old kingdom (1965).
Bevan, Edwyn : A History of Egypt under the Ptolemaic Dynasty (1927).
Birch, S. : The Egyptian Hieroglyphs (1857).
Breasted, J. H. : A History of Egypt – From the Earliest Times to Persian Conquest (1925).
Breasted, J. S. : Ancient Records of Egypt (1909).
Budge E A. W. : The Literature of Ancient Egyptians (1914).
,, ,, : The Rosetta Stone (1929).
,, ,, : Easy Lessons in Egyptian Hieroglyphics (1922).
Cleater, P. E. : Lost Languages (1957).
Cottrell, Leonard : Life Under The Pharaohs (958).
Diringer, David : The Alphabet – A Key to the History of Mankind (1948).
Doblhofer, Erust : Voices in Stone (1955).
Erichsen, W. : Demotische Lesestuecke – 3 Vols. (1937).
Erman, Adolf : The Literature of Ancient Egyptians (1927).
Gardiner, A. H. : The Nature and Development of the Egyptian Hieroglyphic Writing (Journal of Egyptian Archaeology – 1915).
,, ,, : Egyptian Grammar (1927).
Glan Ville. S. R. K. : The Legacy of Egypt (1957).
Griffith, F. L : A Collection of Hieroglyphs (1898).
,, ,, : The Inscriptions of Meroe (191).
Jansen, Hans : Signs, Symbols and Script (196).
Möller, G. : Hieratische Palaeographie (2nd. Ed.–1936).
Montet, Pierre : Eternal Egypt (1 64). Translated in English by Doreen Weightman.
Murray, M. A. and Pilcher, D. : A Coptic Reading Book for Beginners (1933).

Peet, T. A. : The Antiquity of Egyptian Civilization (Journal of Egyptian Archaeology – 1922).
Petrie, Hilda : Egyptian Hieroglyphs of the First and Second Dynasties (1927).
Petrie, W. M. F. : A History of Egypt – 3 Vols – (1924).
" " : Ancient Egyptians (1925).
" " : The Making of Egypt (1939).
Sayce, A. H. : The Decipherment of Meroitic Hieroglyphs (1911).
Sharpe, S. : Egyptian Hieroglyphs (1861).
Sethe : The Decrees of Memphis and Canopus (1904).
Simonides, C. : Hieroglyphic Letters (1860).
Spiegelberg, W. : Demotische Grammatik (1925).
Sporry, J. T. : The Story of Egypt (1964).
Worrell, W. H. : A Short Account of Copts, (1945).
Young, Thomas : Egyptian Antiquities (1823).

■

अफ़्रीका महाद्वीप

अफ़्रीका के महाद्वीप को पाश्चात्य विद्वानों व पर्यटकों ने अन्ध महाद्वीप (डार्क कान्टीनेन्ट) के नाम से सम्बोधित किया है। परन्तु कितने आश्चर्य की बात है कि इसी अन्धकारमय महाद्वीप में विश्व की एक महान् तथा प्राचीनतम संस्कृति ने जन्म लिया और आधुनिक विद्वानों को चकित करने के लिए उसने अपने प्रमाण भी सुरक्षित रखे। अन्य प्राचीन देशों का इतिहास बहुधा पौराणिकता से आरम्भ होता है। उन देशों के शासकों का कोई प्रामाणिक इतिहास भी नहीं मिलता परन्तु इस प्राचीन देश के इतिहास में किसी प्रकार की पौराणिकता नहीं मिलती लगभग ५५०० वर्ष पूर्व के प्रमाण पुरातत्त्व वेत्ताओं ने अपने अथक परिश्रम द्वारा एकत्रित किये। इस देश को आज मिस्र के नाम से पुकारते हैं।

इस महाद्वीप में दो अन्य देशों के नाम प्राचीन इतिहास में सम्मिलित किये गये हैं और वे कार्थेज तथा बिया हैं जो आज ट्युनीशिया तथा सूडान के नाम से सम्बोधित किये जाते हैं। एक और देश प्राचीनता की परिधि में आता है, वह है इथियोपिया। इसके अतिरिक्त सारे महाद्वीप का इतिहास सत्रहवीं श० से ज्ञात हुआ। इस्लाम धर्म के सम्पर्क में आने से कुछ भागों में दसवीं श० में भी कुछ जागृति व सभ्यता के लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं। उत्तरी अफ़्रीका ने यूरोप व अरेबिया के सम्पर्क में आने से सभ्यता के सुखों तथा दुष्परिणामों का आनन्द अधिक चखा।

कुछ भागों को छोड़कर यहाँ लिपियों का जन्म अठारहवीं श० से पूर्व नहीं हुआ जिनके विषय में आगे दिया गया है।

नुमोदिया

इतिहास : यह प्राचीन देश ट्युनीशिया तथा अल्जीरिया के आधुनिक देशों के भूभाग में स्थित था। इसकी राजधानी किर्ता (Cirta) थी। दूसरे प्युनिक युद्ध (२१८ से २०१ ई० पू० में) में, जो रोम तथा कार्थेज के मध्य हुआ था, नुमीदिया (Numidia) में दो मुख्य जातियाँ निवास करती थीं। एक जाति रोम के साथ तथा दूसरी जाति कार्थेज के साथ होकर प्युनिक युद्ध में सम्मिलित हो गई।

इस देश का राजा मसीनिस्सा (Masinissa) था। उसके मरणोपरांत उसका पुत्र मिकिप्सा (Micipsa) राजसिंहासनारूढ़ हुआ। उसने १४८ से ११८ ई० पू० तक राज्य किया। तदोपरांत इस देश में एक गृह युद्ध हुआ तथा इसके बाद जुगुरथीन (Jugurthine) से, जो एक छोटा पड़ोसी देश था, १११ से १०६ ई पू० तक युद्ध हुआ। तत्पश्चात् यह देश क्षीण गति को प्राप्त होने लगा। ४६ ई० पू० में यह रोमन राज्य का प्रांत बन गया। ४२८ ईसवी में इस देश पर वैन्डलों (Vandal—एक जर्मन बर्बर जाति का नाम था) ने ४२८ ई० में इस पर आक्रमण किया। अंत में यह ट्युनीशिया व अल्जीरिया देशों का एक भाग बन गया और देश का नाम लुप्त हो गया।

लिपि : नुमीदिया के देश में दो प्रकार की लिपियाँ प्रचलित थीं। एक का नाम नुमीदियन तथा दूसरी का नाम बर्बर लिपि था। इन लिपियों के अनेक शिलालेख, जो रोमन राज्य के शासन काल में उत्कीर्ण किये गये।

अफ्रीका – (अठारहवीं श० के अंत में)

फलक संख्या – ३०४
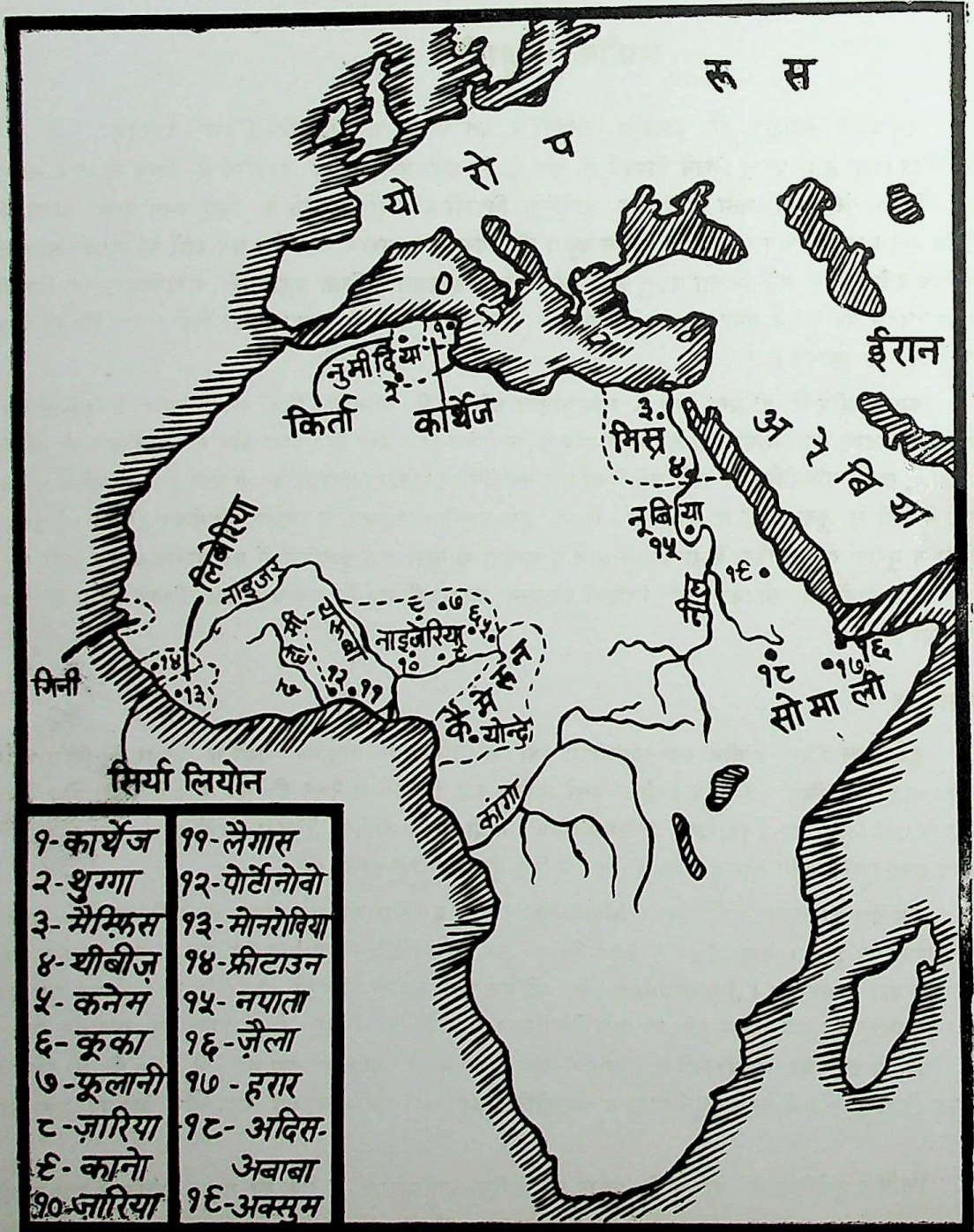
थे आधुनिक मोरीतैनिया व ट्युनीशिया से प्राप्त हुये। यह लिपि संसार के विद्वानों को १६३१ में ज्ञात हुई जब एक द्विभाषिक शिलालेख, जिस पर नुमीदियन व प्युनिक लिपियाँ अंकित थीं, थुग्गा (**Thugga**)–आधुनिक दौग्गा (**Dougga**)[1] से प्राप्त हुआ। थुग्गा कार्थेज व तेबेस्सा के मध्य प्युनिक काल[2] में एक प्राचीन मुख्य नगर था। यहाँ जुपिटर, जुनो व मिनर्वा देवी व देवताओं के बड़े सुन्दर व भव्य मन्दिरों को मार्कस औरेलियस (**Marcus Aurelius**), जो रोमन राज्य का ईसा की दूसरी श० में सह-शासक था, ने निर्माण करवाये थे। वे मन्दिर आज भी पर्यटकों को आकर्षित करते हैं।

अभी तक इस लिपि के लगभग एक सहस्र अभिलेख प्राप्त हो चुके हैं जिनमें से १५ अभिलेखों पर नुमीदियन व लैटिन लिपियां तथा ६ पर नुमीदियन व प्युनिक लिपियाँ उत्कीर्ण हैं। इनके गूढ़ाक्षरों के रहस्योद्घाटन का प्रयास १८४३ में दि साल्सी (**de Saulcy**)[3] द्वारा थुग्गा की द्विभाषिक[4] लिपि के अभिलेख से आरम्भ किया गया। तत्पश्चात् हलेवी (**Halevy**) ने लगभग २५० अभिलेखों का भाषांतरण तथा अनुवाद किया। उसके बाद अन्य विद्वानों ने इनको पढ़ा जिसमें मुख्य माइनहाफ़ (**Meinhof**) और मर्सियर (**Mercier**) के नाम उल्लेखनीय हैं। माइनहाफ़ के अनुसार इनमें स्वर वर्ण नहीं होते तथा ऊपर से नीचे व दाएँ से बाएँ लिखी जाती थीं।

नुमीदियन लिपि का एक आंशिक पाठ : यह पाठ थुग्गा से प्राप्त एक द्विभाषिक — नुमीदियन + प्युनिक — अभिलेख[5] के एक भाग[6] से लिया गया है। इसको दाएँ से बाएँ पढ़ा जायेगा। ('उ' की ध्वनि 'व' है) लिप्यन्तरण :—' **खकन तबग्ग् बंजफ़श मसनसन गलदत् उ – गज्ज गलदत् उ – जल्लसन शफ़त सबनदग् सगदत् सजसग् गलद मकूसन शफ़त गलदत् उ – फ़शन गलदत् मोसनगशनक उ – बनज उ – शनक दशफ़त उ – म [ग्न]**" 'फ० स०–३०६' अर्थ: **"मिकिप्सा के राज्य काल के दसवें वर्ष में थुग्गा के निवासियों ने नृप मसीनिस्सा, आत्मज नृप गज, आत्मज सुफेतन ज़िल्लसन, के लिये एक मन्दिर का निर्माण करवाया। नृप फशन आत्मज शनक, आत्मज बंज, आत्मज नगम, आत्मज तंकू, का पुत्र शफ़त (था), जो सौ का कमाण्डर था"।**[7]

बर्बर लिपि का एक आंशिक पाठ : यह आंशिक पाठ बर्बर लिपि के एक अभिलेख[8] से लिया गया है जिसका अनुवाद हलेवी ने किया है। यह बर्बर लोग एक यायावरीय जाति के थे, जिनको तुआरेग कहते थे। उनकी भाषा का नाम 'तमाशेक' था, जिसको बर्बर भाषा में 'तिफ़ीनार' भी कहते थे। लिप्यन्तरण :—

"बिंक रिन ग्रु हस्करु करुतनहस हसनक क़रहलन न नसबी करु रतकल दूर कनहरत" अर्थ :

1. इस नगर को लेखक ने फरवरी १९७५ में स्वयं जाकर देखा है। वहाँ रोम राज्य की भव्यता अब भी दर्शनीय है।
2. यहाँ फ़िनाशिया की संस्कृति ७०० से १०० ई० पू० तक समृद्धि काल में रही।
3. Journal Asiatic (1849)–P. 248.
4. Meinhof. C. : 'Der libysche Text der Massinissa—Inschrift von Thugga' in Orientalist Literary Zeitung (1926), P 744
5. Chalbot, J. B. : 'Inscriptions punicalibyques'—Journal Asiatic (March-April 1918), P. 259, 301.
6. केवल प्युनिक भाग की दो पंक्तियों तथा नुमिदियन भाग की तीन पंक्तियों का अनुवाद दिया गया है।
7. अंग्रेजी के अनुवाद से किया गया है :—"This temple the citizens of Thugga built for King Masinissa, Son of King Gaja, son of the Suffetan Z(i)llasan, the tenth year of the reign of Micipsa, in the year of King Shft, Son of King fshn. The Commander of the Hundred (were) Shnk, Son of the Bnj and Shft, Son of Ngm, Son of Tnkw"
8. Hanoteau, E. : Essai de la langue Tamachek (Paris., 1860) p.-132

नुमीदियन लिपि

अ (अलिफ़)	ब	ग	द
ह	उ	ज	ज़
श	ख़	त	ईज़
क	ल	म	न
स	श	ग़	प-फ़
क़	र	श	त
	त़		

फलक संख्या – ३०५

नुमीदियन लिपि का आंशिक पाठ

नसनसम (?) श फ़ जनब गगबत नकख़

त़ दलग जजगउ त़ दलग

ग़ द नस बस त फ़ श नस ललज उ

नसउकम दलग ग़ सजस त़ दगस

ग़ नसउम त़ दलग नशफ़उ त़ दलग त फ़ श

म उ त फ़ श द कनश उ जनब उ कनश

फलक संख्या – ३०५ क

बर्बर लिपि

अ (अलिफ़)	ब	ग़	द
ह	उ	ज़	स़
श़	ख़	त	ईज़
क	ल	म	न
स	फ-फ़	क़	ग
र	श	त	बत
रत सत	गत लत	मत नत	शत नक

फलक संख्या – ३०६

बर्बर लिपि का आंशिक पाठ

उ र क स ह उ र ग़ न इ र क इ ब

न न ल ह र क़ क न स ह स ह न त उ र क

उ द ल क त र उ र क इ ब स न

यह आंशिक पाठ दाएँ से बाएँ पढ़ा जाएगा

त र ह न क र

फलक संख्या ३०७

तुर्देतेनियन लिपि के कुछ वर्ण

फलक संख्या – ३०७ क

अर्थ : ' एक कुत्ते को एक हड्डी मिल गई । वह उसका चर्वण करने लगा । हड्डी ने उससे कहा 'मैं बहुत कष्टकारक हूँ ।' कुत्ते ने उससे कहा 'चिन्ता मत कर, मुझे अन्य कोई कार्य करने को नहीं है' ।''

इस अर्थ का अनुवाद एक अंग्रेज़ी[1] के पाठ से लिया गया है ।

तुर्देतेनियन लिपि : स्पेन देश के दक्षिणी भू – भागको तुर्देतेनिया कहते थे । उसकी राजधानी तारतेसो[2] थी । लगभग ५०० ई० पू० में यह नष्ट हो गई । इसकी लिपि २०० ई० पू० में कुछ सिक्कों पर उत्कीर्ण दृष्टिगोचर हुई । यह लिपि नुमीदियन लिपि से कुछ समानता रखती है । इसके कुछ वर्ण जो सिक्कों द्वारा प्राप्त हो सके 'फ० सं० – ३०७ क' पर दिये गये हैं । इसका एक भी अभिलेख प्राप्त नहीं हो सका ।

सर्वप्रथम ज़ोबे दि ज़ंग्रोनिज़ (Zobe de Zangroniz) ने, जिसने इसको प्रकाशित भी किया, रहस्योद्घाटन करने का प्रयत्न किया, जो आंशिक अशुद्ध था तत्पश्चात् माइनहोफ़ (Meinhof) ने किया और इसको लीबियन बताया ।

कैमेरून

इतिहास : १४८२ में सर्वप्रथम पुर्तगाली यहाँ पहुँचे । सोलहवीं श० में फ्रेंच, डच्छ तथा अंग्रेज़ भी पहुँचे । १८६८ में जर्मन व्यापारी भी यहाँ आये । १४ जुलाई १८८४ को डा० नाचिगल (Dr. Nachtigal) ने कैमेरून को जर्मन संरक्षण में आने की घोषणा कर दी । १९०५ में इस देश का अन्तरांश जर्मनी के अधीन हो गया। १९१२ में रेलगाड़ी का चलना आरम्भ हो गया ।

१९१४ के महायुद्ध में फ्रेंच और ब्रिटिश सैनिक इस जर्मन उपनिवेश में पदार्पण कर गये । दौला को अधीन कर लिया और १९१६ में योन्दे को भी ले लिया । तत्पश्चात् देश को फ्रेंच व ब्रिटिश के मध्य विभाजित कर लिया गया । महायुद्ध समाप्त होने पर जर्मनी निवासियों को अपनी निजी भूमि फिर से खरीदने की अनुमति मिल गई परन्तु दूसरे महायुद्ध के प्रथम चरणों में अर्थात् १९३९ में पुनः छीन ली गई ।

१ जनवरी १९६० को यह देश स्वतन्त्र हो गया ।

बामुन लिपि : कैमेरून के देश के एक भूभाग बामुन[3] के राजा यनजोया (NJOYA) ने १९०३ को इस लिपि का आविष्कार बामुन जाति के लोगों की बामुन भाषा के लिये किया । सर्वप्रथम यह लिपि चित्रों द्वारा आरम्भ हुई । तदनन्तर यह वर्णात्मक बनाई गई । दुगास्ट (Dugast) के अनुसार इसमें ६ प्रकार का विकास पाया जाता है । सर्वप्रथम १९०३ में इसमें केवल ४५० चिह्न थे जो सरलीकरण व्यवस्था के अन्तर्गत कम होकर १९११ में केवल ८० रह गये ।

जब यनजोया की मृत्यु १९३२ में हो गई तो इसका प्रयोग भी कम होते-होते लुप्त सा हो गया ।

इसकी विकसित पद्धति[4] 'फ० सं०—३०८' पर दी गई है ।

---

1. Jensen, H. : Syn, Sympol and Scribt—(1968)—p. 155
   "A dog found a bone, he gnawed it. The bone said to him, 'I am very hard'. Said the dog to it, 'Don't worry, I have nothing else to do".
2. सम्भवतः यह तारतेसो वही हो, जिनके विषय में प्राचीन बाइबिल में तारशिश लिखा गया है ।
3. 'बामुन' को 'बामुम' भी सम्बोधित करते हैं ।
4. Friedrich, J. : Alaska und Bamum Schrift, Ztschr d. dtsch, Morgen 1. Ges. 104 (i) (1954), P—317.

बामुनन लिपि

शब्द	अर्थ	१९०७	१९०९	१९११	१९१६	१९१८	ध्वनि	
							नाम	ध्वनि
म्फ़ोन	राजा						फ़ो	फ़
पवो	शस्त्र						प्वो	प
णा	यहां						णा	ण
मी	मुख						मी	म
ना	पकाना						ना	न
कू	दृढ़						कू	क
ला	रात्रि विश्राम						ला	ल
यू	भोजन						यू	य
री	उठाना						री	र

फलक संख्या – ३०८

सोमालीलैण्ड

इतिहास : इसका प्राचीन नाम सोमालिस (Somalis) था। यहाँ के निवासी अपना सम्बन्ध हेमेटिक वंश (हज़रत नूह – Noah – के एक पुत्र हाम) से मानते हैं। इनमें से एक कबीला अपने को शरीफ़ ईशाक़ बिन अहमद के वंशज से सम्बन्धित मानता है। शरीफ़ ईशाक़ अपने चालीस साथियों के साथ दक्षिण अरेबिया के एक प्राचीन देश हैद्रामौत से स्थानान्तरण करके तेरहवीं श० में सोमालिस आया था। सातवीं श० में यमन, जो दक्षिण-पश्चिमी अरेबिया में स्थित है, के कुरेश जाति के लोगों ने यहाँ एक राज्य स्थापित किया था जिसकी राजधानी ज़ैला थी। तेरहवीं श० में यह राज्य एक साम्राज्य में परिवर्तित हो गया क्योंकि इस राज्य ने अपने पड़ोस के छोटे छोटे अफ़्रीकी राज्यों को अपने अधीन कर लिया था। सोलहवीं श० में इसकी राजधानी हरार हो गई। तब तक ज़ैला यमन के अधीन हो गया। बाद में यह तुर्की के अधीन हो गया।

१८४० में ब्रिटिश सरकार ने तजुरा के सुलतान से तथा ज़ैला के प्रांतपति से व्यापारिक संधियाँ कर लीं। १८७५ में मिस्र के शासक इस्माइल पाशा ने तजूरा, बरबेरा, बुलहर और हरार को अपने अधीन कर लिया। जब १८८४ में मिस्री सूडान ने विद्रोह कर दिया, ब्रिटिश सरकार ने ज़ैला, बरबेरा तथा बुलहर को अपने अधीन कर लिया। १८८६ में कई सोमाली सरदारों ने ब्रिटिश संरक्षण के लिए संधियाँ कर लीं।

१८८८ में ब्रिटिश व फ्रांस ने एक संधि के अन्तर्गत सोमालिस को विभाजित कर लिया। १८८९ में इस देश का कुछ भाग इटली ने अपने अधीन कर लिया था। १८९६ में ब्रिटिश का भाग सोमालीलैण्ड तथा फ़्रांस का भाग फ्रेंच सोमालीलैण्ड कहलाने लगा। बाद में ब्रिटिश वाले भाग का नाम सोमाली हो गया और फ़्रांस वाले भाग का नाम अफ़ार्स और ईसास हो गया। द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् इटली वाला भाग भी ब्रिटिश के पास आ गया जो १९५० में इटली को लौटा दिया गया। राष्ट्रीय जागृति के कारण इन दोनों भागों को मिला दिया गया तत्पश्चात् २६ जून १९६० को स्वतन्त्र हो गया। फ़्रांस वाला भाग अब भी फ़्रांस का एक उपनिवेश है और अब इसका नाम जिबुती (Djibuti) हो गया है। यह भी २७ जून १९७६ को स्वतन्त्र हो गया।

सोमाली लिपि : सोमाली कबीले के एक सदस्य उस्मान युसुफ़ ने, जो सोमाली के सुलतान युसुफ़ अली का एक पुत्र था, एक २२ व्यंजनों तथा पाँच स्वर – वर्णों की एक वर्णमाला का आविष्कार १८२५ में किया। जब स्वर वर्णों के उच्चारण को दीर्घ करना होता था तो उसमें एक दूसरा चिह्न, जो इसके लिये निर्धारित किया गया था, लगा दिया जाता था। इसकी दिशा इटेलियन लिपि के कारण बाएँ से दाएँ रखी गई थी। परन्तु जब अरबी लिपि का प्रयोग होने लगा तब यह लिपि बीसवीं श० के आरम्भ में लोप हो गई।

सोमाली लिपि के वर्ण तथा कुछ शब्द 'फ० सं० – ३०९, ३१०' पर दिये गये हैं जो एक पुस्तक[1] से लिये गये हैं।

लिबेरिया

इतिहास : सर्वप्रथम १४६१ में एक पुर्तगाली पेद्रो दि किन्तरा (Pedro de Cintra) ने लिबेरिया की भूमि पर अपने चरण रखे। उसी ने केप माउन्ट तथा केप मेसूरेडो नाम रखे। सत्रहवीं श० में जो व्यापार पुर्तगालियों के हाथ में था इंगलिश, फ्रेंच व डच्छ लोगों के हाथ में चला गया। अठारहवीं श० में दासों का व्यापार होता रहा।

---

1. Bauer, H. : Ursprung des Alphabets (1937), p – 32.

सोमाली लिपि

अ	ब	त	ज	ह	ख़
द	र	स	श	ड	ग
ऑ	फ	क़	क	ल	म
न	व	ह	य	ई	उ
	ओ	आ	ए		

फलक संख्या – ३०९

सोमाली लिपि के कुछ संयुक्त अक्षर व शब्द

ba = ब   bā = बा   बि   बी   बे

बेए   बेए   बो   बू   बूऊ

द अल   ड ए ए र   ल ओ ओ   ग ड   म अ   ग ड

ओ र स आ द ओ   श ई ऑ   य ए   ल ओ ओ

ग उ   म आ   द ए ग ओ

इस के अर्थ

दूर देश में वे हम से विवाह नहीं करेंगे। विदेशों को मत जाओ।

फलक संख्या – ३१०

१८२१ में केप मेसूरेडो, अमेरिकन कालोनाइज़ेशन सोसायटी (American Colonization Society) ने उन दास नीग्रो लोगों का एक स्थायी स्थान बनाने के लिये निर्वाचित किया जो अमरीका से प्रथम बार स्वतंत्र करके भेजे गये थे। तब से अमरीको – दास – नीग्रो यहाँ बसने के लिये निरन्तर आते रहे। १८२५ तक लगभग बीस हज़ार अपनी मातृभूमि अफ़्रीका आ गये जिसमें से लगभग ५० प्रतिशत मॅनरोविया में बस गये।

लिबेरिया को स्थापित करनेवाला प्रथम श्वेत अमरीका निवासी यहूदी अशमुन (Jehudi Ashmun) था जो अमरीका द्वारा दासों को बसाने के कार्य के लिये मेसूरेडो जो अब मॅनरोविया कहलाने लगा था, भेजा गया था। राबर्ट गुर्ले (Robert Gurley) ने इस स्थान का नाम लिबेरिया (Liberia) रखा। अन्तिम अमरीकी गवर्नर का १८४१ में स्वर्गवास हो गया। तत्पश्चात् एक नीग्रो गवर्नर नियुक्त हुआ। २६ जुलाई १८४७ को एक गणतंत्र राज्य हो गया और पूर्ण स्वतंत्र हो गया।

वई लिपि : इस लिपि का प्रयोग वई-नीग्रो के जाति वाले करते हैं। इनकी भाषा मेण्डे (**Mende**) है। इनकी संख्या लगभग ५० सहस्र है। यह जाति लिबेरिया, सीरे-लियोन तथा अपर-गिनी के भूभागों में निवास करती है।

वई लिपि का ज्ञान १८४६ में यूरोप निवासियों को एक अमरीकी इंजीनियर एफ़० ई० फ़ोर्बेस् (F. E. Forbes) द्वारा हुआ। यह इंजीनियर स्वयं अपने कार्यवश अफ़्रीका गया था। इसने अपने अफ़्रीका के अनुभवों को प्रकाशित कराने के साथ वई लिपि को भी प्रकाशित किया। जब इस लिपि का आभास एक अफ़्रीकी – भाषा – शास्त्री एफ़० डबल्यु० कोयल्लो (F. W. Koello) को मिला, वह तुरन्त वई लिपि के प्रयोगकर्त्ताओं के स्थान पर अफ़्रीका पहुँचा और उसके जन्म व विकास पर शोध करने लगा।
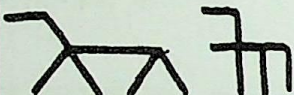
वहाँ पहुँचकर उसको ज्ञात हुआ कि इस लिपि का जन्मदाता एक मनुष्य मोमरु दाउलू बुकेरे (Momru Doalu Bukere) था। क्लिंगेनहेबेन ने इसका उच्चारण मोमोलू दुवालू बुकेले (Momolu Duwalu Bukele) किया। कहा जाता है कि उसको एक स्वप्न में इस लिपि का ज्ञान हुआ था। तत्पश्चात् एक फ्रेंच अफ़्रीका-विशेषज्ञ देलाफ़ोस्से (Delafosse) ने इस लिपि पर अपना शोध किया। यह फ्रेंच का विशेषज्ञ बुकेरे के विषय में कुछ नहीं जानता था। इसके विचार से कुछ मूल निवासियों ने लगभग २०० वर्ष पूर्व इसका आविष्कार किया।

क्लिगेनहेबेन के अनुसार बुकेरे की मृत्यु १८५० में हुई थी। उसने तात्कालिक परिस्थितियों के अनुसार लगभग १६० चिह्न निर्धारित किये और एक्रोफ़ोनी पद्धति से कुछ वर्णों का निर्माण किया। 'फ० सं० – ३११' पर उदाहरणार्थ 'ब' की ध्वनि 'ब' शब्द से की, जो बकरे से लिया गया इसी प्रकार निम्नलिखित चिह्नों से वर्ण बने। इस लिपि की वर्णमाला[1] क्लिगेनहेबेन ने प्रस्तुत की है जो ३६ वर्णों की दी गई है और लगभग प्रत्येक वर्ण के साथ ६ स्वरों की ध्वनि जोड़कर एक वर्णावली (Syllabary) प्रस्तुत की गई है। इस लिपि पर भी भारत का प्रभाव पड़ा है (फ० सं० – ३१२ से ३१२ ग)।

सियरें लियोन

इतिहास : 'लियोन' शब्द के अर्थ हैं 'शेर' (Lion) अर्थात शेर के जैसा देश। यहाँ एक पर्वत है जिसका आकार शेर से मिलता है (हो सकता है अधिक शेर जंगल में रहते हैं इस कारण इसका नाम पड़ा)। यहाँ के मूल निवासी इसको रोमारंग (Romarang) के नाम से सम्बोधित करते हैं।

---

1. Klingenheben, A. : The Vai Script, Africa – VI (1933). p – 158.

एक्रोफ़ोनी पद्धति से चित्रों द्वारा वर्णों का विकास

नाम	अर्थ	चित्र	वर्ण	ध्वनि
सोवो	घोड़ा			सो
फ़ू	फूल			फ़ू
ता	अग्नि			ता
कून	सिर			कू
कोनं	वृक्ष का तना व शाखें		E	को
मी	उंगली - पहँ है		||||	मी

फलक संख्या – ३११

वई लिपि

ध्वनि	अ	ए	इ	ई	ओ	उ	ऊ
अ							
ब							
ब्ब							
अं							
द							
ड							
फ							
ग							
गवं							

फलक संख्या – ३१२

वई लिपि

ध्वनि	अ	ए	इ	ई	ओ	उ	ऊ
ह							
हं							
जं							
क							
कप्							
कपं							
ल							
म							
म्ब							

फलक संख्या – ३१२ क

वई लिपि

ध्वनि	अ	ए	इ	ई	ओ	उ	ऊ
मंब							
न							
ड							
ण							
णंज							
नंग							
नं							
प							
र							

फलक संख्या – ३१२ ख

यहाँ सर्वप्रथम १४६२ में एक पुर्तगाली पेद्रो आया था। तत्पश्चात् यहाँ ब्रिटिश व्यापारी आये तथा दास-व्यापार आरम्भ कर दिया। १७८६ में हेनरी स्मिथमैन (Henry Smeathman) ने, जो यहाँ चार वर्ष रह चुका था, एक योजना बनाई, जिसके अन्तर्गत उसने सेना तथा नौसेना के भूतपूर्व सैनिकों को (जो नीग्रो व गोरे थे) यहाँ बसाने का विचार किया। १७८७ में ४०० नीग्रो तथा ६० योरोपियन बसाये गये। १७८८ में यहाँ के मूल निवासी शासक नेम्बाना ने समुद्री किनारे की कुछ भूमि बेच दी। १७९१ में ऐलेक्ज़ेण्डर फ़ैल्कनब्रिज (Alexander Falconbridge) ने एक नई बस्ती बसाई जिसमें लगभग ११०० नीग्रो दास थे। १७९४ में इस नगर का नाम फ़्री टाउन (Free Town) पड़ गया। १८०७ में इस नगर को ब्रिटिश शासक को सौंप दिया गया। दास – व्यापार अवैध कर दिया गया।

जब फ़्रांस भी उस भूभाग को अपने अधीन करने पहुँचा तब ब्रिटिश सरकार ने एक नीग्रो पदाधिकारी एडवर्ड डब्ल्यु० ब्लीडेन (Edward W. Blyden) को नियुक्त किया। तब उसने फ़लाबा व तिम्बो का निरीक्षण किया। १८७३ में यह दोनों मुस्लिम देश विभाजित कर दिये गये। फ़लाबा ब्रिटिश के अधीन हो गया और तिम्बो फ्रांस के।

२३ दिसम्बर १८९३ को फ़्रांस व ब्रिटिश की सेनाओं में मुठभेड़ हो गई। १८९५ में एक संधि – पत्र पर दोनों सेनाओं के सेनापतियों ने हस्ताक्षर कर दिये। इस संधि के अन्तर्गत जो भूमि भाग ब्रिटिश के अधीन हो गया था १८९६ में ब्रिटिश की संरक्षणता में आ गया।

कुछ समय पश्चात् एक तिमने जाति के मुखिया बाई बुरेह (Bai Burch) ने ब्रिटिश के विरुद्ध एक विद्रोह कर दिया। १८९८ में मेण्डी जाति के मुखिया ने विद्रोह कर दिया और कई ईसाई धर्म – प्रचारकों तथा ब्रिटिश सरकार के कई पदाधिकारियों का वध कर दिया।

तदनन्तर एक राष्ट्रीय राजनीति की जागृति आरम्भ होने लगी। स्वतंत्रता के लिये संघर्ष होने लगा फलस्वरूप २१ अप्रैल १९६१ को देश स्वतंत्र हो गया।

मेण्डे लिपि : सियरें लियोन के निवासी नीग्रो मेण्डे जाति से सम्बन्धित हैं और वई नीग्रो जाति के सम्बन्धी हैं। यह अपनी लिपि का ही प्रयोग करते हैं जो लगभग एक शताब्दी पूर्व बनी। इसके विषय में एल्बर्ल एलबर (Elberl Elber) ने पर्याप्त प्रकाश डाला है। १९३५ में सियरें लियोन देश के कोने कोने में उसने पर्यटन किया।

इसका आविष्कार एक नीग्रो दर्जी किसिमी कमाला ने वमा ग्राम – ज़िला बारी – में किया था। इसकी वर्णावली[1] लगभग चार माह में तैयार की गई थी और वई लिपि का कुछ अंशों में अनुकरण, किया गया था। इस वर्णावली के कुछ चिह्न 'फ० सं०—३१३' पर दिये गये हैं। इसमें १९० चिह्नों का प्रयोग किया जाता है।

नाइजेरिया

इतिहास : ग्यारहवीं श० में इस देश में एक कनेम नाम का साम्राज्य स्थापित हुआ था चौदहवीं श० में क्षीण होकर एक राज्य के रूप में रह गया। तेरहवीं श० में यहाँ के लोगों ने इस्लाम धर्म अपना लिया। इस क्षीण राज्य का नाम परिवर्तित होकर पोर्नू हो गया। तदनन्तर कानो, जारिया, दौरा, गोबिर और कतसीना के राज्य बन गये। इनमें आपसी युद्ध होते रहते थे। प्रत्येक राज्य अपनी सत्ता स्थापित करने में संलग्न था।

---

1. Friedrich, J. : 'Zu einigen Schrifterfindungen der neusten Zeit.' Z. d. d. Ges. 92 (1938) p-192.

मेण्डे लिपि

की	का	कू	वी	बी	ई	अ
उ	सी	सा	सू	ही	हा	हू
वू	म्बी	म्बा	म्बू	ग्बी	ग्बू	ली
क्पा	न्डी	न्डा	हां	हीं	क्पी	ईं
सूं	म्बीं	ओ	क्पो	बे	ए	बीं

फलक संख्या - ३१३

अन्त में कनेम राज्य के अस्किया नाम के राजा ने सबको परास्त कर एक साम्राज्य स्थापित कर लिया। जब कनेम राज्य क्षीण होने लगा तो हौसा की कई जातियों के परास्त शासक स्वतन्त्र होने लगे। वे पुनः आपस में युद्ध करने लगे। इनमें से दो राज्य – बोर्नू तथा केब्बी पुनः शक्तिशाली हो गये।

यहाँ की जातियों में एक पर्यटक जाति फुलानी थी जो घूमा करती थी परन्तु अब वे लोग नगरों में बस गये थे। उन्हीं में से एक उसुमान दन फ़ोदियो (Usuman Dan Fodio) एक शेख था जो हज भी कर आया था। जब बहुत से फुलानी लोग दास बना लिये गये तो १८०२ में इस शेख ने आपत्ति की जिसके कारण गोबिर के राजा ने उसको पकड़ने की आज्ञा दी। उसुमान को फुलानी तथा हौसा के मुसलमानों से सहयोग मिला और उसने गोबिर की सेना को परास्त कर दिया। तत्पश्चात् उसने काफ़िरों (मूर्ति पूजक) पर जिहाद (धार्मिक युद्ध) किया और बहुत से हौसा के भूभाग अपने अधीन कर लिये।

१८०८ में बोर्नू का राज्य स्वतंत्र हो गया और फुलानी के कई छोटे – छोटे राज्यों के शासक बना दिये गये। तत्पश्चात् फुलानी साम्राज्य की स्थापना हो गई। उसुमान के मरणोपरान्त उसका पुत्र बेल्लो सोकोतो सुलतान बना और सब फुलानी राज्यों ने उसकी अधीनता स्वीकार कर ली। १८०८ में जब बोर्नू की सेना की पराजय हो गई तो उसका शासक माई भाग गया। उसके साथ उसकी एक छोटी सेना भी थी, जिसका सेनापति लैमिनो (मोहम्मद अल अमीन अल कनेमी) था। लैमिनो ने फिर एक सेना एकत्रित की और उसने फुलानी राज्य का अन्त कर दिया और बोर्नू राज्य के बाहर निकाल दिया। माई फिर शासक बन गया परन्तु नाममात्र, सारी राजसत्ता लैमिनो के हाथ में रही। १८३५ में लैमिनो की मृत्यु हो गई। माई ने पुनः अपनी सत्ता बढ़ाई परन्तु लैमिनो के पुत्र उमर ने उसका वध कर दिया और स्वयं बोर्नू का शासक बन गया।

१८९३ में रबाब ज़ुबैर ने बोर्नू पर आक्रमण कर दिया और १९०० में वह स्वयं शासक बन गया। यही रबाब फ्रेंच सेना द्वारा मार डाला गया।

बोर्नू में कई जातियाँ निवास करती थीं। उनमें से प्रमुख यरूबा तथा ईबो की जातियाँ थीं। यरूबा जाति के लोग सम्भवतः मिस्र की ओर से आये थे। सबसे पहले वे ईफ़ो में बस गये। ईफ़ो इस यरूबा जाति का मुख्य धार्मिक स्थान हो गया। पहले तो ओयो का अलाफ़िन पूरी यरूबा जाति का शासक था परन्तु १८१० के पश्चात् राज्य छोटी छोटी जागीरों में विभाजित हो गया और प्रत्येक जागीर का सरदार बहुत अंशों में स्वतंत्र होने लगा। अलाफ़िन की केन्द्रीय सत्ता नाममात्र को रह गई। ओयो (Oyo) का देश क्षीण होने लगा तथा दाहोमी की ओर से आक्रमण भी होने लगे। उत्तरी भाग पुनः फुलानी जाति के अधीन आ गया। छोटी छोटी जातियाँ – ओयो, एग्बा, ईफ़े, इजेबू आदि आपस में पुनः लड़ने लगे। पकड़े हुये बन्दी दासों के रूप में बेचे जाने लगे और दासों का व्यापार बढ़ने लगा। इस दास – व्यापार का मुख्य केन्द्र लैगास था जो बाद में नाइजेरिया की राजधानी बना।

अठारहवीं श० में अनेक यूरोप निवासी आये। १८४९ में लैगास के राजा कोसोके के दरबार में ब्रिटिश राजदूत नियुक्त हो गया। १८८६ में रोआयेल नाइजर कम्पनी (Royal Niger Co.) की स्थापना हुई जिसको समुद्री किनारे के भूभाग का प्रबन्धकर्त्ता बना दिया गया। १८९७ में फुलानी राज्य के शासक इलोरिन नूफ़े को कम्पनी ने अपने अधीन करने का प्रयास किया जिसके फलस्वरूप कम्पनी के एक नगर पर फुलानी सरकार ने आक्रमण कर दिया तथा कई अंग्रेज़ों को बन्दी बनाकर ले गये और उनको मारकर खा डाला।

१ जनवरी १९०० को कम्पनी ने अपना पूरा अधिकार कर लिया। १ मई १९०६ को नाइजेरिया ब्रिटिश का एक उपनिवेश बन गया और लैगास उसकी राजधानी बन गई। द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् एक राष्ट्रीय विद्रोह

यनसिब्दी लिपि
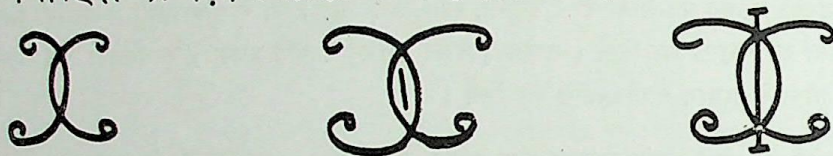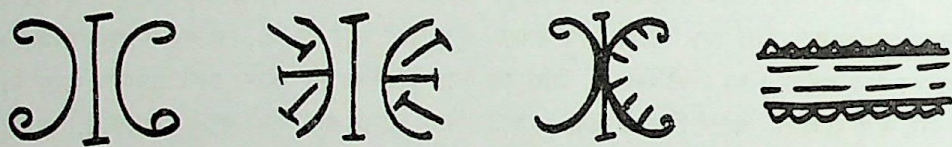
फलक संख्या – ३१४
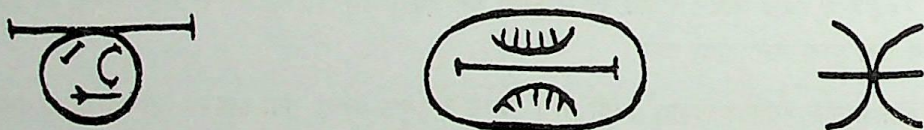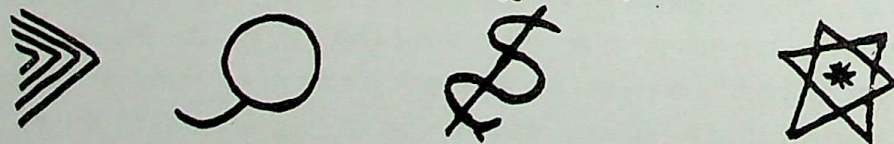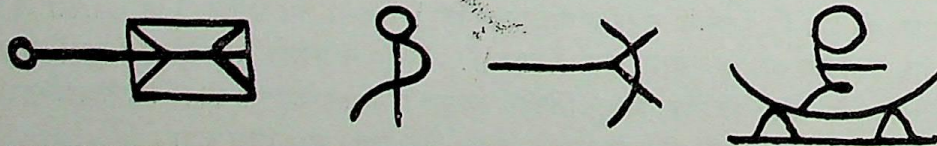
आरम्भ हो गया और यह देश १ अक्टूबर १९६० को पूर्ण स्वतंत्र हो गया। तीन वर्ष के पश्चात् एक गणतंत्र राज्य स्थापित हो गया।

यनसिब्दी लिपि : सिबिदी (Sibidi) के अर्थ प्रतिनिधि के हैं। यनसिब्दी लिपि का ज्ञान १९०५ में मैक्सवेल (Maxwell) तथा मैक ग्रेगर (Mc – Gregor)[1] द्वारा योरोप निवासियों को मिला। यह लिपि ईबो व इजिक जातियों में प्रचलित थी। इसका प्रयोग एक गुप्त समाज द्वारा जादू – मंतर झाड़ – फूंक आदि के लिये किया जाता था। यह लिपि संकेतात्मक थी जिसके लिये कुछ चिह्न निर्धारित कर लिये जाते थे। उनमें से कुछ चिह्न 'फ० सं० – ३१४' पर दिये गये हैं। इसका आविष्कार किसने किया तथा कब किया निश्चयपूर्वक ज्ञात नहीं।

अबीसीनिया

इतिहास : लगभग १२०० ई० पू० सेमिटिक जाति के लोगों ने दक्षिण अरेबिया के प्राचीन देश सबा को त्याग कर अफ़्रीका में अपना घर बसाया और तिगरे (Tigre) में अक्सुम (Aksum) के नाम से राज्य की स्थापना भी की। कुछ हबासत से भी आये थे। इस कारण अपने देश का नाम हबाशित रखा जिसका यूरोप के निवासियों ने बिगाड़ कर अबेसी तथा अबीसीनिया (Abyssinia) कर दिया।

इस देश के राज्य ने ईसा की प्रथम शताब्दी में बहुत उन्नति की और अपनी एक लिपि भी बनाई।

लिपि : इस लिपि का नाम प्राचीन अबीसीनियन लिपि रखा गया। यह दक्षिण सेमिटिक वंश की एक शाखा है। इसमें २३ वर्ण थे। इसको लिटमन (Littmann) ने पढ़ा था। इसका जन्म लगभग ई० पू० की छठी शताब्दी में हुआ था। इसकी दिशा दाएँ से बाएँ है। 'फ० सं० – ३१५' पर इसकी वर्णमाला दी गई है। कुछ वर्णों के चिह्न दो – दो भी हैं पर उनमें थोड़ी भिन्नता है।

इथियोपिया

इतिहास : हेरोडोटस ने इथियोपियन्स को दो भागों में विभाजित किया। एक तो खड़े बालों वाले जो पूर्व की ओर निवास करते थे तथा दूसरे ऊनी बालों वाले जो पश्चिम की ओर निवास करते थे। अठारहवें वंश के शासन काल (१५७० से १३०४ ई० पू० तक) में इथियोपिया (Ethiopia) मिस्र का प्रांत बन गया था। वहाँ का प्रांत पति, जो इथियोपिया का ही शासक था, किश (कुश भी कहते थे जो नूबिया का दूसरा नाम था, नूबिया इथियोपिया का प्राचीन नाम था) का राजकुमार था, जो मिस्र के शासकों को नीग्रो – दास व सैनिक, बैल, हाथीदाँत तथा पशुओं की खालें कर के रूप में भेंट किया करता था।

ईसा पूर्व की ग्यारहवीं श० में नूबिया (इथियोपिया) का राज्य पुनः स्वतन्त्र हो गया। आठवीं श० में एक शासक पियांखी ने मिस्र को परास्त कर मिस्र का शासक बन कर पच्चीसवें वंश की स्थापना की। इस वंश ने ७५१ से ६६३ ई० पू० तक मिस्र पर शासन किया। परन्तु असीरिया के एक शक्तिशाली शासक अशुरबनीपाल के आक्रमण के कारण, जो ७७१ में हुआ था, इस वंश का अन्त हो गया।

इथियोपिया ने मिस्र पर पुनः कभी आक्रमण नहीं किया परन्तु उसको सुडान की जंगली जातियों से युद्ध करना पड़ता था। २४ ई० पू० में रोमन सैनिकों ने इस पर आक्रमण किया तथा उसकी राजधानी नपाता को नष्ट कर दिया।

---

1. Mc Gregor : 'Some Notes on Nsibdi' – Journal of Royal Anthropological Institute – No. 39. (1909), p – 209.

प्राचीन अबीसीनिया की लिपि

अ ब ज द ह

व ह य क ल म न

आ(ऐन) फ़ स क़ र श

त स ख़ ज़ प

फलक संख्या – ३१५

इथियोपिया – (उन्नीसवीं श०)
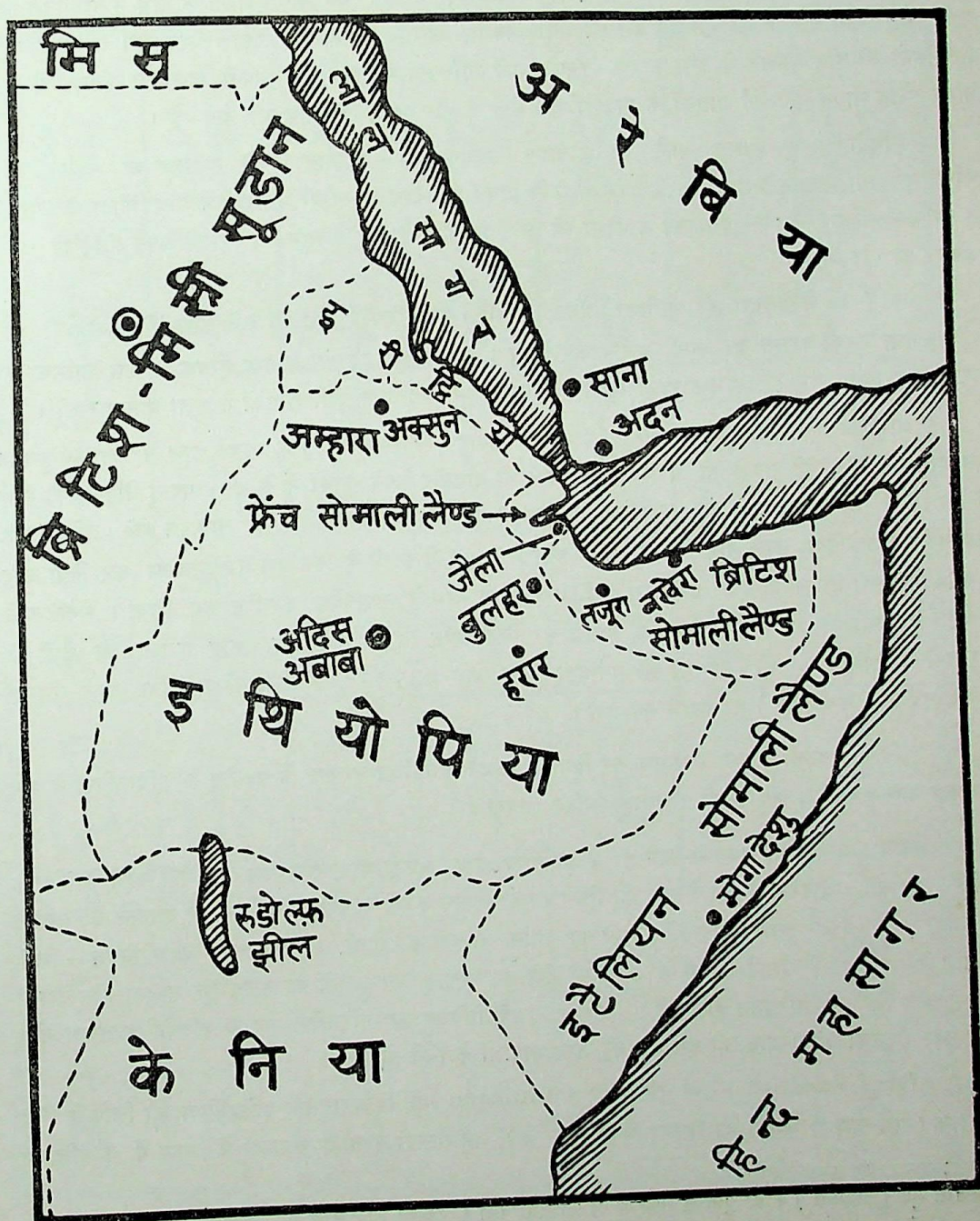
ई० पू० की सातवीं श० में सेमिटिक जाति के लोग, जो दक्षिण अरव से व्यापारियों के रूप में शनैः शनैः यहाँ आकर बसने लगे, इथियोपिया के निवासी हेमेटिक[1] थे। कुछ दिनों पश्चात् इन बाहर से आने वालों ने अपना एक राज्य स्थापित कर लिया तथा अक्सुम उसकी राजधानी बनाई। यह लोग हवाशत के नाम से सम्बोधित किये जाने लगे। इसी नाम के कारण इस देश का नाम अबेसी, अव्सी अबीसीनिया पड़ा। यह लोग इथियोपिया के निवासियों को गौण समझते थे इसी कारण उनको अपने आधिपत्य में रखते थे। अपनी राजधानी अक्सुम को बड़ा पवित्र स्थान मानते थे, जहाँ शासकों के राज्याभिषेक होते थे और यह १८६८ तक भी होते रहे।

इथियोपिया के शासक अपने को सोलोमन (Solomon – सुलेमान), जो इस्राइल का सबसे अधिक शक्तिशाली तथा धनवान् शासक था, के वंशजों में से मानते थे। ईसा की चौथी शताब्दी में इथियोपिया के शासकों ने काप्टिक – ईसाई – धर्म – प्रचारकों से दीक्षा ली और ईसाई हो गये। अक्सुम का राज्य अपने अंत की ओर अग्रसर हो रहा था।

९११ ई० में फ़लाशा की शासिका योदित (Yodit) या जूडिथ (Judith) ने इथियोपिया को बड़ी हानि पहुँचाई तथा उसको परास्त कर अपने अधीन कर लिया। तत्पश्चात् ज़गुये वंश के एक शासक ने इस शासिका को परास्त कर दिया और १२६८ तक राज्य किया। तदनन्तर पुनः सोलोमन वंशी शासकों ने सत्ता प्राप्त कर ली।

आधुनिक इथियोपिया का पुनर्जन्म १८५५ में थ्योडोर (Theodore) के शासन काल से आरम्भ हुआ। इस शासक ने छोटे छोटे राज्यों को परास्त कर शासन की बागडोर अपने हाथों में ले ली। परन्तु नेपियर की सेना ने १८६२ में इस शासन का अंत कर दिया। उधर १८७२-७९ के मध्य मिस्र के आक्रमण होने लगे जिसके फलस्वरूप इथियोपिया लाल सागर से पृथक हो गया। १८८० में इटली ने इस देश पर आक्रमण कर दिया और १८९० में इटली ने अपना एक इरीट्रिया (Eritrea) के नाम से उपनिवेश स्थापित कर लिया। मेनेलिक ने १८९६ में इटली को परास्त कर देश को स्वतंत्र कर लिया और १९०६ में ब्रिटिश, फ्रांस व इटली के देशों की सरकारों ने इथियोपिया की सीमाओं को मान्यता प्रदान कर दी। १९२३ में इथियोपिया 'लीग आफ़ नेशन्स' (League of Nations) का सदस्य बन गया।

१९३६ में इटली ने पुनः आक्रमण कर दिया। १९४१ में ब्रिटिश सरकार के सहयोग से इथियोपिमा ने पुनः स्वतंत्रता प्राप्त कर ली। अब इसकी राजधानी अदिस अबाबा है।

लिपि : जो प्रवासी अरब से आये थे वे अपने को तथा अपनी भाषा को गीज़ या घेर्ज़ कहते थे जिसके अर्थ हैं 'प्रवासी'। आरम्भ में तो वे सबा की लिपि का ही प्रयोग करते थे परन्तु ईसाई – धर्म अपनाने के पश्चात् इन लोगों ने ३५० में दूसरे प्रकार की लिपि का प्रयोग आरम्भ कर दिया, जो प्राचीन – अबीसीनियन – लिपि के नाम से ज्ञात हुई। ईसाई – धर्म के अनुयायी होने के पश्चात् इन लोगों का सांस्कृतिक सम्बन्ध ग्रीस देश से हो गया और लिपि में परिवर्तन होने लगे। प्राचीन – अबीसीनियन का परिवर्तित रूप ही इथियोपिक अथवा गीज़ लिपि पड़ा। इसका प्रयोग आज भी इस देश की अन्य भाषाओं के लिये होता है।

फ़्रेड्रिख़ (Friedrich) तथा लिटमन[2] (Littmann) के विचारानुसार इथियोपिया की लिपि के २६ अक्षरों के साथ-साथ ७ स्वरों का मिश्रण किया गया है। यह तीसरी व चौथी शताब्दी के मध्य में फ़्रूमेन्शियस

---

1. हज़रत नूह (Noah) के दो पुत्रों के नाम से दो जातियाँ बनीं। एक का नाम साम था जिसके वंशज सेमिटिक जाति के तथा दूसरे का नाम हाम था जिसके वंशज हेमेटिक जाति के लोग कहलाये।
2. **Littmann : Deutsche Aksum – Expedition, iv, P – 76.**

इथियोपिया की वर्णमाला

ह-H ሀ	हू ሁ	ही ሂ	हा ሃ	हे ሄ	हि ህ	हो ሆ
ल-L ለ	लू ሉ	ली ሊ	ला ላ	ले ሌ	लि ል	लो ሎ
ख-ḥ ሐ	खू ሑ	खी ሒ	खा ሓ	खे ሔ	खि ሕ	खो ሖ
म-M መ	मू ሙ	मी ሚ	मा ማ	मे ሜ	मि ም	मो ሞ
श-Ś ሠ	शू ሡ	शी ሢ	शा ሣ	शे ሤ	शि ሥ	शो ሦ
र-R ረ	रू ሩ	री ሪ	रा ራ	रे ሬ	रि ር	रो ሮ
स-S ሰ	सू ሱ	सी ሲ	सा ሳ	से ሴ	सि ስ	सो ሶ

फलक संख्या – ३१७

इथियोपिया की वर्णमाला

क़-Q ቀ	क़ू ቁ	क़ी ቂ	क़ा ቃ	क़े ቄ	क़ि ቅ	क़ो ቆ
ब-B በ	बू ቡ	बी ቢ	बा ባ	बे ቤ	बि ብ	बो ቦ
त-T ተ	तू ቱ	ती ቲ	ता ታ	ते ቴ	ति ት	तो ቶ
ख़-H̱ ኀ	ख़ू ኁ	ख़ी ኂ	ख़ा ኃ	ख़े ኄ	ख़ि ኅ	ख़ो ኆ
न-N ነ	नू ኑ	नी ኒ	ना ና	ने ኔ	नि ን	नो ኖ
अ-' አ	अू ኡ	अी ኢ	आ ኣ	अे ኤ	अि እ	ओ ኦ
क-K ከ	कू ኩ	की ኪ	का ካ	के ኬ	कि ክ	को ኮ

फलक संख्या –३१७ क

इथियोपिया की वर्णमाला

व-W	वू	वी	वा	वे	वि	वो
ወ	ዉ	ዊ	ዋ	ዌ	ው	ዎ
अ-ᵡe	अू	अी	आ	अे	अि	ओ
ዐ	ዑ	ዒ	ዓ	ዔ	ዕ	ዖ
ज़-Z	ज़ू	ज़ी	ज़ा	ज़े	ज़ि	ज़ो
ዘ	ዙ	ዚ	ዛ	ዜ	ዝ	ዞ
ज-J	जू	जी	जा	जे	जि	जो
የ	ዩ	ዪ	ያ	ዬ	ይ	ዮ
द-D	दू	दी	दा	दे	दि	दो
ደ	ዱ	ዲ	ዳ	ዴ	ድ	ዶ
ग-G	गू	गी	गा	गे	गि	गो
ገ	ጉ	ጊ	ጋ	ጌ	ግ	ጎ

× इस अक्षर का नाम ऐन (AIN) है।
इसकी ध्वनि 'अ' जैसी ही होती है। क्रमशः

इथियोपिया की वर्णमाला

त-Ṭ	तू	ती	ता	ते	ति	तो
ጠ	ጡ	ጢ	ጣ	ጤ	ጥ	ጦ
प-P̣	पू	पी	पा	पे	पि	पो
ጰ	ጱ	ጲ	ጳ	ጴ	ጵ	ጶ
स-Ṣ	सू	सी	सा	से	सि	सो
ጸ	ጹ	ጺ	ጻ	ጼ	ጽ	ጾ
द्ज़-Ḍ	द्ज़ू	द्ज़ी	द्ज़ा	द्ज़े	द्ज़ि	द्ज़ो
ፀ	ፁ	ፂ	ፃ	ፄ	ፅ	ፆ
फ़-F	फ़ू	फ़ी	फ़ा	फ़े	फ़ि	फ़ो
ፈ	ፉ	ፊ	ፋ	ፌ	ፍ	ፎ
प-P	पू	पी	पा	पे	पि	पो
ፐ	ፑ	ፒ	ፓ	ፔ	ፕ	ፖ

अलिफ़ के लिए भाषा शास्त्रियों ने ([illegible]) निर्धारित किया है इसकी ध्वनि भी अ जैसी होती है। इसी प्रकार से ऐन-(ዐ)।

(Frumentius) और थियोफ़िलास (Theophilos) के अनुसार भारतीय धर्म-प्रचारकों द्वारा किया गया। भारत में इस प्रकार की पद्धति को बारहखड़ी अथवा वर्णावली कहते थे। इस प्रकार २६ अक्षरों को ७ से गुणा कर देने से १८२ चिह्न बनाये गये।

आरम्भ में इसकी दिशा दाएँ-से-बाएँ थी परन्तु ग्रीस तथा भारत के सम्पर्क में आने से इसकी दिशा लगभग दसवीं श० में बाएँ से दाएँ[1] हो गई।

'फ० सं० – ३१७-३१७ ग' पर इथियोपिया की लिपि[2] दी गई है।

पठनीय सामग्री

Barth, H. : The Northern Tribes of Nigeria (1948).

Budge, E. W. : History of Ethiopia, Nubia and Abyssinia, 2 Vols. (1928)

Burns, Sir Alan : History of Nigeria (1955).

Cerult : Oriente moderno, XII. (1932).

Crawford, O. G S. : Article on Bamun Writing (Antiquity December—1935).

Davis, Nathan : Carthage and Her Remains. (1861).

Eberl, E. : Westafrikas letztes Ratsel (1936).

Erskine, S, : Vanished Cities of North. Africa (1927),

Forde, C. D. and Jones, G. I. : The Ibo and Ibibio Speaking Peoples of Southern Eastern Nigeria (1950).

Goddard, T. N. : The Hand-Book of Sierre Leone (1925).

Greenwall, H. J. and Wild, R. : Unknown Liberia (1936).

Humphrey, H. N. : Origin and Progress of the Art of Writing (1938).

Jansen, Hans : Syn, Symbol and Script (1968).

Jones, A. H. M. and Monroe, E. : History of Abyssinia (1935).

Kucznski, R. R. : The Cameroons and Togoland (1939).

Mac Gregor, J. K. : Some Notes on Nsibdi (Journal of the Royal Anthropological Institute of Great Britain and Ireland – 1909),

---

1. Dillmann : Grammar der äthiopic Sprache (1899), P – 19.
2. Grohmann : 'Über den Ursprung and die Entwicklung der äthiopic Schrift' Archaeologie für Schriftkunde, 1. (1914), p – 35)

Mason A. W. : A History of Writing (1924).
Mass – aquoi : 'The Vai People and Their Writing.
(Journal of African Society Vol. X. – 1910).
Mogeod, F. W. H. : The Syllabic Writing of the Vai People (Journal of the African Society – 1910).
Moorhouse, A. C. : Writing and Alphabet (1927).
Moreno, M. M. : Il Somalo della Somalia, (Rome – 1955).
Sahni, Swarn : Book of Nations (1972).
Smith, A. D. : Through Unknown African Countries (1897).
Springling, M. : The Alphabet–Its Rise and Development (1931),
Sumner. A. T. : Sierre Leone Studies (1932).
Talbot, P. A. : The Peoples of Southern Nigeria.
Werner, A. : The Language Families of Africa (1925).
Young, J. C. : Liberia Rediscovered (1934).

□ □ □

अध्याय : ७

यूरोपीय देशों की लेखन कला का इतिहास

यूरोपीय देश

यूरोप जंगली जातियों का स्थान रहा है। यहाँ सबसे प्राचीन संस्कृति केवल ग्रीस, सायप्रस तथा इटली में मिलती थी। यही जंगली जातियाँ युद्ध करती रहीं तथा सभ्यता की ओर अग्रसर होती रहीं, साथ-साथ अपना विकास करती रहीं। इनमें एक गुण था कि वे साहसिक थीं। यही जातियाँ सारे विश्व की शासक बन गयीं और आज विज्ञान, तकनीकी में सब से आगे हो गईं। किस प्रकार से यूरोप के देशों में लिपियों का जन्म व विकास हुआ है इस अध्याय में विस्तार से दिया गया है।

सायप्रस

इतिहास : ग्रीक भाषा में इस देश का नाम किप्रॉस है। पुरातात्त्विक उत्खनन से ज्ञात हुआ है कि यहाँ ३४०० से ३२०० ई० पू० में कृषि होती थी और तात्कालिक संस्कृति के मिट्टी के बरतनों में एक प्रधानता पायी जाती थी जिसको पुरातत्त्ववेत्ताओं ने कोम्ब्ड पॉटरी (combed pottery) के नाम से सम्बोधित किया है। इस प्रकार के मिट्टी के बर्तन किसी अन्य प्राचीन संस्कृति में दृष्टिगोचर नहीं होते। लगभग २४०० व २००० ई० पू० के मध्य यहाँ लाइनियर प्रकार की लेखन कला भी आरम्भ हुई थी। तथा २००० – १५०० ई० पू० के मध्य, देश के बाहर की अन्य जातियों ने यहाँ आकर बसना आरम्भ कर दिया।

पन्द्रहवीं श० में माइसीनिया के निवासी यहाँ आये, जो अपने साथ चक्र-निर्मित मिट्टी के बर्तन, अपने भिन्न प्रकार के अस्त्र तथा अपनी भाषा व लिपि भी लाये। यह बाद में किप्रो-माइसीनियन के नाम से ज्ञात हुये। यहाँ से मिस्र व मेसोपोटामिया को ताँबा निर्यात किया जाता था। लगभग बारहवीं श० में अकाइयन (Achaeon) उपनिवेशी यहाँ पहुँचे। उस काल में यहाँ एक राज्य स्थित था जिसकी राजधानी पाफ़ोस (Paphos) थी और तमीरादई (Tamiradae) राजा के वंशज राज्य करते थे।

८०० ई० पू० में फ़िनीशियन आने लगे। टायर (आधु० सूर) नगर – राज्य ने किटियन में अपनी एक बस्ती भी बसा ली थी। यह बात पुरातात्त्विक उत्खनन द्वारा अनेक फ़िनीशियन अभिलेखों के प्राप्त होने से प्रमाणित होती है।

७०९ ई० पू० में प्रथम बार सायप्रस की स्वतंत्रता को ठेस पहुँची जब सरगोन द्विवीय ने, जो अक्काद (असीरिया) का शासक था, आक्रमण करके सायप्रस को परास्त कर दिया। तब सायप्रस का नाम यतनान-दनाओई का द्वीप (Yatnana the Isles of Danaoi) पड़ गया। ६६७ ई० पू० में यह देश अशुरबनीपाल को उपहार देता रहता था। तदनन्तर सायप्रस ने लगभग सौ वर्ष स्वाधीनता का आनन्द लिया और वह स्वर्ण युग कहलाया। इसी शताब्दी में स्टेसीनास (Stasinos) ने एक महाकाव्य 'किप्रिया' के नाम से रचा।

असीरिया की अधीनता के पश्चात् मिस्र की अधीनता आई परन्तु मिस्र के शासकों ने इस पर शासन नहीं किया। सायप्रस को कर के रूप में मिस्र को उपहार भेजने पड़ते थे। ५२५ ई० पू० में कैम्बेसिज़ ने इसको पर्शिया का उपनिवेश बना लिया और डैरियस ने इसको अपने देश के पाँचवें प्रान्त में सम्मिलित कर लिया। सायप्रस ने

सायप्रस

फलक संख्या – ३१८
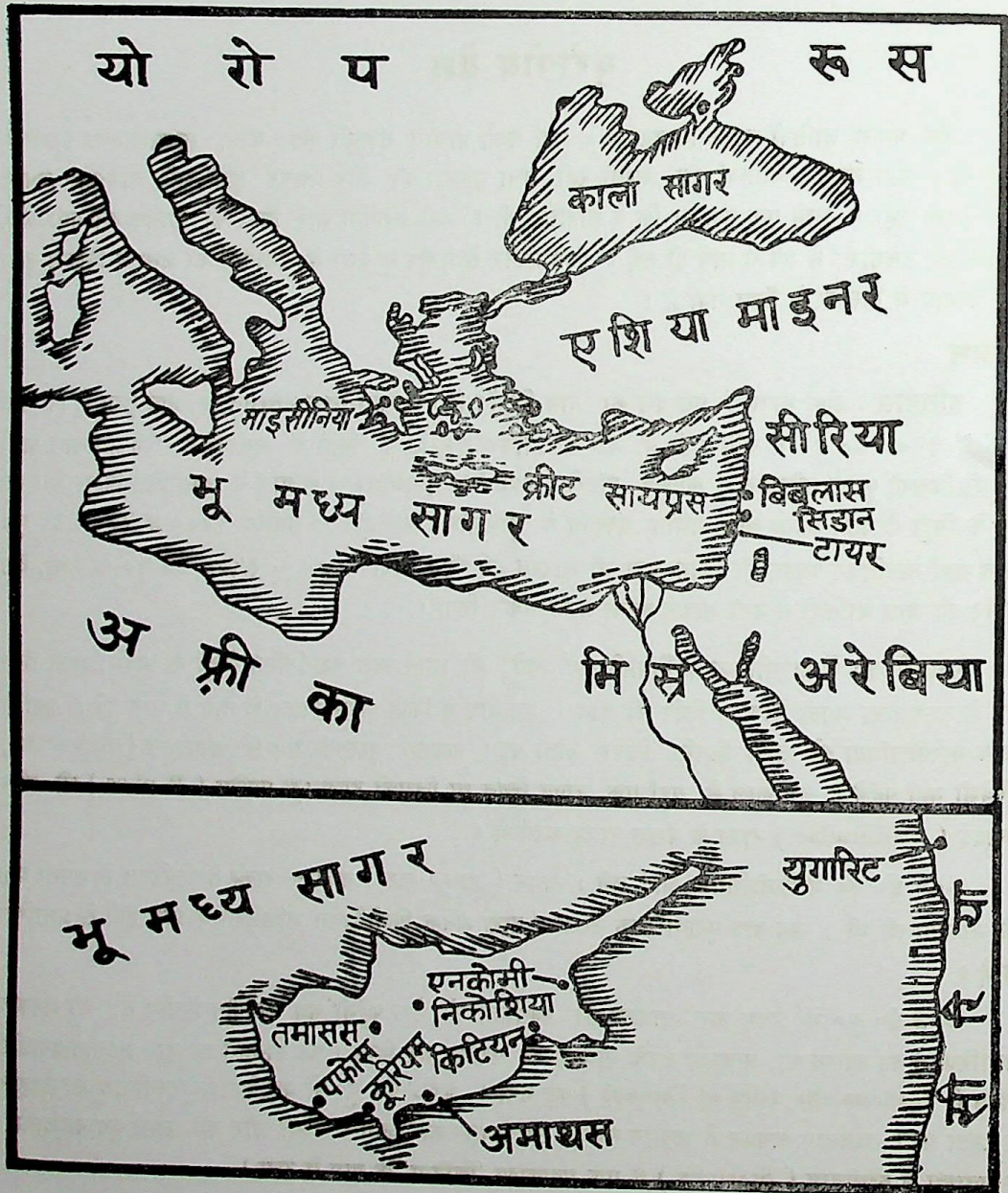
४८० ई० पू० में, जब ज़र्कसीज़ ने ग्रीस पर आक्रमण किया था, अपनी नौसेना के साथ १५० जलपोत सहयोग के रूप में ज़र्कसीज़ को भेंट किये। ३३३ ई० पू० में सिकन्दर के आक्रमण का स्वागत किया गया।

३२३ में सिकन्दर के मरणोपरांत सायप्रस मिस्र के शासक टॉलेमी प्रथम के अन्तर्गत आ गया। ३०६ में डेमेट्रियस ने इस पर अधिकार कर लिया। २९५ में पुनः टॉलेमी ने अपने अधीन कर लिया और राजवंश के एक प्रांतपति द्वारा शासन होता रहा।

५८ ई० पू० में रोम ने पोर्कियस काटो (Porcius Cato) को सायप्रस रोमन राज्य के अन्तर्गत करने के लिये भेजा। जिसमें युद्ध हुआ। सहस्रों मनुष्यों का हनन हुआ। सलामिस[1] नष्ट किया गया और सायप्रस से सब यहूदियों को निकाल दिया गया। सातवीं श० में अरब के विध्वंसक आक्रमण होने लगे। ३०० वर्षों तक सायप्रस न मुसलमानों के अधिकार में रहा और न पूर्णतया बैज़ेन्टाइन के अधिकार में रहा। दोनों ही आक्रमणकारियों ने उसको अपना एक अड्डा एक दूसरे पर आक्रमण करने को बना लिया। तत्पश्चात् २०० वर्षों तक यह बैज़ेन्टाइन साम्राज्य के अन्तर्गत रहा।

१२११ में सायप्रस ब्रिटिश धार्मिक – युद्ध – सैनिकों (Crusdaers) के विरुद्ध हो गया। तब रिचर्ड प्रथम ने आक्रमण करके इसको अपने अधीन कर लिया। तत्पश्चात् इसको जेरूसेलम के हाथों बेच दिया। सायप्रस के शासकों ने धर्म-युद्ध को जीवित रखा। १४६० से १५७० ईसवी तक यह वेनिस (इटली) के अधीन रहा। १५७१ में ऑटोमन (उस्मान से ओथोमन तथा ऑटोमन) तुर्कों के अधीन आ गया और ३०० वर्षों तक तुर्की शासन में रहा। १७६४ से १८२१ तक तुर्कों के विरुद्ध अनेक विद्रोह हुये। १८७८ में तुर्कों ने सायप्रस का शासन ब्रिटिश के हाथों में सौंप दिया। १९१४ में यह ब्रिटिश के अधीन हो गया। १९२५ में यह ब्रिटेन के राजवंश का एक उपनिवेश (Crown Colony) बन गया। १९३१ में ग्रीस के सायप्रस नागरिकों ने ग्रीस के साथ मिलाने के लिये विद्रोह किया। द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् यह विद्रोह और शक्तिशाली हो गया।

१९५९ में एक गणतन्त्र राज्य बनाने की योजना बनी जिसमें तुर्कों की अल्प संख्या को सुरक्षा प्रदान करने का वचन दिया गया और यह निश्चय हुआ कि एक ग्रीक राष्ट्रपति हो तथा तुर्क उप – राष्ट्रपति। २६ अगस्त १९६० को एक स्वतन्त्र गणराज्य स्थापित होने की घोषणा कर दी गई। यहाँ तीन भाषाओं – ग्रीक, तुर्की एवं अंग्रेज़ी – का प्रयोग साथ साथ चलता है। निकोशिया इसकी राजधानी स्थापित हुई।

लेखन कला : उन्नीसवीं श० के मध्य तथा बीसवीं श० के आरम्भ में सायप्रस में कई पुरातात्त्विक उत्खनन किये गये। उत्खनन कार्य करने वालों के निम्नलिखित नाम उल्लेखनीय हैं :—

टी० बी० सैण्डविथ (T. B. Sandwith), आर० एच० लैंग (R. H. Lang), एल० पी० दि सेसनोला (L. P. di Cesnola), ओ० रिखतर (O. Richter), एस० एल० मायर्स (S. L. Myres) तथा एम० मार्कीडीज़ (M. Markides)। इस उत्खनन कार्यों द्वारा पता लगा कि यहाँ लाइनियर बी (Linear B) की लिपि शैली, जो माइसीनियन प्रवासियों के साथ लाई गई थी, ई० पू० की पन्द्रहवीं श० से आठवीं श० तक प्रचलित रही। यह भी ज्ञात हुआ कि ई० पू० की सातवीं श० से प्रथम श० तक एक वर्णावली का प्रयोग होता रहा जिसमें ४५ चिह्नों का प्रयोग किया जाता था। इसके लिखने की दिशा दाएँ से बाएँ तथा हल चलाने की पद्धति (Beoustrophoden Style) प्रचलित थी।

---

1. इसी नाम का दूसरा नगर ग्रीस में एथेन्स के भी निकट था।

उत्खनन द्वारा कई द्विभाषिक अभिलेख भी प्राप्त हुये जिसके द्वारा यहाँ की लिपि के रहस्योद्‌घाटन में पर्याप्त सहायता प्राप्त हुई। रहस्योद्‌घाटन के कार्य[1] का भी श्रीगणेश करने के लिये कुछ प्राथमिकतायें हैमिल्टन (**Hamilton**), लैंग (**Lang**) तथा जी० स्मिथ (**G. Smith**) द्वारा पूर्ण की गईं। लैंग व स्मिथ ने फ़िनीशिया – सिप्रियाटिक द्विभाषिक अभिलेखों को पढ़ने का प्रयास किया। ५६ चिह्नों में से १८ अक्षर पहचान लिये गये। तत्पश्चात् अन्य विद्वानों के सहयोग से एक वर्णावली प्रस्तुत की गई।

सिप्रियाटिक लिपि की वर्णावली : में वर्णों के रूप तथा पाँच स्वर सम्मिलित हैं। ५०० के लगभग जो पाटियां उत्खनन में प्राप्त हुईं उनको जॉर्ज स्मिथ ने तथा वेन्ट्रिस – चैडविक ने पढ़ा और एक वर्णावली[2] प्रस्तुत की। उसी के कुछ वर्ण 'फ० सं० – ३१९' पर दिये गये हैं। इसका समय ७०० ई० पू० निर्धारित किया गया तथा अभिलेखों की भाषा ग्रीक है।

सिप्रियाटिक लिपि का क्रेटन लिपि से सम्बन्ध : 'फ० सं० – ३२०' पर क्रीट की लाइनियर – 'A' और 'B' लिपियाँ एवं सिप्रो – मीनियन से सिप्रियाटिक लिपि का विकास[3] दिखाया गया है। अब यह बात सर्वमान्य हो चुकी है कि आरम्भ काल में क्रीट व माइसीनिया की संस्कृतियों का सायप्रस पर प्रभाव पड़ा और लिपि का उद्‌भव इन्हीं देशों से आरम्भ हुआ परन्तु बाद में फ़िनीशिया व बेबीलोन आदि के सम्पर्क में आने से बहुत से परिवर्तन भी हुये।

सिप्रियाटिक लिपि का अभिलेख : यह अभिलेख सेसनोला द्वारा एक उत्खनन में, जो सलामिस (Salamis) – आधुनिक एनकोमी (Enkomi) – में किया गया, प्राप्त हुआ। इसका रहस्योद्‌घाटन तथा अनुवाद जॉर्ज स्मिथ ने १८८९ में किया। इसको दाएँ से बाएँ पढ़ा जायेगा। **"ईरास ने इसे अपोलो को भेंट किया"** (फ० सं० – ३२१). (ईरास ग्रीस का एक पौराणिक प्रेम – देवता था, अपोलो सूर्य देवता था।)

ग्रीस

इतिहास : ग्रीस का इतिहास सारे देश का इतिहास नहीं है। क्योंकि ग्रीस प्राचीन काल में कभी एक देश या राष्ट्र के रूप में नहीं रहा। उसका इतिहास छोटे छोटे नगर-राज्यों का इतिहास है। फिर भी संस्कृति के दृष्टिकोण से यह देश एक रहा है। इस संस्कृति का प्राचीन नाम एजियन संस्कृति था जिसका जन्म लगभग ३००० ई० पू० में हुआ। कुछ विद्वानों के विचारानुसार एजियस (**Aegeus**) एथेंस के राजा का नाम था। जब उसने अपने पुत्र थेसियस (**Thesius**), जो क्रीट पर आक्रमण करने गया था, की मृत्यु का समाचार सुना, वह समुद्र में कूद पड़ा और आत्महत्या कर ली उसी के नाम पर 'एजियन संस्कृति' का नाम पड़ा। कुछ विद्वान् इस देश की संस्कृति को हेलेनिस्तिक (**Hellenistic civilization**) संस्कृति के नाम से सम्बोधित करते हैं। यह थेसली के दक्षिण

---

1. Friedrich, J. : Entziffering verschollener Schriften und Sprachen (Berlin—1924), p - 102.
2. Ventris and Chadwick : 'Evidence for Greek Dialect in the Mycenaean Archives' Journal of Hellenic Studies Vol. LXXIII. (1953); p – 84.
3. Daniel, J. F. : Prolegamena to Cypro – Minoan Script'—American Journal of Arch-aeology, Vol. 45. (1941), p – 249; Evans ; Scripta Minos (1909) p – 70 Eisler, R. ; J. R. A. S. (1923), p-169.

सिप्रियाटिक लिपि की वर्णमाला

अ A	ए E	ई I	ओ O	ऊ U
क	के	की	को	कू
त	ते	ती	तो	तू
प	पे	पी	पो	पू
ल	ले	ली	लो	लू
र	रे	री	रो	रू
स	से	सी	सो	सू
म	मे	मी	मो	मू
न	ने	नी	नो	नू
ज	जे			
फ़ व	फ़े वे	फ़ी वी	फ़ो वो	
ज़				
क्स	क्से			

फलक संख्या – ३१९

सिप्रियाटिक लिपि का क्रेटन से सम्बन्ध

ध्वनि	लाइनियर-A	लाइनियर-B	सिप्रोमीनियन	सिप्रियाटिक
व				
सी				
प				
के				
लो				
त				
ले				
न				
को				
ती				
पी				
पू				

फलक संख्या – ३२०

सिप्रियाटिक लिपि के कुछ शब्द

सेसनोला (CESNOLA) के संग्रह से प्राप्त

फलक संख्या - ३२१

में निवास करने वाली एक जाति, जिसका नाम ह्लेलास (Hellas) था, के नाम पर रखा गया। कुछ विद्वान् ग्रीस की संस्कृति को यूनानी संस्कृति भी कहते हैं। यह नाम आयोनियन (Ionion) के नाम पर यूनान अथवा यवन कहलाने के कारण यूनानी संस्कृति हो गई। मतभेदों का कारण केवल प्रमाण की अनुपस्थिति है।

अब यह मत सर्वमान्य हो चुका है कि ग्रीस के मूल निवासी पेलासगियन (Pelasgeon) थे। उत्तर की ओर से कुछ जातियाँ आकर बसने लगीं और उन्होंने नगर – राज्यों को स्थापित किया। इनके आने का काल लगभग २००० ई० पू० माना जाता है। तदनन्तर २१०० से ७०० ई० पू० तक तीन जातियों ने आकर अपने अपने नगर–राज्य स्थापित किये। उन जातियों के लोगों के नाम आयोलियन्स (Aeolians), डोरियन्स (Dorians) तथा आयोनियन्स (Ionions) थे। यह नगर – राज्य गृह – युद्ध में रत रहते थे तथा एक दूसरे पर शासक बनने के लिये आक्रमण करते रहते थे। कुछ दिनों पश्चात् कुछ राज्य मिल कर एक संघ (League) का निर्माण करने लगे तब एक संघ दूसरे संघ से युद्ध करता रहता था।

ई० पू० की पाँचवीं श० में ग्रीस अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया था। चौथी व तीसरी शताब्दी में यह मैसीडोनिया के अन्तर्गत आगया। दूसरी श० से रोम के प्रभाव में आ गया। ईसवी सन् की चौथी श० में बैज़न्टायन साम्राज्य के अधीन रहा। १४५३ में ओटोमन साम्राज्य में आ गया। १८२१ – २९ तक यह टर्की से युद्ध करता रहा और ब्रिटिश, फ्रांस व रूस के सहयोग से २५ मार्च १८२९ को टर्की के शासन से मुक्त हो गया। १९२५ में यह गणतंत्र राज्य घोषित कर दिया गया। १९३५ में फिर एक राजा के शासन के अन्तर्गत आ गया। १ जनवरी १९५२ से विधान के अन्तर्गत शासन चलने लगा।

ग्रीस के प्राचीन मानचित्र में संख्याओं का निर्देशन

(इसमें कुछ द्वीपों के तथा राज्यों के नाम लिख दिये गये हैं नगरों को संख्या से दिखाया गया है जिसकी तालिका निम्नलिखित है)

१. नसास (Knossos)
२. फ़ैस्टास (Phaistos)
३. हगिया त्रियदा (Hagia Triada)
४. कइदोनिया (Cydonia)
५. लिन्डस (Lindus)
६. रोड्स (Rhodes)
७. क्नीडस (Cnidus)
८. कोस (Cos)
९. हेलीकार्नेसस[1] (Halicarnasus)
१०. मिलेटस (Mil tus)
११. सार्डिस[2] (Sardis)
१२. एफ़िसस (Ephysus)
१३. समोस (Samos)
१४. कियास (Chios)
१५. ट्रॉय[3] (Troy)
१६. पोतीदइया (Potidaea)
१७. साइनास्कीफ़लाइ (Cynoseephalae)
१८. थर्मापली (Thermopylae)
१९. डेलियम (Delium)
२०. मराथन (Marathon)
२१. एथेन्स (Athens)
२२. थीबीज़ (Thebes)

---

1. इसी नगर में हेरोडोटस-प्रसिद्ध प्राचीन इतिहासकार-का जन्म लगभग ४८० ई० पू० में हुआ था। यह इतिहास का जन्मदाता माना जाता है।
2. यह नगर प्राचीन काल में बड़ा प्रसिद्ध राजनैतिक केन्द्र रहा है।
3. होमर के महाकाव्य का मुख्य नगर जिसका पुरातात्त्विक उत्खनन करके हेनरिख़ शिलीमान (Heinrich Sehliemann) ने १८९१ में एक कल्पना को पुर्नजीवित कर दिया।

प्राचीन ग्रीस — ई० पू० की दूसरी शती तक

फलक संख्या — ३२२
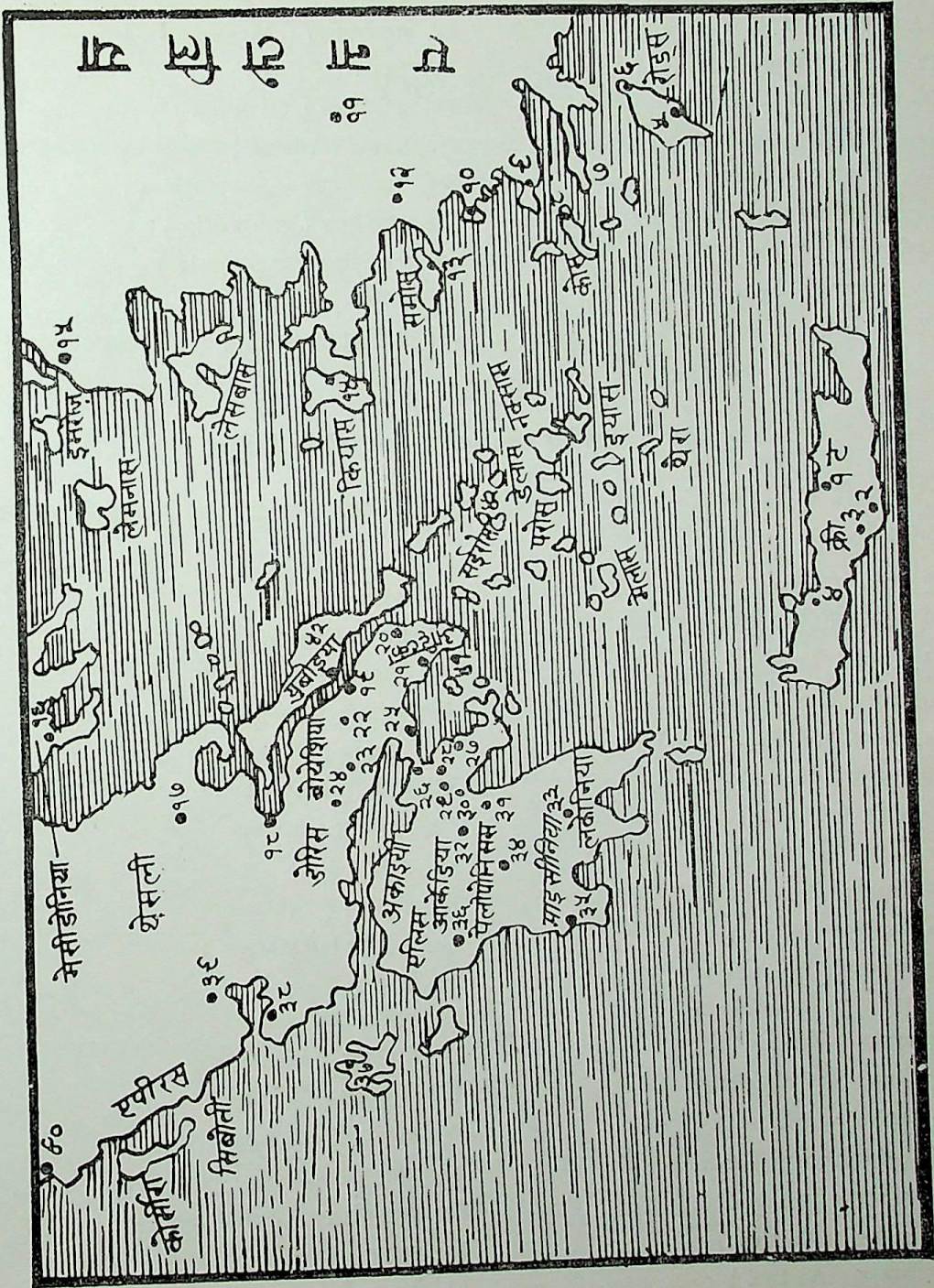
२३. ल्यूकत्रा (Leuctra)
२४. डेल्फ़ी (Delphi)
२५. मेगारा (Megara)
२६. कोरिंथ (Corinth)
२७. एपीडौरस (Epidaurus)
२८. निकियास (Nicias)
२९. माइसोनिया (Mycanea)
३०. अर्गास (Argos)
३१. तीगिया (Tegea)
३२. मन्तीनियो (Mantineo)
३३. स्पार्टा (Sparta)
३४. मेगालोपोलिस (Megalopolis)
३५. पाइलस (Pylos)
३६. ओलिम्पिया (Olympia)
३७. इथाका (Ithaca)
३८. एनक्टोरियम (Anactorium)
३९. अम्ब्रेसिया (Ambracia)
४०. एपोलोनिया (Apollonia)
४१. एजीना (Aegina)
४२. काल्किस या खालसिस (Chalcis or Khalkis)

ग्रीस के आधुनिक मानचित्र में संख्याओं का निर्देशन

इसमें नगरों के नाम लिख दिये गये हैं। छोटे बड़े द्वीप संख्या द्वारा दिये गये हैं, जिनके नाम निम्न-लिखित हैं :-

१. केसॉस (Kasos)
२. कर्पेथॉस (Karpathos)
३. टेलॉस (Telos)
४. कॉस (Kos)
५. केलिमनॉस (Kalymnos)
६. इकारा (Ikara)
७. समोस (Samos)
८. कियॉस (Chios)
९. लेसबॉस (Lesbos)
१०. इमरोज़ (Imroz)
११. लेमनॉस (Lemnos)
१२. समोथ्रेस (Samothrace)
१३. थासोस (Thasos)
१४. स्कियाथोस (Skiathos)
१५. स्केपेलॉस (Skepelos)
१६. नार्थ स्पोरेड्स (North Sporades)
१७. स्काइरॉस (Skyros
१८. युबोइया (Euboea)
१९. एन्ड्रॉस (Andros)
२०. तेनॉस (Tenos)
२१. क्यॉस (Keos)
२२. सिरॉस (Syros)
२३. किथनॉस (Kythnos)
२४. सेरीफ़ॉस (Seriphos)
२५. सिफ़नॉस (Siphnos)
२६. मेलॉस (Melos)
२७. सिकिनॉस (Sikinos)
२८. इयॉस (Ios)
२९. सन्तोरिन (Santorin)
३०. एमार्गोस (Amargos)
३१. पेरॉस (Paros)
३२. नक्सॉस (Naxos)
३३. मिकोनॉस (Mykonos)
३४. किमोलॉस (Cimolos)
३५. केरीगो (Cerigo)
३६. ज़ान्ते (Zante)
३७. केफ़ालोनिया (Cephalonia)
३८. ल्युकॉस (Leukas)
३९. पेक्सॉस (Paxos)
४०. कर्फ़ू – कर्कीरा (Corfu – Kerkyra)

आधुनिक ग्रीस

फलक संख्या – ३२३

लेखनकला

विद्वानों के मतानुसार ग्रीस के प्राचीन काल—१३०० से ८०० ई० पू०—में लेखन कला का जन्म फ़िनीशिया के एक राजकुमार कैडमस[1] (Cadmus) द्वारा लगभग ११०० ई० पू० में हुआ, जो अपने साथ फ़िनीशिया के वर्ण लाया था। हेरोडोटस के अनुसार कैडमस ने वर्णों का उद्भव ग्रीस (बोयेशिया – Boetia) में किया तथा थीबीज़ (Thebes) नगर की स्थापना भी की। आधुनिक विद्वान् भी निम्नलिखित कारणों से उपर्युक्त विचारों का समर्थन करते हैं :—

१. ग्रीस की वर्णावली में फ़िनीशिया की वर्णावली का क्रम उपस्थित है।
२. ग्रीस के वर्णों के नाम भी फ़िनीशिया के वर्णों के नामों से समानता रखते हैं।
३. ग्रीस के प्राचीनतम अभिलेखों में फ़िनीशिया की (दाएँ-से-बाएँ ओर) लिखने की पद्धति पायी जाती है।
४. ग्रीस के वर्णों के चिह्नों में भी फ़िनीशिया के चिह्नों से समानता दृष्टिगोचर होती है।

मेंज़ (Mentz – 1936) ने भी इस बात का समर्थन किया है कि ई० पू० की चौदहवीं श० में कैडमस द्वारा फ़िनीशिया के वर्ण सर्वप्रथम क्रीट लाये गये तत्पश्चात् बोयेशिया (Boetia) पहुँचे। १९१३ में शिनाइदर (H. Schneider) ने भी इसी विचार का समर्थन किया तथा सुण्डवल ने १९३१ में क्रीट के चिह्नों की तुलना भी फ़ीनीशिया के वर्णों से की है, जिसका चार्ट इस पुस्तक के तीसरे अध्याय के फ़िनीशिया देश की लिपियों में 'फ० सं० – १४५' पर दिया गया है।

ग्रीस एवं फ़िनीशिया की भाषाओं में अन्तर होने के कारण ग्रीस के तात्कालिक विद्वानों ने निम्नलिखित परिवर्तन किए :—

१. कुछ फ़िनीशियन वर्णों की ध्वनियों में परिवर्तन किया। उदाहरणार्थ :—
—अलिफ़ की ध्वनि को 'अ' (a – alpha) में।
—ह (हेथ) की ध्वनि को 'इ' (e – eta) में। ग्रीक भाषा में 'ह' की ध्वानि शांत है।
—य (योद) की ध्वनि को 'ई' (i – iota) में।
—ऐन की ध्वनि को 'ओ' (O – Omicron) में।
—ए या ई की ध्वनि को 'ए' (e – epsilon) में।
—व (वाव) की ध्वनि को 'उ' (u – upsilon) में।

२. फ़िनीशियन लिपि में स्वर नहीं थे जो ग्रीस ने लगभग ई० पू० की ग्यारहवीं श० में दिए। इसी के कारण फ़िनीशियन लिपि के वर्णों के नाम व्यंजनों में अंत होते हैं और ग्रीक लिपि के वर्णों के नाम स्वरों में अन्त होते हैं, जैसे अलिफ़ का एल्फ़ा, बेथ का बीटा (बीदा), गिमिल का गामा, दलेथ का डेल्टा आदि हो गया।

३. फ़िनीशिया लिपि की दिशा को, जो दाएँ से बाएँ लिखी जाती थी, लगभग ई० पू० की आठवीं श० में बाएँ से दाएँ कर दी गई।

कुछ विद्वानों के नाम, जिन्होंने आठवीं व सातवीं श० के मध्य में प्राप्त हुए ग्रीस के प्राचीन अभिलेखों पर शोध कार्य किया है, उल्लेखनीय हैं, गूटर्सलाब (Guterslob – 1887), वाइडेमान (F. Wiedemann –

---

1. कैडमस के तात्कालिक वंशजों काल ईस्लर (Eisler) ने अपनी पुस्तक (Kenit Weihin Scriften – Page 118) में १३५० से १२०९ ई० पू० तक का निर्धारित किया है, जब वे टायर (Tyre) के नगर राज्य में शासन करते थे। कुछ विद्वान कैडमस को फ़िनीशिया का देवता भी मानते हैं।

1899), हिलर वॉन (Hiller von), गायरट्रिंगन (Gaertringen – 1924), ई० एस० राबर्ट्स (E. S. Roberts – 1887) और ई० ए० गार्डिनर (E. A. Gardiner – 1905) जिन्होंने एक पुस्तक[1] भी प्रकाशित की, ओ० कर्न (O. Kern – 1913), रोहेल (Roehl – 1907) और जे० कर्चीनर (J. Kirchiner – 1948)। किर्चॉफ़ (Kirchoff) ने इन प्राचीन वर्णों का नाम हरा (Green) रखा है जिनके प्राचीनतम् अभिलेख थेरा (Thera) और मेलास (Melos) से प्राप्त हुये हैं।

ग्रीक लिपि के वर्णों का उद्भव : 'फ०सं०–३२४; ३२४ क' के चार्ट के निम्नलिखित कॉलमों का विवरण :–

१—सिनाइ लिपि के चित्र। २—चित्रों के नाम।

३—फ़िनीशियन लिपि के २२ वर्ण जिनका जन्म सिनाइ के चित्रों से हुआ।

४—फ़िनीशियन लिपि के हेब्रू नाम।

५—जिस प्रकार से परिवर्तित होकर वे ग्रीक लिपि के १६ वर्ण बने। कुछ दो व तीन प्रकार के भी हैं।

६—उन वर्णों के नाम। ७—उन वर्णों की ध्वनियाँ।

८—ग्रीस के विद्वानों ने वर्णों के स्थान में परिवर्तन किया तथा (तारे लगे नये) अन्य चिह्नों का आविष्कार करके अपनी वर्णमाला में जोड़ दिये। अब ग्रीक लिपि में २४ वर्ण हो गये।

९—ग्रीक वर्णों की ध्वनियाँ।

क्रीट व माइसीनिया

इतिहास : प्रामाणिक रूप से क्रीट के इतिहास का आदिकाल तथा अन्त काल का निर्णय करना कठिन है परन्तु फिर भी यह धारणा विद्वानों में मान्य होने लगी है कि इस संस्कृति का सूर्योदय लगभग ३००० ई० पू० में हुआ और उसका अन्त लगभग १४०० ई० पू० में हो गया। एक ऐसी आकस्मिक विपत्ति टूट पड़ी जिसने एक छोटे से समृद्ध तथा सम्पन्न देश को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। उसके सारे गाँव, नगर व भव्य भवन उजड़ गये जो पुनः वह सम्पन्नता तथा वैभव न ला सके। यह विध्वंस कोई ऐसा प्रमाण छोड़ कर नहीं गया जिससे इतिहास के पृष्ठों द्वारा संसार को कुछ ज्ञात हो सकता। धन्य हैं वे विद्वान् जिनके अथक परिश्रम ने क्रीट की समस्या पर पर्याप्त प्रकाश डाला है। इस विपत्ति के पश्चात् क्रीट के इतिहास पर ऐसे घनघोर बादल छा गये कि संसार क्रीट को भूल ही गया परन्तु डोरियन जाति के लोग यहाँ पुनः आकर बस गये और क्रीट पुनः जीवित हो उठा। उनका ७०० ई० पू० तक अधिकार रहा।

विद्वानों का विचार है कि क्रीट अपने समृद्धि काल में अपने पड़ोसी देश मिस्र से पर्याप्त सम्पर्क रखता था उसने बहुत कुछ मिस्र से सीखा था। क्रीट खालों, फलों, अनाज, मदिरा, पशुधन, काष्ठ और बालक व बालिकाओं का व्यापार किया करता था।

पौराणिक कथाओं के अनुसार क्रोनस (Cronos) देवताओं का एक राजा था। उसने आकाशवाणी द्वारा सुना कि उसके पुत्र ही उसके सर्वनाश का कारण बनेंगे। इसको सुनते ही उसने अपने पुत्रों को उत्पन्न होते ही निगलना आरम्भ कर दिया परन्तु जब ज्यूस (Zeus) का जन्म हुआ तो उसकी माता रिया (Rhea) ने

1. Gardiner, E. A. : An Introduction to Greek Epigraphy (1905), p–17.

लेखनकला

विद्वानों के मतानुसार ग्रीस के प्राचीन काल—१३०० से ८०० ई० पू०—में लेखन कला का जन्म फ़िनीशिया के एक राजकुमार कैडमस[1] (Cadmus) द्वारा लगभग ११०० ई० पू० में हुआ, जो अपने साथ फ़िनीशिया के वर्ण लाया था। हेरोडोटस के अनुसार कैडमस ने वर्णों का उद्भव ग्रीस (बोयेशिया – Boetia) में किया तथा थीबोज़ (Thebes) नगर की स्थापना भी की। आधुनिक विद्वान् भी निम्नलिखित कारणों से उपर्युक्त विचारों का समर्थन करते हैं :—

१. ग्रीस की वर्णावली में फ़िनीशिया की वर्णावली का क्रम उपस्थित है।

२. ग्रीस के वर्णों के नाम भी फ़िनीशिया के वर्णों के नामों से समानता रखते हैं।

३. ग्रीस के प्राचीनतम अभिलेखों में फ़िनीशिया को (दाएँ-से-बाएँ ओर) लिखने की पद्धति पायी जाती है।

४. ग्रीस के वर्णों के चिह्नों में भी फ़िनीशिया के चिह्नों से समानता दृष्टिगोचर होती है।

मेंज़ (Mentz – 1936) ने भी इस बात का समर्थन किया है कि ई० पू० की चौदहवीं श० में कैडमस द्वारा फ़िनीशिया के वर्ण सर्वप्रथम क्रीट लाये गये तत्पश्चात् बोयेशिया (Boetia) पहुँचे। १९१३ में शिनाइदर (H. Schneider) ने भी इसी विचार का समर्थन किया तथा सुण्डवल ने १९३१ में क्रीट के चिह्नों की तुलना भी फ़ीनीशिया के वर्णों से की है, जिसका चार्ट इस पुस्तक के तीसरे अध्याय के फ़िनीशिया देश की लिपियों में 'फ० सं० – १४५' पर दिया गया है।

ग्रीस एवं फ़िनीशिया की भाषाओं में अन्तर होने के कारण ग्रीस के तात्कालिक विद्वानों ने निम्नलिखित परिवर्तन किए :—

१. कुछ फ़िनीशियन वर्णों की ध्वनियों में परिवर्तन किया। उदाहरणार्थ :—

—अलिफ़ की ध्वनि को 'अ' (a – alpha) में।

—ह (हेथ) की ध्वनि को 'इ' (e – eta) में। ग्रीक भाषा में 'ह' की ध्वानि शांत है।

—य (योद) की ध्वनि को 'ई' (i – iota) में।

—ऐन की ध्वनि को 'ओ' (O – Omicron) में।

—ए या ई की ध्वनि को 'ए' (e – epsilon) में।

—व (वाव) की ध्वनि को 'उ' (u – upsilon) में।

२. फ़िनीशियन लिपि में स्वर नहीं थे जो ग्रीस ने लगभग ई० पू० की ग्यारहवीं श० में दिए। इसी के कारण फ़िनीशियन लिपि के वर्णों के नाम व्यंजनों में अंत होते हैं और ग्रीक लिपि के वर्णों के नाम स्वरों में अन्त होते हैं, जैसे अलिफ़ का एल्फ़ा, बेथ का बीटा (बीदा), गिमिल का गामा, दलेथ का डेल्टा आदि हो गया।

३. फ़िनीशिया लिपि की दिशा को, जो दाएँ से बाएँ लिखी जाती थी, लगभग ई० पू० की आठवीं श० में बाएँ से दाएँ कर दी गई।

कुछ विद्वानों के नाम, जिन्होंने आठवीं व सातवीं श० के मध्य में प्राप्त हुए ग्रीस के प्राचीन अभिलेखों पर शोध कार्य किया है, उल्लेखनीय हैं, गूटर्सलाब (Guterslob – 1887), वाइडेमान (F. Wiedemann –

1. कैडमस के तात्कालिक वंशजों काल ईस्लर (Eisler) ने अपनी पुस्तक (Kenit Weihin Scriften – Page 118) में १३५० से १२०९ ई० पू० तक का निर्धारित किया है, जब वे टायर (Tyre) के नगर राज्य में शासन करते थे। कुछ विद्वान कैडमस को फ़िनीशिया का देवता भी मानते हैं।

1899), हिलर वॉन (Hiller von), गायरर्ट्रिंगन (Gaertringen – 1924), ई० एस० रार्बट्स (E. S. Roberts – 1887) और ई० ए० गार्डिनर (E. A. Gardiner – 1905) जिन्होंने एक पुस्तक[1] भी प्रकाशित की, ओ० कर्न (O. Kern – 1913), रोहेल (Roehl – 1907) और जे० कर्चीनर (J. Kirchiner – 1948)। किर्चोफ़ (Kirchoff) ने इन प्राचीन वर्णों का नाम हरा (Green) रखा है जिनके प्राचीनतम् अभिलेख थेरा (Thera) और मेलास (Melos) से प्राप्त हुये हैं।

ग्रीक लिपि के वर्णों का उद्भव : 'फ०सं०–३२४; ३२४ क' के चार्ट के निम्नलिखित कॉलमों का विवरण :–

१—सिनाइ लिपि के चित्र। २—चित्रों के नाम।

३—फ़िनीशियन लिपि के २२ वर्ण जिनका जन्म सिनाइ के चित्रों से हुआ।

४—फ़िनीशियन लिपि के हेब्रू नाम।

५—जिस प्रकार से परिवर्तित होकर वे ग्रीक लिपि के १६ वर्ण बने। कुछ दो व तीन प्रकार के भी हैं।

६—उन वर्णों के नाम। ७—उन वर्णों की ध्वनियाँ।

८—ग्रीस के विद्वानों ने वर्णों के स्थान में परिवर्तन किया तथा (तारे लगे नये) अन्य चिह्नों का आविष्कार करके अपनी वर्णमाला में जोड़ दिये। अब ग्रीक लिपि में २४ वर्ण हो गये।

९—ग्रीक वर्णों की ध्वनियाँ।

क्रीट व माइसीनिया

इतिहास : प्रामाणिक रूप से क्रीट के इतिहास का आदिकाल तथा अन्त काल का निर्णय करना कठिन है परन्तु फिर भी यह धारणा विद्वानों में मान्य होने लगी है कि इस संस्कृति का सूर्योदय लगभग ३००० ई० पू० में हुआ और उसका अन्त लगभग १४०० ई० पू० में हो गया। एक ऐसी आकस्मिक विपत्ति टूट पड़ी जिसने एक छोटे से समृद्ध तथा सम्पन्न देश को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। उसके सारे गाँव, नगर व भव्य भवन उजड़ गये जो पुनः वह सम्पन्नता तथा वैभव न ला सके। यह विध्वंस कोई ऐसा प्रमाण छोड़ कर नहीं गया जिससे इतिहास के पृष्ठों द्वारा संसार को कुछ ज्ञात हो सकता। धन्य हैं वे विद्वान् जिनके अथक परिश्रम ने क्रीट की समस्या पर पर्याप्त प्रकाश डाला है। इस विपत्ति के पश्चात् क्रीट के इतिहास पर ऐसे घनघोर बादल छा गये कि संसार क्रीट को भूल ही गया परन्तु डोरियन जाति के लोग यहाँ पुनः आकर बस गये और क्रीट पुनः जीवित हो उठा। उनका ७०० ई० पू० तक अधिकार रहा।

विद्वानों का विचार है कि क्रीट अपने समृद्धि काल में अपने पड़ोसी देश मिस्र से पर्याप्त सम्पर्क रखता था उसने बहुत कुछ मिस्र से सीखा था। क्रीट खालों, फलों, अनाज, मदिरा, पशुधन, काष्ठ और बालक व बालिकाओं का व्यापार किया करता था।

पौराणिक कथाओं के अनुसार क्रोनस (Cronos) देवताओं का एक राजा था। उसने आकाशवाणी द्वारा सुना कि उसके पुत्र ही उसके सर्वनाश का कारण बनेंगे। इसको सुनते ही उसने अपने पुत्रों को उत्पन्न होते ही निगलना आरम्भ कर दिया परन्तु जब ज़्यूस (Zeus) का जन्म हुआ तो उसकी माता रिया (Rhea) ने

1. Gardiner, E. A. : An Introduction to Greek Epigraphy (1905), p–17.

ग्रीक लिपि के वर्णों का उद्भव

1	2	3	4	5	6	7	8	9
	बैल		अलिफ़		ऐलफ़ॉ	अ		अ
	घर		बेथ		बीटा	व ब		ब
	ऊंट		गिमेल		गामा	ग		ग
	द्वार		दलेथ		डेल्टा	द		द
	खिड़की		हे		ऐप्सीलोन	ए		ए
	हुक		वाव		उप्सीलॉन	उ		ज
	अस्त्र		ज़ैन		ज़ेटा	ज़		इ
	बाड़		हेथ		ऐटा	इ		थ
	क्रास		तेथ		थेटा	थ		ई
	भुजा		योद		आइओटॅ	ई		क
	हाथ		कॉफ़		कप्पा	क		ल

फलक संख्या – ३२४

ग्रीक लिपि के वर्णों का उद्भव

1	2	3	4	5	6	7	8	9
	अंकुश		लमेद		लम्दा	ल	M	म्यु
	जल		मीम	M	म्यु	म	N	न्यु
	सर्प		नून		न्यु	न	Ξ*	ए-क्स
			समेख				O	ऑ
O	आंख	O	ऐन	O	ओमीक्रोन	ऑ	Γ	प
	मुंह	)	पे	)	पी	प	P	र
			सीन				Σ	स
							T	त
	गांठ	Φ	क़ॉफ़				V	उ
	सिर	9	रेश	9	रो	र	Φ*	फ़
ω	दन्त	W	शिन		सिगमा	स	*	ख़
							Ψ*	प्स
+	चिन्ह	+	ताव	+	ताउ	त	ω*	ऊ

फलक संख्या – ३२४ क

उसको क्रीट के एक पर्वत ईदा की कन्द्रा में लाकर छिपा दिया। रिया ने एक अप्सरा को भी बच्चे के पालन-पोषण के लिये नियुक्त कर दिया। अप्सरा ने उसको मधु व बकरी का दूध पिला पिला कर बड़ा किया। जब वह बड़ा हो गया तब उसने अपने पिता का वध कर दिया और संसार के सारे देवताओं व मनुष्यों का राजा बन गया। उसने टायर के राजा की पुत्री युरोपा से विवाह किया और उनके एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम मिनास (Minos) था।

मिनास की पत्नी का नाम पेसीफ़ी (Pasiphae) था, जिसने एक दैत्य मिनोटौर (Minotaur) को जन्म दिया, जो आधा मनुष्य तथा आधा बैल था। मिनास ने इसको अपने महल की भूलभुलइयों में रखा था। एथेंस के राजकुमार थ्यूसियस ने क्रीट की राजकुमारी अरियाद्ने (Ariadne) की सहायता से इस दैत्य का वध कर दिया। उसी ने थ्यूसियस को भूलभुलइयों की कुंजी दी थी। इतिहासकार मिनास को फ़ेराओ की भाँति शासक की पदवी का नाम मानते हैं, एक शासक का नाम नहीं। मिनास एक विशाल नौसेना का मालिक था और एक शक्तिशाली शासक था।

क्रीट का प्राचीन नाम क्रीटा अथवा कण्डिया था और उसकी राजधानी का नाम कानिया था। ई० पू० की पाँचवीं शताब्दी में कई जातियों के लोग यहाँ आकर बस गये थे। ई० पू० की चौथी शताब्दी में ग्रीस के दार्शनिक व इतिहासकार क्रीट की ओर आकर्षित हुए। ३३० ई० पू० में विदेशी जातियों का हस्तक्षेप आरम्भ होने लगा। जब ग्रीस में नगर – राज्य आपसी गृह – युद्ध करने लगे तो ग्रीस ने सैनिकों को यहाँ भर्ती करना आरम्भ कर दिया। अब क्रीट समुद्री – डाकुओं के छिपने का एक मुख्य स्थान बन गया। ई० पू० की दूसरी शताब्दी में रोम ने क्रीट पर एक दृष्टि डाली और ६७ ई० पू० में यह रोमन साम्राज्य का एक प्रान्त बन गया।

इस रोमन शासन काल में भी क्रीट विद्रोही तथा अशास्य समझा जाता रहा जहाँ जनसंहार होते रहते थे और समुद्री डाकू, व्यापारी जलपोतों को लूटते रहते थे। ८३२ ई० सन् में अरब व सीरिया के लुटेरों ने आकर अपना अधिकार जमा लिया और ९६० तक यह मुसलमानों के अधिकार में रहा। तदनन्तर निकेफ़ोरस फ़ोकस (Nicephorus Phocas) ने इसको अपने अधीन कर लिया। १२०४ में धार्मिक – युद्ध (क्रूसेड्स) करने वालों ने इसको अपने अधीन करके बोनीफ़ेस (Boniface) को दे दिया जिसने क्रीट को वेनिस (Venice) के हाथों बेंच दिया। १२१० में वेनिस का एक प्रांतपति नियुक्त कर दिया गया। अब वेनिस और क्रीट का सम्मिश्रण आरम्भ हुआ जिसके फलस्वरूप एक नये प्रकार की संस्कृति ने जन्म लिया।

अनेक युद्ध हुये, अनेक शासक आये और गये। इसी प्रकार के परिवर्तनों में १८३७ में क्रीट टर्की साम्राज्य का एक प्रांत बन गया। १४ नवम्बर १८९८ को टर्की की सारी सेना ने इस द्वीप को छोड़ दिया और यह ग्रीस के अधीन हो गया। २६ जुलाई १९०९ को अन्य विदेशी सैनिकों ने यहाँ से कूच कर दिया और ग्रीस का झण्डा फहराने लगा। दूसरे महायुद्ध में कुछ दिनों के लिये यह जर्मनी के अधीन रहा परन्तु महायुद्ध के अन्त होने तक यह ग्रीस के अधिकार में आकर सदैव के लिये ग्रीस देश का एक अभिन्न अंग बन गया। आज भी प्राचीन खण्डहर रो रो कर क्रीट की प्राचीन संस्कृति की कहानी सुनाते हैं।

माइसीनिया

१४०० ई० पू० में क्रीट तो नष्ट हो गया परन्तु उसकी संस्कृति माइसीनियन संस्कृति के नाम से ग्रीस के मुख्य भू भाग पर जीवित रही। माइसीनिया क्रीट का उत्तराधिकारी बन गया। माइसीनिया व क्रीट की संस्कृतियों

का मिलन तो उसी समय से आरम्भ हो चुका था जब से माइसीनिया के चरण क्रीट पर लगभग १५०० ई० पू० में पड़े थे। क्रीट के नष्ट हो जाने से क्रीट की संस्कृति का केवल स्थानातरण हुआ था।

माइसीनिया की संस्कृति के विषय में लगभग सभी विद्वान् एक मत हैं कि उसका विकसित काल १५५० से ११०० ई० पू० तक रहा। यह धारणा पुरातात्त्विक सामग्री के उत्खनन द्वारा प्रामाणित हो चुकी है। लगभग १५०० ई० पू० में माइसीनियन संस्कृति ने ग्रीस की भूमि पर अनेक केन्द्र नगर – राज्यों के रूप में स्थापित कर दिये थे जो इस प्रकार थे—थेसली में इयोलकास नगर – राज्य, बोयेशिया में थीबीज़ और आर्कोमिनास के नगर – राज्य, अट्टिका में ऐथेंस का नगर – राज्य तथा पेलोपोनेसस में पाइलस व माइसीनिया के नगर–राज्य। यह सब केन्द्र ग्रीस की पूरी उपजाऊ भूमि पर अपना अधिकार जमाये हुये थे। शेष भूमि पर्वत-मालाओं से घिरी थी। यातायात का साधन केवल सागर था।

११०० ई० पू० में डोरियन (Dorian) तथा अक्काइयन (Achaean) जातियों ने, जिनको लगभग सभी प्राचीन इतिहासकार आर्य मानते हैं, माइसीनिया की सभ्यता को नष्ट किया। उनके नगर राज्यों को या तो अपने अधीन कर लिया या नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। इन दो जातियों के आगमन के प्रश्न पर इतिहासकारों में मतभेद हैं। कुछ विद्वानों का मत है कि वे बाल्कन पर्वतों से आये और कुछ की धारणा है कि वे अनाटोलिया (Anatolia), आधुनिक टर्की (Turkey) से पधारे। पुरातत्त्व वेत्ता उनका आगमन उत्खनित सामग्री के आधार पर, जैसे घोड़ों की हड्डियां, अस्त्र-शस्त्र आदि, अनाटोलिया की ओर से मानते हैं। इसी आगमन के पश्चात् से ग्रीस के इतिहास का श्री गणेश हुआ। इन जातियों ने अपने नगर – राज्य स्थापित किये जिनमें आपसी युद्ध चलते रहे, उस समय तक जब तक ग्रीस में एक राष्ट्रीय–भावना की एकता जागृत नहीं हुई।

लेखन कला का इतिहास

जिस प्रकार प्रत्येक प्राचीन देश में लेखन कला का उद्भव पुरातात्त्विक सामग्री के उत्खनन पर निर्भर करता है उसी प्रकार क्रीट व माइसीनिया में भी जब तक वैज्ञानिक रूप से उत्खनन नहीं हुआ प्राचीन लेखन कला का ज्ञान संसार को न हो सका।

१८७० के पूर्व तक होमर (Homer) के वीर काव्यों को एक कल्पना मात्र ही समझा जाता रहा और ट्रॉय (Troy) का नगर भी एक पौराणिक कालीन नगर माना जाता रहा। प्रसिद्ध इतिहासकार जॉर्ज ग्रोट (George Grote) का भी यही विचार था। १८६८ में जर्मनी का एक व्यापारी हाइनरिख शिलीमान (Heinrich Schliemann–b. 1822) ग्रीस पहुँचा और १८७१ में उसने हिसार्लिक (Hissarlik) के खण्डहरों में, जो ट्राय का नष्ट नगर समझा जाता था, उत्खनन आरम्भ किया। जहाँ एक नहीं लगभग ९ नगर एक के ऊपर एक निकले। इस उत्खनन ने होमर के ट्रॉय को पुनर्जीवित कर दिया। उसने माइसीनिया में भी उत्खनन किया। तत्पश्चात् १८९० में शिलीमान की मृत्यु नेपिल्स (Naples) में हो गई। वह क्रीट भी जा रहा था और चालीस हज़ार फ्रैंक्स उस भूभाग के दाम भी निश्चय हो गये थे परन्तु वह धोखे से बच गया क्योंकि उत्खनित सामग्री टर्की-राज्य की हो जाती।

१८८९ में ऑक्सफ़ोर्ड के एश्मोलियन संग्रहालय (Ashmolean Museum) का रक्षक (Keeper) आर्थर ईवान्स (Arthur Evans) था। ग्रेविले चेस्टर (Greville Chester) ने उसके पास क्रीट का मुद्रा-पत्थर (Seal-Stone) भेजा जिस पर कुछ अज्ञात चिह्न व चित्र उत्कीर्ण थे। इस पत्थर ने उसके मन में ऐसी प्रेरणा जागृत की जिसके कारण वह ग्रीस की ओर चल दिया और १८९४ में वह क्रीट पहुँच गया। उसने अपने

कार्य करने की योजना के लिये छान–बीन आरम्भ कर दी। १८९६ में ईसाई तथा मुसलमानों में उपद्रव आरम्भ हो गये। १८९९ में उसने ग्रीस के राजकुमार से एक नासास (Knossos) के निकट भू-भाग मोल लिया और ३० मार्च १९०० में उसने अपना उत्खनन कार्य आरम्भ कर दिया।

इस उत्खनन द्वारा उसको सहस्रों की संख्या में मिट्टी की पाटियाँ प्राप्त हुई तथा एक विशाल राजमहल दृष्टिगोचर हुआ जिसमें विशाल कमरे, महाकक्ष, ऊपर – नीचे खण्ड, जल–निर्गम–प्रणाली तथा गर्म व ठण्डे जल से स्नान करने का प्रबन्ध आदि उपस्थित थे। ईवान्स ने प्राचीन काल की इस उच्च कोटि की संस्कृति का नाम पौराणिक शासक मिनास के नाम पर मिनोअन संस्कृति रखा। यही नाम अब सारे विद्वान् प्रयोग करते हैं।

ईवान्स ने भिन्न-भिन्न प्रकार की सामग्री का निरीक्षण करके इस संस्कृति को तीन भागों में तथा तीनों भागों को पुनः तीन-तीन भागों में विभाजित कर दिया, जो निम्नलिखित हैं :—

१—पूर्वकालीन युग (Early Minoan = E M)

- E M – I, ३२०० ई० पू० } मिस्र में प्राचीन राज्य (Old Kingdom) का शासन था।
- E M – II, २६०० ई० पू० }
- E M – III, २४०० ई० पू०

२—मध्यकालीन युग (Middle Minoan = M M)

- M M – I, २२०० ई० पू०—मिनास के राजमहल का निर्माण हुआ।
- M M – II, २००० ई० पू०—राजमहल को नष्ट किया परन्तु पुनः निर्माण हुआ।
- M M – III, १८०० ई० पू०—फिर आक्रमण हुये, विध्वंस हुआ, निर्माण हुआ।

३—उत्तरकालीन युग (Late Minoan = L M)

- L M – I, १५५० ई० पू०—मिस्र की पाटरी प्राप्त हुई। माइसीनियन लोग आकर बसे।
- L M – II, १४५० ई० पू०—१४०० के लगभग पूर्णतया नष्ट होकर उजड़ गया।
- L M – III, १३७५ ई० पू०—पुनः कुछ लोग आकर बसे परन्तु चले गये।

इस उत्खनन ने विद्वानों के मन में एक नवीन उत्सुकता उत्पन्न कर दी और यह जिज्ञासा जागृत हुई कि क्रीट की इस उच्च कोटि की संस्कृति के जन्मदाता कौन थे। इसका उत्तर निम्नलिखित विद्वानों ने दिया :—

थ्यूकीडाइडीज़ (Thucydides) ने कहा कि क्रीट का शासक मिनास ग्रीक था। **हेरोडोटस** ने कहा कि ग्रीक नहीं था। **होमर ने कहा** कि क्रीट में पाँच प्रकार की जातियाँ निवास करती थीं। **डार्पफ़ेल्ड** (W. Dorpfeld), जो शिलीमान का, ट्राय के उत्खनन में, एक सहायक था, ने कहा कि क्रीट व माइसीनिया की संस्कृति फ़िनीशियन संस्कृति है। **एक प्राचीन इतिहासकार एडवर्ड मीयर** (Eduard Meyer) ने कहा कि क्रीट की संस्कृति प्राचीन एशिया माइनर की संस्कृति है। **परन्तु ईवान्स** ने कहा कि क्रीट के मूल निवासी अफ़्रीका तथा मिस्र के निवासी थे तथा माइसीनिया ने क्रीट को नष्ट किया। यह विचार ईवान्स की मृत्यु (१९४१) तक अटल रहे और किसी ने इनका खण्डन नहीं किया। उसकी मृत्यु के पश्चात् पुनः विद्वान् अपने अनुमान लगाने लगे।

कुछ विद्वानों का विचार था कि क्रीट ने ग्रीस के मुख्य भूभाग पर आक्रमण किया।

ईवान्स ने क्रीट की लिपि, जो चित्रात्मक, भावात्मक तथा अक्षरात्मक थी, को दो मुख्य भागों में विभाजित किया। एक लाइनियर – ए[1] तथा दूसरी लाइनियर – बी। लाइनियर – ए का काल १७०० से १५०० ई० पू० निर्धारित किया तथा लाइनियर – बी का काल १४५० ई० पू० निर्धारित किया।

ईवान्स के अतिरिक्त निम्नलिखित पुरातत्त्व-वेत्ताओं ने उत्खनन कार्य सम्पन्न करके तथा पुरातात्त्विक सामग्री पर शोध करके अपने अपने निष्कर्ष संसार के समक्ष रखे :—

जी० पी० केरातेल्ली (G. P. Carratelli) ने लाइनियर – ए के २५० अभिलेखों का निरीक्षण किया तथा ८५ चिह्नों को प्रकाशित किया और सिद्ध किया कि लिपि अक्षरात्मक तथा संकेतात्मक है। एक अमेरिकन **सी० डबल्यु० ब्लेगन** (C. W. Blegan) तथा एक ग्रीक **कुरुनियातिस** (Kurumiotis) ने १६३६ में पाइलस (Pylos) के निकट इपानो इंगलियानस (Epano Englianos) में एक राजमहल का उत्खनन किया जिसमें से अनेक अभिलेख वहाँ के तात्कालिक शासक के अभिलेखालय से प्राप्त हुये। जिनका काल १२०० ई० पू० निर्धारित किया गया है। ब्लेगन ने पुनः १६५२ के उत्खनन द्वारा ४०० मिट्टी की पाटियाँ भूगर्भ से निकालीं। **अंग्रेज वेस** (Wace) **तथा ग्रीक मैरीनैटस** (Marinatos) ने १३ वीं श० के ३६ अभिलेखों को प्राप्त किया। **सिल्तिक** (Siltiq) ने सिप्रियाटिक तथा लाइनियर – बी के चिह्नों को समान बताया। **हैलभर** (Halbherr) ने हैगिया त्रियदा (Hagia Triada) के शासकीय महल के उत्खनन से १५० छोटी छोटी मिट्टी की पाटियाँ निकालीं। **एक स्वीडन के विद्वान् फ़ुरुमार्क** (Furumark) ने लाइनियर – बी का काल १६०० ई० पू० निर्धारित किया। **ए० ई० कावले** (A. E. Cowley) के मतानुसार लाइनियर – एवं बी की भाषा एक है।

ईवान्स ने १९०९ में लण्डन से अपनी 'स्क्रिप्टा मिनोआ' (Scripta Minoa) प्रकाशित की जिसमें १७२२ पाठों (Texts) का उल्लेख था। उसमें इस बात का भी उल्लेख किया गया था कि १४५० से १२०० तक के भवनों में स्याही का भी प्रयोग किया गया है। २५ वर्ष पश्चात् ईवान्स ने अपनी पुस्तक[2] में १२० पाटियों का उल्लेख किया है परन्तु फिर भी ३००० पाटियाँ उसकी मृत्यु तक प्रकाशित न हो सकीं। उसके मरणोपरांत उसके सहयोगी जे० एल० मेयर्स ने 'Scripta Minoa II' के नाम से १९५२ में प्रकाशित किया।

ब्लेगन द्वारा १९३९ के उत्खनन की पाटियों को सिन्किनाती विश्वविद्यालय के एक विद्वान् एमेट एल० बेनेट (Emmett L. Benett) के पास निरीक्षण के लिए भेज दी गई जिनका निष्कर्ष विश्व के समक्ष – पाइलस की पटियाँ "The Pylos Tablets (1951)" – के रूप में आया। उसी काल ब्रुकलिन (Brooklyn) में एक अमेरिका निवासी एलिस ई० कोवर (Alice E. Kober) – के १९४३ से १९५० तक के लेख प्रकाशित हुये।

१९५२ में क्रीट व माइसीनिया के अभिलेखों के रहस्योद्घाटन पर दो शोधकर्ता दो भिन्न स्थानों पर अपने अपने कार्य में संलग्न थे। उनके नाम माइकिल वेन्ट्रिस (Michael Ventris) तथा जॉन चैडविक

1. Jordon, C. H. : First Pub. in J. of 'Near Eastern studies', Vol. xvii (1958), P – 145.

2. Palace of Minos (1935).

(John Chadwick) थे। इन दोनों विद्वानों ने सुण्डवाल, बेनेट तथा कोबर के शोध कार्यों का अध्ययन किया था। उस अध्ययन के तथा अपने परिश्रम के आधार पर १९५६ में लाइनियर – बी की एक वर्णमाला प्रस्तुत की। तत्पश्चात् बेनेट ने भी लगभग १०० संकेतात्मक चित्रों की एक तालिका प्रस्तुत की।

क्रीट की चित्रात्मक लिपि – 'फ० सं० – ३२५' पर ऊपर की ओर कुछ चित्र[1] दिये गये हैं जो क्रीट निवासियों ने आरम्भ में अपनी लिपि के लिये बनाये। उसी के नीचे चित्रों द्वारा लाइनियर – ए एवं लाइनियर – बी के वर्णों की रचना को तथा उनकी ध्वनि निर्धारित की।

माइसीनिया की वर्णावली[2] – 'फ० सं० – ३२६' में ऊपर पाँच स्वरों के चिह्न – वर्ण दिये गये हैं तथा कुछ वर्णों के चिह्न दिये गये हैं जिनके साथ स्वरों को जोड़ कर उनकी ध्वनि दी गई है। यहाँ के उत्खनन में अनेक पाटियाँ[3] निकलीं।

पाइलस की त्रिपद पाटिया – (फ० सं० – ३२७ – ३२७) क : १९३९ – ५२ में पाइलस (Pylos) के निकट एक राजमहल में उत्खनन किया था और उत्खनन सामग्री का निरीक्षण कर इसको 'पाइलस टैबलेट्स' (Pylos Tablets)[4] के नाम से १९५५ में प्रकाशित करवाया और इसका रहस्योद्घाटन वेन्ट्रिस और चैडविक ने किया। यह एक तीन पैर वाली पाटिया (Tripod Tablet) है जो पाइलस के उत्खनन से प्राप्त हुई थी। इसमें शब्द चिह्न भी दिये गये हैं। यह पद्धति सम्भवतः क्रीट निवासियों ने मिस्र से सीखी होगी। इस चित्र के शब्दों में कुछ आर्य भाषा (संस्कृत) का आभास मिलता है।

क्रीट की लाइनियर – 'ए' के चिह्न 'फ० सं० – ३२८' में क्रीट की लाइनियर 'ए' के चिह्न दिये गये हैं जिनका निरीक्षण कैरातिल्ली (G. P. Carratelli) ने किया था। अभी इन चिह्नों का निर्णयपूर्वक रहस्योद्घाटन नहीं किया जा सका है। जार्डन ने भी इसका अध्ययन[5] किया।

फ़ैस्टास चक्रिका 'फ० सं० – ३२९' : इस चित्र में एक मिट्टी की चक्रिका[6] के दोनों ओर के संकेतात्मक चित्र दिये गये हैं। इसका नाम फ़ैस्टास डिस्क (Phaistos Disc) रखा गया है क्योंकि यह १९०८ में एक इटली निवासी पुरातत्त्व – वेत्ता लुईगी पर्नियर (Luigi Pernier) द्वारा क्रीट के एक राजमहल से, जो फ़ैस्टास में स्थित था, उत्खनन में प्राप्त हुई। यह चक्रिका पकी हुई मिट्टी की बनी है। इसका व्यास लगभग ६ इंच है। इसका काल १७०० ई० पू० के लगभग का निर्धारित किया गया है।

इसमें दोनों ओर के चिह्न मिलाकर २४१ हैं। एक ओर इसमें ३१ अनुभाग तथा १२३ चिह्न हैं और दूसरी ओर ३० अनुभाग तथा ११८ चिन्ह हैं। इसका आरम्भ बाएँ से दाएँ हुआ है। कारण यह है कि चित्रों के मुँह सीधी ओर हैं। इसमें पर्नियर के अनुसार ४५ प्रकार के चिह्न हैं।

---

1. Evans, A. J. : 'Primitive Pictographs' – J. of Hellenic Studies(1898), p – 270.
2. Ventris And Chadwick : 'Evidence for Greek Dialect in Mycenaean Archives' – Journal of Hellenic Studies, Vol. LXXIII, page – 86.
3. Wace, A. J. B. : 'The Discovery of Inscribed Clay Tablets at Mycenaea' – Antiquity – 27, (1953), p – 84.
4. Blegen and Bennett : The Pylos Tablets, Texts of Inscriptions Found (1939 – 54), Published in 1955, p – 271.
5. Jordon, C. H. : Journal of Near Eastern Studies, Vol. XVII (1958), p – 245.
6. Evans, A. J. : Scripta Minoa, Vol. 1, Plate – XII (1909) p – 275.

जब यह चक्रिका संसार के विद्वानों के समक्ष आई, उन्होंने अपने अनुमान लगाने आरम्भ कर दिये। उदाहरणार्थ मेकेंज़ी (Mackenzie), ईवान्स, मायर्स (Myers), पेन्डिलबरी (Pendlebury) एवं बोस्सर्ट (Bossert) के विचार हैं कि यह एनाटोलिया (आधु० टर्की) से लाई गई है। मैकालिस्टर (Macalister) का विचार है कि जो कलगीदार सिर के चित्र से आरम्भ होनेवाले अनुभाग हैं वे किसी शासक के नाम हैं। कुमारी स्टावेल (F. M. Stawell) का विचार है कि यह ज़्यूस देवता की माँ रिया की प्रार्थना (Hymn) है। एफ़० सी० जार्डन (F. C. Jordan) के विचार से यह प्रार्थना वर्षा – देवता के लिये की गई है। सुन्डवाल (Sundwall) के विचार से इस चक्रिका के चिह्न क्रीट से लिये गये हैं अभी तक फ़ैस्टास चक्रिका की समस्या सुलझ नहीं सकी है कि यह किससे सम्बन्धित है तथा इसके गूढ़ाक्षर क्या हैं। विद्वान् अपने शोध कार्य में रत हैं और एक दिन इस समस्या का हल संसार के समक्ष अवश्य आ जायेगा।

अभी कुछ दिन पूर्व जोहान्सवर्ग के विटवाटर्सरैंड विश्वविद्यालय के प्रो० एस० डेविड ने पिछले कुछ वर्षों में इस गोल चक्रिका का सूक्ष्म अध्ययन किया और इसके पाठ को राजमहल की प्रतिष्ठा में फ़ेस्टास के राजा नोकियल द्वारा किये गये भक्तिपूर्ण अनुष्ठान का सूचक माना है। उनकी आधुनिकतम प्रस्थापनाएँ बहुत शीघ्र ग्रंथ – रूप में प्रकाशित होंगी।
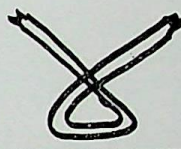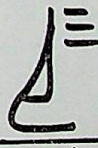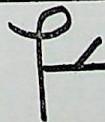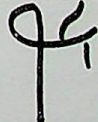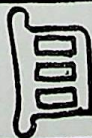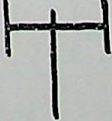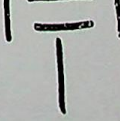
पठनीय सामग्री

Allen, A. B. : Romance of Alphabet (1937).

Baikie, J. ; Ancient Crete (1924).

Bennett, E. L. ; A Minoan Linear – B – Index (1953).

Ibid ; Pylos Tablets (1955).

Blegen, C. W. and Bennett Browning, R. : The Pylos Tables and Texts Found in 1939 – 54. (1955).
: 'The Linear – B Texts from Knossos – Transliterated and Edited' – Bulletin of the Institute of Class Studies of the University of London. (1955).

Casson, S. : Ancient Cyprus (1937).

Cleater, P. E. : Lost Languages (1962).

Daniel, J. F. : 'Prolegomena to the Cypro – Minoan Script' – American Journal of Archaeology – 45 (1941).

Evans, A. J. : Cretan Pictographs and Pre – Phoenician Script (London – 1895).

Ibid : Scripta Minoa – 1 (Oxford – 1909).

Ibid : Palace of Minos – 1 – IV (London 1921).

Freese, J. H. : A Short Popular History of Crete (1897).

Gelb, I. J. : A Study of Writing (1952).

Hall, H. R. : The Relation of Aegean with Egyptian Art – J. of Egyptian Arch. (1925).

Hutchinson, *R. W.* : Prehistoric Crete (1951).

Jordon, *C. H.* : 'Minoan Linear – A' – Journal of Near Eastern Studies, XVII – (1958).

Karageorghis. *V.* : Ancient Civilization of Cyprus (1951).

Newman, *P.* : A short History of Cyprus (1940).

Palmer, *L. R.* : Mycenaeans and Minoans (1932).

Persson, *A. W.* : Schrift und Sprache Alt Kreta (Uppsala – 1950).

Pigott Stuart : Dawn of Civilization (1928).

Pike, *E. R.* : Finding Out about Minoans (1963).

Taylor, *William* : The Mycenaeans (1964).

Thumb, *A*, *and Scherer* : Handbuch der griechischen Dialekte II (Heidelberg—1959).

Ventris, *M. and Chadwick*, *J.* : The Decipherment of Linear – B (Cambridge – 1958).

Ibid : Documents in Mycenaean Greek (1956).

Ibid : 'Evidence for Greek Dialect in Mycenaeans Archives' – J. of Hellenic Studies, LXXII (1953).

Ibid : Languages of Minoan and Mycenaean Civilization (N. Y. – 1950).

Ibid : Ancient History of West Asia, India and Crete (1944).

Wace, *A. J. B.* : 'The Discovery of Inscribed Clay Tablets at Mycenaea' – Antiquity – 27 (1953).

□

क्रीट की चित्रात्मक लिपि

फलक संख्या – ३२५

माइसीनिया की वर्णावली

ध्वनि→	अ	ए	ई	ओ	ऊ
स्वर					
द		दे	दी	दो	दू
ज		जे		जो	
क		के	की	को	कू
म		मे	मी	मो	मू
न		ने	नी	नो	नू
प		पे	पी	पो	पू
क़		क़े	क़ी	क़ो	
र		रे	री	रो	रू
स		से	सी	सो	सू
त		ते	ती	तो	तू
व		वे	वी	वो	
ज़		ज़े		ज़ो	ज़ू

फलक संख्या – ३२६

पाइलस की त्रिपद पाटिया

ती री पो दे ऐ के ऊ के रे सी जो वे के
त्रीपद ऐकेऊ केरेटन के वक
TRIPOD AIGEUS OF CRETAN WORK

२ ती री पो ए मे पो दे ओ वो वे
दो त्रीपद ? पाद ?
TWO TRIPOD FOOT

१ ती री पो के रे सी जो वे के अ पू कऊ मे
एक त्रीपद केरेटन के वक जल गया
ONE TRIPOD OF CRETAN WORK BURNT

क़े तो ३ दी प मे ज़ो ए क़े तो रो वे
? तीन दीप बड़े चार हत्थे वाले
THREE CUP LARGE FOUR HANDLED

पाइलस की त्रिपद पाटिया

फलक संख्या – ३२७ क

क्रीट की लाइनियर-ए के चिन्ह

फलक संख्या – ३२८

फ़ैस्टास चक्रिका (दोनों ओर के चित्र)

फलक संख्या – ३२६

ग्रीस के नगर राज्य

लगभग ६०० ई० पूर्व में ग्रीस की भूमि पर अनेक नगर-राज्य थे जिनमें लिपियों का विकास फ़िनीशिया की लिपि से ही हुआ था परन्तु उनमें कुछ भिन्नता थी। उन्ही नगर-राज्यों का संक्षिप्त वर्णन यहां दिया जा रहा है।

एथेन्स

इतिहास : ग्रीस की प्राचीन संस्कृति १५०० से ११०० ई० पू० तक जीवित रही। तदनन्तर उत्तर से आक्रमण हुये और नगर राज्यों का जन्म होने लगा। इन नगर – राज्यों में दो नगर बड़े प्रसिद्ध थे। एक स्पार्टा (Sparta) तथा दूसरा एथेन्स (Athens)। एथेन्स का अपना एक राज्यक्षेत्र था जिसका नाम अट्टिका (Attica) था। ई० पू० की सातवीं श० में एथेन्स बड़ा शक्तिशाली राज्य था। ६८३ ई० पू० में एथेन्स ने वंशानुगत राजाधिकार का उन्मूलन कर दिया। ५६४ ई० पू० में सोलोन (Solon) ने एक नयी विधि – संहिता (Law Code) स्थापित की। तदनन्तर कई राजाओं ने राज्य किया जिसमें पिसिसट्रेटस (Pisitratus), जिसने ५६० से ५१७ ई० पू० तक राज्य किया, बड़ा प्रसिद्ध था।

५०८ ई० पू० में क्लिस्थिनोज़ (Cleisthenes) ने सुधार किये और प्रजातंत्र का जन्म हुआ। ४९३ ई० पू० में थेमिस्टाकिल्स (Themistocles) एथेन्स के ९ न्यायधीशों में से प्रथम न्यायधीश – शासनाधिकारी निर्वाचित हुआ। उसने एक विशाल नौसेना की स्थापना की क्योंकि उसको पर्शिया के आक्रमण की अनुभूति हो गई थी। ४९० में पर्शिया को अट्टिका में मराथन (Marathon) युद्ध में पराजित किया। ४८० में ज़रक्सीज़ ने सलामिस (Salamis) को नष्ट कर दिया। थर्माप्ली के युद्ध में स्पार्टा (पेलोपोनीशियन लीग – Peloponnesian League) के सहयोग से पर्शिया को पुनः परास्त किया। अब एथेन्स की क़िलाबन्दी कर दी गई।

एथेन्स पेरिकिल्स (Pericles) के शासन काल (४६० – ४३१) में बड़ा वैभवशाली हो गया तथा पेलोपोनीशियन लीग[1] से पृथक हो गया और स्पार्टा से युद्ध करने में रत हो गया। ४३१ से ४०४ ई० पू० तक स्पार्टा से दूसरा युद्ध हुआ। ३९९ ई० पू० में सुकरात (Socrates) को विष – पान द्वारा मृत्यु का दण्ड दिया। कोरिंथियन के युद्ध में एथेन्स ने स्पार्टा के विरुद्ध कोरिंथ का साथ दिया। ३३८ ई० पू० में मेसीडोन (Macedon) के शासक फ़िलिप द्वितीय (Phillip II) से युद्ध हुआ जिसमें एथेन्स की पराजय हुई और एथेन्स मेसीडोनिया के अधीन हो गया। ३३२ तक उसी के शासन में रहा।

इसी बीच एथेन्स ने रोम से मित्रता कर ली और उसी की सहायता से मेसीडोनिया के शासन से स्वतंत्रता प्राप्त कर ली। इस स्वतंत्रतां के लिये १९७ ई० पू० में साइनास्की फ़लाइ (Cynosce – phalae) में एक युद्ध लड़ना पड़ा जिसमें मेसीडोनिया परास्त हुआ। अब एक अकाईयन लीग (Aehaean Laegue) बन गई। १४६ ई० पू० में रोम ने इस लीग को समाप्त कर दिया और अकाईया रोमन साम्राज्य का एक अंग बन गया।

---

1. कुछ राज्य मिल कर एक संघ बना लेते थे और वे राज्य एक दूसरे की हर प्रकार की सहायता करने के लिये वचन-बद्ध होते थे।

५४ ई० सन् में यहाँ सेन्ट पॉल (St. Paul) आया। ३९५ ई० सन में एथेन्स को गोथ्स (Goths) ने अपने अधीन कर लिया। १२०४ में यह इटली के अधीन हो गया।

१४५६ में ओटोमन (ओथोमान – उसमान) तुर्कों ने इसको अपने अधीन कर लिया। १६८७ में वेनिस निवासियों ने अपने अधिकार में ले लिया। १८३५ में एथेन्स आधुनिक ग्रीस की राजधानी बन गया। दूसरे महायुद्ध की १९४१ में जर्मनी के अधिकार में आ गया और १४ अक्टूबर १९४४ को स्वतंत्र हो गया।

किर्चोफ़ ने इस लिपि के वर्णों का नाम हल्का नीला (Light Blue) रखा है और यह साइक्लेड्स (Cyclades) के द्वीप समूह में, एथेन्स, सलामिस व एजीना में लगभग ई० पू० की सातवीं व छठवीं शताब्दी में प्रचलित थी। इसकी दिशा बाएँ से दाएँ थी।

'फ० सं० – ३३०' पर इस लिपि के वर्ण तथा सातवीं श० का एक अभिलेख जो एथेन्स से प्राप्त हुआ था नीचे दिया गया है। परन्तु इस अभिलेख का पाठ दाएँ से बाएँ है। अभिलेख का अनुवाद "अब जो नृत्य करने वालों में से सबसे अच्छा नृत्य करेगा, वह इसको प्राप्त करेगा।" इस अभिलेख का रहस्योद्घाटन किर्चोफ़ ने किया है।

कोरिंथ

इतिहास : कोरिंथ (Corinth) का इतिहास डोरियन काल (लगभग ई० पू० को ग्यारहवीं श०) से आरम्भ होता है जब डोरियन लोगों के आक्रमण उत्तर की ओर से आरम्भ होने लगे थे। इस नगर – राज्य का संस्थापक एक पौराणिक एलेटीज़ (Aletes) अर्थात् घुमक्कड़ था। इसी काल में यहाँ फ़िनिशिया के निवासी भी आकर बसने लगे थे।

आठवीं श० से कोरिंथ ने अपने उपनिवेश स्थापित करना आरम्भ कर दिये थे। उसका प्रथम उपनिवेश ग्रीस के पश्चिम में एक द्वीप कोर्सीरा था तथा दूसरा सीराकूज़ (Syracuse), सिसली का एक नगर था। उस समय कोरिंथ की सामुद्रिक शक्ति अपनी चरम सीमा पर थी। कोर्सीरा ने कोरिंथ के विरुद्ध विद्रोह कर दिया और फलस्वरूप ६६४ ई० पू० में एक युद्ध हुआ। ६५२ ई० पू० एलेटीज़ के वंशज बक्कहीस (Bacchis) अन्तिम शासक को कांइप्सेलस (Cypselus) ने परास्त कर दिया और स्वयं एक शक्तिशाली राजा बन गया। उसने अम्ब्रेसिया (Ambracia), एनक्टोरियम (Anactorium) तथा ल्यूकास (Leucas) के उपनिवेशों को स्थापित किया। उसने अपने राज्य में सर्वप्रथम मुद्रा का प्रचलन आरम्भ किया। उसके मरणोपरांत उसका पुत्र पेरि्यण्डर (Periander) शासक बना जिसने ६२५ से ५८५ ई० पू० तक शासन किया। उसने भी अपनी नौसेना को शक्तिशाली बना कर दो नये उपनिवेश अपोलोनिया (Apollonia) तथा पोतीदइया (Potidaea) स्थापित किये। पेरि्यण्डर की मृत्यु के पश्चात् राजसत्ता एक शासक से निकल कर कुछ धनी – नागरिकों के हाथ में आ गई और कोरिंथ एक धनी-तांत्रिक (Oligarchy) राज्य स्थापित हो गया। यह शासन कर्ता व्यापार की उन्नति में संलग्न रहते थे।

५०७ ई० पू० में कोरिंथ भी स्पार्टा की पेलोपोनीशियन लीग का एक सदस्य बन गया और स्पार्टा के विरुद्ध एथेन्स के प्रजातन्त्र का साथ दिया। ४८० ई० पू० में पर्शिया के युद्ध में अपनी पूरी शक्ति के साथ भाग लिया। कुछ दिनों के पश्चात् यह एथेन्स के विरुद्ध हो गया और ४६२ – ४४६ के मध्य इन दोनों में युद्ध हुये। एथेन्स ने कोरिंथ के व्यापार को बड़ी हानि पहुँचाई परन्तु इससे अधिक हानि कोर्सीरा के विद्रोह तथा एपीडेमनस के गृह-युद्ध द्वारा पहुँची। युद्ध में कोरिंथ परास्त हो गया और एपीडेमनस (एपोलोनिया के उत्तर में) कोर्सीरा का उपनिवेश बन गया। कोर्सीरा अब एथेन्स का मित्र बन गया।

एथेन्स की लिपि के वर्ण

एथेन्स की लिपि का एक अभिलेख

Who now of all the dancers performs most gracefully, he shall receive this.

फलक संख्या – ३३०

अब कोरिंथ ने पेलोपोनीशयन लीग को एथेन्स के विरुद्ध उकसाया और युद्ध की घोषणा कर दी जिसमें स्पार्टा को एथेन्स के विरुद्ध अनिच्छा से लड़ना पड़ा। इसमें कोरिंथ को अपने अन्य उपनिवेशों से हाथ धोना पड़ा। अन्त में ४२१ ई० पू० में निकियास (Nicias) में एक सन्धि हो गई परन्तु सन्धि से कोरिंथ असन्तुष्ट रहा। अब स्पार्टा का युद्ध ४२८ ई० पू० में एथेन्स से पुनः हुआ जिसमें मन्तीनिया में तथा ४१५ में सिसली में एथेन्स की पराजय हुई। इस युद्ध में कोरिंथ को स्पार्टा का साथ देना पड़ा तथा सीराकूज़ का भी साथ दिया। अब स्पार्टा एथेन्स का साथी हो गया। इस बार के युद्ध में जो पुनः स्पार्टा और एथेन्स के मध्य हुआ कोरिंथ ने स्पार्टा के विरुद्ध थीबीज़, अर्गास और एथेन्स का साथ दिया। परन्तु इस युद्ध में कोरिंथ की बड़ी हानि हुई और वह अर्गास के अधीन हो गया। ३८६ में उसने पुनः पेलोपोनीशियन लीग की सदस्यता स्वीकार कर ली।

३४३ ई० पू० में मेसीडोन के राजा फ़िलिप द्वारा कोरिंथ को बड़ी हानि पहुँची और उसको फ़िलिप के अधीन होना पड़ा। ३३८ में कोरिंथ फ़िलिप की हेलेनिक लीग (Hellenic League) का केन्द्र बन गया। दो वर्ष पश्चात् सिकन्दर ग्रीस का निर्विरोध नेता बन गया। अब कोरिंथ व्यापार का एक मुख्य केन्द्र बन गया। १४३ ई० पू० में एराटस (Aratus) ने इसको स्वतन्त्र कर लिया और अकाईयन लीग का सदस्य बन गया। २९६ ई० पू० में फ़्लेमिनस (Flaminus) ने रोम के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। १४६ ई० पू० में मेमियस (Memmius) ने कोरिंथ को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया और वहाँ की कला का एक विशाल संग्रह अपने साथ रोम ले गया।

लगभग २०० वर्ष तक कोरिंथ खण्डहर की दशा में पड़ा रहा परन्तु सीज़र ने उसके पास एक नवीन नगर की स्थापना की और उसका नाम भी कोरिंथ रखा। रोम के शासक आगस्टस के काल में अकाइया रोम का एक प्रान्त बन गया और कोरिंथ पुनः समृद्धशाली होने लगा। ग्रीस में ईसाईयों की सर्वप्रथम बस्ती सन् ५४ में सेंट पॉल द्वारा कोरिंथ में बनी।

ईसवी सन् की तीसरी शताब्दी में अन्य नगर – राज्यों की भाँति गोथों और अन्य बर्बर जातियों द्वारा कोरिंथ को भी बड़ी हानि हुई। २६७ ईसवी में कोरिंथ का दूसरा नगर नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। पुनः इसका निर्माण हुआ और पुनः ३९६ में अलारिक द्वारा नष्ट कर दिया गया परन्तु पुनः निर्माण किया गया और अपना वैभव प्राप्त करने लगा। तदनन्तर यह बैज़ेन्टाइन साम्राज्य के अधीन रहा परन्तु छठी शताब्दी में एक भूकम्प द्वारा नष्ट हो गया और जुस्टीनियन द्वारा पुनः निर्मित हुआ।

ईसवी सन् की नवीं शताब्दी में यह धार्मिक तथा राजनीतिक केन्द्र बन गया। तत्पश्चात् यहाँ एक विशाल सैनिक केन्द्र खोला गया तथा सिल्क का उद्योग स्थापित हो गया। ११४७ में सिसली के नार्मन रॉजस द्वितीय (Roges II) द्वारा इटली के अधिकार में आ गया। तदनन्तर पुनः बैज़ेन्टाइन साम्राज्य का एक अंग बन गया। १४५९ में यह आटोमान तुर्कों के अधीन हो गया। कुछ दिनों बाद यह टर्की से स्वतन्त्र होकर सत्रहवीं व अठारहवीं शताब्दियों में यह माल्टा तथा वेनिस के अधिकार में रहा परन्तु पुनः स्वतन्त्रता की श्वास न ले सका। इसके पश्चात् इसका पृथक इतिहास समाप्त हो गया अब वह आधुनिक ग्रीस का एक अंग बन गया था, जो अब भी वर्तमान है।

लिपि : कोरिंथ की लिपि के वर्णों का नाम क्रिर्चोफ़ ने गहरा नीला (Blue) रखा। इस लिपि का प्रयोग अर्गास, मेगारा तथा एशिया के पश्चिमी किनारे के कुछ नगरों में होता था। इसका काल ई० पू० की छठी शताब्दी माना जाता है। इसका प्रयोग बाएँ से दाएँ होता था।

कोरिंथ की लिपि के वर्ण

अ	ब	ग	द	ए
फ़	ज़	इ	थ	ई
क	ल	म	न	स
ओ	प	स	क़	र
त	व	फ	च-ख	प्स

फलक संख्या – ३३१

प्राचीन कोरिंथ (विध्वंस) नगर में 'अमरीकन स्कूल एट एथेन्स' (American School at Athens) के विद्वानों तथा पुरातत्त्व वेत्ताओं ने १८९६ में उत्खनन कार्य आरम्भ किया जो १९१६ तक चलता रहा। तत्पश्चात् यह कार्य १९२५ में पुनः आरम्भ हुआ। प्राचीन पुरातात्त्विक सामग्री तथा अभिलेख बहुत बड़ी मात्रा में प्राप्त हुये जिनके द्वारा प्राचीन कोरिंथ पर प्रकाश पड़ सका।

'फ० सं० — ३३१' पर कोरिंथ की लिपि के वर्ण दिये गये हैं।

बोयेशिया

इतिहास : इस राज्य की संस्कृति लगभग पाँच सहस्र वर्ष पूर्व वर्तमान थी परन्तु इसका इतिहास ई० पू० की पाँचवीं शताब्दी से आरम्भ हुआ। ४८० में जब पर्शिया ने ग्रीस पर आक्रमण किया तो बोयेशिया पर्शिया की ओर हो गया। युद्ध के समाप्त होने पर अन्य नगर राज्यों ने इसका बहिष्कार किया। बोयेशिया लीग का अन्त कर दिया गया। ४५७ में स्पार्टा ने एक अन्य लीग की स्थापना की परन्तु एथेन्स द्वारा इसको समाप्त कर दिया गया और लगभग १० वर्ष बोयेशिया पर इसका अधिकार रहा।

तदनन्तर ९ नगरों की एक नई लीग बोयेशिया (Boetia) में स्थापित हुई जिसका अध्यक्ष थीबीज़ का नगर – राज्य बना। इसका कार्य ६० वर्ष तक चलता रहा। पेलोपोनेशियन युद्ध मे बोयेशिया ने स्पार्टा का पक्ष लेकर एथेन्स को परास्त किया परन्तु निकियास की सन्धि से, जो ४२१ ई० पू० में हुई, एथेन्स असंतुष्ट रहा। इसी के कारण एक युद्ध स्पार्टा और थीबीज़ के मध्य हुआ। ३८२ में स्पार्टा के एक सैनिक अधिकारी ने थीबीज़ के नगर – राज्य को अपने अधीन कर लिया। ३७९ में एक प्रजातंत्र ने शासन का अधिकार हस्तगत कर लिया जिसके कारण शनैः शनैः स्पार्टा का प्रभाव समाप्त होने लगा। तत्पश्चात पुनः बोयेशिया लीग की स्थापना की गई जो पूर्णतया थीबीज़ के अन्तर्गत रही। यह थीबीज़ के साम्राज्यवाद का एक दूसरा रूप था।

३७१ ई० पू० में बोयेशिया की सेना ने ल्यूकत्रा में स्पार्टा को परास्त कर दिया। यह युद्ध इपामीनोडस (Epaminodus) के नेतृत्व में हुआ। इस विजय से थीबीज़ का प्रभाव बढ़ने लगा और मध्य ग्रीस व पेलोपो – नीशिया के नगर – राज्य इससे मित्रता का सम्बन्ध रखने लगे। ३६२ ई० पू० में स्पार्टा के साथ एक दूसरा युद्ध मन्तीनिया में हुआ जिसमें इपामीनोडस वीर गति को प्राप्त हुआ। फलस्वरूप थीबीज़ की शक्ति क्षीण होने लगी और उसका नेतृत्व समाप्त होने लगा।

कुछ दिनों के पश्चात् मेसीडोनिया ने थीबीज को अपने प्रभाव में लिया तदनन्तर अपनी सेना का केन्द्र बना दिया। जब ३३५ ई० पू० में थीबीज़ ने इसके विरुद्ध विद्रोह किया तो सिकन्दर ने थीबीज़ को पूर्णतया नष्ट कर दिया। ई० पू० को दूसरी श० में बोयेशिया निवासियों ने मेसीडोनिया का रोम के विरुद्ध पक्ष लिया परन्तु इस कार्य से उनको रोम के क्रोध द्वारा बड़ी हानि उठानी पड़ी। कुछ समय पश्चात् १४६ में उन्होंने अकाइयन लीग के विद्रोह का पक्ष लिया जिसके कारण बोयेशिया लीग को सदैव के लिये समाप्त कर दिया गया अब बोयेशिया रोमन राज्य का एक अंग बन गया। कुछ दिनों में बोयेशिया का नाम इतिहास के पृष्ठों से लोप हो गया।

लिपि : किर्चोफ़ ने इस लिपि के वर्णों का नाम 'लाल वर्ण' रखा। यह बोयेशिया के नगर – राज्यों में छठी शताब्दी में प्रचलित थे जो 'फ० सं० – ३३२' पर दिये गये हैं।

बोयेशिया की लिपि के वर्ण

अ	ब	ग	द	ए
फ़	ज़	इ	थ	ई
क	ल	म	न	स
ओ	प	र	स	त-ट
ऊ		फ		प्स

फलक संख्या – ३३२

आर्केडिया

इतिहास : प्राचीन काल में आर्केडिया (Arcadia) में पेलासग्यिन जाति के लोग निवास करते थे। ५५० ई० पू० में स्पार्टा ने आर्केडिया के मुख्य नगर – राज्य तीगिया (**Tegea**) को परास्त कर दिया। ४८० में आर्केडिया के नगर – राज्यों ने पर्शिया की सेना से युद्ध किया। ४२१ में उसकी एथेन्स से सन्धि हो गई। ४१८ ई० पू० में स्पार्टा से मन्तीनिया में युद्ध हुआ जिसमें आर्केडिया पुनः परास्त हुआ। जब ल्यूकत्रा में स्पार्टा की पराजय तथा थीबीज़ की विजय ३७१ में हुई, तब मन्तीनिया के राजा लाइकोमिडीज़ ने एकता की एक योजना बनाई। ३६८ में राज्यों के संघ की राजधानी मेगालोपोलिस[1] (Megalopolis) को बनाया गया।

३६५ ई० पू० में आर्केडियन्स ने ओलिम्पिया[2] (Olympia) पर अधिकार कर लिया। तत्पश्चात् राज – नैतिक तथा सामाजिक छोटे छोटे युद्ध होते रहे। आर्केडियन – नगर – राज्य ३६२ ई० पू० में आपस में ही मन्तीनिया में युद्ध करते रहे। इन झगड़ों को रोकने के लिए पुनः एक संघ बना जो ३०० ई० पू० तक जीवित रहा। तदनन्तर सिकन्दर के उत्तराधिकारी आर्केडिया पर शासन करते रहे परन्तु मेगालोपोलिस मैसीडोनिया के विरुद्ध रहा। कुछ दिनों पश्चात् मैसीडोनिया का प्रभाव भी समाप्त हो गया और अकाइयन लीग की शक्ति बढ़ गई। २३५ ई० पू० में लिडिया के निवासियों ने मेगालोपोलिस को भी साथ अकाइयन लीग में सम्मिलित कर लिया। तत्पश्चात् आर्केडिया अन्य नगर – राज्यों के इतिहास के साथ सम्मिलित हो गया।

लिपि : किर्चोफ़ ने इस लिपि के वर्णों का नाम लाल वर्ण – रखा था। इन वर्णों का प्रयोग आर्केडिया के नगर राज्यों में पाँचवीं शताब्दी में हुआ करता था। इसकी दिशा भी बाएँ से दाएँ थी। 'फ० सं० – ३३३' पर आर्केडिया के वर्ण दिये गये हैं। उसी के साथ ग्रीक साहित्यिक काल (Classical Period) के वर्ण भी दे दिये गये हैं। पहले कालम में आर्केडिया की लिपि तथा दूसरे में साहित्यिक काल की लिपि दी गई है।

ग्रीक के आधुनिक वर्ण : इस चित्र में ग्रीक लिपि के आधुनिक वर्ण दिये गये हैं जो मुद्रण में प्रयोग किये जाते हैं। इसमें छोटे व बड़े – दोनों प्रकार के वर्ण दिये गये हैं। इसके अतिरिक्त वर्णों के नाम भी दिये गये हैं (फ० सं० – ३३४)।

१—वर्णों की ध्वनि।
२—बड़े वर्ण (Capital letters)।
३—छोटे वर्ण (Small letters)।
४—उनके नाम।

---

1. पोलिस (Polis) के अर्थ हैं नगर राज्य। मेत्रोपोलिस या मेट्रोपोलिस (Metropolis) 'मात्र' शब्द से 'मेत्रो' अर्थात् जहाँ नगर का जन्म हुआ अर्थात् मुख्य नगर। ऐक्रोपोलिस (ऐक्रो के अर्थ हैं ऊँचा) इस कारण ऊँचे पर बना रक्षा केन्द्र (Acropolis) अर्थात् गढ़। नेक्रो पोलिस (Necropolis; Nekros = मृत) अर्थात् मुर्दों का नगर = क़ब्रस्तान।

2. ७७६ ई० पू० में सर्वप्रथम खेल – कूद की विश्व प्रतियोगिता का यहीं से जन्म हुआ।

आर्केडिया एवं साहित्यिक काल के वर्ण

अ	Λ A	A	स	+	Ξ
ब	B	B	ओ	O	O
ग	< C	Γ	प	Γ Π	Γ
द	▷ △ D	△	स		ϻ
ए	⋹ E	E	क़	ϙ	ϙ
ज़	I	I	र	R	P
इ	⊟	H	श	ϟ Σ	Σ
थ	⊕	⊙	त	T	T
ई	I	I	व	V	Y
क	K	K	फ		Φ
ल	Λ Λ	Λ	च	↓	X
म	M	M	प्स	Ж	Ψ
न	N	N	उ		Ω

फलक संख्या – ३३२

पठनीय सामग्री :

Botsford, G. W. and Robinson, C. A. : Hellenic History (1956).

Buckley, C. : Greece and Crete (1952).

Bury, J. B. : A History of Greece (1951).

Carpenter, R. : 'The Antiquity of the Greek Alphabet'—American Journal of Archaeology—XXXVI (1933).

Ibid. : 'The Greek Alphabet Again' American J. of Arch. XLII (1969).

Casson, S : Essays in Aegean Archaeology (Oxford—1927).

Glotz, G. : Aegean Civilization (1925).

Hall, H. R. : The Oldest Civilization of Greece (1908).

Harland, J. P, : 'The Date of Hellenic Alphabet'—University of North Carolina Studies in Philology—XLII (1945).

Hood, M. S F. : The Home of Heroes (London – 1967).

Leake, W. M. : Travels in Northern Greece (1835).

Neill, J. G. O. : Ancient Corinth (1930).

Ridgeway, W. : Early Age of Greece (1901).

Roberts, E. S. and Gardner, E. A. : An Introduction to Greek Epigraphy, 2. Vols. (Cambridge–1905).

Schwnrz, B. : 'The Phaistos Disk'—Journal of the Near Eastern Studies, XVIII (1959).

Stillwell, A .N : 'Corinth' – American Journal of Archaeology, XXXVII (1933).

Tarn, W. W. : Hellenistic Civilization (1932).

Thomson, E. M. : Hand book of Greek and Latin Palaeography (London—1906).

Ibid : An Interoduction to Greek and Latin Palaeogıaphy (Lond.–1912).

Ullman, B. L. : 'How Old is the Greek Alphabet ?' American Journal of Archaeology, XXXVIII (1933).

□

इटली

इटली देश प्राचीन काल में एक सम्पूर्ण देश नहीं था। यहाँ भी नगर – राज्य थे तथा उनकी अपनी लिपियाँ भी थीं। उन्हीं नगर – राज्यों का वर्णन नीचे दिया गया है।

इटरूरिया

इतिहास : अभी तक यह प्रमाणित नहीं हो सका है कि एट्रस्कन (Etruscan) लोग कौन थे और कहाँ से आये तथा उनकी भाषा क्या थी। इन पहेलियों को हल करने के लिये विद्वानों ने अपने अपने मत इस प्रकार प्रकट किये हैं :—

हेरोडोटस के अनुसार : ई० पू० की नवीं शताब्दी में लीडिया में अती (Aty) का पुत्र मनेज़ शासन करता था। उसी काल में एक अकाल पड़ा जो लगभग २८ वर्ष तक रहा। खाद्य पदार्थों की इतनी कमी हुई कि राजा ने यह निश्चय किया कि देश के आधे निवासी किसी अन्य देश को चले जायें। इस बात का निर्णय करने के लिये भाग्य का सहारा लेना पड़ा और लाटरी डाली गई जिसमें स्वयं राजा तथा उसका पुत्र भी सम्मिलित हुए। पुत्र का नाम टाईरेनस (Tyrhenus) था। जाने वालों में पुत्र का नाम निकला और वह अन्य नागरिकों के साथ स्मिर्ना (Smyrna), जो समुद्र के किनारे पर स्थित था, पहुँचा और सब लोगों ने मिल कर जलपोत बनाना आरम्भ कर दिये। तत्पश्चात् उन लोगों ने अपने सारे सामान को उस में लाद दिया और पश्चिम की ओर अपनी यात्रा आरम्भ कर दी। कुछ दिनों की यात्रा के पश्चात् वे लोग ओंब्रिकी पहुँचे जहाँ वे लोग बस गये और उन्होंने नगर – राज्यों की स्थापना की। उसी भू भाग को इतिहास में इटरूरिया सम्बोधित किया जाता है।

डायोनीसियस[1] (Dionysius), जो हेलीकारनेसस (Halicarnasus) का एक प्रसिद्ध इतिहासकार था, के अनुसार एट्रस्कन इटली के ही प्राचीन निवासी थे तथा उनकी भाषा अनोखी थी।

एफ़० दि संसुरे : (F. de Sanssure) के अनुसार यह लोग एशिया निवासी थे।

वी० थामसेन : (V. Thomsen) के अनुसार यह लोग काकेशियन जाति के थे।

इन मतभेदों के होने पर भी अब यह धारणा बन चुकी है कि यह लोग ग्रीस की ओर से ही आये क्योंकि इनकी लिपि में ग्रीक लिपि के वर्ण दृष्टिगोचर होते हैं। ई० पू० की सातवीं शताब्दी तक इन लोगों ने इटरुरिया में अपना एक राज्य – संघ स्थापित कर लिया था जिसमें लगभग १२ नगर – राज्य सम्मिलित थे। इस संघ की राजधानी तारकुइनिया (Tarquinia) तथा कायरी – (Caere) – आधु० कर्वेंतरी (Cerveteri), वीआइ (Veii), क्लूसियम (Clusium), पापूलोनिया (Populonia), वेतूलोनिया (Vetulonia) आदि मुख्य थे। जहाँ यह आकर बसने लगे थे वहाँ के मूल निवासी विल्लोनोवन (Villonovans) थे, तथा दक्षिण की ओर के, जिसको बाद में लैटियम (Latium) सम्बोधित करने लगे, मूल निवासी सबीनी (Sabine) थे।

---

१. इस का काल ई0 पू0 की प्रथम शताब्दी है।

यह दो प्राचीन जातियाँ कृषि करती थीं तथा भेड़ों को पालती थीं । यह दोनों जातियाँ सभ्य थीं और इनके प्रजातंत्र राज्य थे प्रत्येक ग्राम की अपनी सभा थी और वह स्वतंत्र थे ।

लगभग आठवीं श० में जिस प्रकार इटरूरिया में नगर – राज्य स्थापित हो गये उसी प्रकार लैटियम में भी ६ नगर – राज्य स्थापित हुये । अब लैटियम व इटरूरिया के नगर – राज्यों में युद्ध आरम्भ होने लगे थे । दो शताब्दियों में, पूर्व से अब तक, इटरूरिया पर्याप्त उन्नति कर चुका था । उसने अपने नगर – राज्यों की सुरक्षा के लिये नगरों के चारों ओर बड़ी दीवारों तथा छोटे छोटे गढ़ों का निर्माण करवा लिया था । उनके पास कुशल सैनिक तथा आज्ञाकारी भूमिदार तथा कृषिक थे । वे लोग बड़े परिश्रम तथा कुशलता से कृषि करते थे । वे लोग खानों से लोहा व तांबा आदि निकाल कर उससे सुन्दर सुन्दर वस्तुयें बनाकर उद्योग व व्यापार में भी उन्नतिशील हो गये थे । फ़िनीशिया व ग्रीस से व्यापार होता था । देश समृद्ध हो रहा था ।

रोम का नगर – राज्य एट्रस्कन शासकों के ही अन्तर्गत था । इसका प्रथम शासक रोमूलस (Romulus) था, संभवतः उसी के नाम पर रोम नाम पड़ा था । इसके चारों ओर भी लगभग ६ मील लम्बी दीवार थी जिसमें लगभग दो लाख मनुष्य सुरक्षित रह सकते थे । एट्रस्कन पूरे लैटियम पर राज्य करना चाहते थे । इस कारण लैटियम के कुछ नगर – राज्यों से युद्ध भी होते रहते थे । उनके नगरों के नाम गबीआइ (Gabii), अरीकिया (Aricia) तथा आर्दिया (Ardea) आदि थे । अब लैटियम राज्यों का एक पृथक संघ बन गया था ।

प्राचीन इटली के नगरों की सूची

	नगरों के नाम			नगरों के नाम	
क्रम संख्या	प्राचीन	आधुनिक	क्रम संख्या	प्राचीन	आधुनिक
१	मेस्साना		२२	क्लूसियम	क्यूसी
२	नियपोलिस	नेपिल्स	२३	फ़्लोरेंतिया	फ़िरेंज़े
३	नोला		२४	अग्नोन	
४	कुमाय	कीमाय	२५	हिस्टोनिया	वास्तो
५	कैसिलिनम	कपुआ	२६	पियांसेज़ा	
६	पोम्पेआइ		२७	माग्रे	
७	रोमा	रोम	२८	आर्दिया	आर्दियाटाइन केव्स
८	अरीकिया		२९	लुगानो	
९	गबीआइ		३०	कार्थेज	टियूनिस
१०	प्रायनेस्ते	पैलेस्ट्राइन	३१	किर्ता	
११	टीबुर	टिवोली	३२	सीराकूज़	
१२	वीआइ	फ़ार्मेलो	३३	जेनुवा	जेनोवा
१३	कायरे	कर्वतरी	३४	सोन्द्रियो	
१४	तारकुइनी	तारकुइनिया	३५	बोल्जानो	
१५	वेंतूलोनिया		३६	अगरम	ज़गरेब
१६	पापूलोनियम	पापूलोनिया	३७	विनीज़िया	वेनिस
१७	फलेरीआइ	सिविटा कैस्टिलाना			
१८	टूडर	टोडी			
१९	इगूवियम	गुब्बियो			
२०	वोलसिनीआइ	बोलसेना			
२१	टस्कोनेला	टस्केनिया			

प्राचीन इटली का मानचित्र

परन्तु इस संघ का नेता तारकुइनिया – राजवंश का ही शासक था। ५०९ ई० पू० में रोम व कार्थेज के मध्य प्रथम संधि हुई। यह संसार का सर्वप्रथम प्रलेख (document) था।

इटरूरिया में प्रजातंत्र नाम मात्र था। सभायें बहुत कम होती थीं परन्तु लैटियम में प्रजातंत्र सुचारु रूप से कार्य करता था। लैटियम के नगर – राज्य जब तारकुइनी – शासकों के हाथ आये तब नागरिक एक प्रकार के दास बन गये। ५०९ ई० पू० (अब परम्परानुगत इसी को मानने लगे) में लैटियम के नगर – राज्यों ने एट्रस्कन-शासन के विरुद्ध विद्रोह इस बात पर कर दिया कि वे भवनों के निर्माण में नागरिकों से बेगार करवाते थे। इस विद्रोह के कारण उनको रोम छोड़ना पड़ा परन्तु फिर भी एट्रस्कन आक्रमण करते ही रहते थे। बीच में क्लूसियम के शासक लार्स पोर्सेन्ना ने कुछ दिनों के लिए विजय प्राप्त कर ली थी परन्तु ४९९ ई० पू० में एक युद्ध हुआ जिसने एट्रस्कन शासकों का सदैव के लिये रोम पर से शासन समाप्त कर दिया। तत्पश्चात् लैटियम का एक स्वतंत्र राज्य – संघ बन गया जिसका नेता रोम था। अब शनैः शनैः रोम शक्तिशाली होता गया।

कहाँ तो एट्रस्कन रोम (लैटियम) को सभ्य बनाने में उनके गुरु तथा शासक थे परन्तु अब दिशा परिवर्तित होने लगी। ३९६ ई० पू० में रोम ने एट्रस्कन का मुख्य नगर वीआइ अपने अधीन कर लिया। यह नगर रोम से केवल १० मील उत्तर की ओर था। कुछ दिनों पश्चात् कपुआ (Capua) तथा फ़्लेरीआइ (Flerii) ने भी रोम की अधीनता स्वीकार कर ली।

इधर दक्षिण की ओर से सिसली (Sicily) निवासी ग्रीक लोगों ने तथा उत्तर की ओर से केल्ट्स (Celts), कुछ लोग सेल्ट्स भी उच्चारण करते हैं, की जातियों ने आक्रमण करना आरम्भ कर दिये। इन युद्धों में रोम की भी बड़ी हानि हुई। ३९० ई० पू० में वे लोग रोम को परास्त करके तथा बहुत सा सोना लेकर पुनः उत्तर की ओर कूच कर गये। तत्पश्चात् रोम अपनी शक्ति को पुनः प्राप्त करने लगा। उसने एक एक करके इटरूरिया के नगरों को अपने अधीन करना आरम्भ कर दिया था। ई० पू० की चौथी शताब्दी के अन्त तक उसने सारे नगरों को अपने अधीन कर लिया था और ३०८ ई० पू० में तारकुइनी शासन को समाप्त कर दिया गया। इस प्रकार एक प्राचीन सभ्यता, जिसने एक दिन रोम को सभ्य बनाया था, का उसी रोम द्वारा अन्त हो गया।

एट्रस्कन लिपि : ई० पू० की सातवीं शताब्दी से प्रथम श० तक के छोटे बड़े लगभग ९००० अभिलेख पुरातत्त्व वेत्ताओं द्वारा प्राप्त हो चुके हैं। इनमें से बहुत से पावली (Pauli – 1893) द्वारा प्रकाशित[1] हुए तत्पश्चात् डैनिएल्सन (Danielson) और हर्बिग (Herbig) द्वारा उत्खनित किये गये। जी० बौनामिकी (G. Buonamici) ने १९३२ में यह अभिलेख अपनी पुस्तक[2] में प्रकाशित करवाये। इन ९००० अभिलेखों (लगभग सभी दाह संस्कार से सम्बन्धित छोटे छोटे अभिलेख हैं) पर केवल नाम अंकित हैं। इनमें से केवल ९ अभिलेख लम्बे हैं और इनमें से भी तीन उल्लेखनीय हैं जो निम्नलिखित हैं :—

१. एक मिट्टी की बनी मुद्रा है जिस पर ३०० शब्द उत्कीर्ण किये हुये हैं।

२. दूसरी पाटिया बछड़े के यकृत की आकृति की है। जिस पर देवी देवताओं के नाम अंकित हैं (फ० सं० – ३४५)।

३. तीसरी कपड़े पर लिखी हुई पाण्डुलिपि है जो पहले पूरी और गोल लिपटी हुई थी पर बाद में काट काट कर एक मिस्री – स्त्री की ममी को लपेटने के लिए, जो ग्रीक रोमन युग (प्रथम शताब्दी ई० पू०) की थी – प्रयुक्त

---

1. Corpus Inscriptionum Etruscarum (1893)
2. Buonamici, G. : Epigraphia Etrusca (Florence – 1932)

की जाती रही । इसमें १५०० शब्दों का एक लेख है, जो ज़गरेब (प्राचीन अगरम) के संग्रहालय में सुरक्षित रखा है । अभी तक इसका अनुवाद नहीं हो सका है ।

इन अभिलेखों के रहस्योद्‌घाटन का शोधकार्य निम्नलिखित विद्वानों ने किया :—

हर्बिग (**Herbig**), बुग्गे (**Bugge**), टॉर्प (**Torp**), स्कुत्श (**Skutsch**), फ़ीज़ल (**Fiesal**), गोल्डमान (**Goldmann**) तथा ओल्शा़ (**Olzscha**) । इनके अतिरिक्त एट्रस्कन भाषा के प्रसिद्ध विद्वान् प्रो० पैलोटिनो (**Palotino**) ने दाह – संस्कार के अनेक अभिलेखों को साथ साथ रखा और उन शब्दों की सूची तैयार की जिनका प्रयोग वारम्बार हुआ है । उन शब्दों की संख्या लगभग २०० है । उनके अर्थ भी निश्चित हो चुके हैं । उसी तरह के कई वाक्यांशों के अर्थ भी अनुमान से जान लिये गये हैं ।

द्विभाषी अभिलेख (लैटिन – एट्रस्कन) जो प्राप्त हुए वे इतने छोटे और कम हैं कि उनसे किसी प्रकार की कुंजी प्राप्त न हो सकी जो एट्रस्कन लिपि का रहस्योद्‌घाटन कर सकती । यह भाषा भारोपीय भाषाओं में नितांत विचित्र तथा भिन्न है । किसी जाति से भी एट्रस्कन की सजातीयता का निश्चित प्रमाण अभी तक नहीं मिला और न किसी भाषा से कोई समानता मिली । वर्णों के विषय में यह प्रमाणित हो चुका है कि प्राचीन लैटिन के वर्ण ग्रीक से लिये गये । इटरुरिया के दक्षिणी भाग से अनेक अलंकृत कलशों, थालियों, बर्तनों व प्लेटों पर तथा लघु – शिलाओं पर ग्रीक वर्णों से समानता रखने वाले वर्ण अंकित मिले हैं । इनका काल भी आठवीं तथा सातवीं श० निर्धारित हो चुका है । जो अंकित वर्ण प्राप्त हुये हैं उनको टेलर (**Taylor**) ने पेलासगियन[1] (**Pelasgian**) के नाम से तथा गार्ड थाउसन (**Von Gard Thausen**) ने प्रोटो टाइरेनियन[2] (**Proto Tyrrhenian**) के नाम से सम्बोधित किया है तथा किर्चोफ़ (१८८७) ने उनका नाम पश्चिमी (ग्रीक के) वर्ण रखा । यह वर्ण कालसिस[3] से चल कर सिसली पहुँचे उस समय कालसिस अपने कई उपनिवेश – नगर सिसली में स्थापित कर चुका था । ग्रीक निवासियों ने इटली के पश्चिमी किनारे के भूभाग पर कुमाय (**Cumae**), लगभग ई० पू० की नवीं शताब्दी में स्थापित किया था जहाँ बाद में नियोपोलिस स्थापित हुआ जिससे नेपिल्स (**Naples**) नाम निकला जो आज भी प्रचलित है । इसी स्थान से ग्रीक वर्णों को एट्रस्कन द्वारा अपनाया गया तथा इन्हीं वर्णों से लैटिन – फ़ैलिस्कन (**Latin – Faliscan**) का भी जन्म हुआ ।

किर्चोफ़ की इस मान्यता का खण्डन करते हुये हैंमरस्ट्रोम (**Hammerstrom**) ने कहा कि लैटिन – फ़ैलिस्कन वर्ण एट्रस्कन के साथ नहीं जन्मे अपितु एट्रस्कन वर्णों से जन्मे तथा एट्रस्कन वर्णों का उद्‌भव प्रोटो – टाइरेनियन वर्णों द्वारा हुआ । तदनन्तर एट्रस्कन वर्णों द्वारा इटली के उत्तर व दक्षिण में कई अन्य प्रकार के वर्णों का जन्म हुआ जिसके विषय में आगे लिखा जायेगा । इन मतभेदों का विश्लेषण करने के पश्चात् यह बात निश्चित हो जाती है कि एट्रस्कन वर्ण ग्रीक वर्णों द्वारा ही विकसित हुए ।

हैंमरस्ट्रोम के अनुसार B.D.O.X. वर्ण एट्रस्कन वर्णों में नहीं अपनाये गये परन्तु कुछ विद्वानों का मत इसके विरुद्ध हैं । एक (F) की ध्वनि के लिए लीडिया का एक वर्ण 8 लिया गया और इसी एक वर्ण के आधार पर एट्रस्कन की जन्मभूमि लीडिया मान ली गई ।

---

1. ग्रीस के मूलनिवासी थे ।
2. **Faulmann : Illustration Gesch der Schrift (Berlin – 1924) p – 239.**
3. कालसिस या खाल्किस (**Chalcis – Khalkis**) यूबिया का मुख्य नगर – राज्य था जिसने सिसली में लगभग 30 नगर अपने उपनिवेश बना कर स्थापित किये थे । इसके ग्रीस के अन्य नगर – राज्यों से युद्ध होते रहते थे । इस पर कई देशों का शासन रहा । अंत में इसका नाम कैस्ट्रो पड़ गया । 1894 के भूकम्प में इसका बहुत सा भाग नष्ट हो गया ।

'फ० सं० – ३४३' पर एट्रस्कन वर्णों[1] का उद्भव टाइरेनियन लिपि (अर्थात पश्चिमी ग्रीक लिपि) द्वारा दिया गया है।

कम्पेनिया

इतिहास : कम्पेनिया लैटियम के दक्षिण में एक प्राचीन प्रान्त था जिसके मुख्य नगरों से ओस्कन (Oscan) लिपि के अभिलेख प्राप्त हुये हैं। कम्पेनिया का अपना कोई इतिहास नहीं है इस कारण उन नगरों के विषय में ही कुछ वृतांत दिया गया है।

कपुआ (Capua) : यह कम्पेनिया का प्राचीन मुख्य नगर था। इसका आरम्भिक नाम कैम्पस (जिसका विशेषण कैम्पेनस, जिससे कम्पेनिया बना) था और इसकी स्थापना ६०० ई० पू० में हुई। सैमिनी जातियों के आक्रमणों से ई० पू० की पाँचवीं शताब्दी में यहाँ से एट्रस्कन आधिपत्य उठ गया। ३४० ई० पू० में यह रोम के अधिकार में आ गया। १२३ ई० पू० के पश्चात् से यह रोम के एक निर्वाचित न्यायाधीश के शासन में रहा तदनन्तर ई० पू० की प्रथम श० में आगस्टस के अधीन आ गया। ४५६ ई० में गायसेरिक (Gaiseric) ने इसको नष्ट – भ्रष्ट कर दिया परन्तु पुनः इसका निर्माण हो गया। ८४० में मुसलमानों ने इसे नितांत नष्ट कर दिया। १२३२ में फ्रेड्रिक (Frederick II) ने यहाँ एक गढ़ का निर्माण करवाया। १५०२ में सीजर बोर्गिया (Caesar Borgia) ने इसको परास्त किया। १८६० तक यह नेपिल्स के राज्य का एक भाग बना रहा तत्पश्चात् यह इटालियन राज्य में आ गया।

यहाँ के समाधि – स्थानों से पकी हुए मिट्टी की पाटियाँ प्राप्त हुईं जिनका काल सातवीं श० निर्धारित किया गया। यह ओस्कन लिपि में अंकित थीं। ३ पाटियाँ लैटिन लिपि में भी प्राप्त हुई। कुल १९ पाटियाँ यहाँ के उत्खनन से प्राप्त हुई।

नोला (Nola) : ५०० ई० पू० में यह नगर एट्रस्कन के अधीन था। ३२८ ई० पू० में इसने रोम के विरुद्ध युद्ध किया। ३१३ ई० पू० में रोम ने इसको अपने अधीन कर लिया। सामाजिक युद्ध में इसने समीनियों (Samnites) का साथ दिया परन्तु ८० ई० पू० में सुल्ला (Sulla) ने इसको पुनः रोम के अधीन कर दिया। आगस्टस ने इसको रोम का उपनिवेश बना लिया और यहीं उसकी मृत्यु हो गई। ४५५ ई० में इसको गायसेरिक ने तथा ८०६ ई० में मुसलमानों ने अपने अधीन रखा। तेरहवीं श० में मैनफ्रेड (Manfred) ने अपने अधिकार में कर लिया। पन्द्रहवीं तथा सोलहवीं श० में भूकम्पों ने इसका सर्वनाश कर दिया। यहाँ से भी ओस्कन लिपि की कुछ पाटियाँ प्राप्त हुई।

पोम्पेआई (Pon peii) : इस नगर की हिरेकिल्स (Heracles) ने स्थापना की। स्ट्राबो (Strabe)[2] के अनुसार पहले यहाँ ओस्कन लोग बसे तदनन्तर पेलासगियन तथा टाइरेनियन आकर बसे और अन्त में समीनी जाति के लोग आये। ८० ई० पू० में यह रोम के अधीन हो गया।

ई० सन् की प्रथम शताब्दी में यह नगर समृद्धि की चरम सीमा पर पहुँच गया था। सन् ६३ और ७९ के दो भूकम्पों ने इस नगर का सर्वनाश कर दिया और सारा नगर भूगर्भ में चला गया।

---

1. Pauli : Studi Etruschi, Vol III, p. – 81.
2. इसका नाम ग्नेइयस पोम्पेइयस (Gnaeus Pompeius) था। भेंगी – दृष्टि के कारण इसका नाम स्ट्राबो पड़ा। इसने अनेक सामाजिक युद्ध किये। ८ ई० पू० में इसकी मृत्यु बिजली गिरने के कारण हो गई।

ग्रीक लिपि के आधुनिक वर्ण

ध्वनि[1]	बड़े वर्ण[2]	छोटे वर्ण[3]	नाम[4]	ध्वनि[1]	बड़े वर्ण[2]	छोटे वर्ण[3]	नाम[4]
अ	Α	α	alpha	न	Ν	ν	nū
ब	Β	β	bēta	क्स	Ξ	ξ	xī
ग	Γ	γ	gamma	ओ	Ο	ο	omicron
द	Δ	δ	delta	प	Π	π	pī
ए	Ε	ϵ	epsīlon	र	Ρ	ρ	rhō
ज़	Ζ	ζ	zēta	स	Σ	σ ς	sigma
इ	Η	η	ēta	त	Τ	τ	tau
थ	Θ	θ ϑ	theta	उ	Υ	υ	upsilon
ई	Ι	ι	iōta	फ	Φ	φ	phī
क	Κ	κ	kappa	ख	Χ	χ	chī
ल	Λ	λ	lambda	प्स	Ψ	ψ	psī
म	Μ	μ	mū	ओ	Ω	ω	ōmega

फलक संख्या – ३३४

१५९४ – १६०० के मध्य एक गहरो नाली के निर्माण करने में दोमिनिको फोन्ताना (Domenico Fontana) को कुछ अभिलेख प्राप्त हुये। १७६३ में यहाँ वैज्ञानिक ढंग से उत्खनन हुआ और १८०६ में इस कार्य को शासकों ने रुकवा दिया। १८६१ में इटली – शासन के जो० फ़्योरेली (G. Fiorelli) ने पुनः उत्खनन आरम्भ किया और ओस्कन तथा ग्रीक लिपि के कुछ अभिलेख प्राप्त किये। कई अभिलेख विज्ञापन के रूप में दीवारों पर अंकित दृष्टिगोचर हुये। एक घर से तो पूरी एक पेटी अभिलेखों से भरी प्राप्त हुई। कई अभिलेख अग्नोन (Agnone) के ग्राम से भी प्राप्त हुए। यह ग्राम नोला व अबेल्दा के मध्य स्थित था।

जे० ज़्वेतेफ़ (J. Zwetaieff – 1878) के अनुसार, जो उपर्युक्त नगरों में ओस्कन लिपि की पाटियाँ मिली हैं, उनका काल ई० पू० की छठवीं व पाचवीं श० है। उनकी दिशा भी दाएँ से बाएँ है।

इसके अतिरिक्त ओस्कन लिपि के अभिलेख अपूलिया (Apulia), लुकेनिया (Lucania), मेस्साना (Messana – आधु० मेसीना), सेमनियम (समीनी जाति का निवास स्थान), फ़्रेन्तनी (Frentani), हर्पीनी (Herpini), पायलिग्नी (Paeligni), मर्रूकिनी (Marrucini), वेस्तिनी (Vestini), टूडर (आधु० तोडी) आदि से भी प्राप्त हुये हैं। ओस्कन का नामकरण रोमन द्वारा 'लिंगुआ ओस्का' (Lingua Osca) उस भाषा का हुआ, जो कम्पेनिया की एक जाति 'ओस्की' द्वारा बोली जाती थी।

'फ० सं० – ३३७' पर ओस्कन लिपि के वर्ण दिये गये हैं। इसकी दिशा दाएँ से बाएँ थी।

अंब्रिया

इतिहास : इटली के पूर्वी किनारे के निवासी अंब्रिया भाषा – भाषी थे, इसी कारण इस भूभाग को अंब्रिया कहते थे। ई० पू० की छठी श० में उनका मुख्य केन्द्र इगूवियम (Iguvium) था, इसका आधुनिक नाम गुब्बियो है। ई० पू० की तीसरी श० में यह रोम के (एक संधि द्वारा) अधीन हो गया। इलूरिया का राजा जेन्टियस तथा उसका पुत्र अपने देश से भाग कर यहीं आकर छिपा था। इटली के सामाजिक युद्ध के पश्चात् इगूवियम के विषय में कुछ नहीं सुना गया। ४१३ में एक ईसाई – धर्म – पुजारी ने इसके विषय में कुछ वृतांत सुनाये। ५५२ ई० में गोथ जाति के सैनिकों ने इसको नष्ट कर दिया परन्तु नार्सेज़ के सहयोग से यह पुनः बन गया। इगूवियम अपने प्राचीन सिक्कों तथा पाटियों के लिये प्रसिद्ध है।

लिपि : १४४४ में ९ पाटियाँ, जिन पर अंब्रियन लिपि अंकित थी, प्राप्त हुई, जिनको वहाँ की नगर – पालिका ने १४५६ में मोल ले लिया। इसके पूर्व ही दो पाटियाँ १५५४ में वेनिस पहुँच गई थीं। १७२४ में प्रथम बार वे प्रकाशित हुई। ओतफ़्रीड मुलर (Otfried Muller) ने अपनी पुस्तक[1] में बताया कि यह लिपि एट्रस्कन से समानता रखती है परन्तु भाषा इटालियन है। कार्ल लेप्सियस ने अपने निबन्ध[2] में अंब्रियन वर्णों की ध्वनियों को निर्धारित किया है। इस पर यस० टी० औफ़रेख़्त (S. T. Aufrecht) तथा किर्चोफ़ (J. W. H. Kirchoff) ने १८४९ – ५१ में अपनी एक वैज्ञानिक व्याख्या प्रकाशित की। १८७५ में एम० ब्रील (M. Breal) ने कुछ अधिक प्रकाश डाला और अन्त में बुख़ेलर (F. Bucheler) ने १८८३ में 'अंब्रिका' (Umbrica) के नाम से एक पुस्तक प्रकाशित कर दी।

---

1. Die Etrusker (1828).
2. 'De Tabulis Egubinis (1833).

प्रोटो-टाइरेनियन द्वारा एट्रस्कन वर्णों का उद्भव

ध्वनि	प्रोटो-टायरेनियन	एट्रस्कन	ध्वनि	प्रोटो-टायरेनियन	एट्रस्कन
अ	A	A A	न	N	И Ч
ब	B		स	⊞	
ग	< C	Ↄ 7 (क)	ओ	O O	
द	D		प	P	7
ए	E	Ǝ	श	Ч M	⋈
व	F		क़	[illegible] ♀	♀ Φ
ज़	I	I ǂ ⊥	र	P	ᗡ 9
ह	目	目 [illegible]	स	≷	ϟ Ƹ
थ	⊕ ⊙	⊗ ⊙	त	T	†
ई	I	I	उ	Y Ⲩ	Y V Y
क	K	ꓘ	फ	Φ	⊕
ल	L	⅃	ख	Ψ	Ψ ↓
म	M	⋈ [illegible]	फ़	लीडिया के चिन्ह हैं →	8 8 [illegible]

ओस्कन लिपि के वर्ण

अ	ब	ग-क	द
ए	व	त्स	ह
ई	क	ल	म
न	प	र	स
त	उ	फ	ऊ

फलक संख्या – ३३७

अंब्रियन लिपि के वर्ण

अ	ब	ग	द
ए	व	ह	इ
क	ल	म	न
प	र	स	त
उ	फ	र्स	च

फलक संख्या – ३८

सात कांसे की पाटियों पर दाह – संस्कार के पाठ अंकित हैं जिनमें से लगभग आधे अंब्रियन भाषा के तथा आधे लैटिन भाषा के हैं।

इसके अतिरिक्त भी टोडी (**Todi**) के प्राचीन नगर से, जहाँ अंब्रियन रहा करते थे – जिसका आधु – निक नाम टूडर (Tuder) है और जो इटली के पिगूरिया (Peguria) प्रांत का एक नगर है – कुछ प्राचीन कांसे की पाटियां अंब्रियन लिपि में प्राप्त हुई हैं। 'फ० सं० – ३३८' पर इस लिपि के वर्ण दिये गये हैं।

फ़लेरीआइ

इतिहास : फ़लेरीआइ (Falerii) इटरूरिया का एक प्राचीन नगर दक्षिण की ओर था। यह एट्रस्कन के १२ नगर – राज्यों में से एक था। प्रथम प्यूनिक युद्ध में इसने रोम के विरुद्ध विद्रोह कर दिया जिसके कारण रोम ने २४१ ई० पू० में इसका अर्ध – भाग नष्ट कर दिया। तदनन्तर एक नवीन नगर का निर्माण हुआ जो पहाड़ी के नीचे स्थित है। १०६४ में यहाँ के निवासियों ने प्राचीन नगर को छोड़ दिया और नये नगर में बस गये। फ़लेरीआइ नगर का आधुनिक नाम सिविटा कैस्टेलाना (Civita Castellana) है।

लिपि : यहाँ के उत्खनन से जो अभिलेख प्राप्त हुए उनकी लिपि तथा भाषा लैटिन से मिलती है। इसकी दिशा दाएँ से बाएँ है। इस लिपि का नाम फ़ैलिस्कन (Faliscan)[1] है।

'फ० सं० – ३३९' पर इसके वर्ण दिये गये हैं। इसकी दिशा भी दाएँ से बाएँ थी।

रेशिया

इतिहास : प्राचीन रेशिया (Raetia) का भूभाग दक्षिणी आल्प्स पर्वत में स्थित था। यहाँ के निवासी एट्रस्कनों से सम्बन्धित थे। इस भाग में तीन प्रकार की लिपियों के अभिलेख प्राप्त हुये जिनको एक वर्ग में रख दिया गया और नगरों के नाम पर उन लिपियों का भी नामकरण कर दिया गया।

बोल्ज़ानो (Bolzano) नगर बोल्ज़ानो प्रांत की राजधानी था। सातवीं ईसवी में बोल्ज़ानो बवरिया के सामन्त के अधीन था। १०२७ ई० में यह महाराजा कोनराड द्वितीय (Conrad II) द्वारा ट्रेन्ट के बिशप को दान – स्वरूप भेंट कर दिया गया। १०२८ में स्थानीय बिशप (सामन्त) के अधीन हो गया। १४६२ में बिशप ने एक त्यागपत्र द्वारा बोल्ज़ानो को जर्मनी के एक प्रांत हैब्सबर्ग (Habsburg) को सौंप दिया जो १९१८ तक उसी के अधीन रहा।

लिपियाँ : यहाँ के उत्खनन से प्राप्त अभिलेखों की लिपि का नाम भी बोल्ज़ानो रख दिया गया।

बोल्ज़ानो : इस लिपि की वर्णमाला लेयेऊन (M. Lejeune) ने १९५७ में प्रस्तुत की जो 'फ० सं० – ३४०' पर दी गई है।

रेशिया : की दो अन्य प्रकार की लिपियाँ माग्रे (Magre) व सोन्द्रियो (Sondrio) से प्राप्त हुईं। माग्रे की वर्णमाला 'फ० सं० – ३४१' पर तथा सोन्द्रियो की वर्णमाला 'फ० सं० – ३४२' पर प्रस्तुत की गयी है।
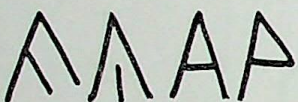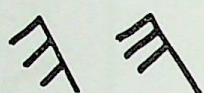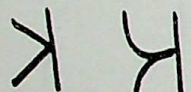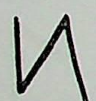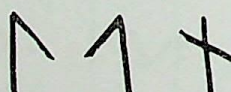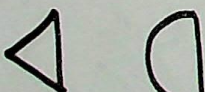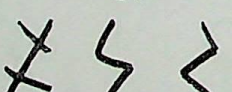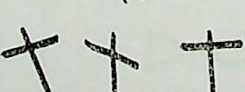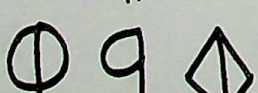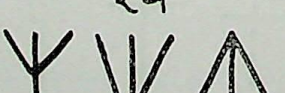
इन तीनों प्रकार की लिपियों का काल ई० पू० की तीसरी शताब्दी निर्धारित किया गया है। इनमें B. D. G. के वर्णों का प्रयोग नहीं होता था।

---

1. Stolte, E.: Glotta, 17 (1928), p–113.

फ़ैलिस्कन लिपि के वर्ण

अ	ब	ग-क	द
ए	फ़	त्स	ह
थ	ई	क	ल
म	न	ओ	प
स	क़-क	र	स
त-ट	उ	क्स	ख

फलक संख्या – ३३९

बोलज़ानो लिपि के वर्ण

अ	ए	व
ह	थ	ई
क	ल	म
न	प	स्स
र	स	त
उ	फ	ख

फलक संख्या – ३४०

माग्रे लिपि के वर्ण

अ	ए	व
ह	थ ई	क
ल	म	न
प	स्न	र
स	त	उ
फ	ख	ज़
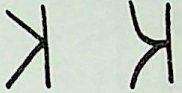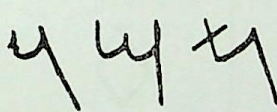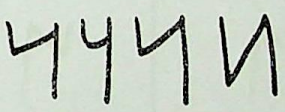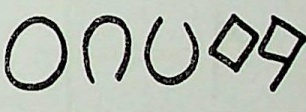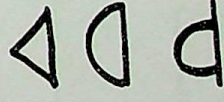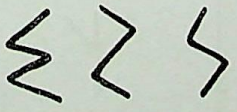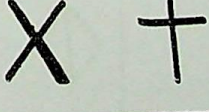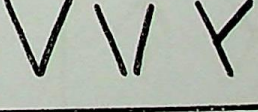
फलक संख्या – ३४१

सोन्द्रियो लिपि के वर्ण

अ	ए	व
ज़	ह	ई
क	ल	म
न	ओ	प
स्स	र	स
त		उ

फलक संख्या – ३४२
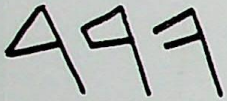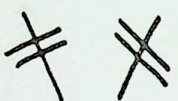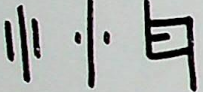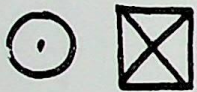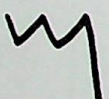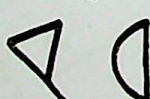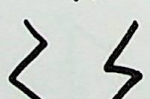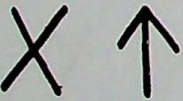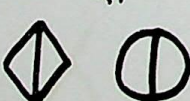
लुगानो लिपि के वर्ण

अ	ए	ज़
इ	क	ल
म	न	ओ
प	स्स	र
स	त	उ
फ	ख	ई

फलक संख्या – ३४३

वेनेती लिपि के वर्ण

अ	ए	व	ज़
ह	थ	इ	क
ल	म	न	ओ
प	स्स	र	स
त	उ	फ	ख
	ड्ढ		

उत्तरी इटली

इटली के उत्तर की ओर दो अन्य प्रकार की लिपियों के अभिलेख प्राप्त हुए जिनके नाम भी उन नगरों के नाम पर दिये गये जहाँ से वे प्राप्त हुए।

लुगानो : एक लिपि का लुगानो (Lugano) या लेपोन्टाइन (Lepontine) नाम रखा गया। स्वीट्ज़रलैण्ड (Switzerland) के दक्षिणी भाग के एक प्रांत लेपोन्टाइन में एक बड़ी झील है जिसका नाम लुगानो है और उसी के किनारे पर बसा एक नगर भी लुगानो के नाम से स्थित है।

वेनेती : दूसरे प्रकार की लिपि का नाम वेनेती (Venetic) रखा गया क्योंकि इसके अभिलेख, जो लगभग २०० की संख्या में थे, वेनिस नगर से प्राप्त हुये। लगभग ई० पू० की चौथी श० में इन वेनिस निवासियों की भाषा वेनेती थी। इनकी लिपि में भी 'B. D. G.' के वर्ण नहीं थे। वे लोग 'ब' (B) की ध्वनि के स्थान पर 'फ़' (F) की ध्वनि का प्रयोग करते थे, उदाहरणार्थ 'Boius' – बोइयस को फ़ोइयस लिखते थे, ईगो (ego) को ईखो लिखते थे तथा 'द' (D) के स्थान पर 'ज़' (Z) का प्रयोग करते थे। दिशा भी दाएँ से बाएँ थी। इन दोनों को बॉटलिस्ती (Botlisti) ने १६३४ में पढ़ा है। 'फ० सं० – ३४३' पर लुगानो के वर्ण दिये गये हैं।

तथा 'फ० सं० – ३४४' पर वेनेती लिपि के वर्ण दिये गये हैं। दोनों लिपियों की दिशा दाएँ से बाएँ थी।

कांसे की पाटिया

इटली के पियासेंज़ा नामक स्थान से एट्रस्कनों द्वारा कांसे पर बनाया गया बछड़े के यकृत का नमूना प्राप्त हुआ। इस पर एट्रस्कन देवी – देवताओं के नाम उत्कोर्ण हैं। इसका प्रयोग शिक्षार्थी ज्योतिषियों को प्रशिक्षित करने के लिये किया जाता था।

लिपि में एट्रस्कन वर्ण हैं परन्तु भाषा का ज्ञान न होने के कारण अभी तक निश्चित रूप से पाटिया का रहस्योद्‌घाटन न हो सका।

'फ० सं० – ३४५' पर पाटिया का चित्र दिया गया है।

लैटियम

इतिहास : लैटियम (Latium) इटली के उस प्राचीन भू भाग को कहते हैं जो इटली के पश्चिमी किनारे पर स्थित था। इसके उत्तर में एट्रस्कन के नगर – राज्य थे जिसको इटरूरिया के नाम से सम्बोधित किया जाता था : लैटियम का मुख्य नगर रोम (रोमा) था। इसका इतिहास इटरूरिया के इतिहास से पृथक नहीं किया जा सकता इसी कारण इटरूरिया के इतिहास के साथ सम्मिलित कर दिया गया है।

लैटियम की लिपि व भाषा का नाम लैटिन था। आरम्भ में मिस्र के चित्रों को हेब्रू भाषा के नाम देकर सिनाइ के द्वारा फ़िनीशियनों ने अपने स्वर – रहित २२ वर्णों का निर्माण किया। ग्रीस निवासियों ने ई० पू० की लगभग ग्यारहवीं शताब्दी में कैडमस द्वारा फ़िनिशिया के १६ वर्णों द्वारा अपनी लिपि का विकास किया। इस विकास काल में अनेक परिवर्तन हुये और अंत में फ़िनीशिया के १६ वर्ण ग्रीक लिपि में स्थापित हो गये और उन्होंने अपनी भाषा की ध्वनि के अनुसार ५ वर्णों के – उ, फ़, ख, प्स, ऊ (उनके नाम – उपसीलोन, फ़ी, खी, प्सी और ओमेगा थे) – चिह्नों का आविष्कार करके अपनी २४ वर्णों की वर्णमाला को प्रयोगात्मक बना लिया (फ० सं० – ३२४)।

कांसे की पाटिया

फलक संख्या – ३४५
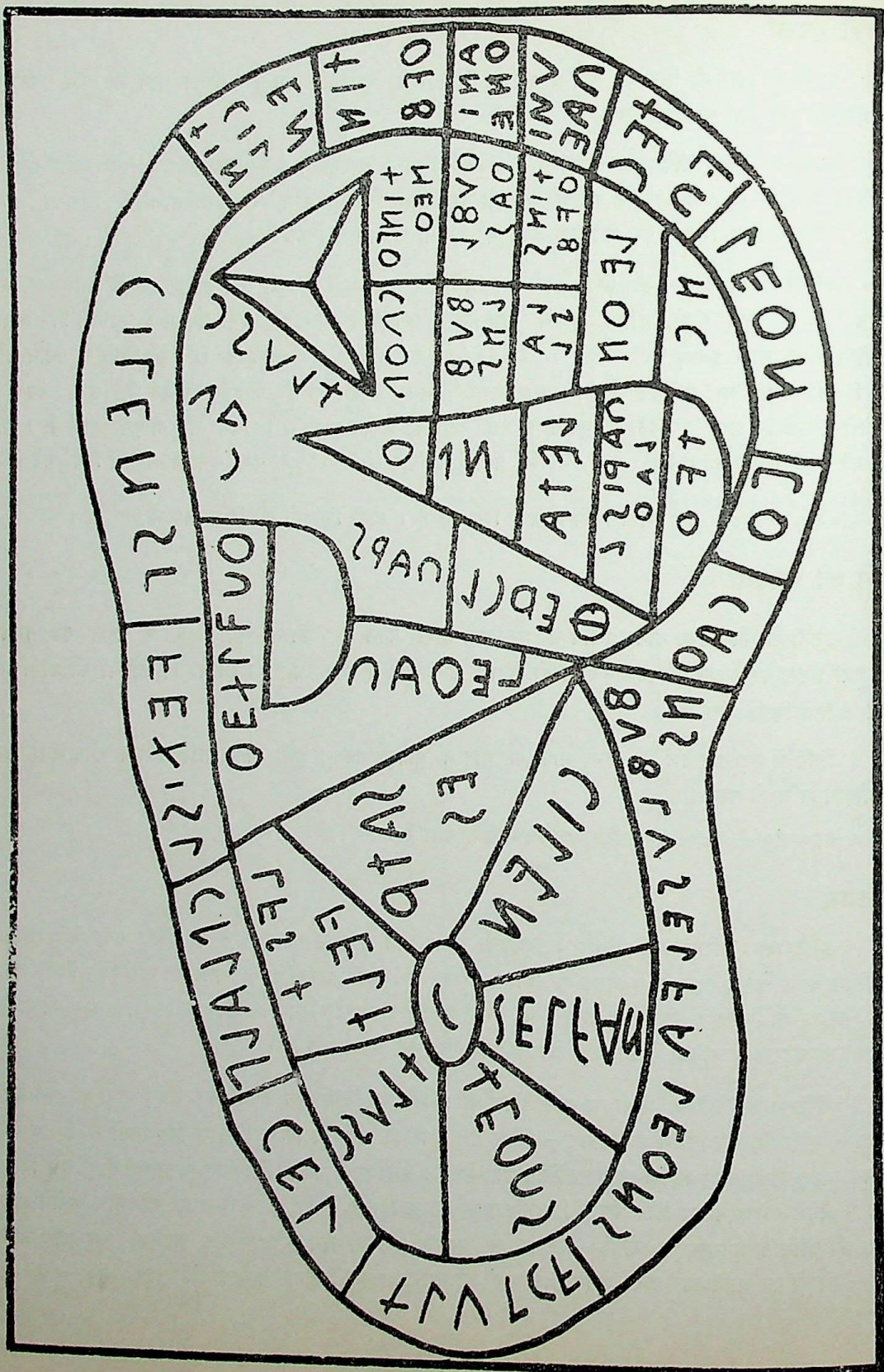
लिपि : जब ग्रीक लिपि के वर्ण एट्रस्कनों द्वारा लैटियम पहुँचे जहाँ लैटिन भाषा थी तब ग्रीक वर्ण लैटिन भाषा के लिये प्रयोग किये जाने लगे। परन्तु उनमें अनेक परिवर्तन किये गये क्योंकि जो ध्वनियाँ ग्रीक वर्णों की थीं वे सब लैटिन भाषा के लिये उपयुक्त नहीं थीं। इस कारण F. Q. जो ग्रीक लिपि में छोड़ दिये गये थे वे लैटिन में ले लिये गये। G. के स्थान पर C को ले लिया गया तथा Z के स्थान पर G को कर दिया गया। पहले तो Z को छोड़ दिया गया परन्तु लैटिन भाषा में एट्रस्कन एवं ग्रीक भाषा के शब्दों का प्रयोग होने लगा तो लैटिन में पुनः Z को ले लिया गया और अंत में रख दिया गया। V की ध्वनि को परिवर्तित करके जो पहले U की थी 'व' कर दी गई और उसको गोल कर U का वर्ण बना लिया गया। I. E. की ध्वनि के लिये Y बना लिया गया। लगभग १००० ई० में I को विभाजित करके I और J बना लिया गया। साथ साथ U को दुगना दोहरा करके डबल + यू = डबल्यु = W बना दिया गया। इस प्रकार हेर – फेर करके प्राचीन लैटिन के २१ वर्णों को २६ बना लिया गया जो आज रोमन लिपि के नाम से प्रसिद्ध हैं और लगभग संसार की आधी जन संख्या इनका प्रयोग करती है।

लैटिन (लातीनी) वर्ण : इस चित्र के प्रथम कालम में वर्णों की ध्वनियाँ[1] दी गई हैं। दूसरे में प्राचीन लैटिन (Archaic Latin) दी गई है जिसका काल ई० पू० की पाँचवीं व चौथी शताब्दी के मध्य का माना जाता है। तीसरे कालम में साहित्यिक काल (Classical period) के वर्ण दिये गये हैं। चौथे में, जो नये वर्ण जोड़े गये हैं, दिये हैं तथा पाँचवें में जैसे वर्तमान काल में वर्णों का स्थान है, उस प्रकार दिये गये हैं।

३१२ ई० पू० में एपियस क्लाडियस कैकस (Appius Claudius Caecus) ने, जब Z की ध्वनि का कार्य S की ध्वनि से चलने लगा, तो Z के वर्ण को पृथक कर दिया। ग्रीक भाषा में Q O का प्रयोग किया जाता था जिसको लैटिन में Q U का प्रयोग कर दिया गया। क्योंकि एट्रस्कन में 'O' नहीं था। Q अकेला कार्य नहीं कर सकता था (फ० सं० – ३४६)।

मैनियस की कटार (Manios Clasp) : लैटिन का प्राचीनतम् अभिलेख फ़ोरम रोमानम[2] (Forum Romanum) से एक काले पत्थर पर उत्कीर्ण १८६६ में प्राप्त हुआ था परन्तु वह इतना मिट चुका था कि उस का रहस्योद्घाटन करना कठिन था। उसकी लेखन पद्धति हल – चलने वाली (Boustropheden Style) [3] थी।

इसके अतिरिक्त प्राचीन अभिलेखों में एक कटार[4] प्राप्त हुई। जिसका काल ६०० ई० पू० का है। इसका नाम 'मैनियस क्लैस्प'[5] है। संभवतः कोई उत्तम प्रकार का कलाकार रहा होगा जिसका नाम मैनियस था और

---

1. लैटिन वर्णों की ध्वनियाँ अनेक हैं। उदाहरणार्थ A. की ध्वनियाँ हैं—अ, आ, ए, ऐ; D=द, ड; C=क, स; E=ए, इ; G=ग, ज; O=ओ, अ, आ आदि।
2. यह दो पहाड़ियों – पैलाटीन व कैपिटोलीन – के मध्य स्थित मैदान का नाम था। यह शब्द स्टैडियम के लिये प्रयोग किया जाने लगा जहाँ नीचे खेल – कूद होते थे और ऊपर रोम – निवासी उनको देख देख कर आनन्द लेते थे। तदनन्तर यह शब्द नगरों के बाज़ारों के लिये भी प्रयोग में आने लगा।
3. जब कोई अभिलेख दाएँ से बाएँ या बाएँ से लिखा जाये, तदनन्तर पंक्ति समाप्त होने पर पुनः उसकी दिशा परिवर्तित कर दी जाये, अर्थात् दाएँ से बाएँ लिखा गया लेख बाएँ से दाएँ तथा बाएँ से दाएँ लिखा गया दाएँ से बाएँ लिखा जाये, तब इस पद्धति को 'हल – चलाने की' पद्धति कहेंगे।
4. Blakeway : Journal of Roman Studies, Vol.XXV, (London – 1936), p – 141.
5. Sandys – Campbell : Latin Epigraphy (1927), page – 36.

उसने नुमायसियस को वह कटार भेंट रूप में दी होगी, इसी कारण उसने उस[1] कटार पर यह शब्द **"मैनियस ने नुमायसियस के लिये बनाई"** अंकित किये होंगे। यह कटार १८२६ में प्रायनेस्ते[1] में ब्रील के उत्खनन कार्य द्वारा प्राप्त हुई। इसकी पद्धति दाएँ से बाएँ है (फ० सं० – ३४७)।

कुछ वर्णों का विकास : इस चित्र में सबसे ऊपर फ़िनीशियन वर्ण, उसके नीचे ग्रीक वर्ण, तदनन्तर लैटिन वर्ण तथा उनके परिवर्तन की क्रम दिया गया है। ईसा की चौथी शताब्दी से आठवीं के मध्य एक प्रकार का वर्णों में परिवर्तन आया जिसके द्वारा अनशियल (Uncial)[2] वर्ण बने। आठवीं शताब्दी के पश्चात् कैरोलीन वर्ण बने। कैरोलीन (Caroline) का नाम उस विद्वान् के नाम पर पड़ा जो यार्क (York – इंगलैण्ड) नगर का निवासी था। यही बाद में फ्रांस का राजा बना (७६८ से ८१४ ई० तक) और इसी ने इन वर्णों का आविष्कार ७९६ में किया। इसका नाम था कार्लमेगना (Charlemagne) या चार्ल्स दि ग्रेट, रोम के पोप लियो तृतीय (Leo III) ने इसका राज्याभिषेक ८०० ई० के बड़े दिन पर किया था। इसका राज्य इंगलिश चैनेल से टर्की तक था (फ० सं० – ३४८)।

गोथिया

इतिहास : गोथिया का इतिहास, क्योंकि गोथिया नाम का कोई देश स्थायी रूप से स्थिर नहीं हो सका, (Goths) का नहीं है। गोथ एक जर्मनी की प्राचीन पर्यटनशील जाति का नाम था। कुछ विद्वानों का विचार है कि वे नार्वे के मूल निवासी थे। वे देशों को परास्त करते थे और जीत का कुछ दिनों ठहरकर, आनन्द उठा कर चल दिया करते थे परन्तु बाद में वे बस गये। स्पेन के देश पर राज्य भी किया और उसी का नाम गोथिया पड़ा जो अधिक दिनों के लिये स्थिर नहीं रह सका। इस जाति के दो भाग थे जो पृथक होकर विसी – गोथ (Visigoths) = अर्थात् पश्चिमी गोथ तथा ऑस्ट्रोगोथ (Ostrogoths) = अर्थात् पूर्वी गोथ कहलाये। यह लोग टिटोनिक (Teutonic) जाति के वंशज थे। यह लोग लगभग ईसा की प्रथम शताब्दी से आक्रमणकारी बन गये थे। इतिहासकार जर्मनी को ही इनका मूल स्थान मानते हैं।

---

1. इस नगर का आधुनिक नाम पैलेस्ट्रीना है। यह लैटियम का अति प्राचीन नगर था (मान चित्र फ० सं० – ३३५ पर देखिए)। ई० पू० की आठवीं श० में यह एक समृद्धिशाली नगर था। एट्रस्कनों से इसका व्यापार चलता था। ४९९ ई० पू० में इसने रोम से सन्धि कर ली परन्तु जब रोम एवं गॉलों (Gauls) के आक्रमणों से दुखी होने लगा तो इसने भी रोम के साथ झगड़े आरम्भ कर दिये। ३४० – ३८ में खुलकर युद्ध हुआ जिसमें रोम की विजय हुई। रोम ने दण्ड के रूप में, इसके सब अधीन – उप – नगर तथा भूमि छीन ली, केवल मुख्य नगर को नष्ट नहीं किया। अब यह रोम के प्रभाव में आ गया बाद में रोमन राज्य का अंग बन गया। पैलेस्ट्रीना बड़ा रमणीक था तथा ग्रीष्म ऋतु में शीतल रहता था। रोम के धनी – नागरिक यहाँ आकर आनन्द लेते थे। ११ में एक महान् व्याकरणाचार्य वेरियस फ्लेकस (Verrius Flacus) द्वारा निर्मित तिथिपत्र (कैलेण्डर) प्राप्त हुआ तथा समाधि – स्थल (Necropolis) से भी बड़ी अमूल्य पुरातात्त्विक सामग्री प्राप्त हुई जिसमें धातु व हाथी – दांत की बड़ी सुन्दर वस्तुयें क़ब्रों से प्राप्त हुईं।
2. 'Uncia' (Latin) = an inch; 'Uncus' = Crooked; इन दो लातीनी शब्दों से 'अनशियल' (Uncial) बना। इसका भावार्थ है, 'घसीट में लिखने से अक्षर एक इंच ऊपर तथा एक इंच नीचे जाना चाहिये'

लैटिन वर्ण

अ	ΔA	A		A	ओ	O	O		N
ब	8B	B		B	प	ᒣΓ	P		O
क ग	Ↄ	C क		C	क	ϘϘ	Q		P
द	D	D		D	र	ꟼ	R		Q
ए	Ǝ	E		E	स	ᔑϨ	S		R
फ़	ꟻ	F		F	त ट	T	T		S
ज़ ग	I	G ग		G	उ	V	V	U	T
ह	日	H		H	व			V	U
ई	I	I		I	व			W	V
क	ꓘ	K		J	क्स			X	W
ल	⅃	L		K	य			Y	X
म	M	M		L	ज़			Z	Y
न	И	N		M	ज			J	Z

फलक संख्या – ३४६

मैनियस की कटार--६०० ई० पू०
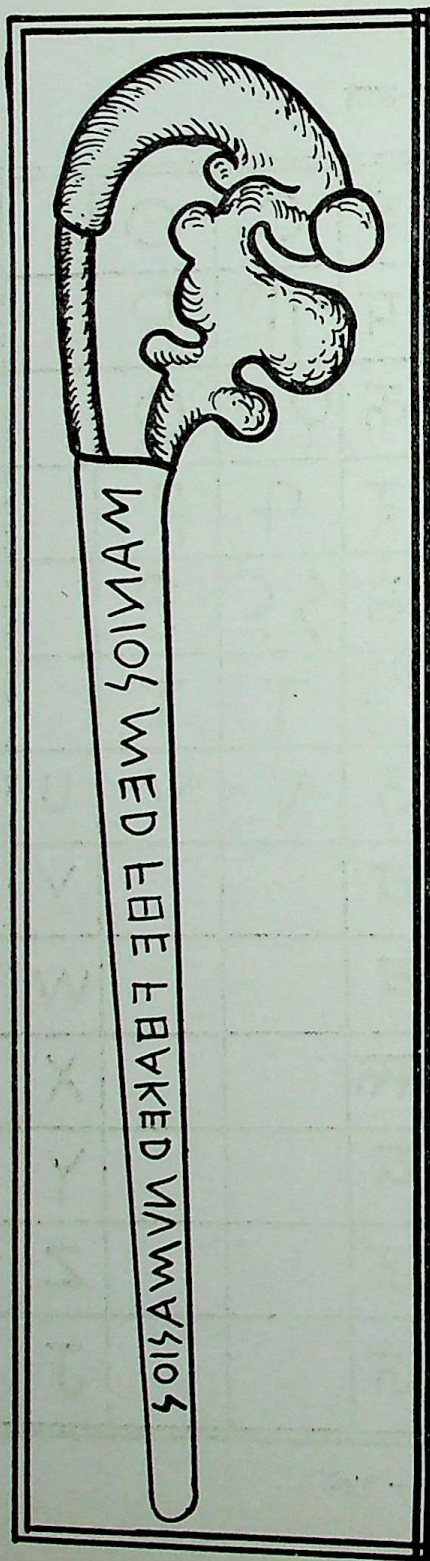
SOISAMVN DEKAHF EHF DEM SOINAM

(Read from Right to Left)

MANIOS MED FHE FHAKED NUMASIOS

(Read from Left to Right)

Meaning : **"Manios Made Me For Numasios**

अर्थः मैनियस ने मुझे नुमासियस के लिए बनाया

फलक सख्या - ३४७

यूरोप की प्राचीन जातियों का विस्तार

पांचवीं से ग्यारहवीं श० तक
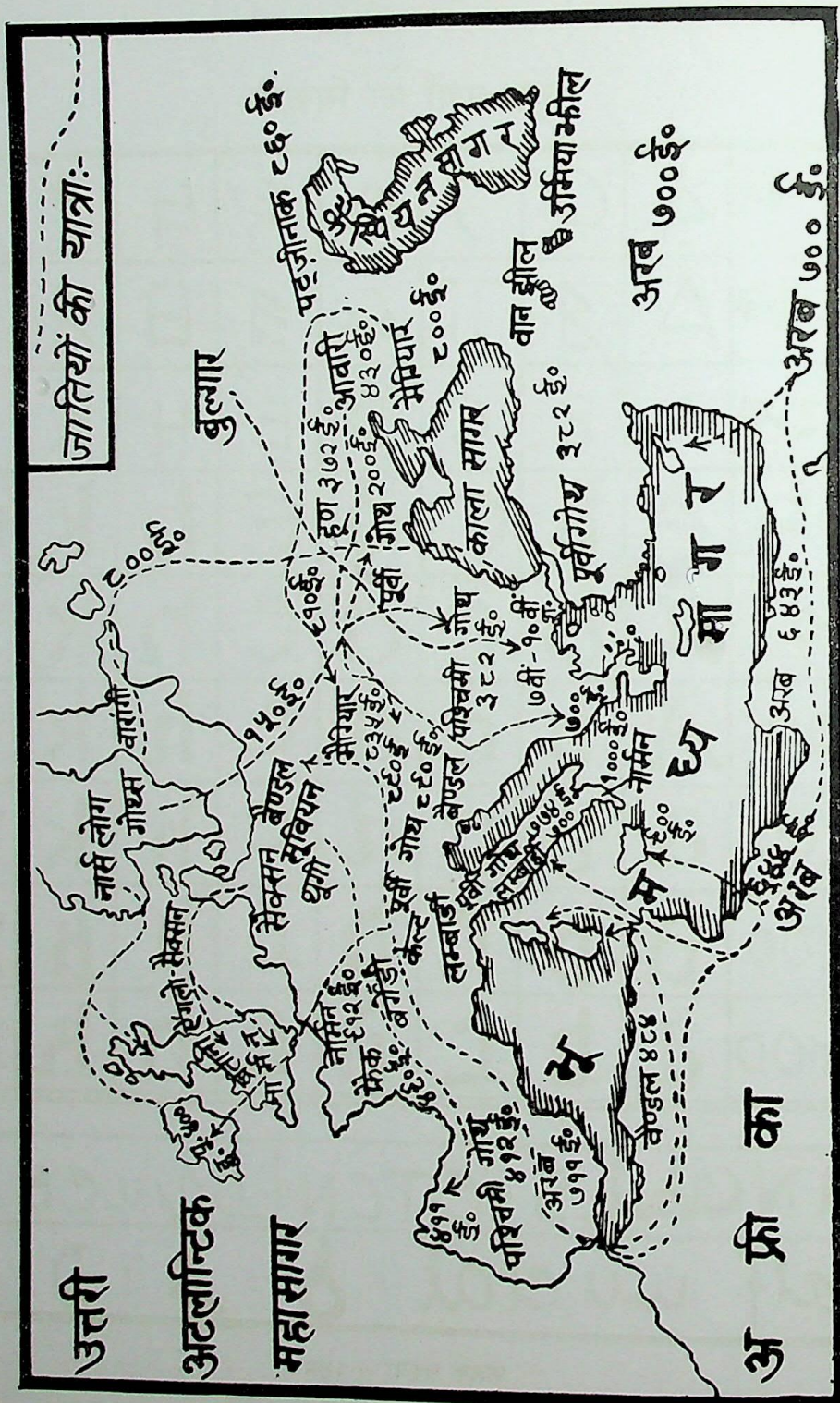
फलक संख्या – ३४८ क

पश्चिमी गोथों ने पूर्वी गोथों के राजा फ़स्टीडा (Fastida) को ईसा को प्रथम शताब्दी में परास्त किया था। वैन्डल जाति के राजा विसोमार (Visimar) को भी परास्त किया। तत्पश्चात् गोथों के प्रसिद्ध शासक हर्मेनिक (Hermanic) ने हूणों के आक्रमण के कारण, जो ३७० ईसवी में इन पर हुआ था, आत्महत्या कर ली। पूर्वी – गोथ हूणों के अधीन हो गये।

३७६ ई० में पश्चिमी गोथों के शासक फ्रिथोगर्न (Frithigern) ने डैन्यूब नदी को पार करके रोम के प्रांत पर आक्रमण कर दिया। इस युद्ध में रोम का महाराजा वालियस (Valeus) का स्वर्गवास हो गया। तदनन्तर रोम के सिंहासन पर थिओडोसियस (Theodosius) बैठा। उसने ३८१ में गोथों से सन्धि कर ली। ३९५ में गोथों ने ग्रीस पर आक्रमण किया। ४०२ तथा ४०८ में इटली पर आक्रमण किया। अब इनका नेता एलारिक (Alaric) था। इसने तीन बार रोम को घेरा। तीसरी बार रोम को नष्ट कर दिया। एलारिक की ४१० में मृत्यु हो गई।

तत्पश्चात् अताउल्फ़ (Ataulf) शासक बना जिसने थिओडोसियस की पुत्री प्लेसीडिया (Placidia) से विवाह कर के रोम से सन्धि कर ली। ४१५ में बार्सीलोना में इसका वध कर दिया गया। तदनन्तर वालिया (Wallia) शासक बना परन्तु उस का भी ४१९ में देहांत हो गया। अब थिओडोरिक प्रथम (Theodoric I) शासक बना। अब पूर्वी तथा पश्चिमी गोथ आपस में मिल गये क्योंकि हूणों के आक्रमण अट्टिला के द्वारा आरम्भ हो गये थे। इस युद्ध में थियोडोरिक ४५१ में वीरगति को प्राप्त हुआ। इसके पश्चात् वे दोनों पुनः पृथक हो गये।

पश्चिमी गोथों ने अपना राज्य गाल और स्पेन में स्थापित कर लिया था और इन देशों का शासक युरिक (Euric) बन गया था। इसने ४६६ से ४८५ तक शासन किया। अब गोथों ने रोमन संस्कृति को अपना लिया था परन्तु ईसाई धर्म को नहीं अपनाया था। ५०७ में फ्रैंकों (Franks) ने आक्रमण कर दिया और गोथों की पराजय हुई। अब इनका राज्य केवल स्पेन में रह गया।

जब हूणों के नेता अट्टिला की मृत्यु हो गई, तब पूर्वी गोथ स्वतंत्र हो गये और उन्होंने ४०६ में रोम पर आक्रमण कर दिया। ४९३ तक पूर्वी गोथों का शासन पूरो इटलो व सिसली पर स्थापित हो गया। कुछ दिनों पश्चात् पूर्वी तथा पश्चिमी गोथ पुनः एक दूसरे के निकट आने लगे और पूर्वी गोथों के राजा थिओडोरिक की पुत्री का विवाह पश्चिमी गोथों के राजा एलारिक द्वितीय से सम्पन्न हो गया। ५०७ में एलारिक का स्वर्गवास हो गया। तदनन्तर अमालारिक (Amalaric) राजा बना।

थिओडोरिक की मृत्यु के पश्चात् दोनों गोथ जातियाँ पुनः पृथक हो गईं। पूर्वी गोथों का नाम सदैव के लिये लोप हो गया परन्तु पश्चिमी गोथों का साम्राज्य स्पेन में स्थापित रहा। अब स्पेन के बहुत से गोथ ईसाई बन गये थे और वे स्पेन राज्य से असंतुष्ट थे क्योंकि शासक अभी तक ईसाई नहीं बना था। ५६ में जब ल्योविगिल्ड (Leovigild) शासक बना तो उसने स्पेन को शक्तिशाली बनाने के प्रयास में कई युद्ध किये। खोये हुये गाल के भाग भी अपने राज्य में सम्मिलित किये तथा गोथों के सामन्तों को भी, जो स्वतंत्र हो गये थे, परास्त कर अपने राज्य के अधीन कर लिया। ५८६ में उसके पुत्र ने पिता की मृत्यु के पश्चात् रोम के ईसाई – धर्म को अपना लिया जिसके कारण स्पेन रोम के पोप के प्रभाव में आ गया। अब सब कुछ रोम जैसा ही था केवल नाम के लिये गोथ – राज्य था। ७११ में इस्लाम के आने से जो शेष स्पेन रह गया था गोथिया के नाम से सम्बोधित होने लगा।

लिपि : चौथी ईसवी में पश्चिमी – गोथों के एक पादरी उलफ़िलास (Ulfilas) अथवा वुलफ़िलास (Wulfilas) ने, जो डैन्यूब नदी के दक्षिण में धर्म प्रचार का भी कार्य करता था, अपने अनुयाईयों के लिये एक

लिपि का आविष्कार किया जिसका नाम वेस्ट गोथिक[1] पड़ गया। वह इसी लिपि में बाइबिल का अनुवाद भी करना चाहता था। इस लिपि के लिये उसने ग्रीक तथा लैटिन वर्णों का उपयोग किया परन्तु उनमें कुछ परिवर्तन अवश्य किया। उसका जन्म ३१८ तथा मृत्यु ३८८ में हुए।

इस लिपि में २७ वर्ण थे जो 'फ० सं० – ३४९' पर दिये गये हैं। डेनमार्क निवासी एक विद्वान् एल० विम्मर (L. Wimmer) के अनुसार यह लिपि साहित्यिक ग्रीक (Classical Greek) व लैटिन (Latin) वर्णों द्वारा बनाई गई है। मारस्ट्राण्डर (C. T. S. Marstrander) के अनुसार यह वर्ण केल्ट जाति के लोगों में, जो पूर्वी एल्प्स पर्वतों पर ईसा की प्रथम शताब्दी में निवास करते थे, प्रचलित थी। टयूटन्स (Teutons) के आने पर इसी लिपि[2] से रून के वर्ण बने।

पठनीय सामग्री

Bloch, R. : The Ancient Civilization of Etruscans (1928).

Bodmer, F. : Loom of the Language (London – 1961).

Bucheler, F. : Umbrica (Bonn – 1883).

Buck, C. D. : Grammar of Oscan and Umbrian (1904).

Buonamici, G. : Epigraphia etrusca (Florence – 1932).

Carpentar, R. : 'The Alphabet in Italy' – American Journal of Archaeology XLIX (1945).

Conway, R. S. : 'The Ancient Alphabet of Italy' – Cambridge – Ancient History, Vol. IV., p.p. 395 – 403 (1930).

Egbert, J. C. Introduction to the Study of Latin Inscriptions (N. Y. – 1923).

Fell, R. A. : Etruria and Rome (1932).

Gutenbrunner : Über den Ursprung des gotischen Alphabets, 72 (1890).

Jensen, H. : Syn, Symbol and Script (London – 1970).

Johnston, M. A. : Etruria – Past and Present (Lond. – 1930).

Kirchoff : Das Gotishe Runenalphabet (Berlin – 1854).

Madona, A. N. : A Guide to Etruscan Antiquity (1954).

Mason, W. A. : A History of the Art of Writing (N. Y. – 1920)

Ogg, Oscar : The 26 Letters (1966).

Pallatiuvo, M. : The Etruscans (1956).

Panli, W. : Corpus Inscriptionum Etruscarum (1893).

Ibid : Studi Etruschi, Vol. III – (1902).

Randall, D. : The Etruscans (1927).

Wright, J. A Primier of Gothic Language (1892).

1. Gutenbrunner : Über den Urspung des gotischen Alphabets (1890), p – 500.
2. Kirchoff : Das gotische Runnenalphabet (Berlin – 1854), p – 109.

गोथिक लिपि

अ [illegible] ग्रीक	ब B ग्रीक	ग Γ ग्रीक	द d ग्रीक
ए ϵ ग्री०	क़ (Q) U लैटिन	ज़ Z ग्री०	ह h लैटिन
फ Ψ ग्री०	ई l ग्री०	क K ग्री०	ल λ ग्री०
म M ग्री०	न N ग्री०	ज G लैटिन	उ n रून
प Π ग्री०	4 ग्री०	र K लै०	स S लै०
त T ग्री०	व Y ग्री०	फ़ F लै०	क्स X ग्री०
ह्व (hw) ⊙ ग्री०	ज [illegible] रून	↑ ग्री०	इस लिपि २७ वर्ण हैं

फलक संख्या – ३४९

मोराविया – ९२० से ११२५ ई० के मध्य

आधुनिक बुलगारिया
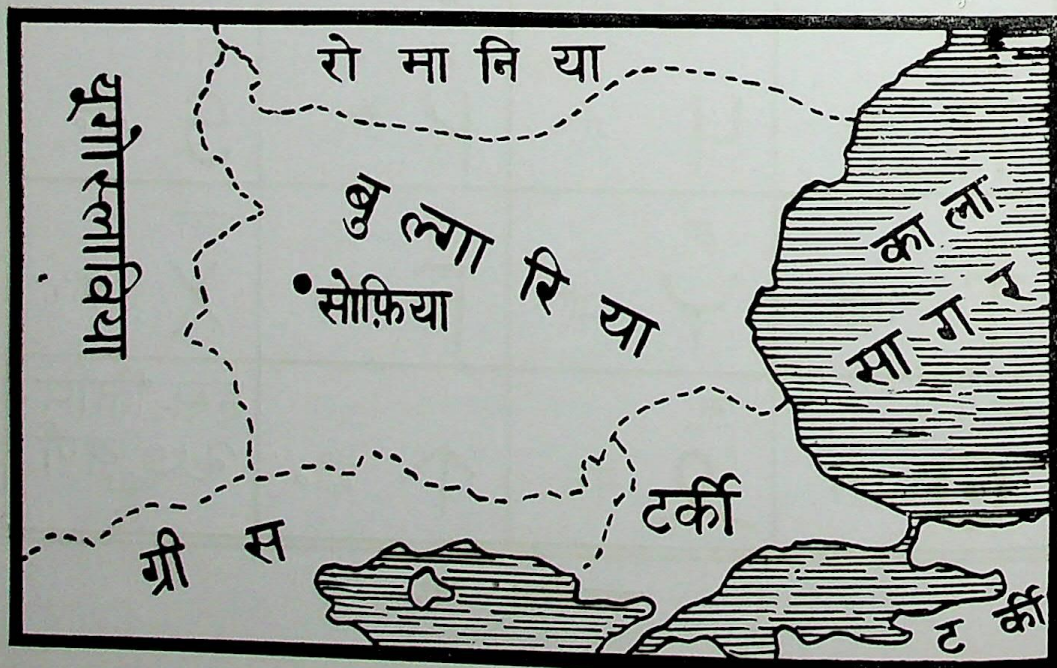
बुल्गारिया

इतिहास : प्राचीन काल में इस देश का नाम मोयशिया (Moesia) था। यह दक्षिण – पूर्वी यूरोप में डैन्यूब नदी के दक्षिण में स्थित था। इसमें थ्रेशियन लोग निवास करते थे। ७५ ई० पू० में रोम ने इस देश पर आक्रमण कर दिया तथा २९ ई० पू० में इसको परास्त कर दिया। पन्द्रहवीं ईसवी में यह रोम का एक प्रांत बन गया। तत्पश्चात् यह दो भागों में विभाजित कर दिया गया। उत्तरी मोयशिया बाद में सर्बिया के नाम से ज्ञात हुआ तथा दक्षिणी मोयशिया बुल्गारिया के नाम से ज्ञात हुआ।

ईसवी सन् की चौथी शताब्दी में गोथों ने इस को अपने अधीन कर लिया और स्लाव जाति के लोग भी यहाँ आकर बस गये। सातवीं श० में उत्तर पश्चिम की ओर से बुल्गार जाति के लोग यहाँ आकर बसने लगे। इसके कुछ पूर्व वे लोग बेस्सर्बिया में आकर बस चुके थे। अब यह मिल कर स्लाव कहलाने लगे। इन्हीं लोगों ने अपना एक राज्य स्थापित कर लिया। इनका एक राजा बोरिस ८०५ ई० में ग्रीक – चर्च के ईसाई धर्म का अनुयायी हो गया। तत्पश्चात् इसका पुत्र ज़ार सिमियन (Simeon) ने, ८९३ में बैज़ेन्टाइन संस्कृति को अपनाया परन्तु भाषा को नहीं अपनाया।

९६७ में रूस ने तथा ९७२ में बैज़ेन्टाइन ने इस पर आक्रमण कर दिया। ११८५ तक यह बैज़ेन्टाइन साम्राज्य का एक अंग बना रहा। तत्पश्चात् स्वतंत्र होकर १३६६ तक राज्य किया। तदनन्तर ऑटोमन साम्राज्य के अधीन आ गया। १८७६ में टर्की के विरुद्ध विद्रोह कर दिया जिसमें सहस्रों मनुष्यों का संहार हुआ। १८७७ – ७८ में रूस व टर्की में युद्ध हुआ और बुल्गारिया एक स्वतंत्र राज्य बन गया। १८८५ में सर्बिया से इसका युद्ध हुआ और १८९६ में यह रूस का मित्र बन गया। १९०८ में यह टर्की से पूर्णतया स्वतंत्र हो गया।

प्रथम बाल्कन युद्ध में इसको १९१३ में अपने देश का बहुत सा भाग अन्य पड़ोसी देशों को देना पड़ा। प्रथम तथा द्वितीय महायुद्ध में यह जर्मनी की ओर रहा। १९४४ में रूस ने इस पर आक्रमण कर दिया। १५ सितम्बर १९४६ को इसने एक गणतंत्र राज्य होने की घोषणा कर दी और समाजवादी बन गया।

मोराविया का इतिहास : ईसा की छठी शताब्दी में इस भूभाग में स्लाव तथा मोरावियन आकर बस गये। नवीं शताब्दी में कार्लमैगने (मृत्यु – ८४३) द्वारा यह देश ईसाई धर्म का अनुयायी बना लिया गया। ८७० में इसने जर्मनी के शासन के विरुद्ध विद्रोह कर दिया और एक स्वतंत्र राज्य बन गया। ८९३ में हंगेरी के अधीन हो गया और ९०६ ईसवी तक बहुत से मैग्यार यहाँ आकर बस गये। दसवीं शताब्दी में यह पोलैण्ड तथा बोहेमिया राज्यों का एक भाग बन गया। १०२९ में यह पूर्णतया बोहेमिया के अधीन होगया। १८४९ में यह एक प्रथक राज्य हो कर आस्ट्रिया राज्य का भाग बन गया और इसकी राजधानी बर्नो (Barno) स्थापित हो गई। १९१८ में सदैव के लिये यह ज़ेकोस्लोवाकिया का एक भाग बन गया।

लिपि : ८६२ में मोराविया के शासक रोस्टिस्लाव (Rostislav) ने क़ुस्तुनतुनिया (कान्सटैन्टीनोपिल) को अपना एक राजदूत भेजा और निवेदन किया कि शासकीय गिर्जाघर में स्लावों के लिये स्लाव भाषा में धर्म – प्रचार के लिये किसी स्लाव – भाषा के ज्ञानी को भेजा जाये। उस समय वहाँ के शासक ने एक उच्च – पदाधिकारियों की सभा का आयोजन किया जिसके द्वारा यह निश्चय किया गया कि सैलोनिका (Salonica) के निवासी, जहाँ स्लाव भाषा का प्रयोग किया जाता था, दो भाईयों – कान्सटैन्टाइन (Constantine) एवं मेथाडियस (Methodius) – को इस कार्य के लिये मोराविया भेजा जाय।

वैसे तो इससे पूर्व भी स्लावों ने अपने लिये अपनी भाषा के अनुरूप एक लिपि बनाने के लिये प्रयास किये थे परन्तु उनमें सफलता न मिल सकी। जब यह दोनों भाई वहाँ पहुँचे तो इन्होंने एक लिपि का आविष्कार किया। प्रो० पीटर दिनेकोव (Peter Dinekov) के अनुसार उपर्युक्त भ्राताओं ने सर्वप्रथम बुलगारिया में लिपि का आविष्कार किया। तत्पश्चात् यह लोग मोराविया गये और दो प्रकार के वर्णों का आविष्कार किया। पहले ग्लेगो – लिथिक (Glagolithic) तदनन्तर सीरिलिक (Cyrillic) वर्णों का। ग्लेगोलिथिक का प्रयोग तो समाप्त हो गया परन्तु सीरिलिक वर्णों का प्रयोग आज भी बुलगारिया, यूगोस्लाविया तथा रूस में किया जाता है। वैसे तो इन दो प्रकार के वर्णों में अन्तर है परन्तु दोनों की पद्धति एक है।

कान्सटैन्टाइन का जन्म सैलोनिका में ८२७ में हुआ था। इसकी शिक्षा बैज़ेन्टाइन की राजधानी के उच्चकोटि के स्कूल में सम्पन्न हुई। वहाँ इसकी भेंट पोन्टियस (Pontius) से हुई और यह उसका शिष्य बन गया। जिस काल में इसने उपर्युक्त लिपियों का आविष्कार किया, ईसाई संसार में केवल तीन भाषायें पवित्र समझी जाती थीं – ग्रीक, लैटिन तथा हेब्रू – और इन तीन के अतिरिक्त किसी अन्य भाषा में बाइबिल के पवित्र – धर्म का प्रचार करने की आज्ञा नहीं थी। इस आज्ञा के बन्धन का इन दो भाइयों ने मानवता की भलाई के लिये उल्लंघन किया और स्लावों के लिये लिपि का आविष्कार करके बाइबिल तथा धर्म के अन्य साहित्य का इस लिपि एवं भाषा में अनुवाद भी किया। इस बात पर रोम के पादरियों में बहुत विवाद भी हुआ अन्त में इन दो भाइयों को मान्यता प्रदान की गई। कान्सटैन्टाइन बाद में संत सीरिल (St. Cyril) के नाम से प्रसिद्ध हुआ। ८६९ में इस संत का स्वर्गवास हो गया। उसी के नाम पर लिपि का नाम भी सीरिलिक रखा गया।

ग्रूबीसिख़ (Grubissich) के अनुसार, प्राचीन ग्लेगोलिथिक लिपि में ४० वर्ण थे। कुछ विद्वानों – जे० ग्रिम (J Grimme), चाड्को (Chadzko), लेनोरमान्ट (Lenormant), हानुस (Hanus) तथा हाम (Ham) – का मत है कि इनका आविष्कार प्राचीन रून वर्णों (Runic Letters – 'फ० सं० – ३६४' पर) द्वारा किया गया। मिलर (Miller) का मत है कि इनका विकास 'अवेस्ता' के वर्णों से किया गया। कुछ अन्य विद्वानों – सफ़ारिक (Safarik), वोण्ड्राक (Vondrak) – के विचारानुसार इस लिपि का विकास फ़िनीशियन – हेब्र् द्वारा किया गया। नथीगल (Nathigal) काप्टिक से, गैस्टर (Gaster) तथा अबिट (Abicht) जार्जियन से और गाइट्लर (Geitler)[1] अल्बेनियन से मानते हैं। लिण्डनर (Lindner) ग्रीक लिपि से इसका उद्भव मानते हैं और टेलर (Taylor), यागिक (Jagic) आदि इस विचार का समर्थन करते हैं।

सीरिलिक लिपि में ४२ वर्ण हैं जिसमें से २४ वर्ण नवीं – दसवीं श० की ग्रीक लिपि से लिए गये हैं। ग्लेगोलिथिक लिपि[2] के वर्ण 'फ० सं० – ३५१' पर, प्राचीन सीरिलिक[3] (बुलगारियन ग्लेगोलिथिक) के वर्ण 'फ० सं० – ३५२' पर तथा बुलगारी सीरिलिक[4] (छोटे – बड़े वर्णों सहित) 'फ० सं० – ३५३' पर दिये गये हैं।

---

1. Geitler : Studien Zur Palaeographie Und Papyruskunde, Vol. XIII (1913), p – 41.
2. Altheim : Hunnische Runen (1948), p – 18.
3. Sobolew kij : Slavjano Russkaja paleografia (St. Petersburg – 1908)
4. Selšcev : Staroslavjanskij ja.

रूस

इतिहास : इस देश में ईसा की पाँचवीं से आठवीं श० के मध्य पूर्वी स्लाव – जाति के लोग बसना आरम्भ हो गये थे। ९ वीं शताब्दी में स्वीडन व नार्वे की ओर से एक वारंगियन जाति के लोग आना आरम्भ हो गये और उन्होंने नोवगोरोड (Novgorod) तथा कीव (Kiev) के नगरों की स्थापना की तथा बाल्टिक सागर से काला सागर तक व्यापार भी आरम्भ किया। इनमें से एक रूरिक (Rurik) था जिसने रूस राज्य की ८५० ई० में स्थापना की।

१२२४ ईसवी सन् में रूस पर मंगोलों के आक्रमण होने लगे और १२४० में उन्होंने इसको अपने अधीन कर लिया। तातारी खान लोगों (Tatar Khanate of Golden Horde) ने, जिनकी राजधानी सराय थी, इस देश से कई प्रकार के कर लेना आरम्भ कर दिये। चौदहवीं व पन्द्रहवीं श० में मास्को राज्य के शासकों ने अपनी सत्ता बढ़ाई और तातारी मंगोलों को साइबेरिया तक भगा दिया तथा अन्य छोटे राज्यों को भी अपने अधीन कर लिया। इन शासकों में इवान चतुर्थ (Ivan IV), जिसने १५३३ से १५८४ तक राज्य किया रूस का प्रथम ज़ार (Tsar) बना। उसीने अस्त्रा खान तथा कज़ान को परास्त कर रूस से खदेड़ दिया। १६१३ से रोमानोव के वंश के शासकों के अधीन रहा। १६५४ से १६६७ तक पोलैण्ड से युद्ध होता रहा। १७०० की लड़ाई में युक्रेन के भाग को अपने अधीन कर लिया। पीटर प्रथम ने बाल्टिक सागर की ओर जाकर लिथूनिया (Lithunia) तथा पोलैण्ड के कुछ भागों को १७७२ से १७९५ तक अपने अधीन कर लिया तथा काला सागर के उत्तरी भागों को भी रूस के देश में सम्मिलित कर लिया।

१८०९ में फ़िनलैण्ड तथा १८१२ में बेस्सर्बिया (Bessarbia) को भी ले लिया। १८१२ में फ़्रांस से युद्ध हुआ। १८१३ में जॉर्जिया तथा काकेशस के राज्यों को अपने अधीन कर लिया। वार्सा का बहुत सा भाग भी ले लिया। १८६० में पश्चिमी चीन का भाग अपने अधीन कर लिया और १८६७ में एलास्का (Alaska) को अमरीका के हाथ बेच दिया तथा अफ़ग़ानिस्तान की सीमा तक पहुँच गया १८७५ में सखालिन को अधीन कर लिया परन्तु १९०५ में जापान से परास्त हुआ। मंचूरिया से अधिकार समाप्त हो गया। प्रथम महायुद्ध (१९१४ – १९१७) में इंगलैण्ड का साथी रहा।

नवम्बर १९१७ की महान् क्रान्ति में ज़ार के शासन का अन्त कर दिया गया। १९१८ – २० के मध्य गृह – युद्ध हुआ और १९२१ में एक अकाल पड़ा। १९२२ में सोवियेट – सोशलिस्ट – गणतन्त्र राज्यों का एक संघ (U. S. S. R.) बना। १९२४ में लेनिन का स्वर्गवास होने के पश्चात् नेताओं में सत्ता पाने के लिये संघर्ष होने लगा। १९२६ में स्टैलिन की विजय हुई और वह रूस का एक शक्तिशाली नेता बन गया। १९२९ में ट्राट्स्की को देश से निर्वासित कर दिया गया। १९३६ में एक नया संविधान का निर्माण हुआ जिसके अन्तर्गत ११ गणतंत्र राज्य स्थापित किये गये। १९३१ में जर्मनी से युद्ध न करने के वचन के एक सन्धि – पत्र पर हस्ताक्षर हुए। १९३९ में पूर्वी पोलैण्ड को अपने अधीन कर लिया। १९४० में फ़िनलैण्ड के कुछ भागों पर अधिकार कर लिया। २२ जून १९४१ को जर्मनी ने रूस पर आक्रमण कर दिया। १९४४ को जर्मनी की सेना को देश के बाहर कर दिया और अप्रैल १९४५ में रूस ने बर्लिन को (अन्य मित्र – सेनाओं के साथ) परास्त कर दिया।

लिपि : रूस ने सीरिलिक लिपि को अपनाया परन्तु इसमें कुछ परिवर्तन किये गये तथा सरलीकरण के क्रम में कुछ वर्ण बनाये गये तथा कुछ निकाल दिये गये। पहले इसमें ३५ वर्ण थे। परन्तु अब केवल ३३ हैं। इसमें तारे के चिह्न लगा वर्ण 'फ़ा' को भी हटा दिया गया।

'फ० सं० – ३५५' पर आधुनिक लिपि की वर्णमाला दी गई है। पहले कालम में ध्वनियाँ दी गई हैं। दूसरे में मुद्रिण हेतु वर्ण (बड़े) तथा तीसरे में छोटे वर्ण दिये गये हैं। चौथे व पाँचवें कालम में हस्त-लिखित वर्ण – बड़े व छोटे दिये गये हैं और छठे कालम में वर्णों के नाम दिये गये हैं।

इस लिपि के वर्णों में जो परिवर्तन किये गये वे एलियस कोपीविच (Elias Kopivitch) द्वारा पीटर महान् के काल (१७०८) में किये गये। पीटर ने इन वर्णों का नाम ग्राज़दांसकाया (GrazJanskaya = Civil Alphabets) रखा और १७३५ से इनका प्रयोग आरम्भ हुआ। तब ३५ वर्ण थे। १९१७ में कुछ और परिवर्तन हुए जिससे आधुनिक लिपि को सर्वमान्य बना दिया गया।
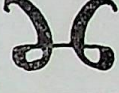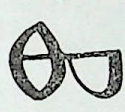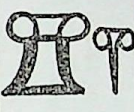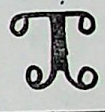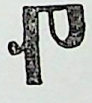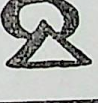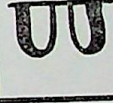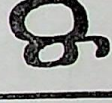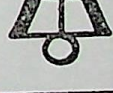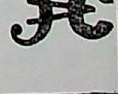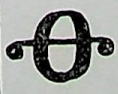
'फ० सं० – ३५६' पर रूस की लिपि के कुछ शब्द उच्चारण तथा अर्थों सहित दिये गये हैं।

पठनीय सामग्री

Clodd, E. : Story of the Alphabet (N. Y. – 1938).

Cotrell L. : Reading the Past – The Story of Deciphering Ancient Languages (London – 1972).

Diringer, D. : Writing (1962).

Gelb, I. J. : A Study of Writing (London – 1963).

Grimme, W. : Kleine Schriften (1902).

Lgoio, G. C. : Bulgaria – Past and Present (1936).

Martin, W. J. : The Origin of Writing (1943).

Masor, W. A. : A History of the Art of Writing (N. Y. – 1920).

Pares, B : History of Russia (1947).

Paszkiewicz, H. : Origin of Russia (1954).

Runciman, S. : History of Bulgarian Empire (1930).

Seliscev : Starcslave janskiji jazykl (1951).

Sobolewskij : Slavjano russkaja paleografia (St. Peters burg – 1908

□

ग्लेगोलिथिक लिपि

अ	ब	व	ग	द	ए	ज झ
द्ज़	ज़	ई	य	क	ल	म
न	ओ	प	र	स	थ	ऊ
फ़	ख	ऑ	स्त	त्स	त्श	श
औ	इय	ऐ	यु	जे	अह	जह
जाह	पाह	य	ये	ईय	इस लिपि में	४० वर्ण हैं

फलक संख्या – ३५१

प्राचीन सीरिलिक लिपि

अ	ब	व	ग	द	ए	झ
द्ज़	ज़	ई	य	क	ल	म
न	ओ	प	र	स	त	ऊ
फ़	ख	ऑ	स्त	त्स	त्श	श
औ	इय	ऐइ	ऐ	जू	जा	जे
जै	जै	म्राह	ये	जेह	पोह	पाह

फलक संख्या – ३५२

बुलगारी सीरिलिक लिपि

अ А а	ब Б б	व В в	ग Г г	द Д д	ए Е е
ज-झ Ж ж	ज़ З з	ई И и	य Й й	क К к	ल Л л
म М м	न Н н	ओ О о	प П п	र Р р	स С с
थ Т т	ऊ У у	फ़ Ф ф	ख Х х	त्स Ц ц	त्श Ч ч
श Ш ш	श्त Щ щ	अह् Ъ ъ	यह् Ь ь	यु Ю ю	यः Я я

फलक संख्या – ३५२

रूस–१००० ई० के लगभग

रूस की सीरिलिक लिपि

आ	А	а	А	а	ऐ	र	Р	р	Р	р	एर
ब	Б	б	Б	б	बेह	स	С	с	С	с	एस
व	В	в	В	в	वेह	त	Т	т	Т	т	तेह
ग	Г	г	Г	г	गेह	उ	У	у	У	у	ऊ
द	Д	д	Д	д	देह	फ़	Ф	ф	Ф	ф	एफ़
य	Е	е	Е	е	ये	ख़	Х	х	Х	х	ख़ाह़
या	Ё	ё	Ё	ё	यो	त्स	Ц	ц	Ц	ц	त्सेह
ज	Ж	ж	Ж	ж	ज्हे	च	Ч	ч	Ч	ч	चेह
ज़	З	з	З	з	ज़े	शा	Ш	ш	Ш	ш	शाह
ई	И	и	И	и	ई	श्च	Щ	щ	Щ	щ	श्चेह
इ	Й	й	Й	й	इ		Ъ	ъ	Ъ	ъ	कठोरचिन्ह
का	К	к	К	к	कह	इ	Ы	ы	Ы	ы	कठोर इ
ल	Л	л	Л	л	एल		Ь	ь	Ь	ь	मृदुचिन्ह
म	М	м	М	м	एम	ए	Э	э	Э	э	ए
न	Н	н	Н	н	एन	यू	Ю	ю	Ю	ю	यू
ओ	О	о	О	о	ओ	या	Я	я	Я	я	या
प	П	п	П	п	पेह	फ़ा	Ѳ	ѳ	Ѳ	ѳ	फ़ीता *

फलक संख्या – ३५५

आयरलैण्ड के मानचित्र के संकेत

(१) आयरलैण्ड – १०० ई० पू० तक

१. इमायन माचा (Emain Macha in Coised Uloth)
२. तिमुर – तारा (Timur – Tara in Lagan Tuad Gabair)
३. दीन रिग (Din Rig in Coised Des Gabair)
४. एरन्न (Erann in Temuir Muman)
(Cruachain Connacht)

(२) आयरलैण्ड ५०० से ९०० ई० तक

१. अन्नागस्सान (Annagassan)
२. तिमायर (Timair)
३. डबलिन (Dublin)
४. ऐलेनोल (Ailenol)
५. उस्नेक (Usnech)
६. वेक्सफोर्ड (Wexford)
७. वाटरफोर्ड (Waterford)
८. कैसेल (Caisel)
९. लिमेरिक (Limeric)
१०. किरुआचेन (Ciruachain)

(३) आयरलैण्ड – १३०० ई० में : इसमें छोटे अंकों में नगर दिये गये हैं।

१. कोलरेन (Coleraine);
२. कैरिकफर्गस (Carrickfergus);
३. डुण्डाल्क (Dundalk);
४. ड्रोगेदा (Drogheda);
५. डबलिन (Dublin);
६. कार्लो (Carlow);
७. वेक्सफोर्ड (Wexford);
८. वाटरफोर्ड (Waterford);
९. किलकेनी (Kilkenny);
१०. डुंगरवन (Dungarvan);
११. कार्क (Cork);
१२. किंसेल (Kinsale);
१३. ट्रेली (Tralee);
१४. लिमेरिक (Limerick);
१५. गाल्वे (Galway);
१६. स्लीगो (Sligo);

बड़े अंकों में जागीरों के नाम दिये गये हैं, जिन पर सामन्त, राजाओं की भाँति राज्य करते थे।

१. ओनील आफ़ टाइरोन (O'Neil of Tyrone)
२. ओ-डोनेल (O' Donnell)
३. अर्ल आफ़ किल्डेयर (Earl of Kidalre)
४. डी वर्ग (De Burgh)
५. ओ-कन्नोर (O' Connor)
६. ओ-केल्ली (O' Kelly)
७. ओ-ब्रियेन (O' Brien)
८. लैण्ड आफ लीन्सटर (Land of Leinster)
९. अर्ल आफ ओरयण्ड (Earl of Ormond)
१०. अर्ल आफ डिसमान्ड (Earl of Dismond)
११. मैक्कार्थी मोर (Mac Carthy More)

४. आयरलैंण्ड—१५०० ई० में।

नगरों के नाम :—(छोटे अंकों की संख्या देखिए)

१. कार्लिंग फ़ोर्ड (Carling Ford); २. डबलिन;
३. डलकेग (Dalkeg); ४. नास (Naas);
५. विकलोव (Wicklow); ६. ट्रिम (Trim);
७. डुगरवन; ८. किंसेल; ९. अथेन्री (Athenry);
१०. वेक्सफोर्ड; ११. वाटरफोर्ड; १२. किलकेनी; १३. लिमेरिक;
१४. ट्रेली (Tralee); १५. स्लीगो; १६. कोलरेन; कैरिकफ़र्गस।

जागीरों के नाम:—(बड़े अंकों की संख्या देखिए)

१. मैक्कार्थी बीच (Ma Ccarthy Beach); २. ओ सुलीवान बयर (O' Sullivan Beare)
३. ओं सुलीवान मोर (O' Sullivan Mor); ४. नाइट आफ केरी (Knight of Kerry)
५. मैक्कार्थी मीर (MacCarthy Mor); ६. अर्लडम आफ देसमण्ड (Earldom of Desmond)
७. अर्लडम आफ ओर्मण्ड (Earldom of Ormand); ८. मैकविलियम उचतर (Macwilliam Uachtar)
९. थामन्ड ओ ब्रियन (Thomond O' Brien); १०, ओ फ्लेसी (O' Flapty)
११. ओ मेलो (O' Maille); १२. ओ कोनोर सिलीगो (O' Conor Sligo)
१३. पश्चिमी ब्रेफनी (West Breini); १४. मैगुयेर आफ फर्मांग (Meguire of Fermangu)
१५. पूर्वी ब्रेफनी (E. Brefni); १६. ओ केलीमेनी (O' Kelly Many)
१७. एली ओ करोल (Ely O' Carroll); १८. मैकगिल्ला पैट्रिक (Macgilla Patrick)
१९. लेक्स ओ मोर (Leix O' Mor); २०. मैकमरो कवनाग (Mac Murrough Kavanagh)
२१. इंगलिश आफ वेक्सफोर्ड (English of Wexford); २२. ओ बीरोन (O' Byrone);
२३. ओ टूले (O' Toole); २४. दि पेल (The Pale);
२५. मैकमोहन आफ मोनागन (MacMohan of Monaghan)
२६. सुपरेमेसो आफ ओ नीलमोर (Suferamaay of O' Neill Mor);
२७. ओ नील आफ क्लेण्डेबाय (O' Neill of Clondeboy);
२८. सैवेज आफ दि आर्डस (Savage of the Ards);
२९. टीरोगेन (Tireoghain)
३०. ओ डोगर्टी (O' Dogherty); ३१. ओ कहान (O' Cahan)

लिपियों का विकास : यहाँ की प्राचीन लिपि चौथी ईसवी में ओगम (Oghams) वर्णों द्वारा प्रचलित हुई। अरंज़ (Arntz – d, 1935) के अनुसार इस लिपि के लगभग ३६० अभिलेख प्राप्त हुये हैं जो बहुधा समाधियों के पत्थरों पर उत्कीर्ण पाये गये। लगभग ३०० तो दक्षिण आयरलैंण्ड से प्राप्त हुये। ६० वेल्स, इंगलैण्ड

सभा भी राजमहल में ही हुआ करती थी। प्रत्येक टुआथ के नागरिक को उर्राद (Urrad) तथा दूसरे टुआथ का आया हुआ नागरिक देवराद (Deorad) और विदेशी को अलमुराक (Almurach) कहते थे। उनमें कुछ लोग ऐसे भी थे जो देवी-देवताओं, रीति-रिवाज तथा मृत्यु के पश्चात् के एवं भविष्य के ज्ञान के विषय में भी अपने को महान् ज्ञाता कहते थे। इनका नाम ड्रूड्स[1] (Druids) था। यह लोग केल्टों के पुरोहित थे।

शनैः शनैः केल्ट, शक्तिशाली व सम्पन्न होने लगे और उनको राज्य विस्तार करने की सूझी। तारा के राजा ने ब्रिटेन पर २६० ई० में आक्रमण करना आरम्भ कर दिया तथा कुछ राज्य आपस में ही अपनी सत्ता बढ़ाने के लिये युद्ध करने लगे। इसी शताब्दी में जब रोमन वहाँ[2] पहुँचे तो उन लोगों ने केल्टों को एक नये नाम से सम्बोधित किया – स्काटी (scotti) तथा एटीकोट्टी (atecotti) जिसके अर्थ हैं आक्रमणकारी तथा प्राचीन निवासी। चौथी श० में रोम की सेना में बहुत से एटीकोट्टी भर्ती कर लिये गये। नवीं शताब्दी में ब्रिटेन का पश्चिमी भाग केल्टों के अधीन रहा तथा स्काटलैण्ड का शासक भी केल्ट था।

ईसाई धर्म के बहुत से अनुयायी बन्दी के रूप आयरलैन्ड में पहली से चौथी शताब्दी तक रहते रहे परन्तु पांचवीं शताब्दी में संत पैट्रिक (St. Patrick) ने धर्म-प्रचार आरम्भ करके आयरलैण्ड में धर्म-परिवर्तन करवाया। बहुत से लोग ईसाई बन गये।

आठवीं श० के अंत में तथा नवीं के आरम्भ में उत्तर से नार्स लोगों (नार्वे-स्वीडन) के आक्रमण होने लगे। ८४१ से ८४५ तक उन्होंने आयरलैण्ड के पूर्वी किनारे के कई बन्दरगाह ले लिये तथा वहाँ के राजा का वध कर दिया। तत्पश्चात् आयरलैण्ड के राजा नार्स होने लगे। उन्होंने इंगलैण्ड तथा स्काटलैण्ड पर कई आक्रमण किये। ६१४ में वाटरफ़ोर्ड व लिमेरिक के नगर भी अपने अधीन कर लिये। फिर भी नार्सों का आयरलैण्ड पर पूर्णतया अधिकार नहीं हो पाया। आयरलैण्ड के अन्य राज्य निरन्तर नार्स के राजाओं से युद्ध करते रहे।

१०६८ में नार्वे का शासक मैगनस स्वयं एक बड़ी नौसेना लेकर आया और स्काटलैण्ड पर अपना अधिकार कर लिया परन्तु ११०३ में उसका वध कर दिया गया। ११७१ में इंगलैण्ड का राजा हेनरी द्वितीय वाटरफ़ोर्ड के नगर पहुँचा जहाँ उसका भव्य स्वागत हुआ। ११७२ में वह वापस चला गया परन्तु डबलिन के निकट की भूमि पर अपना राज्य स्थापित कर गया, जिसको पेल (Pale) कहने लगे। १६४१ – ४२ की क्रान्ति के पश्चात् क्रामवेल (Cromwell) ने आयरलैण्ड की सारी जागीरों को अपने अधीन कर लिया जो स्काटिश, वेल्श और इंगलिश लोगों ने स्थापित कर ली थीं। १६६० में बोयन के निकट के एक युद्ध के परिणामस्वरूप जेम्स द्वितीय ने ग्रेट ब्रिटेन की एक संघीय – विधान सभा स्थापित की। आयरलैण्ड को उसमें सम्मिलित कर लिया गया।

तदनन्तर १८०१ में एक क्रान्ति आरम्भ हुई जो अंग्रेज़ी राज्य के विरुद्ध आयरलैण्ड ने की और १८८६ में उसको होम रूल प्रदान कर दिया गया। तत्पश्चात् पुनः ईस्टर विद्रोह हुआ। यह विद्रोह सोमवार २४ अप्रैल १६१६ को ईस्टर के दिन होने के कारण ईस्टर विद्रोह के नाम से ज्ञात हुआ। १६१६ – २१ में गृह – युद्ध हुआ और १६२१ में स्वतंत्रता प्रदान कर दी गयी परन्तु इंगलैण्ड का शासक नाममात्र को आयरलैण्ड का शासक बना रहा— अर्थात् डोमीनियन स्टैटस (Dominion Status) दिया गया। १६२५ में आयरलैण्ड का विभाजन हो गया। उत्तरी भाग इंगलैण्ड के अन्तर्गत रहा।

---

1. कुछ विद्वानों का मत है कि ड्रूड्स आयर लैण्ड के ही मूल निवासी थे। कुछ भी हो वे पूजा पाठ करने वाले थे।
2. तीसरी शताब्दी के कुछ लैटिन भाषा व लिपि के अभिलेखों द्वारा यह बात मानी जाती है।

आयर लैण्ड

फलक संख्या — ३५७
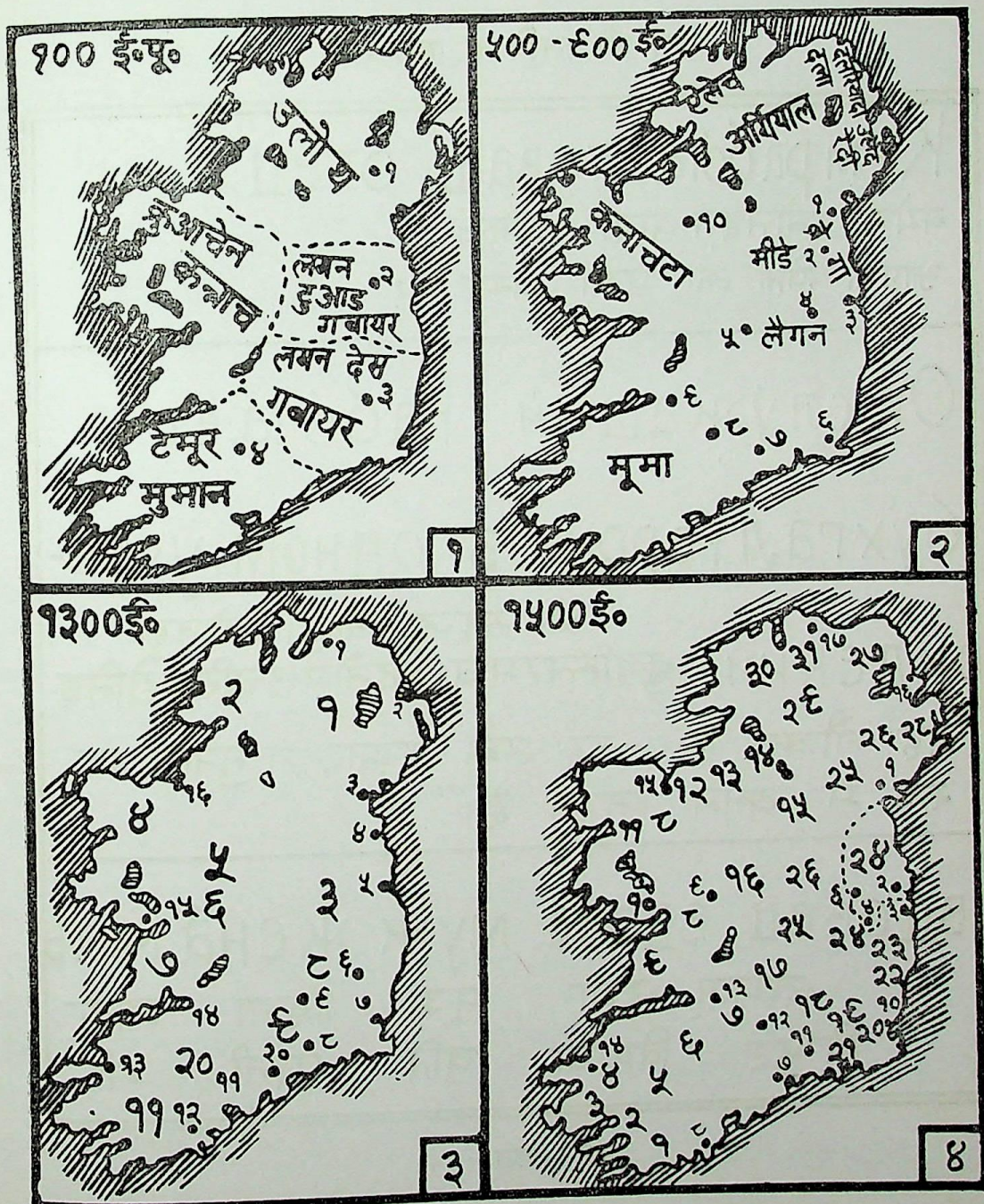
रूस की लिपि के कुछ शब्द

Кемработает ваш отéц ?
क्येम रबोतइत वाश अत्येत्स् ?
आपके पिता का पेशा क्या है ?

Он служащий Работает
бухгáлтером в одном учре-
ждéнии.
श्रोन स्लूज्हशिचय्। रबोतइत बुगल्तिरम व् अदनोम उचरिज्ह्दयेनिइ
"वह नौकर है। वह एक दफ़्तर मे मुनीम के रूप मे काम करते है।"

вдовец	вдова	муж	женá	мать
द्व्येत्स्	द्वा	मूश	ज़्हिना	मात्य्
विधुर	विधवा	पति	पत्नी	मां

आयरलैण्ड

इतिहास : आयरलैण्ड का इतिहास केल्ट जाति के इतिहास से आरम्भ होता है। केल्ट भारोपीय जाति के लोग थे जो सर्वप्रथम स्कैण्डीनेविया[1] में रहा करते थे इसी कारण उनको नार्डिक के नाम से भी सम्बोधित किया गया। तत्पश्चात् यह लोग आल्प के पर्वतों के आस पास रहने लगे। ई० पू० की पाँचवीं श० से इनका विस्तार होना आरम्भ हो गया।

ई० पू० की चौथी शताब्दी में उनके कुछ लोग इटली की ओर गये और रोमन[2] सैनिकों से युद्ध हुये। वहाँ से लूटमार करके पूर्व की ओर अग्रसर हुये। उन्होंने एड्रियाटिक तथा मैसेडोनिया के नगरों पर आक्रमण करना आरम्भ कर दिया और २८० में थिसली को अधीन कर लिया। परन्तु वहाँ इनके पैर जम न सके और २७९ में ही वहाँ से भगा दिये गये। तदनन्तर यह थ्रेस को पराजित कर वहाँ जम गये तथा अपना राज्य स्थापित कर लिया। टाइल (Tyle) इनकी राजधानी बन गई। २२० ई० पू० में इनके राजा कैवरस (Cavarus) की मृत्यु हो गई और तब थ्रेस निवासियों ने इनका संहार आरम्भ कर दिया। इनको वहाँ से पुनः भागना पड़ा और यह पूर्व की ओर बढ़ते गये। अंत में यह सीथिया पहुँचे और उनके साथ हिल – मिल गये। अब उनका नाम केल्टो - सीथी पड़ गया।

ई० पू० की तीसरी श० में कुछ लोग दक्षिण – पश्चिम की ओर बढ़े और फ्रांस होते हुये स्पेन पहुँच गये। वहाँ यह लोग आइबेरियनों[3] (Iberians) के साथ घुल - मिल गये और इनका नाम केल्टीबेरियन पड़ गया।

ई० पू० की पाँचवीं श० के अन्त में इनकी दो जातियों—ब्राइथन (Brythons) तथा गोइडेल (Goidels) ने पश्चिम की ओर प्रस्थान किया और ब्रिटिश द्वीप समूह पहुँच गये। ब्राइथन तो ब्रिटेन में और वेल्स में फैल गये परन्तु गोइडेल आयरलैण्ड पहुँच गये और वहाँ के मूल निवासी पिक्ट (Picts) इनके अधीन हो गये और इन्ही की भाषा को भी अपना लिया। इन दो बड़े द्वीपों का प्राचीन नाम एल्बियन (Albion) इंगलैन्ड आदि के लिये और ऐवर्ना (Iverna) आयरलैण्ड के लिये तथा बाद में हैबर्नी (Haburni) हो गया। ग्रीक निवासियों ने इन दोनों द्वीपों का नाम प्रितानी (Pretani) रखा था। सीज़र ने इनका नाम ब्रिटानी (Brittani – Britanni) कर दिया। इन नामों में पुनः परिवर्तन होते रहे – ब्रिटेनिया व ब्रिटन्स (Britannia – Brittones – Britons) आदि।

केल्ट जब आयरलैण्ड पहुँचे तो इनको पिक्टों से कोई बड़ा युद्ध नहीं करना पड़ा। पिक्टों ने तुरन्त इनकी भाषा व संस्कृति को अपना लिया। अब केल्टों ने अपने छोटे-छोटे राज्य स्थापित कर लिये जिसके बीज– रूप का नाम 'टुआथ' (Tuath) रखा। इस प्रकार के उन्होंने पांच राज्य स्थापित किये। सब लोगों की सभा का स्थान टुआथ था। राजा ही सब कुछ था जिस प्रकार सुमेर के नगर राज्यों का राजा ही सब कुछ होता था। वही शासक, वही न्यायधीश, वही युद्ध में सेना-नायक इत्यादि। स्वतंत्र नागरिकों को ओइनक (Oinach) कहते थे। शासन सम्बन्धी सभा (Senatcor Curia) को एरेक्ट (areacht) कहते थे। सभा के सदस्य राजा के साथी केली (Celi) कहलाते थे और

1. 'आइसलैण्ड, नार्वे, स्वीडन, फ़िनलैण्ड तथा डेनमार्क' के पाँच देश स्कैन्डीनेविया कहलाते हैं।
2. रोम के ऊपर तो पहले से ही सेमिनी जातियों के आक्रमण हो रहे थे। यह एक नयी विपत्ति खड़ी हो गई। रोम ने इनको बहुत सा सोना देकर ३९० ई० पू० में बिदा किया।
3. आइबेरियन प्राचीन काल में स्पेन की आइबेरिया नदी के पास रहा करते थे जिसके कारण इनका यह नाम पड़ा। अब इस नदी को एब्रो (Ebro) के नाम से सम्बोधित करते हैं।

आदि से प्राप्त हुये। उनकी भाषा केल्टिक है। प्राचीनतम् अभिलेख केल्टिक – लैटिन द्विभाषी भी प्राप्त हुये जिनका काल ईसवी सन् की चौथी शताब्दी माना गया है।

पौराणिक धारणा के अनुसार यह सहस्रों वर्ष पुरानी मानी जाती है तथा इसका जन्मदाता एक देवता 'ओगमा' माना जाता है। इस लिपि की वर्णमाला अर्बोइस दि जुबेनविल्ले[1] (Arbois de Jubeinville – 1881) द्वारा पाँच खाँचों से, जो भिन्न भिन्न दिशाओं में बनाये गये थे, प्रस्तुत की गयी है। इसके पठन की समस्या की कुंजी एक छोटे लेख द्वारा मिली। यह हस्तलिखित लेख वैलीनोट की पुस्तक से प्राप्त हुआ। यह लेख चौदहवीं शताब्दी का था।

ओगम लिपि का जन्म एवं विकास की समस्या पर निम्नलिखित विद्वानों ने अपने मत दिये हैं :—

१. मारस्ट्रैण्डर (Marstrander) के अनुसार यह गाल (प्राचीन फ्रांस के निवासी) द्वारा आई।

२. राउलिंग्स (Raulings) के विचार से यह रून लिपि के द्वारा निर्मित हुई।

३. ग्रीनबर्गर (Grienberger) के अनुसार इसका विकास रोमन लिपि के घसीट रूप से हुआ।

४. नार्वे निवासी बुग्गे (Bugge) के कथनानुसार इसका उद्भव ग्रीक लिपि से हुआ क्योंकि दोनों लिपियों में 24 वर्ण हैं।

मैकालिस्टर[2] (१६२८) के विचारानुसार यह गूंगे – बहरे लोगों वाली सांकेतिक लिपि है जैसे वे उँगलियों को एक उँगली से छू छू कर अपने विचारों को व्यक्त कर लेते हैं उसी प्रकार प्राचीन काल के पुजारी (Druids) भी अपनी पवित्र तथा गोपनीय बातों को इन संकेतों से व्यक्त करते होंगे। इसके लिये अंकित करने की या लिपि का रूप देने की बात उन लोगों ने कभी सोची भी नहीं होगी परन्तु बाद में पुरोहितों ने उन संकेतों को लिपि में परिवर्तित कर लिया। इस विचार का समर्थन मारस्ट्रैण्डर (१६२८), अरंज़ (१६३५) तथा क्रौज़ (Krause – १६३८) ने भी किया है। ज़िमर (Zimmer – १६०६) के अनुसार यह लिपि गॉल (फ़्रांस) से आई। 'ओगम' का शब्द लूशियन द्वारा ज्ञात हुआ कि केल्ट, हिरेकिल्स को ओगमियस कहते थे और वह उनका देवता बन गया। इस लिपि में २० वर्ण होते हैं जो 'फ० सं०–३५८' पर दिये गये हैं। नीचे अंग्रेजी भाषा का एक वाक्य 'I am going' दिया गया हैं।

६५० में यह लिपि लैटिन (रोमन) लिपि द्वारा समाप्त कर दी गयी। इसमें भी केल्टिक भाषा के उच्चारणार्थ कुछ हेर फेर किये गये और कुछ लिखने में भी अंतर आ गया। इस लिपि के मुद्रित तथा हस्तलिखित वर्ण 'फ० सं०–३५८' पर दिये गये हैं।

आयरलैण्ड की रोमन लिपि : ६५० ई० से रोमन (लैटिन) लिपि का प्रभाव आरम्भ हो गया। केल्टिक भाषा के समावेश के कारण ध्वनियों व चिह्नों में कुछ परिवर्तन करके भाषा के अनुरूप बना दी गई। इस लिपि के हस्तलिखित तथा मुद्रित वर्ण 'फ० सं० – ३५६' पर दिये गये हैं।

---

1. Atkinson, G. M. : Some account of Ancient Irish Treatises on Ogham Writing—The Royal Historical and Archaeological Association of Ireland, XIII, P – 202.
2. Macalister : The Archaeology of Ireland (London–1928), P-216.

ओगम लिपि

अ-A ओ-O उ-U ए-E ई-I

ब-B ल-L व-V प-P न-N

म-M ग-G गं-NG फ़-F र-R

ह-H ड-D ट-T क-स-C क-Q

I AM G O I NG.

फलक संख्या - ३५८

आयरलैण्ड की रोमन लिपि

ध्वनि	प्राचीन बड़े वर्ण	प्राचीन छोटे वर्ण	आधुनिक बड़े वर्ण	आधुनिक छोटे वर्ण	ध्वनि	प्राचीन बड़े वर्ण	प्राचीन छोटे वर्ण	आधुनिक बड़े वर्ण	आधुनिक छोटे वर्ण
अ	a	a	A	a	म	M	m	M	m
ब	b	b	b	b	न	N	n	N	n
क स	C	c	C	c	ओ	O	o	O	o
ड	ծ	ծ	ծ	ծ	प	P	p	P	p
ए	E	e	E	e	र	R	r	R	r
फ़	F	f	F	f	स	S	fs	S	r
ग ज	ʒ	ʒ	ʒ	ʒ	ट	T	t	T	t
ह	b	b	h	n	उ	U	u	U	u
ई	I	i	I	i	व	V	r		
ल	L	l	L	l					

फलक संख्या – ३५९

हंगेरी

इतिहास : हंगेरी के प्राचीन नाम पन्नोनिया (Pannonia) तथा डैकिया (Dacia) थे। रोम निवासियों को, जो यहाँ आकर बस गये थे, जर्मन जातियों ने निकाल बाहर किया और जर्मन जातियों को हूण[1] जातियों ने मार भगाया। ४५३ ई० में, जब अट्टिला की मृत्यु हो गई, तब गोथिक जातियाँ यहाँ आकर बसने लगीं। छठी शताब्दी में लम्बार्डों की जातियाँ पन्नोनिया में तथा गेपिदाइ (Gepidae) की जातियाँ डैकिया में बसने लगीं। ५६७ में एवार व लम्बार्ड जातियों ने गेपिदाइ की जातियों को नष्ट कर दिया। तदनन्तर एवार तथा लम्बार्ड जातियों में युद्ध हुआ और लम्बार्ड इटली के उत्तर में आकर बस गये। एवार राज्य की सत्ता क्षीण होने पर हंगेरी के उत्तरी तथा पश्चिमी भाग स्वतंत्र हो गये। अब स्लाव जाति का राज्य स्थापित हो गया। ७६२-७६७ ई० में कार्लमैगने ने अवार राज्य को परास्त कर प्रथम ओस्टमार्क राज्य स्थापित किया। ८२८ में डैन्यूब नदी के उत्तर में स्लाव - राज्य (मोराविया) स्थापित हो गया।

हंगेरी राज्य के संस्थापक मैग्यार थे जो यूराल पर्वतों के निवासी उग्रियन जातियों के लोगों से सम्बन्धित थे। ईसा की प्रथम शताब्दी में रोम के निवासियों ने उनको पूर्व की ओर खदेड़ दिया और तब से वे तुर्क जातियों के घनिष्ठ सम्बन्धी बन गये। पाँचवीं से नवीं शताब्दी के मध्य उन्होंने अपना एक ओनोगुर (ओनओगुर) के नाम से संघ भी स्थापित कर लिया था। ओनोगुर का स्लाव भाषा में (ओगुर, अंगुर, हंगेर, हंगेरी) हंगेरी हो गया।

८६३ में ओनोगुर संघ की मैग्यार जातियों ने हंगेरी पर आक्रमण करना आरम्भ कर दिया। ६५५ में जर्मनी के सम्राट ओटो प्रथम को परास्त कर दिया। १००० ई० में एक स्वतंत्र राज्य स्थापित हो गया तथा लैटिन - ईसाई - धर्म ग्रहण कर लिया। ग्यारहवीं शताब्दी में हंगेरी ने दलमतिया, स्लैवोनिया तथा क्रोशिया के राज्य अपने साम्राज्य में सम्मिलित कर लिये। १२४१ में मंगोलों ने इस देश पर आक्रमण कर दिया। १३०१ में एलफ्रेड नरेश की मृत्यु हो गई तत्पश्चात् शासक का निर्वाचन आरम्भ होने लगा।

१३०८ से १३८२ तक अंजोऊ के वंशजों का तथा १३८३ से १४३७ तक सिगिसमण्ड (जर्मन नरेश) का शासन चलता रहा परन्तु हुनियादी (मृत्यु १४५६) के शासन काल में तुर्कों का प्रथम आक्रमण हुआ। मथियास कोर्वीनस (Matthias Corvinus) के १४५८ - १४६० शासन काल में सिलीशिया, मोराविया तथा दक्षिणी आस्ट्रिया को परास्त करके राज्य का विस्तार किया गया। अब हंगेरी मध्य - योरोप का शक्तिशाली राज्य हो गया। १५२६ के तुर्कों के आक्रमणों ने हंगेरी की सत्ता को बड़ी हानि पहुँचाई। ट्रांसिल्वैनिया स्वतंत्र हो गया और हंगेरी का बहुत सा भाग तुर्कों तथा आस्ट्रिया के शासक द्वारा विभाजित कर दिया गया।

१६८६ में बूदा नगर पर पुनः अधिकार कर लिया तदनन्तर स्लेवोनिया तथा ट्रांसिलवैनिया पर भी अधिकार कर लिया। १६६६ में वनात को छोड़कर सम्पूर्ण हंगेरी आस्ट्रिया के अधिकार में चला गया। १८४८ में एक विद्रोह हुआ जिसका १८४६ में अन्त हो गया। १८६७ से १६१८ तक आस्ट्रिया - हंगेरी के नरेशों के अन्तर्गत द्वि - नृपराज्य रहा। तत्पश्चात् एक स्वतंत्र लोकतंत्र राज्य बन गया। १६१६ में यह रूस के प्रभाव में आ गया तथा इस देश का बहुत सा भाग पृथक हो गया। द्वितोय महायुद्ध में इसने जर्मनी का साथ दिया। १६४५ में रूस ने इस देश के कुछ भागों पर अधिकार कर लिया। १६४६ में पुनः लोकतंत्र राज्य हो गया।

---

1. कुछ विद्वान् हंगेरी का नाम हुणों से सम्बन्धित मानते हैं।

हंगरी

फलक संख्या — ३५०

हंगेरी की प्राचीन लिपि

अ आ अ ब त्स च द ए.ए फ फ़ ग

जी जी ह ह ई ई ई ई ज ज ज क अक

ल ली म.म न न नी ओ ओ ऊ प रत श श श

त त ती ती उ.ऊ उ ऊ व ज़ ज़ ज़

क तजई श कल तमअस ई रतअ

न त श ल (घोड़ा) ह क च अशअर इ त त ब ए

श आ ज़ ल ओ व ल } स्वर अनुमानित – केतेजी शेकेल

तेमास इर्तानेत श लीम(तुर)हक चाशार इतेत बे शाज़। अर्थ : केतेजी तेमास ने (यह) लिखा "तुर्की सम्राट सलीम ने यहां से सौ घोड़ों के साथ हमला किया"
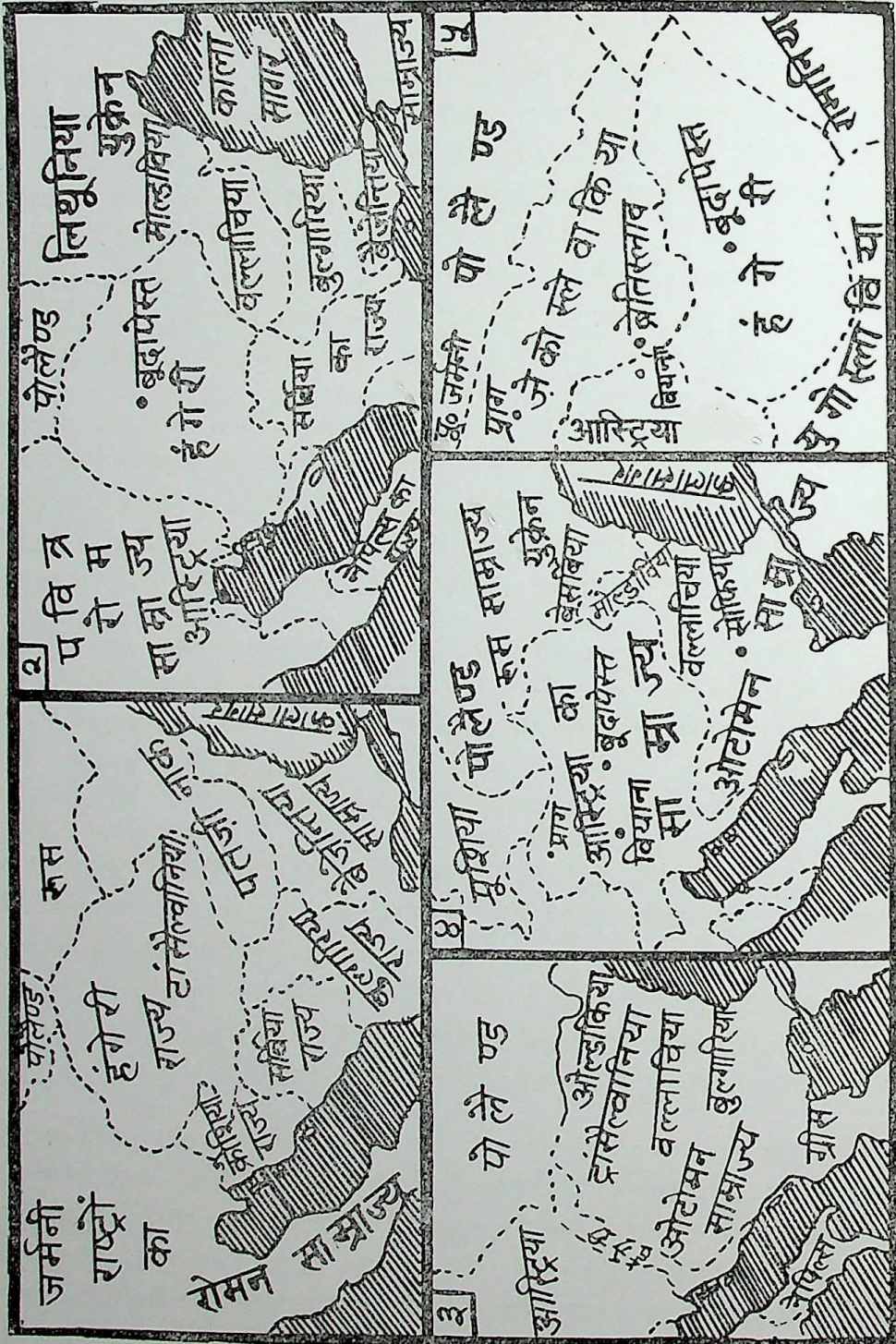
लिपियाँ : हंगेरी में दो प्रकार की लिपियाँ पायी गयी हैं ।

पहली **प्राचीन हंगेरी की** लिपि तथा दूसरी **निकोल्सबर्ग** की । प्राचीन लिपि का आधार तुर्की एवं ग्रीक लिपियाँ हैं जिन पर अरमायक का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है । इसके ३२ वर्णों में दो बुलगारिया की ग्लेगोलिथिक लिपि के हैं, जिनकी ध्वनि 'अ' तथा 'ती' है । दो ग्रीक वर्ण हैं, जिनकी ध्वनि 'फ़' और 'ह' है । अन्य वर्ण साइबेरिया की लिपि से सम्बन्धित हैं । नागी (Nagy) तथा नेमेथ (Nemeth – 1934) का कहना है, 'जो सिद्धान्त एल्थीम (Altheim) ने निर्धारित किया है वह समर्थन के योग्य है' । इसी सिद्धान्त के अनुसार प्राचीन लिपि का काल नवीं श० माना गया तथा निकोल्सवर्ग लिपि का काल बारहवीं श० निर्धारित किया गया है। इसका सम्बन्ध दूसरी लिपि से जोड़ा जा सकता है अपितु किसी भी खोजकर्त्ता के मन में यह संशय रहना अनिवार्य है कि नवीं तथा बारहवीं श० के मध्य काल में, जो तीन सौ वर्षों का होगा, इनका सम्बन्ध कैसे मिलाया जाये। एल्थीम का कहना है कि शेकलर जाति के लोगों ने हंगेरी की प्राचीन सात मैग्गियार जातियों के साथ आठवीं जाति के रूप में अपना सम्बन्ध स्थापित कर लिया । यह लोग हंगेरी के पश्चिमी सीमान्त पर बस गये । शेकलर जाति के लोग साइबेरिया के मूल निवासी थे जो अपने साथ अपनी लिपि भी लाये । इस लिपि को अपनी जाति की गोपनीय – लिपि मानते थे इस कारण उसका प्रयोग छिपा कर करते थे । इसी कारण से इसके अभिलेख भी अधिक संख्या में प्राप्त न हो सके तथा इस लिपि पर साइबेरिया की ओरहन[1] लिपि का प्रभाव अधिक मात्रा में दृष्टिगोचर होता है ।

इस प्राचीन लिपि के विषय में सर्वप्रथम एक हंगेरी के यात्री हन्स देरुशवान् (Hans Deruschwan 1494 – 1569) के द्वारा उस अभिलेख से ज्ञात हुआ जो उसको कुस्तुनतुनिया से १५१५ ई० में प्राप्त हुआ था । इसका रहस्योद्घाटन सर्वप्रथम जे० थेलेग्दी (J. Thelegdi) ने सोलहवीं श० के अन्तिम काल में किया था । उसने हूणों की भाषा पर एक पुस्तक लिखी थी जिसमें उसने लिखा है कि 'इस प्राचीन – हंगेरी लिपि का अभिलेख (जिसका कुछ अंश 'फ० सं०—३६१' पर दिया गया है) कुस्तुनतुनिया का है ।' इस लिपि का नाम–करण थेलेग्दी ने ही किया था । हंगेरी निवासी इस लिपि को रोवस – इरस (Rovas – iras) कहते थे जिसके अर्थ हैं खांचेदार लिपि अथवा नाच्छ लिपि (Notch Script) । इस की दिशा बाएँ से दाएँ है ।

दूसरी लिपि निकोल्सबर्ग की है । इसकी भी दिशा दाएँ से बाएँ है । इस लिपि का एक छोटा सा अभिलेख नागी ज़ेन्ट मिक्लास (Nagy Szent Miklos) को न्यूरेम्बर्ग[2] (Nuremburg) से १७९९ में प्राप्त हुआ । यह एक चर्मपत्र पर अंकित था । अब यह अभिलेख हंगेरी के राष्ट्रीय संग्रहालय – बूदापेस्ट में सुरक्षित है, जिसका काल बारहवीं सदी निर्धारित किया गया है । वी० थामसन (V. Thomsen) तथा एल्थीम इसको नवीं श० का मानते हैं। नेमेथ इसको तुर्की भाषा का मानते हैं। इस लिपि के वर्ण तथा उपर्युक्त अभिलेख 'फ० सं० – ३६२' पर दिया गया है ।

जर्मनी

इतिहास : टैसिटस (Tacitus) इतिहासकार के अनुसार प्राचीन जर्मनी (जर्मेनिया) में तीन मुख्य धार्मिक जातियां निवास करती थीं जिनके नाम इंगायवोन, हर्मीनोन तथा इस्तायवोन थे । इनके अपने-अपने पृथक देवी-देवता थे । इनके अपने-अपने राजा थे । इन तीन जातियों के अन्तर्गत भिन्न-भिन्न जातियां निवास करती थीं ।

---

1. फ० सं०—२४७.
2. हंगेरी के दक्षिणी भाग में स्थित है ।

जर्मनी

१—दूसरी श०; २—नवीं श०; ३—चौदहवीं श०; ४—उन्नसवीं श०

निकोल्सबर्ग लिपि के वर्ण

नवीं श० का एक लघु अभिलेख

र द उ क त र स न

यह दाएँ से बाएँ पढ़ा जायेगा - स्वर लगाईये

न (अ) स; (इ) र त (अ) : क (ओ) द (उ) र

नास इरता कोदूर = प्रातः एक घूंट के साथ

उदाहरणार्थ, इंगायवोन के धर्मानुयायी किम्बरी, ट्यूटन, वन्डाल, जूट, ऐंगिल तथा फ्रीजियन थे। हर्मीनोन के मतानुयायी सुयेवी तथा लम्बार्ड थे और इस्तायवोन के मतानुयायी चेरूसी, बटावी, सिकाम्ब्री आदि थे। इसके अतिरिक्त बवरियन, सैक्सन, फ्रैंक तथा अलामन भी निवास करते थे। जर्मेनिया विभिन्न जातियों का एक संग्रहालय था। ये सब जातियां भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्य करती थीं, जैसे, मछली पकड़ना, किश्तियों का बनाना, खेती करना, व्यापार करना आदि। ये जातियां आवश्यकताओं के अनुसार तथा मंगोलों के आक्रमणों के कारण अपना निवास-स्थान परिवर्तन करती रहती थीं। ये लोग रूनी लिपि का प्रयोग वृक्षों की छालों पर खोदकर किया करते थे।

सर्वप्रथम सीज़र ने आल्प पर्वतों को पार कर इन जातियों को अपने अधीन करने का प्रयत्न किया था। तदनन्तर रोम ने कई बार जर्मेनिया पर आक्रमण किये। शनैः-शनैः इन जातियों ने रोम की संस्कृति को अपनाना आरम्भ कर दिया। जर्मनी के मज़दूर तथा युवक रोम की सेना में भर्ती होने लगे। रोम की पद्धति पर जर्मनी में कई नगरों का निर्माण आरम्भ होने लगा। रोम के साम्राज्य के इस विस्तार के कारण अब दो सम्राट नियुक्त किये गये। एक रोम में तथा एक ट्रायर (Trier) में। ट्रायर का सम्राट कांस्टैटियस नियुक्त हुआ जो स्पेन, गाल तथा ब्रिटेन पर शासन करता था।

जब ४१० में गोथों ने रोम पर आक्रमण कर दिया तब जर्मेनिया से रोम – सेना भेज दी गयी। रोम – सेना की अनुपस्थिति में फ्रैन्कों ने ट्रायर पर अधिकार कर लिया। अलामनों ने अल्सासे (Alsace) पर अधिकार कर लिया तथा बर्गण्डियों ने अन्य भूभाग को पराजित करके अपना एक स्वतंत्र राज्य स्थापित कर लिया। विसीगोथों ने अपना राज्य स्थापित कर लिया। जब हूणों के जर्मेनिया पर आक्रमण होने लगे तब यह राज्य एक हो गये। ४५ में पुनः हूणों का आक्रमण हुआ। इस बार ऐटियस के नेतृत्व में हूणों को सदैव के लिये खदेड़ दिया गया। अट्टिला का वध उसी की पत्नी, जो जर्मनी की एक राजकुमारी थी, द्वारा कर दिया गया। इस युद्ध ने पश्चिम को मुक्ति प्रदान कर दी। शनैः-शनैः रोम का प्रभुत्व समाप्त होने लगा।

४७६ में रोम का अंतिम सम्राट सिंहासनारूढ़ हुआ जिसको केवल एक वर्ष पश्चात् ही अधिकार मुक्त कर दिया गया। इस सम्राट का नाम रोमलस आगस्टलस था। जर्मनी ने अपना नया सम्राट ओडोसर (Odoacer) जो सीथिया का एक राजकुमार था, निर्वाचित कर लिया। उसने रोम-राज्य के चिन्ह को रोम के सम्राट को, जो कुस्तुनतुनिया (कांसटैन्टीनोपिल) से शासन करता था, लौटा दिया। इसके अर्थ स्पष्ट थे कि जर्मन सम्राट अब रोम के सम्राट के अधीन नहीं रहा। छठी शताब्दी के अंत में लम्बार्डों ने जर्मनी का बहुत सा भाग (मोराविया, बोहेमिया, आस्ट्रिया आदि) अपने अधीन कर लिया। विसीगोथों ने स्पेन और दक्षिणी गाल अपने अधीन कर लिये। जो भाग जर्मनी का शेष रह गया वह जर्मन जातियों ने आपस में विभाजित कर लिया। ये सभी जातियां अब ईसाई धर्म की अनुयायी बन चुकी थीं। फ्रांस फ्रैंकों के अधीन, इटली ओस्ट्रोगोथों के अधीन, अफ्रीका वण्डालों के अधीन तथा इंगलैण्ड[1] ऐंग्लों-सक्सनों के अधीन हो गये थे।

फ्रैंकों के राजा क्लोविस ने, जो ४८१ में गद्दी पर बैठा, अपनी प्रजा के सहयोग से बड़े सुचारु रूप से शासन किया परन्तु उसकी मृत्यु के पश्चात् परम्परा के अनुसार, उसका राज्य उसके पुत्रों में विभाजित कर दिया गया। सत्ता को पाने के लिए आपस में युद्ध हुए। उनमें से चार्ल्स मार्तेल विजयी हुआ। उसने ७१४ से ७४१ तक शासन किया। उसने मुसलमानों को दक्षिण की ओर भगा दिया तथा राज्य को एक सूत्र में बांधने का प्रयास किया। उसके

1. इंगलैण्ड का नाम भी ऐंगिल-लैण्ड से इंगलैण्ड पड़ा।

पुत्र पेपिन ने ७४१ से ७६८ तक शासन किया । उसने रोम को लम्बार्डों के आक्रमण से बचा लिया तथा रोम के पादरी को कुछ भू-भाग दान-रूप में प्रदान कर दिया, जिसका नाम पापलस्टेट पड़ा । पेपिन के मरणोपरांत उसका पुत्र चार्ल्स सिंहासनारूढ़ हुआ । इसने सैक्सनों से ३० वर्ष युद्ध किया । उनको परास्त कर ईसाई-धर्म का अनुयायी बना लिया । जब यह कुछ विद्रोहियों का दमन करने रोम गया, तब रोम के पादरी ने प्रार्थना उपरांत पहली जनवरी ८०० को उसके सिर पर मुकुट रख दिया और घोषणा की चार्ल्स सारी रोम जाति का सम्राट है । इसके मरणोपरांत लुई सिंहासन पर बैठा और उसने ८१८ से ८४० तक राज्य किया ।

अब उत्तर से आक्रमण होने लगे । बड़ी अराजकता फैलने लगी । ९३६ में ओटो महान् सम्राट बना जिसने मेग्यियारों को खदेड़ दिया और उनको हंगेरी में निवास करने के लिये विवश किया । अब जर्मनी ने पूर्व की ओर अपना विस्तार किया और तेरहवीं शताब्दी में प्रूशिया पर अधिकार कर लिया । १५१७ में लूथर ने प्राचीन ईसाई-धर्म के विरुद्ध क्रांति कर दी । जर्मनी का विभाजन धर्म के अनुसार कैथोलिक व प्रोटेस्टैंटों में हो गया । १६१८ से १६४८ तक युद्ध होता रहा । १८०६ में पवित्र रोमन साम्राज्य समाप्त कर दिया गया । १८१५ में आस्ट्रिया के अन्तर्गत एक संघ स्थापित हुआ जिसका कार्य १८६६ तक चलता रहा । १८६६ में एक युद्ध हुआ जिसमें आस्ट्रिया को पराजित करने का प्रयास किया गया । अब जर्मनी एक डोर में बंध गया । १८७१ में फ्रांस से युद्ध हुआ और एक जर्मन – साम्राज्य स्थापित हुआ जिसका प्रथम चांसलर बिसमार्क हुआ । १८७९ में आस्ट्रिया से तथा १८२२ में इटली से मैत्री सन्धियाँ हुईं । १८८४ में जर्मनी ने अपना विस्तार आरम्भ कर दिया । १९१४ में प्रथम महायुद्ध हुआ । कैसर को राज्यपद से पृथक कर दिया गया और १९१८ में एक लोकतंत्र स्थापित हुआ । युद्ध के पश्चात् जर्मनी के बहुत से उपनिवेश जर्मनी से ले लिये गये । १९३९ में दूसरा महायुद्ध आरम्भ हुआ । ८ मई १९४५ को यह युद्ध जर्मनी की हार में समाप्त हो गया । १९४९ में पूर्वी तथा पश्चिमी भागों में विभाजित हो गया । पश्चिमी भाग अमरीका एवं इंगलैण्ड के प्रभाव में तथा पूर्वी रूस के प्रभाव में आ गया ।

लिपि :—जर्मनी की प्राचीन लिपि के वर्णों का नाम 'रून' था । 'रून' शब्द जर्मन – केल्ट भाषा का है जिसका सम्बन्ध अज्ञात है । इसके अर्थ गोथिक भाषा के शब्द 'रूना' में 'गोपनीय' है । प्राचीन आयरिश भाषा में भी इसके अर्थ 'गोपनीय' हैं । ऐंग्लो – सैक्सन भाषा में इसके अर्थ 'गोपनीय' कानाफूसी के हैं । सर्वप्रथम 'रून' के अभिलेख सत्रहवीं श० में ब्यूरेन्स (Burens) और वर्मियस (Wormius) द्वारा प्रकाशित किये गये । तद – नन्तर बहुत से अभिलेख प्रकाशित हुए । इनका तथा अन्य कई अभिलेखों का रहस्योद्‌घाटन डब्ल्यु० ग्रिम (W. Grimme), ब्राइन्यूल्फ़सन (Brynjulfsson) तथा लिल्येग्रिन (j = य) (Liljegren) द्वारा उन्नीसवीं सदी के आरम्भ में हुआ । तत्पश्चात् इस लिपि पर और अधिक शोध कार्य नार्वे के विद्वान् बुग्गे (Bugge – 1905) तथा डेनमार्क के विद्वान् विम्मर (Wimmer – 1874) द्वारा सम्पन्न हुए ।

सबसे प्राचीन अभिलेख उत्तरी जर्मनी से प्राप्त हुआ जिसका काल चौथी श० निर्धारित किया गया है । इस लिपि की दिशा बाएँ से दाएँ है परन्तु कुछ अभिलेख दाएँ से बाएँ की दिशा वाले भी प्राप्त हुये हैं ।

प्राचीन जर्मनी के रूनों[1] में २४ वर्ण प्रचलित थे । इनका उद्‌भव लगभग चौथी श० में हुआ तथा इनका प्रयोग रोमन लिपि के प्रयोग के कारण आठवीं सदी में बिलकुल समाप्त हो गया । इन चौबीस वर्णों को तीन भागों में विभाजित किया गया है और प्रत्येक भाग में आठ आठ वर्ण रखे गये हैं । प्रत्येक भाग को आठ वर्णों का एक कुटुम्ब माना गया है जो वर्णों की ध्वनियों पर निर्भर हैं । उन तीन भागों को फ़्रेयर का (Freyr's), हैगाल का (Hagall's) तथा टायर का (Tyr's) कुटुम्ब कहते हैं । (फ० सं० – ३६४) ।

1. Arntz, H. : Handbuch der Runenkunde (1935), p – 46.

प्राचीन जर्मनी के रून

फ़	उ	उ	थ	थ	अ	र	र	क	क	
य	व	व	ह	ह	न	ई	ज	ज	ज	ज
ऐ	प	प	प	ज़/र	------>		स	स	त	
ब	ब	ए	ए	म	ल	नं	नं	नं	नं	
वर्ण-ध्वनि २४ हैं	द	द	ओ	ओ	इस लिपि में ४५ चिन्ह हैं					

फलक संख्या – ३६४

नार्वे-स्वीडन-डेनमार्क

नार्वे का इतिहास : नार्वे का प्राचीन युग प्राचीन जर्मनी से सम्बन्धित था। जर्मनी के प्राचीन रूनी लिपि के अभिलेख, जिनका काल ईसा की तृतीय शताब्दी निर्धारित किया गया, यहाँ से प्राप्त हुए। यहाँ की प्राचीन भाषा भी प्राचीन-जर्मन थी। आॅस्लो के निकट का भूभाग, जिस पर स्थानीय राजा राज्य करते थे, डेनमार्क (प्राचीन–युत लैण्ड) के अन्तर्गत रहा। इस देश का इतिहास ८१३ से आरम्भ होता है। इसको नार्स भी कहते हैं। यहाँ के निवासी नार्समेन (नार्थमेन) कहलाते थे। उन्होंने इसी शताब्दी में आइसलैण्ड, ग्रीनलैण्ड, आयरलैण्ड तथा स्काटलैण्ड अपने अधीन कर लिये थे। ९९५ में इस देश ने ईसाई धर्म अपना लिया। यहाँ के एक शासक ने १०६६ में इंगलैण्ड पर आक्रमण कर दिया।

१३८० में इसकी राजधानी ट्रोण्डहाइम (**Trondheim**) थी। १३९७ से यहाँ डेनमार्क का शासन स्थापित हो गया। १८१४ में कील के एक सन्धिपत्र के अनुसार नार्वे स्वीडन के अधीन कर दिया गया। स्वीडन ने इस राज्य का विधान पृथक रखा परन्तु शासन अपने नृप-राज्य का ही रखा। १९०५ में यह पृथक होकर पूर्ण स्वतंत्र हो गया।

स्वीडन का इतिहास : प्राचीन नार्स भाषा में स्वीवर (Sviar), स्वीडिश भाषा में स्वीअर (Svear) तथा एंग्लो-सैक्सन भाषा में स्वीवन (Sweon) के नामों से सम्बोधित किया जाता रहा। यहाँ के निवासी स्वीन कहलाते थे। यहाँ वाइकिंग जाति के लोग भी निवास करते थे। प्राचीन नार्स भाषा में वाइकिंग के अर्थ वीर-योद्धा होते थे। इस जाति के लोगों का काम भी सामुद्रिक लूटमार था। यहाँ से ही गोथ जाति के तथा वारंगी जाति के लोगों ने रूस तथा दक्षिणी यूरोप की ओर प्रस्थान किया।

ग्यारहवीं शताब्दी में यह देश ईसाई-मत का अनुयायी बन गया। बारहवीं शताब्दी में इसने फ़िनलैण्ड को परास्त किया। १३९७ में यह डेनमार्क तथा नार्वे से मिल गया। १५१३ में इस संघ से पृथक हो गया तथा अपना विस्तार करना आरम्भ कर दिया। १५६१ में स्तोनिया, १६२९ में लिवोनिया, १६४५ में गोटलैण्ड द्वीप आदि अपने अधीन कर लिये। १६६० में डेनमार्क का बहुत सा भाग भी अपने देश में मिला लिया। १७००-२१ के युद्ध में इसकी सत्ता क्षीण होने लगी। १७४३ में फ़िनलैण्ड रूस के अधिकार में चला गया। १८१४ में नार्वे के साथ सम्मिलित हो गया। १९०५ में दो देश स्वतंत्र रूप से शासन करने लगे। दोनों महायुद्धों में यह राज्य तटस्थ रहा।

डेनमार्क का इतिहास : यहाँ डेन[1] जाति के लोग छठी शताब्दी में आकर बस गये। प्राचीन काल में युत जाति के निवास करने के कारण यह युतलैण्ड भी कहलाता था। ८००-१००० के मध्य डेन लोग भी वाइकिंग लूटमारों के साथ मिल गये और इंगलैण्ड, फ्रांस तथा दक्षिणी देशों पर आक्रमण किये। १०१८ से ईसाई मत के अनुयायी होने लगे। ११५७ में वाल्डिमार ने एक नया राजवंश स्थापित किया। १४०० में यह जर्मनी के प्रभाव में आ गया। १४४८ से १४६३ तक यह देश एक नृपराज्य रहा।

१५३६ में उसने प्रोटेस्टैन्ट-ईसाई-मत अपना लिया। इस देश ने कई युद्ध लड़े और अपने कई उपनिवेश खो दिये। १८६४ में आस्ट्रिया के युद्ध में पराजित हुआ। प्रथम महायुद्ध में तटस्थ रहा। १९१७ में वेस्ट इण्डीज को अमेरिका के हाथ बेच दिया। १९१८ में आइसलैण्ड की स्वतंत्रता को मान्यता प्रदान कर दी। द्वितीय महायुद्ध में यह देश १९४० से ४५ तक जर्मनी के अधीन रहा।

---

1. डेन ट्यूटन जाति की शाखा थी।

नार्वे – स्वीडन – डेनमार्क के रून : प्राचीन जर्मनी के रूनों का प्रयोग जर्मनी तक ही सीमित रहा, जो आठवीं श० के पश्चात् समाप्त हो गया और डेनमार्क के दक्षिणी भाग के ऊपर न बढ़ सका। इसके पश्चात् इनका अधिक प्रयोग नार्वे, स्वीडन और डेनमार्क में हुआ। इनका उद्भव नार्वे, स्वीडन, डेनमार्क में प्राचीन रूप से हुआ। इसमें केवल सोलह[1] रून थे अर्थात् प्राचीन रूनों में से आठ वर्ण कम कर दिये गये तथा उनकी ध्वनियों का भार इन सोलह वर्णों के ऊपर रख दिया गया। उदाहरणार्थ 'त/ट' के चिह्न से 'द/ड' का भी उच्चारण किया गया, इसी प्रकार 'ई' के चिह्न से 'ए' की, 'ब' के चिह्न से 'प' की, 'क' के चिह्न से 'ग' और 'इंग' की और 'उ' के चिह्न से 'ओ' और 'व' की ध्वनियों का कार्य लिया गया (फ० सं०—३६६)।

इस लिपि के अभिलेख स्मृति – शिलाखण्डों पर उत्कीर्ण किये हुये प्राप्त हुये हैं, जो मृतक के सम्बन्धी उनकी समाधियों पर एक स्मारक के रूप में स्थापित कर देते थे। ऐसे अभिलेखों की संख्या लगभग दो सहस्र पाँच सौ से कुछ अधिक है जो नार्वे – स्वीडन से प्राप्त हुए। उनका काल सातवीं से आठवीं श० का माना जाता है। इसका सबसे प्राचीन अभिलेख एक कटार पर उत्कीर्ण नार्वे से प्राप्त हुआ है। यह कटार अस्थि के दस्ते की बनी है। इसका काल आठवीं सदी निर्धारित किया गया है (फ० सं० – ३६६क)। इसका रहस्योद्घाटन अरंज (Arntz) द्वारा किया गया है। जो उसकी पुस्तक[2] में प्रकाशित हुआ। 'फ० सं०—३६६' पर पाँच कालम दिये गये हैं। तृतीय कालम में वर्णों की ध्वनियाँ दी गई हैं। चतुर्थ कालम में वर्णों के नाम तथा पंचम में नामों के अर्थ[3] दिये गये हैं।

बिन्दी वाले रून : जब वाइकिंग काल में (Viking – ८०० से १०५० तक) नार्वे – स्वीडन वाले रूनों की संख्या चौबीस से घट कर केवल सोलह रह गई और उच्चारण का भार दूसरे चिह्नों पर रख दिया गया तब शनैः शनैः मानव प्रगति के साथ कुछ कठिनाई प्रतीत होने लगी। इसके अतिरिक्त रोम के राज्य तथा धर्म के बढ़ते कदमों ने रोम की लिपि को भी प्रगति प्रदान की। इन कारणों से दसवीं सदी में नार्वे – स्वीडेन के रूनों में कुछ परिवर्तन किये गये। उदाहरणार्थ 'क' और 'ग' की ध्वनियों के लिए जो एक चिह्न निश्चित किया गया था उसका रूप तो वैसा ही रखा गया परन्तु 'ग' की ध्वनि को पृथक करने के लिए उसी चिह्न या रून में एक बिन्दी लगा दी गई। इसी प्रकार अन्य ध्वनियों को पृथक करने के लिये उसी प्रकार के रूनों में बिन्दी का प्रयोग करना आरम्भ कर दिया गया। साथ साथ उनके स्थानों में भी परिवर्तन कर दिया गया। यह परिवर्तन रोम की लैटिन लिपि के अनुसार किया गया (फ० सं० – ३६७)।

पी० जी० थोरसेन (P. G. Thorsen, 1877) के अनुसार यह परिवर्तन वाल्डेमार नरेश (नार्वे – स्वीडन) के शासन काल (१२०२ से १२४१ ई० तक) में पूर्ण[4] हो गया। इन रूनों का नाम स्टुंगनार रूनिर (Stungnar Runir) अर्थात् बिन्दी वाले रून रख दिया गया।

---

1. Neckel : 'Die Runen'—Acta Philologie, vol. XII (1938), p–102.
2. Die Runen Schrift, (1938) , p–76.
3. Johannesson, A. : Grammatik d r urnordischen Runeninschriften (Heidelberg— 1928), p–97.
4. Thorsen, P. G. : Our Ruterne: Brig til S rift uden for det monumentale - (1877), p–29.

नार्वे–स्वीडन

फलक संख्या – ३६५

डेनमार्क, नार्वे–स्वीडन रून

डेनमार्क	ना० स्वी०	ध्वनि	नाम	अर्थ
ᚠ	ᚠ	फ़	फ़िउ	प्रथम (पशुधन)
ᚢ	ᚴ ᚢ	उ,ओ,व	उर	बाद में (हल्की वर्षा)
ᚦ	ᚦ	प, थ	थुरिस	दानव (तीसरा डण्डा)
ᚨ	ᚬ	अ,आ	आस	अस्थि (उससे ऊपर)
ᚱ	ᚱ	र	रट	चढ़ना (अंतिम डिब्बा)
ᚴ	ᚴ	क,ग,न	कौन	सूजन (छिपकली)
ᚼ	ᚽ	ह	हगाल	ओला
ᚾ	ᚿ	न	नौत	संकट
ᛁ	ᛁ	ई	आइस	बर्फ़ (ईस)
ᛅ	ᛦ+ᛆ	अ	अर	वर्ष
ᛋ ᛊ	ᛁ	स	सोल	सूर्य
ᛏ	ᛐ	त,द,न्द	तइर	रांगा
ᛒ ᛓ	ᛓ ᛔ	प,ब,म्ब	बजरको	वृक्ष की छाल (ब्योर्क)
ᛘ ᛉ	ᛙ ᛘ	म	मद्र	मनुष्य
ᛚ	ᛚ ᛚ	ल	लगु	पानी
ᛦ	ᛁ	र	यर	धनुष

दल्सका रून : स्वीडन के एक जनपद औरे दलार्नें (Ovre Dalarne)[1] में इनका आज भी गोपनीय रखने के लिए — किसी प्रकार के पत्रव्यवहार अथवा किसी अन्य बात के लिए प्रयोग किया जाता है। इनका एक छोटा सा अभिलेख एक छड़ी पर अंकित अल्फ़दलेन ग्राम से प्राप्त हुआ जो १७५० ई० का माना जाता है। दल्स्का रूनों की वर्णमाला 'फ० सं० – ३६७' पर दी गई है।

एक प्रतिदर्श

ᛋ ᛁ ᚴ ᛚ ᛁ ᛋᚾ ᛅ ᚼ ᛚ ᛁ

स इ ग ल इ स न अ ह ल ए

'सिगलिस नहले' = यह भूषण संकटों को दूर रखता है।
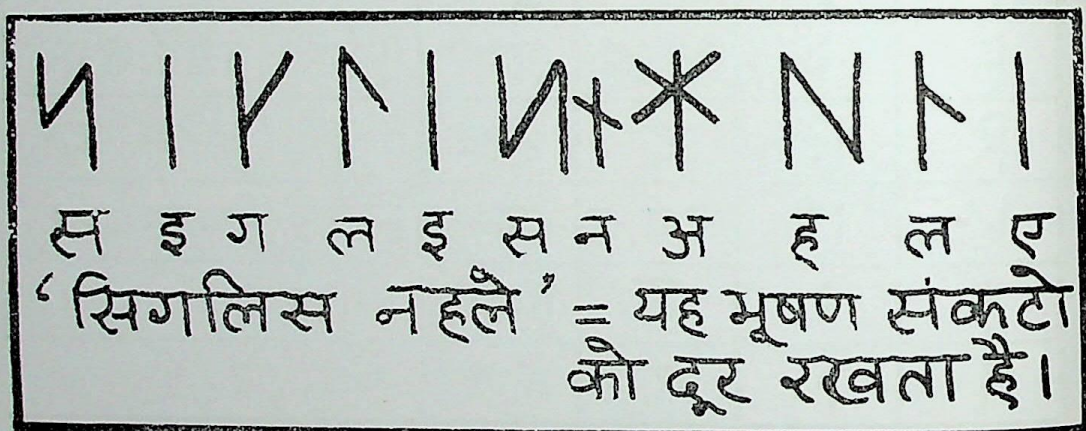
फलक संख्या – ३६६ क

प्राचीन इंगलैण्ड

इतिहास : प्राचीन इंगलैण्ड के विषय में आयरलैण्ड के पाठ के साथ कुछ वृतान्त दे दिया गया है। यहाँ के मूल निवासी ब्रतानी थे। तत्पश्चात् योरोप की अन्य जातियाँ यहाँ आकर बसने लगीं उनमें से दो जातियाँ मुख्य थीं, एक ऐंगिल दूसरी सैक्सन।

टैसीटस इतिहासकार के कथनानुसार ऐंगिल जाति के लोग मूलतः ट्यूटोनी जाति के थे। ट्यूटोनी जाति हेल्वेती जाति की एक शाखा थी जो स्वीट्ज़रलैण्ड में निवास करती थी। यह सब जातियाँ केल्ट जाति की उपजातियाँ थीं। ट्यूटोनी जाति के लोग रोमनिवासियों के सम्पर्क में लगभग १०३ ई० पू० में आये। ऐंगिल जाति के लोग इंगलैण्ड आने के पूर्व एक ऐंगुलस द्वीप में निवास करते थे जो डेनमार्क के निकट था। इसको वर्तमान काल में शिलेसविग प्रांत कहते है। पाँचवी सदी में इन लोगों ने इंगलैण्ड के पूर्वी भाग पर आक्रमण किया और वहीं बस गये।

---

1. Noreen ; Ovre Dalrane (1903), page-405,

बिन्दी वाले रून

अअब क-स द द ए फ़.व ग हर

A B C D E F G H

ई ज क ल म नन ओओओप प क़र

I J K L M N O P Q R

ससस टट पपउ व यय ज़ज़ ओप अ

S T Z Ö Ä

दलस्का रून

अ अ ब क.स द द ए फ़ फ़ ग

ह ह ई क क ल म न ओ प प क़ र

स ट उ व क्स यय आ आ ऐ ऐ अ अ

संयुक्त अ+उ = औ ; अ+न = अन ; उ+क = उक ; ट+अ = टा

फलक संख्या – ३६७

इंगलैण्ड

फलक संख्या – ३६८

ऐंग्लो–सैक्सन रून

वर्ण	ध्व०	नाम	वर्ण	ध्व०	नाम	वर्ण	ध्व०	नाम
ᚠ	फ़	फ़ियो feoh	ᛄ ᛄ	ज़	जर zer	ᛞ	द ड	दपेग daeg
ᚢ ᚢ	उ	उर Ur	ᛇ	यो	यो eow	ᛟ	ओप	येपेल epel
ᚦ ᚦ	थ	थोर्स Thors	ᛈ ᛈ	प	प्योरो peoro	ᚪ	आ	आक āc
ᚩ ᚩ	ऑ	ऑस ōs	ᛉ ᛉ	क्स	योलक्स eolx	ᚫ	अये	अयेस्क aesk
ᚱ	र	राड Rād	ᛋ	स	सीगेल sigel	ᛠ	इय	इयर ēar
ᚳ ᚳ	क	केन Cen	ᛏ	त ट	तीर tir	ᚣ	य	यर ȳr
ᚷ	ग	गीफ़ू gyfu	ᛒ ᛒ	ब	बेयोर्क beorc	ᛡ	ईया	ईयार ior
ᚹ	व	व्यून wyun	ᛖ	ए	एह eh	ᛢ	क	वियोर्द weord
ᚻ ᚻ	ह	हैगल haegl	ᛗ	म	मन man	ᛣ	का	काल्क calc
ᚾ	न	नीद nyd	ᛚ	ल	लगु lagu	ᛥ	स्त	स्तान stān
ᛁ	ई	ईस is	ᛝ ᛝ	इंग	इंग ing	ᚸ ᚸ	ज	जार gār

फलक संख्या – ३६९

सैक्सन जाति के लोग भी ट्यूटोनी जाति के सम्बन्धी थे। सर्वप्रथम टॉलेमी ने दूसरी सदी के मध्य इनके विषय में कुछ ज्ञान प्राप्त किया। यह लोग किम्ब्री के प्राचीन प्रायद्वीप में निवास करते थे (शिलेसविग प्रांत)। इन लोगों ने २८६ ई० से व्यापारी जलपोतों के लूटने का कार्य आरम्भ किया। चौथी सदी में इनकी सामुद्रिक डकैतियाँ अधिक होने लगीं। पाँचवी सदी में इन लोगों ने भी इंगलैण्ड के दक्षिणी – पूर्वी भागों पर आक्रमण करना आरम्भ कर दिया। शनैः शनैः इन्होंने वहाँ अपने पैर जमा लिये। इसी कारण जो सैक्सन पूर्व में बस गये वह स्थान एसेक्स (East + Saxon = Essex), जो लोग पश्चिम में बस गये वह स्थान वेसेक्स (Wessex) तथा जो सैक्सन दक्षिण में बस गये वह स्थान ससेक्स (Sussex) कहलाने लगा। ऐंगिल जाति के लोगों के बसने के कारण

ऐंग्लो–सैक्सन रून का प्राचीनतम् अभिलेख

एक हल एबअमअसटईर हओलटईङगअर
एक लुइगास्टीर होल्टिंगर
हओरनअ टअवईडओ
होर्नी टईडो
"I Luigast the Holting made (this) horn."
"मैंने, होल्टिंग का लुइगास्ट, सींग को बनाया"
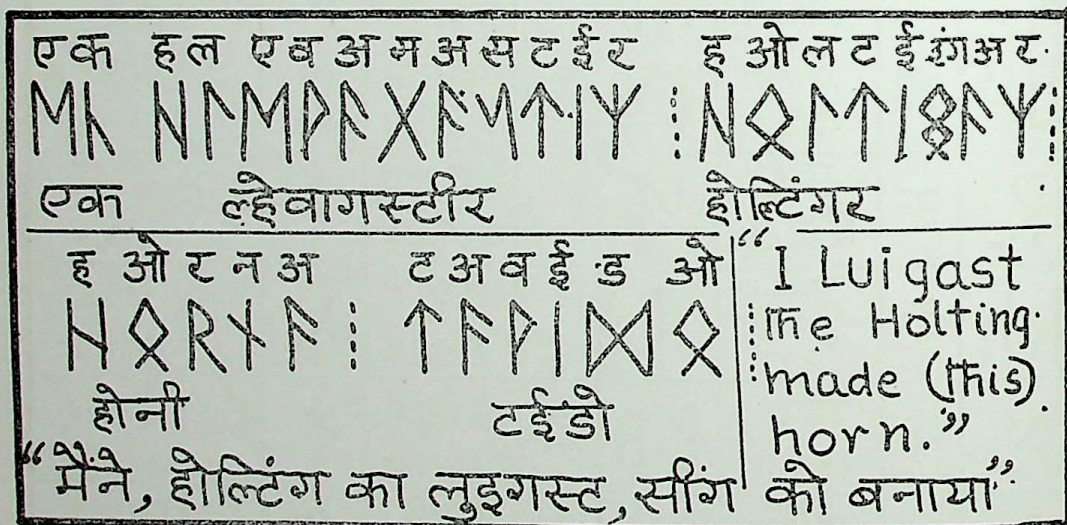
फलक संख्या – ३७०

ऐंगिल – लैण्ड तथा इंगलैण्ड कहलाने लगा। ऐंगिल तथा सैक्सन जातियों के सम्मिश्रण से जो लोग उत्पन्न हुये वे ऐंग्लो – सैक्सन[1] कहलाने लगे।

लिपि : पाँचवी सदी तक ऐंग्लो – सैक्सन जातियों के लोग प्राचीन जर्मनी के रून – वर्णों का प्रयोग करते रहे, परन्तु जब वे ब्रितानी लोगों के सम्पर्क में आये और कुछ अन्य ध्वनियों का भाषा में समावेश हुआ तब इन लोगों ने प्राचीन जर्मनी के चौबीस रून – वर्णों में चार[2] नई ध्वनियों के वर्ण और जोड़ कर अट्ठाईस रून बना लिये। सातवीं एवं आठवीं सदी में तीन वर्ण और जोड़ दिये और इसी प्रकार दसवीं सदी में दो अन्य रून वर्ण

---

1. यह नामकरण इंगलैण्ड के नरेश ऐल्फ्रेड द्वारा ८८ ई० में हुआ,
2. यह चार वर्ण 'फ० सं०--३६९' पर दो पंक्तियों के मध्य दिखाये गये हैं। अन्य तीन तथा दो वर्ण भी इसी प्रकार दिखाये गये हैं।

जोड़कर तैंतीस रूनों की एक वर्णमाला[1] बन कर प्रयोग में आने लगी। इसका प्रयोग अधिक दिनों तक न हो सका क्योंकि रोम के धर्म – प्रचारकों ने ईसाई – धर्म के साथ साथ रोम की लिपि का भी प्रचार किया और जैसे जैसे ईसाई धर्म में प्रगति हुई उसी के साथ रोमन लिपि की भी प्रगति हुई। फलस्वरूप रूनों का स्थान रोमन लिपि ने ले लिया (फ० सं०–३६९)। इसका प्राचीनतम अभिलेख[2] 'फ० स० – ३७०' पर दिया गया है।

बार्डी लिपि : केल्ट जाति के लोग मध्य यूरोप से चल कर लगभग ई० पू० की चौथी श० में आयरलैण्ड में आकर बस गये थे। इन लोगों में कुछ पुरोहित लोग भी थे जो ईश्वर के विषय में, आत्मा के विषय में तथा मरणोपरांत जीवन के विषय में खोज और चिन्तन – मनन किया करते थे। यह लोग बड़े विद्वान् समझे जाते थे। ज्योतिष विद्या तथा खगोल शास्त्र के भी ये पण्डित समझे जाते थे। ये लोग कविता भी करते थे तथा पूजन आदि की विधियों के भी ज्ञाता माने जाते थे। कुछ विद्वानों का विचार है कि ये लोग केल्ट नहीं पिक्ट (आयरलैण्ड के मूल निवासी) थे। इन पण्डितों का नाम ड्रूड था। इन्हीं विद्वानों की एक शाखा, जो इंगलैण्ड के पश्चिमी पर्वतों पर आकर बस गयी, बार्ड कहलाती थी।

इंगलैण्ड के पश्चिमी पर्वतों पर रहते रहते यह लोग वेल्श के नाम से ज्ञात होने लगे। यहाँ पर इन लोगों ने एक सुसंगठित समाज की स्थापना की जिसको इंगलैण्ड की सरकार ने मान्यता प्रदान कर दी। समय समय पर यह लोग अपने उत्सव बड़ी धूमधाम से मनाते हैं। महारानी एलिज़बेथ प्रथम के शासन काल से इनके रीति – रिवाज़ों में कुछ शिथिलता आने लगी परन्तु १८२२ ई० से उनका पुनरुत्थान होने लगा। अब उनके उत्सव निश्चित तिथियों पर मनाये जाते हैं। वर्तमान काल में कविता करना उनकी जीविका बन गई है।

इन्होंने बड़ गोपनीय ढंग से अपनी प्राचीन लिपि को सुरक्षित रखा है। इसका उद्भव रून – वर्णों द्वारा प्रतीत होता हैं। इस के उद्भव के विषय में विद्वान् एकमत नहीं हैं। इस लिपि की पद्धति में कुछ भारतीय लिपि पद्धति का समावेश भी दृष्टिगोचर होता है जो सम्भवतः मध्य एशिया से चल कर रून – लिपि के सम्पर्क में आकर इसको प्रभावित किया (फ० सं० – ३७१)।

रुमानिया

इतिहास : इसका प्राचीन नाम डाकिया है। इसके निवासी यायावर थे। लगभग १६३ वर्ष यह रोमन राज्य के अधीन रहा परन्तु २७१ ई० में रोमन सम्राट औरेलियन (Aurelian) ने अपना अधिकार हटा लिया। तीसरी से बारहवीं श० तक भिन्नभिन्न जातियों के आक्रमण होते रहे। कहीं गोथों के, तो कभी स्लावों के और कभी अवारों। ८६४ में बुल्गारों ने आक्रमण किया। यह लोग अपने साथ ईसाई धर्म लाये और रुमानिया निवासी ईसाई धर्म के अनुयायी हो गये। बुल्गारों को मैग्यारों ने परास्त कर दिया और ग्यारहवीं श० में हंगेरी के राजा स्टीफ़न ने इसको अपने अधीन कर लिया।

१२४१ में मंगोलों ने विध्वंसक आक्रमण करके सब कुछ नष्ट कर दिया। १७७४ में यह भूभाग दो राज्यों में – वालाचिया तथा मोलडाविया – विभाजित हो गया। १७ जनवरी १८५९ को यह दो भाग पुनः एक सूत्र में बंध गये। १८७९ में यह देश स्वतंत्र हो गया। १९४७ में यहाँ के शासक राजा माइकिल ने राजगद्दी छोड़ दी और देश समाजवादी हो गया।

---

1. Keller, W, : Angelsachs Paladeographic Palaestra, Vol, XLIII, (1960), P – 46,
2. यह Loom of The Language - Page 265 – से लिया गया है।

बार्डो लिपि

अ	आ	ए	ऐ	ई	ब
द. ड	क	ज	फ़	ग	ह
ल	म	न	ओ	प	र
स	त. ट	ती. टी	व	व	क्स
इंग	ज़	उ	ऊ	व	य

फलक संख्या – ३७१

रुमानिया की लिपि

अ	λ	द्ज़	S	न	H	त	T	त्स	Ч	इयू	Ю
ब	Б	ज़	Z3	क्स	Ѯ	उ	Ȣ	श	Ш	इया	Ѩ
व	B	इ	N	ओ	O	उ	Оу	श्त	Щ	इये	IE
ग	Г	फ़्त	Ѳ	प	П	फ़	Ф	ए	Ъ	इय	Ѧ
द	Δ	क	ї	ल्श	Y	ख़	X	इ	Ы	ई	Y
ए	E	ल	Λ	र	P	प्स	Ѱ	य	Ѣ	पन	↑
ज	Ж	म	M	स	C	ओ	ω	ईया	Ѫ	द्श	Џ

फलक संख्या – ३७२

अल्बेनियन (अल्बेनो) लिपि

अ		त्स		र		ग्ज		प		श	
ए		द्स		ई		ग़		ब		श़	
इ		द्ंस		फ़		स		म्ब		श्त	
ओ		व		थ		ह		म्प		ते	
उ		ल		म		ख़		न		जं	
ऊ्यु ü		ल्ज		ज		ज़		त्श		अस	
एॅ		क्ज		ग		त		द्श़		ओल	
स		क		गं		द		द्ंश़		जीयु	
द्ज़		क्स		ग्ज		न्द		स्त		व	पूउ र्ण

फलक संख्या – ३७२

रुमानियन लिपि : इस लिपि को सीरिलिक में आंशिक परिवर्तन करके बनाया गया परन्तु १९७० के पश्चात् रुमानिया ने रोमन लिपि का प्रयोग आरम्भ कर दिया। के० एम० मुसाइव (K. M. Musaiev) ने इसका वर्णन अपनी पुस्तक[1] में किया है। इसकी वर्णमाला एक पुस्तक[2] से ली गई है (फ०सं० – ३७२)।

अल्बेनिया

इतिहास : प्राचीन काल में अल्बेनिया को इलीरिया (Illyria)[3] कहते थे। यहाँ के लोग एक पहाड़ी जाति के थे। आठवीं श० में स्लाव लोगों ने इस भू-भाग पर आक्रमण किया तथा अपने अधीन कर लिया। जब प्राचीन ईसाई धर्म, रोमन चर्च तथा ग्रीक–आर्थोडाक्स चर्च में, विभाजित हो गया और कुस्तुनतुनिया की शक्ति का विस्तार होने लगा तब १२१४ तक यह एपरिस के अधीन रहा। १२२४ में बुल्गारिया के शासक इवान असेन ने इस पर अधिकार जमा लिया।

कुछ वर्षों पश्चात् यह पुनः बिज़ेन्टीन साम्राज्य का भाग बन गया। लगभग ४०० वर्ष यह ओटोमान तुर्कों के अधीन रहा। इसी काल में यहां के बहुत से लोग मुसलमान हो गये जो वर्तमान जनसंख्या के ७० प्रतिशत हैं। जब तुर्की और ग्रीस का युद्ध हुआ और तुर्की की पराजय हुई तो १९१२ में अल्बेनिया स्वतंत्र हो गया। प्रथम महायुद्ध में इसने बाल्कन राज्यों का साथ दिया। १९२१–२४ तक एक नृप-राज्य रहा। दूसरे महायुद्ध में इटली ने ग्रीस पर यहां से ही आक्रमण किया। इटली परास्त हुआ। ग्रीस ने अल्बेनिया पर आक्रमण कर दिया। १९४४ में बड़ी अशान्ति रही और देश कम्युनिस्ट हो गया। यह यूरोप का सबसे निर्धन देश है।

लिपि : यह लिपि विशुद्ध राष्ट्रीय मानी जाती है। इसकी खोज अल्बेनिया स्थित एक जर्मन राजदूत जी० वान् हव्न (G. Von Habn) ने की जिसके परिणाम स्वरूप १८५० में इसके अभिलेख उत्तरी अल्बेनिया के एक नगर एलबसन से प्राप्त हुये। केवल इसी नगर में इसका प्रयोग सीमित हो कर रह गया।

इसका आविष्कार थ्योडोर (Theodore) नाम के एक शिक्षक ने अठारहवीं श० के सातवें दशक में किया था। फ्रांज़ (Franz) के अनुसार इसकी उत्पत्ति[4] फ़नीशियन लिपि द्वारा, ब्लाउ (Blau) के अनुसार लीकियन लिपि द्वारा तथा गीटलर के अनुसार घसीट – रोमन – लिपि द्वारा हुई, जिसका प्रयोग सातवीं श० में होता था, (फ० सं०–३७३)।

□

---

1. Musaiev, K. M. : Alphavity yazkykov narodov S S S R – Moscow (1965)
2. Jensen, H : Syn, Symbol and Script – (London – 1970) p. – 5.2
3. इटली के मान चित्र में 'फ० सं०—३३५' पर इलीरिया नाम दिया गया है।
4. Halin : Albanesische Studien-(1854) p. 286.

पठनीय सामग्री

Arntz, H. : 'Origin of Runes' – Journal of German Philologie, 11,, (1899).

Ibid : Die Runenschrift (1908).

Ibid : Handbuck Der Runenschrift (1902).

Atkinson, G. M. : 'Some Account of Ancient Irish Treatises on Ogham Writing' – Journal of Royal Historical and Archaeological Association of Ireland XIII (1921).

Bruce, D. : Runic and Heroic Poems of the Old Teutonic Peoples, (Cambridge – 1915).

Curtis, E. : A History of Ireland (1936).

Daustrup : A History of Denmark (Cop. – 1949).

Dunlop, R. : Ireland from Early Times (1922).

Gibbon, J. B. E. : Decline and Fall of the Roman Empire (1900).

Gjerset, K. : History of Norwegian People, (1932).

Grienberger : 'Die anglesächs Runenreihen' – Arkologie f. nord, Filol. XV (1898).

Hallendorff, C. : A History of Sweden (1938).

Halin : Albanesische Studien (1931).

Hodgkin R. H. : A History of the Anglo – Saxons, 2 Vols. (1939).

Joyee, P. W. : History of Ancient Ireland (1913).

Keller, W. : Angel – Sächs Palaeographie, XLIII, (1906)

Larsen, K. : A History of Norway (1948).

Macalister, S. : Studies in Irish Epigraphy (1907).

Ibid : Archaeology of Ireland, 3 Vols. (1928).

Macarteny, C. A. : Hungary (1934).

MacNeill : Phases of Irish History (1920).

Maveer, A. : The Vikings (1913).

Musalev, K. M. : Alphavity yazkykov narodov (Moscow – 1965)

Pedersen, H. : 'Runernes Oprindelse' – Aarboger f. nord, Old Kyndighed of Historic (3. R) Vol. 13. (1923).

Stephens, G. : Handbook of Runic Monuments (1884).

□□□

अध्याय : ८

अमरीकी देशों की लेखन कला का इतिहास

अमरीका

अमरीका की लिपियाँ इस आधुनिक अमरीका की नहीं हैं अपितु उन आदिवासियों की हैं जिनको आज 'रेड – इण्डियन' के नाम से सम्बोधित किया जाता है। ये लोग उत्तरी तथा दक्षिणी अमरीका में फैले हुये थे। इनकी अपनी एक उच्च कोटि की संस्कृति थी। इनमें से कुछ रेड – इण्डियन जातियों ने अपनी लिपियों का स्वयं आविष्कार किया तथा कुछ जातियों के लिये ईसाई – धर्म – प्रचारकों ने उनकी भाषा के अनुरूप विचित्त प्रकार की लिपियों का आविष्कार किया। इन्हीं लिपियों का वर्णन इस पाठ में दिया गया है।

मैक्सिको

इतिहास : ईसा की सातवीं शताब्दी में नहुआ जातियाँ उत्तर की ओर से आकर बसने लगीं। उनमें से एक मुख्य टोल्टेक जाति ने एक नगर टोल्लन (आधु० टोला ग्राम) की आधारशिला रखी। एक अन्य चिचिमेक जाति ने आकर टोल्टेक जाति को नष्ट कर दिया परन्तु चिचिमेकों ने पराजित जातियों की संस्कृति को अपना लिया। चिचिमेकों की एक उपजाति अज़्टेक (Aztec) थी जिसने एक दूसरे नगर की स्थापना की। इसका नाम अनाहुआक[1] (Anahuac) था जो आज मैक्सिको की राजधानी है।

१५१९ में हर्मन कोर्तेज़ ने अन्य जातियों के सहयोग से, जो अज़्टेक राज्य के विरुद्ध थीं, इस राज्य को नष्ट कर दिया और मैक्सिको नगर की स्थापना की। शनैः शनैः सारी रेड – इण्डियन जातियों की सत्ता को नष्ट करके स्पेन निवासियों ने अपनी जागीरें स्थापित करना आरम्भ कर दिया। उधर स्पेन राज्य अपना पूर्ण अधिकार जमाना चाहता था। फलस्वरूप एक लम्बे समय तक विद्रोह की अग्नि जलती रही। १८२१ में मैक्सिको स्वतंत्र हुआ १८२२ में आगस्टिन दि ईतुरबिडे (Augustine de Ituribide) सम्राट बना परन्तु १८२३ में उसने राज त्याग दिया। १८२४ में मैक्सिको एक लोकतंत्र राज्य बन गया। १८४६ में अमरीका से युद्ध हुआ जिसमें मैक्सिको की पराजय हुई और कैलीफ़ोर्निया का भाग अमरीका ने डेढ़ लाख डालर देकर अपने अधीन कर लिया।

१८६३ में आस्ट्रिया के एक राजकुमार को मैक्समिलियन के नाम से सम्राट बनाया गया। कुछ दिन पश्चात् उसका वध कर दिया गया। कुछ दिनों की अराजकता के पश्चात् डायज़ राष्ट्रपति बनाया गया। १९११ में जब कई विद्रोह हुये तो उसको भागना पड़ा। ततपश्चात् मदेरो राष्ट्रपति बना। १९१३ में उसका भी वध कर दिया गया। तदनन्तर सेनापति हुयेरतास राष्ट्रपति बना। उसने शासन को कड़ा किया परन्तु १९१४ में उसे भी भागना पड़ा। अमरीका के सहयोग से करांज़ा को नियुक्त किया। १९२० में उसका वध कर दिया गया। १९२४ में दूसरे राष्ट्रपति आब्रेगोन का वध कर दिया गया। १९२४ से कालेज़ राष्ट्रपति बना। इसने कुछ सुधार किये। १९२८ में पोर्टेज़ गिल राष्ट्रपति बना जिसने कालेज़ को देश से निर्वासित करा दिया। इसी प्रकार अनेक राष्ट्रपति बने और कुछ सुधार होते रहे।

लेखन कला : स्पेन के निवासियों के आने के पूर्व अज़टेक राज्य बड़ा शक्तिशाली एवं समृद्ध था। यहां कई प्रकार की कला जैसे पत्थर का काम, मिट्टी के बर्तन, बुनाई तथा बहुत सुन्दर रंगाई के काम होते थे। साथ

---

1. कुछ विद्वानों का विचार है कि टिनाक्टिलन नगर, जो अज़टेकों ने बसाया था वर्तमान मैक्सिको है।

साथ लेखन कला की भी उन्नति हुई। इन लोगों ने भी सर्वप्रथम दैनिक जीवन सम्बन्धी वस्तुओं के चित्रों से अपनी लिपि का आविष्कार किया। इसका प्रयोग यह लोग बड़े पशुओं की खालों पर लिख कर किया करते थे। मैक्सिको का पंचांग ६१३ ई० से आरम्भ होता है और तभी से लिपि का जन्म भी माना जाता है (फ० सं० – ३७४)।

अज़्टेक – पंचांग का एक उदाहरण : इसका उल्लेख निम्नलिखित है (फ० सं० – ३७६ के नीचे)।

१. १८०० में इकोटा जाति के ३० लोगों को क्राउन जाति ने मार डाला।

२. १८०१ में, चेचक की महामारी फैल गयी।

३. १८०२ में घोड़ों की चोरी हो गयी।

४. १८०३ में खांसी का रोग फैल गया।

अज़्टेक – अंक : ये आदिवासी अंक – गणित[1] का भी पर्याप्त ज्ञान रखते थे जो 'फ० सं० – ३७४' पर दिया गया है।

अज़्टेक चित्र – लिपि : 'फ० सं० – ३७५ – ७६' पर अज़्टेक चित्र – लिपि दी गयी है तथा प्रत्येक चित्र के ऊपर उसके अर्थ दिये गये हैं।

अज़्टेक गणित
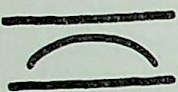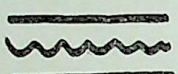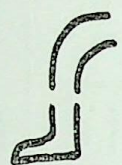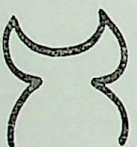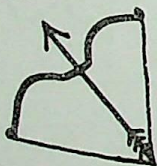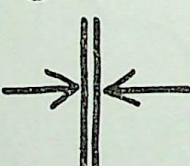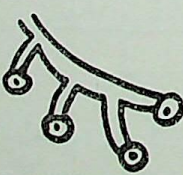
फलक संख्या – ३७४

1, संख्यायें और रेखायें' – पीपुल्स प० हाउस, नई दिल्ली पृष्ठ – २७

अज़टेक जाति की चित्र–लिपि

आकाश	वर्षा	बादल	बिजली	बिजली-वर्षा	सूर्य
चन्द्र	प्रकाश	ग्रहण लगना	तारे	प्रातः काल	प्रातः
मध्याह्न	संध्या	रात्रि	रात्रि	समय	वर्ष
एक दिन	दो दिन	तीन दिन	एक माह	पर्वत	द्वीप
सागर	नदी	पुरुष	स्त्री पुरुष	मृत स्त्री पु०	जीवन मृत्यु
देखना	पहनना	बातकरना	घर दिल	घोड़ा युद्ध	शान्ति

फलक संख्या – ३७५

अज़टेक जाति के कुछ अन्यचित्र

शुद्ध जल	अशांत जल तथा आंधी	टांग	टूटी टांग	चेचक
निवास स्थान	शक्ति	गोरा मनुष्य	जल प्रपात	अत्याधिक
बोलना	युद्ध करो	युद्ध करो	युद्ध करो	पत्थर
मिट्टी का बर्तन	विधवा	जल	शिकरा	रात्रि

अज़टेक पंचांग का एक उदाहरण

१	२	३	४
१८०० में	१८०१ में	१८०२ में	१८०३ में

विश्वोत्पत्ति की कहानी

अमरीका की एक प्राचीन (रेड – इण्डियन) जाति लेनी – लेनापे के लोगों ने स्वयं अपनी चित्रात्मक लिपि द्वारा, 'विश्व की उत्पत्ति की कहानी' को अंकित करके निर्माण किया। विश्वोत्पत्ति को उनकी भाषा में 'वलम ओलम' (Walam Olum) कहते हैं।

इन चित्रों के अर्थ निम्नलिखित हैं :—(फ० सं० – ३७७)

१—सर्वप्रथम किसी स्थान पर, कहीं, पृथ्वी के ऊपर।

२—पृथ्वी के ऊपर कोहरा ही कोहरा था और उसमें मनीटो[1] था।

३—सर्वप्रथम अन्तरिक्ष में प्रत्येक स्थान पर केवल वही महान् मनीटो था।

४—उसने आकाश तथा पृथ्वी का निर्माण किया।

५—उसने सूर्य, चन्द्र और तारे बनाये।

६—उसने उनको गति प्रदान करके चलाया।

७—तदनन्तर पवन के झोंके चलने लगे।

८—उसने पानी को और तब कई छोटे बड़े द्वीपों को उत्पन्न किया।

९—तत्पश्चात् मनीटो अन्य छोटे मनीटों से बोला।

१०—वह अन्य प्राणियों से, आत्माओं से और सबसे बोला।

११—वह सबका, सब मनुष्यों का पितामहा था।

१२—उसी ने सब प्राणियों के लिये सर्वप्रथम माँ दी।

१३—उसने मछली, कछुये, पशु तथा पक्षी दिये।

१४—परन्तु एक दुष्ट मनीटो भी था जिसने दुष्टों की तथा दानवों की उत्पत्ति की।

१५—उसने मक्खियों तथा कीड़े – मकोड़ों को उत्पन्न किया।

१६—तब सब मिल – जुल कर निवास करने लगे।

१७—मनीटो बड़ा कृपालू था।

१८—उसने सबसे पहली वाली माताओं को तथा उनकी सन्तानों को आशीर्वाद दिया।

१९—उनके लिये भोजन लाया (उनकी इच्छानुसार)।

२०—तब सब प्राणी प्रसन्न थे, सब आराम से रहते थे और सब प्रसन्नता – पूर्वक विचार करते थे।

२१—बड़े गोपनीय ढंग से एक दुष्ट शक्तिमान जादूगर पृथ्वी पर उतरा।

२२—उसी के साथ बुराइयाँ, झगड़े तथा दुःख भी आये।

२३—वही अपने साथ हानिकारक जलवायु, रोग तथा मृत्यु लाया।

२४—यह सब कहीं बीच में हुआ।

उपर्युक्त कहानी के रेखा – चित्र डैनियल जी ब्रिन्टन (Daniel G. Brinton) की एक पुस्तक[2] से लिये गये हैं।

---

1. एक शक्ति का रूप, कोई सृष्टि – कर्त्ता, ईश्वर आदि।
2. Brinton, G. Daniel : Library of Aboriginal American Literature (1885), p – 295.

विश्वोत्पत्ति की कहानी

फलक संख्या – ३७७

एक रेड-इण्डियन की कहानी

फलक संख्या – ३७८
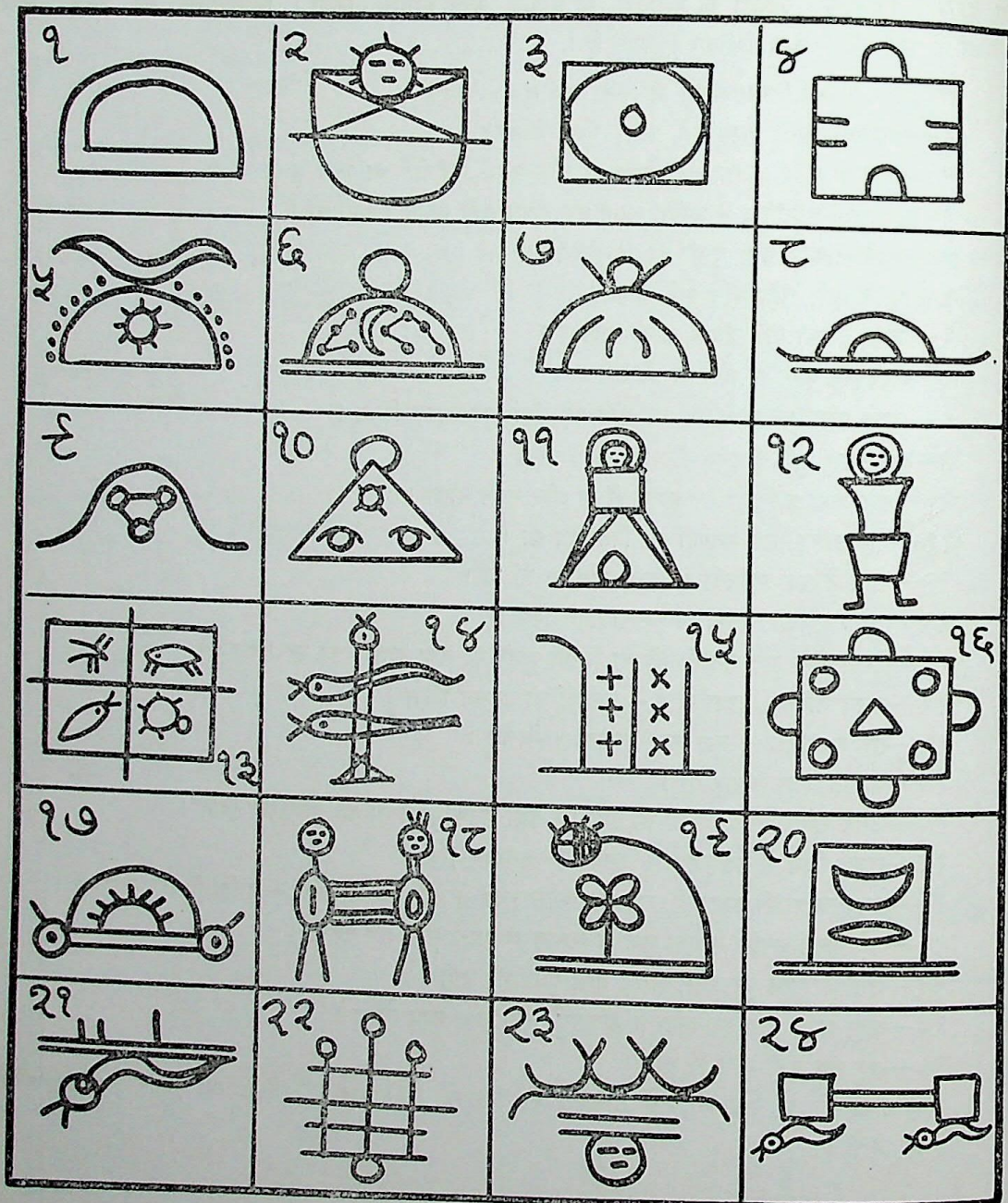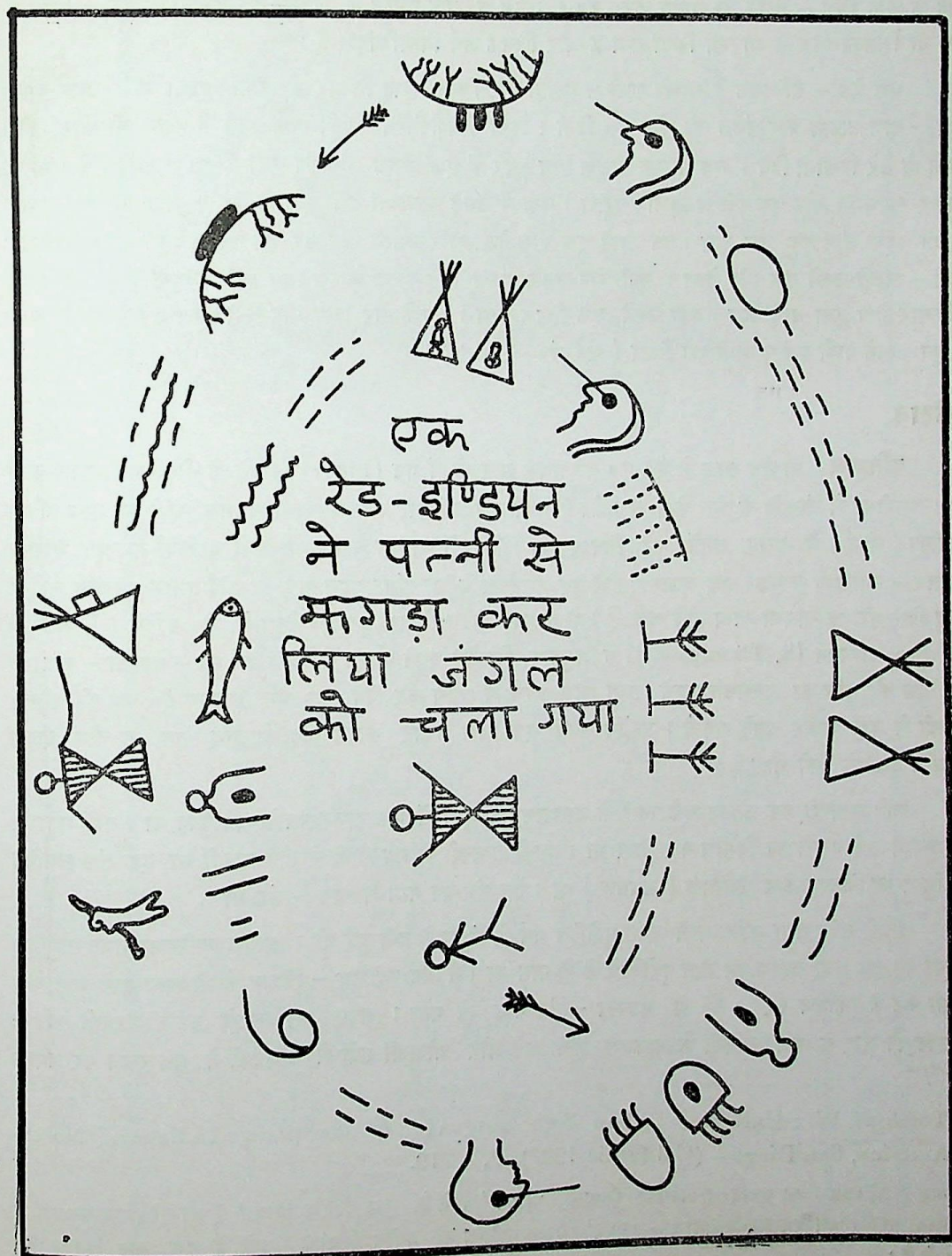
चित्र-लिपि में एक अन्य कहानी : उन्नीसवीं सदी के आरम्भ तक उत्तरी अमरीका के कुछ रेड – इण्डियन जाति के लोग चित्र – लिपि का प्रयोग करते रहे। उनमें से एक मनुष्य ने अपनी एक कहानी[1] चित्र – लिपि में लिख दी जिसको मध्य से आरम्भ किया गया है और जिसके अर्थ निम्नलिखित हैं :—

एक रेड – इण्डियन ने अपनी पत्नी से झगड़ा कर लिया। वह शिकार को जाना चाहता था। उसने अपना धनुष – बाण उठाया और जंगल की ओर चल दिया। रास्ते में बर्फ गिरने लगी। उसने बचने के स्थान की खोज की। उसको दो डेरे दिखायी दिये। एक में एक बालक तथा दूसरे में एक मनुष्य – परन्तु दोनों चेचक से पीड़ित थे। उनको देखकर वह भागा और एक नदी के किनारे पहुँचा। नदी में उसने मछलियाँ देखीं। उसने उनको मारा और खा गया। दो दिन ठहरा और पुनः चल पड़ा। तब उसने एक रीछ देखा और उसको मार कर खा गया। वह फिर चल दिया। चलते – चलते उसने एक गाँव देखा। वहाँ लोग उसके दुश्मन निकले इस कारण वह वहाँ से भागा और एक झील के किनारे होता हुआ आगे बढ़ा। वहाँ उसने एक हिरण देखा। उसको मार दिया और घसीट कर अपने घर ले गया। वह पुनः अपने बच्चे एवं पत्नी से जा मिला (फ० सं० – ३७८)।

यूकेटान

इतिहास : प्राचीन काल में ई० पू० की प्रथम शताब्दी में मय (Maya)[2] जाति के लोग यहाँ आकर बसने लगे। अमरीका में संस्कृति के तीन केन्द्र थे। मैक्सीको में अज़टेकों का, मध्य अमरीका में मय लोगों का तथा दक्षिण अमरीका (पीरू) में इन्का लोगों का निवास था। विद्वानों का मत है कि यह तीनों जातियाँ सम्भवतः एशिया के उत्तर – पूर्वी कोने से गुज़र कर अलास्का होते हुए अमरीका पहुँची होंगी। इस बात का कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है परन्तु फिर भी यह धारणा मान्य होने लगी है। दो प्रख्यात ब्रिटेन निवासी पुरातत्व वेत्ताओं, जे० एरिक (J, Eric) तथा एस० थाम्पसन (S. Thompson), के अनुसार, जिन्होंने अपने जीवन के अनेक वर्ष मय – सभ्यता – केन्द्रों के आस पास की भूमि का उत्खनन करने तथा खोज करने में अर्पण कर दिये, मय लोग लगभग ई० पू० की पाँचवी शताब्दी में यहाँ आकर बसने लगे थे। उन्होंने अपनी एक भिन्न प्रकार की संस्कृति को जन्म दिया, जो चौथी ईसवी में पर्याप्त दृढ़ हो चुकी थी।

छठी शताब्दी तक उनका यूकेटान[3] के आसपास की भूमि में एक राज्य स्थापित हो चुका था। नवीं शताब्दी तक उन्होंने कई नगरों का निर्माण कर लिया था। दसवीं शताब्दी में मय लोगों ने तीन राज्यों का एक संघ स्थापित कर लिया था जिसका केन्द्र उक्षमाल (उसमल) था। इस संघ का नाम मयपान – संघ था।

इतनी सभ्य तथा शक्तिशाली जाति पुरोहित वर्ग के अंकुश से दबी हुई थी। प्रत्येक व्यक्तिगत तथा सामूहिक समस्या का हल तथा कारण का ज्ञान पुरोहितों के ही पास था। वे लोग ज्योतिष – विज्ञान के भी ज्ञाता माने जाते थे। आपसी फूट के कारण ११९० ई० में मयपान – संघ नष्ट हो गया। सत्ता विभाजित हो गई। तेरहवीं सदी में मैक्सिको की ओर से अन्य जातियों के आक्रमण होने लगे और चौदहवीं सदी में अज़टेकों ने मय राज्य पर अपना

---

1. Tomkins, W. : Universal Indian Sign Language of the plain's Indians of North America, San Diago – (California-1927), P. – 219.
2. मय (Maya) का उच्चारण कनाडा निवासी 'माईया' करते हैं, कुछ विद्वान् 'माया' (श्री भूपेंद्रनाथ सन्याल ने अपनी पुस्तक 'आदिम मानव समाज – १९६१' में 'माया' का ही प्रयोग किया है) करते हैं तथा कुछ विद्वान 'मे' करते हैं।
3. युकेटान = युक का देश; 'युक' एक प्रकार के छोटे मृगों को कहते थे जो यहाँ अधिक संख्या में फिरते रहते थे।

मध्म-अमरीका (मैक्सिको एवं यकेटान)
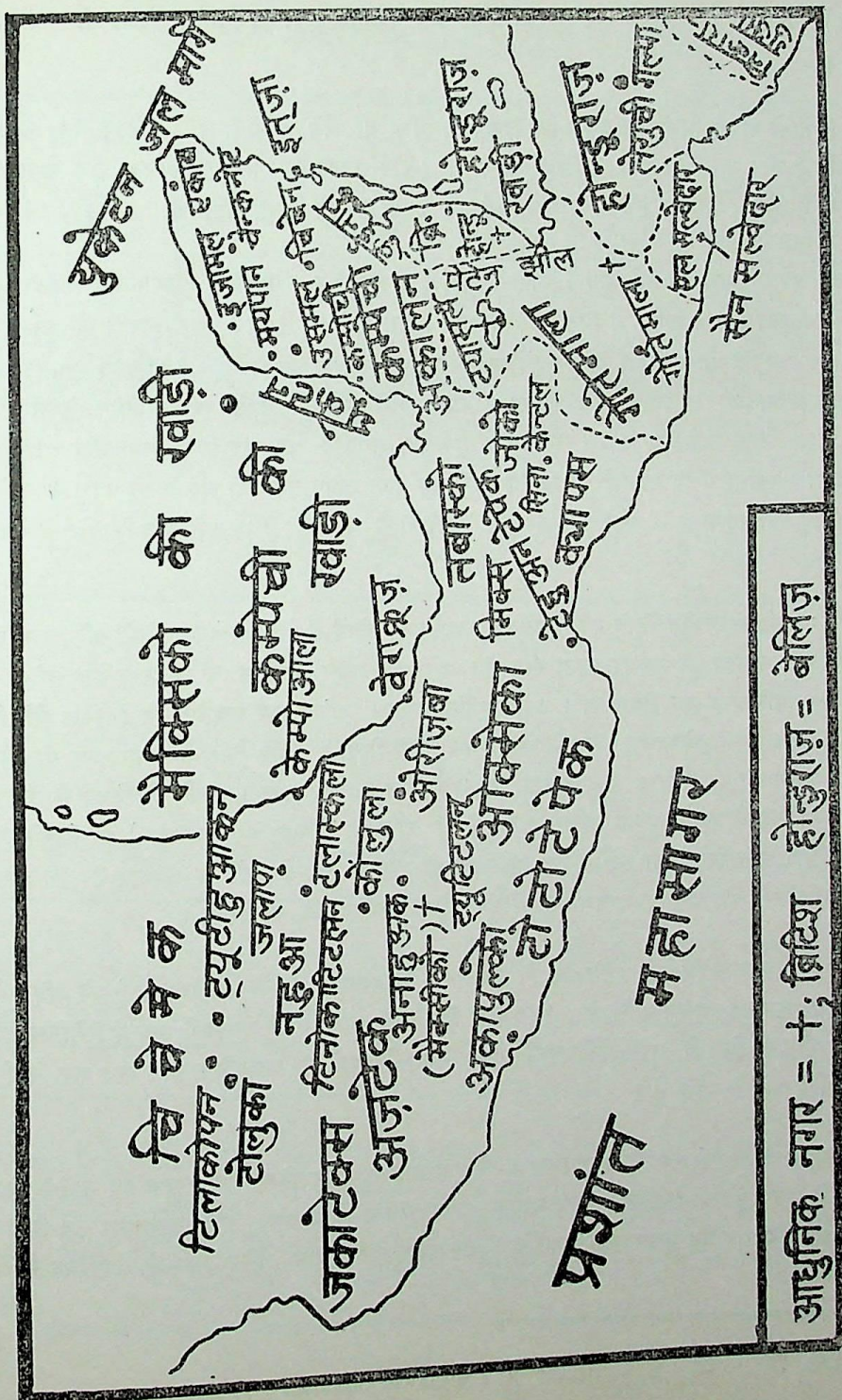
फलक संख्या – ३७९

अधिकार कर लिया। इन्होंने अपना एक सुन्दर मुख्य नगर टिनोक्टिटलन का निर्माण किया और दो सौ वर्ष तक राज्य किया।

इन जातियों में देवताओं को प्रसन्न करने के लिये बलि दी जाने की प्रथा थी। प्रत्येक वर्ष लगभग सैकड़ों मनुष्यों के पेटों को चीर कर दिल निकाल लिया जाता था और उनको इसी प्रकार तड़पता छोड़ दिया जाता था। इनका राज्य डण्डे के ज़ोर से चलता था। शासक स्वयं एक देवता स्वरूप माना जाता था।

यूकेटान का इतिहास उस अभियान से आरम्भ होता है जो हर्नेन्दीज़ दि कार्दोवा (Hernandez de Cardova) के अधीन आरम्भ हुआ। वह क्यूबा में निवास करने लगा था। इसी को १५१७ को फरवरी को युकेटान का पूर्वी किनारा ज्ञात हुआ जब कि यह दासों को पकड़ने के लिए इधर – उधर जाया करता था। १५१८ में जुआन दि ग्रीजाल्वा ने भी वही मार्ग अपनाया। १५१९ में एक तीसरा अभियान उसी हर्मन कोर्तेज़ के अन्तर्गत आया जिसने मैक्सिको को परास्त किया था। इसने कई युद्ध किये। **१५२५** में युकेटान प्रायद्वीप को पार किया गया और अभियान – दल होन्डु राज़ पहुँचा। फ्रांसिस्को दि मोन्तेजो को कार्तेज़ से अधिक कष्ट उठाने पड़े तथा युद्ध करने पड़े। अन्त में **१५४९** में स्पेन का शासन स्थापित हुआ। आगे का इतिहास मैक्सिको के साथ ही है। क्योंकि युकेटान उसी देश का एक भाग है।

लिपि : यहाँ की प्राचीन लिपि का सम्बन्ध मय जाति के लोगों से है। आदिम जातियों की अन्य सभ्यताओं से इनकी जाति की सभ्यता को सर्वश्रेष्ठ माना गया है। श्री भूपेन्द्रनाथ सन्याल के अनुसार इन लोगों ने भारत से पूर्व 'शून्य' का आविष्कार कर लिया था। ज्योतिष विज्ञान तथा गणित यहाँ प्रचलित था। मिस्र जैसे पिरामिडों का निर्माण भी इन लोगों ने किया था। इनकी आरम्भिक लिपि हित्ती व मिस्र जैसी ही चित्रात्मक थी जो पत्थरों पर उत्कीर्ण की जाती थी परन्तु आज तक इसका रहस्योद्घाटन न हो सका। लिपि के विषय में जो कुछ भी ज्ञान प्राप्त हो सका वह केवल एक धर्म प्रचारक दियेगो दि लान्दा (Diego de Landa) के, जिसने १५६५ में मय सभ्यता का एक इतिहास लिखा था, द्वारा ही प्राप्त हो सका। कुछ विद्वानों का विचार है कि लान्दा ने ही उनके प्राचीन अभिलेखों को, जो कागज़ तथा खालों पर अंकित किये गये थे, नष्ट किया।

१८६३ में एक फ्रांस-निवासी ब्रासिओर दि बोर्गबोर्ग (Brasseur de Bourgbourg) को मैड्रिड (स्पेन) से एक पाण्डुलिपि प्राप्त हुई जो लान्दा[1] द्वारा १५६६ में लिखी गई थी। इसमें लान्दा ने मय के हैरोग्लिफ्स की एक वर्णमाला तैयार की थी जिसको पुरातत्व-वेत्ताओं तथा भाषा-विशेषज्ञों ने काल्पनिक कृति मान कर कोई मान्यता प्रदान नहीं की (फ० सं०–३८०)।

मय लोगों ने अपना पंचांग भी बनाया था। वे एक माह के बीस दिवस तथा एक वर्ष में १८ माह मानते थे। पांच दिन जो शेष रह गये वे उनको अशुभ मानकर अपने पंचांग को अपवित्र नहीं करते थे। उन दिनों वे अपने घरों से निकल कर कुछ दूर पर बाहर रहा करते थे। तत्पश्चात् मन्दिर की अग्नि लेकर वे अपने घर में अग्नि का

---

1. Landa, Diego de : Rlacion de las coesas de yukatan (1566)
(Republished by Brasseur in 1864).

मय चित्र लिपि के वर्ण (लान्दा द्वारा)

अ	अ	आ	ब	बा	क़	त	ए
ह	इ	क	ल	ला	म	व	ओ
औ	प	प्प	क्व	क्सू	उ	ज़	त्स

फलक संख्या – ३८०

मय जाति का पंचांग

फलक संख्या – ३८१

प्रयोग करते थे। पुरोहितवाद के कारण अनेक देवताओं की पूजा होती थी। उनकी लिपि में भी देवताओं की मुखाकृतियों का अधिक समावेश है। उन्होंने भी चित्रात्मक से वर्णात्मक की ओर प्रगति की थी परन्तु अज़टेक के आक्रमणों ने सब नष्ट – भ्रष्ट कर दिया। मयपान का विशाल साम्राज्य सिकुड़ कर पेटेन की झील के एक छोटे से द्वीप त्यासल पर सीमित रह गया था।

अंक : अंकों के निर्माण तथा गणित का उदाहरण 'फ० सं० – ३८०' पर नीचे की ओर दिया गया है।

पंचांग का विवरण : 'फ० सं० – ३८१' पर ऊपर की ओर १८ महीनों के नाम दिये हुए हैं। नीचे पांच चित्र निम्नलिखित हैं:—

१— **किन** – एक दिन अथवा सूर्य।
२— **उइनल** – एक माह बीस दिन का।
३— **तुन** – एक वर्ष ३६० दिन का।
४— **काटुन** – जिसमें २० तुन होते हैं अथवा ७२०० दिन।
५— **बक्टुन** – जिसमें २० काटुन होते हैं अथवा १४४००० दिन।

अलघेनो

इतिहास : अलघेनी का आधुनिक नाम ओक्लाहोमा है। दसवीं सदी के लगभग यहां रेड – इण्डियनों[1] की एक जाति चेरोकी (Cherokee) उत्तर की ओर से आकर बस गई थी। 'चिरोकी' शब्द के अर्थ हैं कंदरा – निवासी। यह भू – भाग अमरीका के (संयुक्त राष्ट्र संघ) के दक्षिण में स्थित है। सर्वप्रथम ग्यारहवीं सदी में एरिक्सन इस देश के पूर्वी किनारे पर पहुँचा तत्पश्चात् कोलम्बस, जाँन कैबट, जैक्स कार्टियर आदि पहुँचे जिन्होंने यूरोप निवासियों के लिये एक रास्ता खोल दिया। बहुधा स्पेन, इंग लैण्ड तथा फ्रांस के लोग यहाँ आकर बसने लगे। १५६५ से इन लोगों ने अपनी – अपनी जागीरें बनाना आरम्भ कर दिमा। फ्रांस और इंग लैण्ड में, आधिपत्य जमाने के कारण १६८९ से १७६३ तक युद्ध होते रहे। फ्रांस की पराजय के पश्चात् इंगलैण्ड की सरकार सारे अमरीका को अपने अधीन रखना चाहती थी जिसके कारण जागीरदारों ने इंगलैण्ड की सरकार के विरूद्ध विद्रोह कर दिया। ४ जुलाई २७७६ को अमरीका ने स्वतंत्र होने की घोषणा कर दी। उस समय केवल तेरह जागीरों ने मिल कर एक संघ स्थापित किया।

अब उत्तर एवं दक्षिण के जागीरदारों में १८६१ – ६५ के मध्य गृह – युद्ध छिड़ गया जिसमें उत्तरी पक्ष को विजय हुई। चेरोकी जाति के लोगों ने इस गृह – युद्ध में उत्तरी पक्ष वालों का साथ दिया। इन लोगों के सम्पर्क में आने वाला पहला यूरोप निवासी दि सोटो था जो यहां १५४० में आया। इंगलैण्ड से युद्ध के बाद जब अमरीका एक सूत्र में बँध गया तब चेरोकी जाति के लोग सिमट कर ओक्लाहोमा में आ गये। अमरीका की सरकार ने इनकी जाति को सभ्य समझ कर मान्यता प्रदान कर दी और तब १८२० में इन लोगों ने अपना एक राज्य स्थापित कर

---

१. यह नाम एक भूल के फलस्वरूप पड़ गया जो क्रास्टोफ़र कोलम्बस ने १४९२ में यह समझकर की थी कि वह इण्डिया के देश में पहुँच गया।

चेरोकी लिपि के वर्ण

स्वर- अ-Ꭰ ए-Ꭱ ई-Ꭲ ओ-Ꭳ ऊ-Ꭴ

गा	गे	गी	गो	गू	इला	इले	इली	इलो	इलू
Ꭶ	Ꭸ	Ꭹ	Ꭺ	Ꭻ	Ꮬ	Ꮮ	Ꮯ	Ꮰ	Ꮱ
हा	हे	ही	हो	हू	ज़ा	ज़े	ज़ी	ज़ो	ज़ू
Ꭽ	Ꭾ	Ꭿ	Ꮀ	Ꮁ	Ꮳ	Ꮴ	Ꮵ	Ꮶ	Ꮷ
ला	ले	ली	लो	लू	वा	वे	वी	वो	वू
Ꮃ	Ꮄ	Ꮅ	Ꮆ	Ꮇ	Ꮹ	Ꮺ	Ꮻ	Ꮼ	Ꮽ
मा	मे	मी	मो	मू	या	ये	यी	यो	यू
Ꮉ	Ꮊ	Ꮋ	Ꮌ	Ꮍ	Ꮿ	Ᏸ	Ᏹ	Ᏺ	Ᏻ
ना	ने	नी	नो	नू	औ	गौ	हौ	लौ	नौ
Ꮎ	Ꮑ	Ꮒ	Ꮓ	Ꮔ	Ꭵ	Ꭼ	Ꮂ	Ꮈ	Ꮕ
ग्वा	ग्वे	ग्वी	ग्वो	ग्वू	ग्वौ	सौ	डौ	इलौ	ज़ौ
Ꮖ	Ꮗ	Ꮘ	Ꮙ	Ꮚ	Ꮛ	Ꮢ	Ꮫ	Ꮲ	Ꮸ
सा	से	सी	सो	सू	वौ	यौ	का	न्हा	नाह
Ꮜ	Ꮞ	Ꮟ	Ꮠ	Ꮡ	Ꮾ	Ᏼ	Ꭷ	Ꮏ	Ꮐ
डा	डे	डी	डो	डू	स	ट	टे	टी	ट्ला
Ꮣ	Ꮥ	Ꮧ	Ꮩ	Ꮪ	Ꮝ	Ꮤ	Ꮦ	Ꮨ	Ꮭ

फलक संख्या – ३८३

लिया । इनकी राजधानी का नाम तैलेहकुआ था । इनका राज्य १९०६ ई० तक चलता रहा तत्पश्चात् इस जाति के सब लोग अमरीका के नागरिक हो गये ।

लिपि : चेरोकी लिपि का आविष्कार, एक इन्हीं की जाति के विद्वान् सिक्वई (Sikwayi) अथवा सेक्यू – ओयाह (Sequoyah) ने (एक चित्र – लिपि) किया । तत्पश्चात् इस में सुधार कर के १८२४ में मातृ-भाषा के अनुरूप एक वर्णमाला[1] तैयार कर दी । इसमें ८५ वर्ण हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि सिकवई को रोमन वर्णो का ज्ञान था । १९०२ तक इसका प्रयोग होता रहा परन्तु बाद में इसका स्थान रोमन लिपि ने ले लिया और इसका लोप हो गया (फ० सं०—३८२) ।

मैनीटोबा

इतिहास : मैनीटोबा आधुनिक कनाडा देश का एक प्रांत है जो हुडसन[2] खाड़ी के दक्षिण में स्थित है । इसी के उत्तर पश्चिम में एक नदी है जिसका नाम चर्चिल है । नदी के दक्षिण की ओर तथा मैनीटोबा में रेड-इण्डियन जाति कीं एक उपजाति निवास करती है । इस जाति का नाम 'क्री' है । यह लोग जंगल में निवास करते थे तथा जंगली भैंसों का शिकार करते थे । अब इस जाति के लोगों ने आधुनिक सभ्यता को अपना लिया है ।

लिपि : १८४० ई० में क्री जाति के लोगों के साथ एक ईसाई मेथॉडिस्ट – धर्म – प्रचारक जे० ईवान्स (James Evans) रहता था । उसी ने जॉन मैक्लीन (John Mclean) के सहयोग से यहाँ की क्री (Cree) भाषा के अनुरूप एक लिपि[3] का आविष्कार किया । उसने इस लिपि में नई बाइबिल (New Testament) के कुछ भागों का अनुवाद किया । उसने इस कार्य के लिये एक मुद्रणालय को भी स्थापित किया जिसमें इस लिपि के वर्णों में मुद्रण कार्य होता था । क्री लिपि में ४४ चिह्न हैं, जो एक ईशु[4] की प्रार्थना के पाठ के साथ 'फ० सं० – ३८३' पर दिये गये हैं ।

एलास्का

इतिहास : सर्वप्रथम स्पेन को इस भूभाग के विषय में कुछ ज्ञान प्राप्त हुआ । तत्पश्चात् १७२८ में वाइटस बेरिंग ने इस जलसंयोजी को पार किया और उन्हीं के नाम पर इसका नाम बेरिंग जलसंयोजी पड़ा । १७३१ में गिरोसडेफ़्ट (Girosdeft) ने अमरीका की ओर का किनारा देखा । १७४१ में बेरिंग ने पुनः अलेक्सी चिरीकोव, जो साइबेरिया का निवासी था, के साथ यहाँ के कई द्वीप की यात्रा की परन्तु इस अभियान में बेरिंग का जलपोत नष्ट हो गया और उसकी शीत के कारण ८ दिसम्बर १७४१ को मृत्यु हो गई । तीस पैंतीस वर्ष के पश्चात् रूस ने कई अभियान एलास्का भेजे जिनके कारण वहाँ के निवासियों से सम्पर्क बढ़े तथा उनके साथ सुन्दर, मुलायम तथा बालवाली खालों का व्यापार भी आरम्भ हो गया ।

---

1. Pickering : Über die indianischen sprachen Amerikas, (Leipzig – 1834), p – 58.
2. हेनरी हुडसन पहला व्यक्ति था जो घने जंगलों में घूमा । यह सोलहवीं श० के मध्य क्री जाति के लोगों के सम्पर्क में आया था । इसी के नाम पर हुडसन खाड़ी का नाम पड़ा
3. Pilling, J. C. : 'Bibliography of the Algonquin Languages' – Bureau of Ethnology Misc. Pub. XIII (1891). Page 284.
4. 'ट्शेसो' ईशु (जीसस) के लिये प्रयोग किया गया है ।

शनैः शनैः इंगलैण्ड के यात्री आने लगे जिनमें से मुख्य जेम्स कुक, जॉर्ज वैंकोवर तथा सर एलेक्ज़ेण्डर मिकेंज़ी थे। कुक का अभियान १७७६ में यहाँ आया था। जब व्यापारियों ने अपने स्वार्थ के कारण यहाँ के रेड-इण्डियन निवासियों को बहुत तंग करना आरम्भ कर दिया, उनको मारने एवं लूटने लगे तो रूस की सरकार ने इस खुले व्यापार पर प्रतिरोध लगा दिया। १७९९ में रूस-अमरीका में एक सन्धि-पत्र पर हस्ताक्षर हुये और अमरीका की कम्पनी का एक निदेशक यहाँ का प्रांतपाल बना दिया गया। इसने १८०४ में सिटका नगर की स्थापना की। अब यही नगर राजकाज का मुख्य नगर बन गया। १८२१ में रूस ने अमरीका एवं इंगलैण्ड के नाविकों को रोका जिस पर उन देशों ने आपत्ति की। तदनन्तर १८२४ में दोनों देशों के साथ सन्धि हो गयी। यह सन्धि ३१ दिसम्बर १८६१ को समाप्त हो गई। अब राजकुमार मक्सूटोव यहाँ का प्रांतपाल नियुक्त कर दिया गया और पुनः अमरीका एवं इंगलैण्ड को व्यापार करने की अनुमति प्रदान कर दी गयी। रूस और एलास्का से दूर-भाष्य के लिये तार जोड़ दिये गये। ३० मार्च १८६७ को एक सन्धि द्वारा एलास्का अमरीका के हाथ बेच दिया गया और अमरीका को ७२ लाख डालर देना पड़ा। अब एलास्का अमरीका के राष्ट्रसंघ में सम्मिलित हो गया।

लिपि : यहाँ की लिपि के विषय में ए० शिमत (A. Schmitt) तथा जे० हिंज़ (J. Hinz) के द्वारा १८८० में विद्वानों को सूचना प्राप्त हुई। १८८५ में हेरनहूटर (Herranhuter) द्वारा ज्ञात हुआ कि यहाँ एक भावात्मक लिपि प्रचलित थी जिसको यहाँ के एक स्कीमो निवासी नेक (Neck) ने तैयार किया था। इसका एक उदाहरण 'फ० सं०- ३८५' पर नीचे की ओर दिया गया है जिसका अर्थ निम्नलिखित है :- (यह सामुद्रिक शेर के शिकार के विषय में है)

१—शिकार का पथ प्रदर्शन करता है।
२—नाव चलाने का चप्पू लिये है जिसके द्वारा संकेत है कि सामुद्रिक यात्रा को जाना है।
३—अब एक रात विश्राम करना है।
४—एक द्वीप मिला जिस पर दो झोपड़े बने थे।
५—अब पुनः पथ प्रदर्शन करता है।
६—एक दूसरा द्वीप मिला।
७—पुनः रात्रि को विश्राम करना है - उंगली से दो रात्रि का बोध होता है।
८—बायें हाथ में सामुद्रिक - शेर मारने का काँटा है।
९—सामुद्रिक - शेर है।
१०—उस शेर को मार कर ले चले।
११—नाव में दो मनुष्य बैठ कर नाव खेने लगे।
१२—पथ प्रदर्शक का निवास स्थान है।

उपर्युक्त बारह चित्रों के अर्थों का भावार्थ है :- "मैं उस द्वीप, जहाँ एक (सामुद्रिक शेर) था, मैं दूसरे द्वीप पर गया जहाँ दो सो रहे थे। मैंने एक शेर मारा और लौट पड़ा।"[1] इसके अतिरिक्त नेक ने एक रोमन पद्धति के अनुसार वर्णमाला का भी आविष्कार किया जो ३८५' पर ऊपर की ओर दिया गया है।

---

1. Hoffman, M. : Transactions of the Anthropological Society, Washington, Vol. II (1883.)

क्री लिपि

अ	बा.पा	टा	का	ट्शा	ला	मा	ना	वा	सा	या
ए	बे.पे	टे	के	ट्शे	ले	मे	ने	वे	से	ये
ई	बी.पी	टी	की	ट्शी	ली	मी	नी	वी	सी	यी
ओ	बो.पो	टो	को	ट्शो	लो	मो	नो	वो	सो	यो

प्रार्थना-पुस्तक का शीर्षक

अ ना मी ई मा सी ना इ का ट्शे सो ओ ई सी टा वी ओ

का ये अ ना मी ई ना का मो ना(न) टा को पी ई का टे वा(न)

मी ए सी टा व (ट) का टो. ली(क) अ ना मी ई ट्शी (क)

प्रार्थना पुस्तक जीसस धर्म के भक्ति पूर्ण गाने इसमें छपे हैं

एलास्का
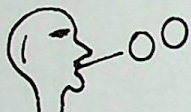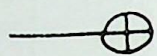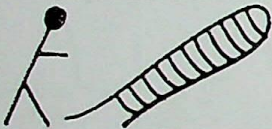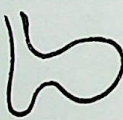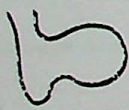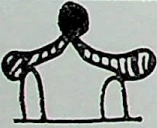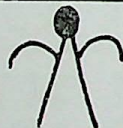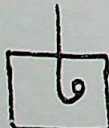
फलक संख्या – ३८४

एलास्का की वर्ण माला

अ	इ	ऊ	पा	पे	पू	वा
वे	वू	मा	मे	मू	टा	टे
त्सा	से	सू	ना	ने	नू	का
के	कू	गा	गे	गू	नंगा	नंगे
नंगू	क़ा	क़े	क़ू	रा	रे	रू
मा	ये	यू	ला	ले	लू	टू

कुछ मुख्य चिन्ह

अर	अग	इग	मिक	टिट	इड़त	कुट
काक	ट्लू	उगा				

प्राचीन लिपि चित्र

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२

मोटजेबू क्षेत्र की चित्र लिपि

जीसस निपलेतेलगाह ईलाह ऊवा नंगा

SUS

जीसस बोलते हैं उसको मैं

टू मोरू नंगा । सूली ईलू मू टू रोक

ही मार्ग हूँ और (मैं ही) सत्य हूँ

सूली ईन्यूलिक ईनूक टी के चूमीनेचूक

और (मैं ही) जीवन हूँ। मनुष्य नहीं आता

अब पामून ऐंगलन ऊवुप कून

(जॉन १४:६)

पिता (ईश्वर) के पास सिवाय मेरे द्वारा

फलक संख्या – ३८६

यह दोनों प्रकार की लिपियाँ तो कुस्कोविम नदी के दक्षिण की ओर प्रचलित हुई परन्तु उत्तर को ओर लगभग ४५० मील दूर कोटज़ेबू के निकट श्मित द्वारा ही एक अन्य चित्रात्मक लिपि का पता लगा। इस लिपि का रहस्योद्घाटन तथा अनुवाद एक पुस्तक[1] से लिया गया है। 'फ० स० – ३८६' पर उसका एक आंशिक पाठ उदाहरणार्थ दिया गया है।

इस पाठ के भावार्थ हुये :—जीसस कहते हैं "मैं ही मनुष्य को मार्ग दिखाने वाला हूँ, मैं ही सत्य हूँ, मैं ही जीवन हूँ और मेरे बिना मनुष्य अपने पिता (ईश्वर) के पास नहीं पहुँच सकता।"

ईस्टर द्वीप

इतिहास : इसका प्राचीन नाम रपानुई था। यह एक वृक्षरहित पथरीला, लगभग पचास वर्ग-मील क्षेत्र का प्रशांत महासागर में स्थित एक छोटा सा द्वीप है। दक्षिणी अमरीका के पश्चिमी किनारे के चिली देश, जिसके अब यह अधीन है, से लगभग २५०० मील है। संयोगवश १७२२ के ईस्टर-दिवस पर एक डच्छ नाविक जैकब रोगवीन (Jacob Roggeveen) यहाँ पहुँचा जिसके कारण उसने इस द्वीप का नाम ईस्टर द्वीप रख दिया। तदनन्तर १७७० में गोंज़ालिस (Gonzales) ने, १७७४ में कैप्टेन कुक (Captain Cook) ने तथा १७८६ में ला पीरोज़ (La Perouse) ने इस द्वीप की यात्रा की। १९१४ में इस क्षेत्र का सर्वप्रथम निरीक्षण करने तथा पुरातात्विक सर्वेक्षण करने एक महिला श्रीमती कैथ्रीन रोटलेज (Katherine Routledge) आई। इन्होंने इस द्वीप की पूरी यात्रा की तथा लगभग चार सौ प्रस्तर की मूर्तियों का, अनेक शिलालेखों का तथा कई लकड़ी की उत्कीर्ण पाटियों का निरीक्षण किया। १९३४ में बेल्जियम के एक पुरातत्त्व-वेत्ता हेनरी लावाचेरी (Henry Lavachery) फ्रांस के अल्फ्रेड मेत्रो[2] (Alfred Mtraux) के साथ आये। इन्होंने इस द्वीप की चित्र-लिपि पर, जो अनेक शिलाओं पर उत्कीर्ण थी, अपना शोध कार्य किया। १९३५ में नार्वे से विद्वानों की एक टोली आई जिसके नेता थोर हेयरदहल (Thor Heyrerdahl) थे। इस टोली के एक पुरातत्त्व-वेत्ता ए० स्कयोल्सवोल्ड (A. Skjolsvold) ने रानो रोरार्कू (Rano Rorarku) के निकट कई स्थानों पर उत्खनन कार्य किये।

उपर्युक्त पुरातत्त्व – वेत्ताओं के सर्वेक्षणों के तथा कार्बन – १४ के परीक्षणों द्वारा यह ज्ञात हुआ कि सर्वप्रथम चौथी शताब्दी[3] में पृथ्वी की नाभि ढूंढते ढूंढते यहाँ एक जाति के लोग आये जिनका राजा होतू मतुआ था। यही लोग इस द्वीप की प्रस्तर-मूर्तियों के निर्माता थे। इन्हीं लोगों ने अपने नेताओं की समाधियों पर बड़े सुन्दर सीढ़ीदार ऊँचे ऊँचे चबूतरे बनवाये, जिनको आहू (Ahu) कहते है। इनकी संख्या २६० है। इनमें लगभग सौ मूर्तियों को रोकने के लिए निर्माण किये गये थे। एक आहू पर एक से पन्द्रह मूर्तियाँ तक बनाई गई थीं। इन मूर्तियों द्वारा यहाँ के प्राचीन निवासी अपने पूर्वजों का आदर एवं सम्मान करते थे। मूर्तियों की ऊँचाई बहुधा बारह से बीस फुट है परन्तु एक सबसे ऊँची मूर्ति है जिसकी ऊँचाई ६६ फुट है। उसका भार लगभग पचास टन हैं। इनका एक पवित्र ग्राम भी था जिसका नाम ओरंगों था। ऐसा प्रतीत होता हैं कि चेचक के व्यापक रोग से यहाँ के लोग या तो मृत्यु के ग्रास बन गये या भाग गये।

इसके पश्चात् पुनः एक दूसरी जाति यहाँ आकर बस गयी। इनमें आपसी गृह – युद्ध होने के कारण १६८० में समाप्त हो गये। तत्पश्चात् पॉलीनेशिया की जाति के लोग अठारहवीं सदी में आकर बस गये जो अब भी यहाँ निवास करते हैं। इनकी संख्या लगभग एक सहस्र है।

---

1. Schmitt, A. : Alaska Schrift, (1903), p – 172. 2. यह नृतत्व शास्त्री था।
3. कुछ विद्वानों का मत है कि ये लोग बारहवीं सदी में आये और इन लोगों ने ही काष्ठ फलकों को अंकित किया।

लिपि

यहाँ की चित्र लिपि जो काष्ठ – फलकों या पाटियों पर उत्कीर्ण की गई है, पॉलीनेशिया में अपने ढंग की अनोखी है। इसको बाएँ से दाएँ तथा दाएँ से बाएँ, दोनों ओर से उत्कीर्ण किया गया है अर्थात् हल – चलाने की पद्धति में। इसी कारण पाटिया को एक ओर से पढ़कर पुनः पलट कर (एक ओर का ही, ऊपर का भाग नीचे की ओर करके) पढ़ना पड़ता है। ऐसी पन्द्रह पाटियां वर्तमान निवासियों के घरों से प्राप्त हुईं। इनका काल लगभग सत्रहवीं श० माना गया है। कुछ विद्वान् इनको बारहवीं अथवा तेरहवीं श० का मानते हैं। कुछ पाटियाँ छः फुट लम्बी भी हैं। इनको "कोहाऊ रोंगो –रोंगो" अर्थात् "बोलते जंगल" कहते हैं। यह पाटियाँ हड्डी द्वारा उत्कीर्णकी गई थीं।

प्राचीन निवासियों की पैतृक कन्दरायें थीं। ऐसी ही एक कन्दरा से एक काष्ठ – फलक थोर को प्राप्त हुआ। उस काष्ठ – फलक को टॉमस बर्थेल (Thomas Berthel) ने पढ़ने का प्रयास[1] किया तथा मरवीन सवील (Mervyn Savill) ने अनुवाद किया तथा इस प्रकार पढ़ा[2] "आकाश और पृथ्वो का देवता रंगो है जिसने प्रकाश बनाया" (फ० सं०— ३८७)। जी. द हेवसे नामक हंगेरियन विद्वान् ने इस लिपि की तुलना सिन्धु – घाटी – लिपि[3] से की हैं। इस कथन का समर्थन अन्य विद्वाद् नहीं करते। थामस बर्थेल नामक जर्मन मानवजाति वैज्ञानिक ने इस लिपि का अध्ययन करके बताया कि यह भाषा पॉलीनेशियन है और ईस्टरद्वीप के प्राचीन निवासी १५०० मोल दूर स्थित फ्रेण्डली द्वीप समूह के रंगोतिया नामक द्वीप से आये थे।

ईस्टर द्वीप की चित्र लिपि
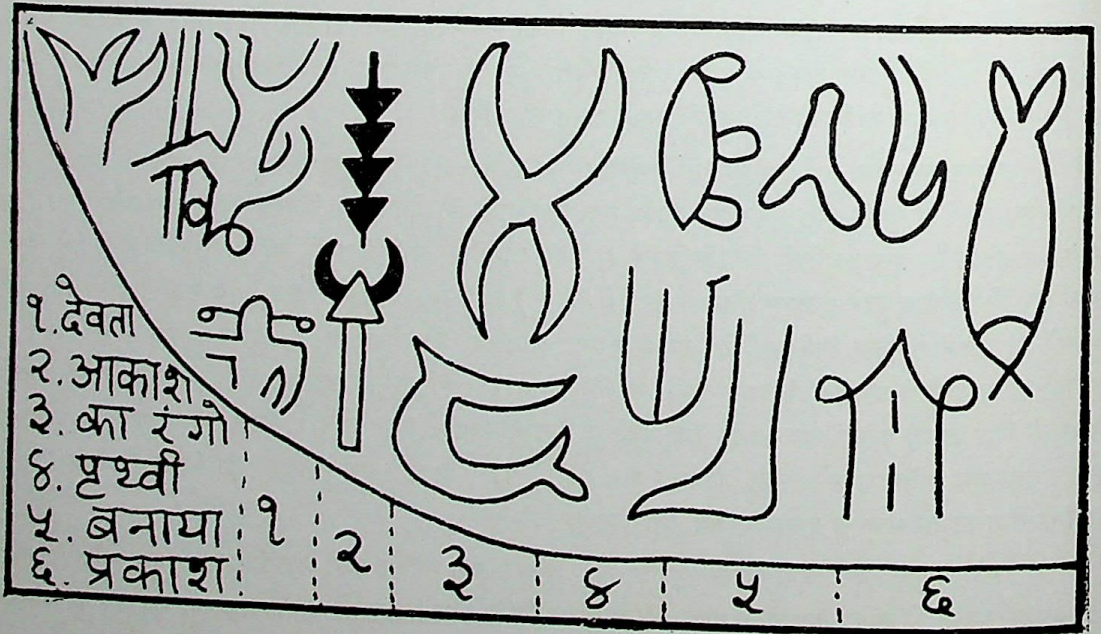
फलक संख्या – ३८७

1. Doblhofer, E. : Voices in Stone (1961), p – 310.
2. Rango, Lord of the Sky and earth who created light".
3. देखिये : पृष्ठ 62 – , फ० सं० – 21.

पठनीय सामग्री

Beyer, H. : 'The Analysis of the Maya Hieroglyphs' – Internationales Archiv für Ethnographie, XXXI (1932).

Brinton, D. G. : A Primer of Mayan Hieroglyphs (Boston – 1895).

Chamberlain, R. S. : The Conquest and Colonization of Yucatan (1948).

Diffie, J. W. : Latin American Civilization and Colonial Period (1945).

Greely, A. W. : Handbook of Alaska (1925).

Heyerdahl, T. : Aku Aku; London – (1658).

Joyce, T.A. ; Mexican Archaeology (1922).

Knorozov, Y. V. : 'The Problem of the Study of the Maya Hieroglyphic Writing' – American Antiquity Vol XXIII (1958).

Mallery, G. : 'Picture Writing of the American Indians' – Tenth Annual Report of the Bureau of Ethnology (Washington – 1893).

Metaux, A. : Easter Island (London – 1957).

Morley, S. G. : An Introduction to the Study of the Maya Hieroglyphs, (Washington – 1915).

Ibid : The Ancient Maya (1956).

Nichols, J. P. : Alaska (1928).

Parkes, H. B. : A History of Mexico (1950).

Pickering : Über die indianischen Sprachen Amerikas (Leipzig – 1834).

Prescott, W. H. : History of the Conquest of Mexico (1843).

Schlenther, U. : Die geistige Welt der Maya (Berlin – 1965).

Spinder, H. J. : Ancient Civilizations of Mexico and Central America (1922).

Thompson, J. E. S. : The Rise and Fall of the Mayan Civilization (London – 1956).

Ibid : The Civilization of the Mayas (Chicago – 1927).

Ibid : Maya Hieroglyphic Writing (Washington – 1960).

Ibid : A Catalogue of Maya Hieroglyphs (1962).

Vaillant, G. C. : The Aztecs of Mexico (1950).

Wadepuhl, W. : Die alten Maya und ihre Kulture (Leipzig – 1964).

William, T. Universal Indian Sign Language of the Plains Indians of North America (California – 1927).

□□□

कुछ अन्य लिपियां

यह लिपियां किसो देश से सम्बंधित नहीं हैं। इनका प्रयोग विभिन्न देशों में किया जाता है।

आशुलिपि : सबसे प्राचीन आशु लिपि[1], जिसका काल ई० पू० की चौथी श० निर्धारित किया गया है, सगमरमर के प्रस्तर पर उत्कीर्ण एथेंस के ऐक्रोपोलिस से प्राप्त हुई है। (फ० सं० – ३८८)।

१६०२ में जॉन विल्लिस (John Willis) ने एक वर्णात्मक आशु लिपि का आविष्कार किया जो सत्रहवीं सदी में प्रचलित रही (फ० सं० – ३८८)।

१७६७ में बाईरोम (Byrom) ने इसका एक और प्रकार बनाया। अन्त में पिट्‌मैन (ज० १८१३– मृ० १८९७) ने कुछ संशोधन करके पूर्ण रूप प्रदान किया जो आज भी सारे विश्व में प्रयोग की जाती है (फ० सं० – ३८८)।

१९५१ में भारत ने अपनी राष्ट्र भाषा हिन्दी के लिये, देवनागरी वर्णों के लिये, एक आशु लिपि का आविष्कार किया जो 'फ० सं० – ९८' पर दी गयो है।

ब्रेल लिपि : इसके विषय में 'पृ० सं० – १९९' पर वर्णन तथा 'फ० सं० – ९९' पर देवनागरी – ब्रेल – लिपि दी जा चुकी हैं। यहाँ रोमन वर्णों की ब्रेल दी गयी हैं (फ० सं० – ३८९)।

पिक्टो लिपि : मानव की तकनीकी तथा वैज्ञानिक प्रगति ने विश्व को कहाँ से कहाँ पहुँचा दिया। पाषाण युग में अग्नि तथा गोल चक्के का आविष्कार कितना महान् तथा आश्चर्यजनक आविष्कार था परन्तु आज मानव चन्द्रलोक की यात्रा पूरी करके लौट आया जिसको प्राचोन काल से कुछ दिन पूर्व तक एक देवता के रूप में समझा जाता रहा। इन प्रगतियों के कारण विश्व अब छोटा दृष्टिगोचर होने लगा। विचारकों ने एकता की ओर दृष्टि उठाई। अब मानव प्रत्येक वस्तु का, प्रत्येक विचार का तथा प्रत्येक पद्धति का एकीकरण करना चाहता है। वह चाहता है संसार की एक सरकार बन जाये, एक मुद्रा, एक व्यापक डाक – टिकट, एक भाषा तथा एक लिपि बन जाय और मानव मानव के निकट आ जाय। इस ओर यूरोप में कुछ प्रयास, भाषा को अन्तर्राष्ट्रीय बनाने के लिये एस्पैरेन्टो भाषा का आविष्कार किया गया है। लिपि का एकीकरण करने के लिये भी दो विद्वानों ने प्रयास किया है। उनमें एक डच्छ पत्रकार करेल यानसन (Karel Janson) तथा दूसरे जर्मनी के एक प्राध्यापक डॉ० ऐन्द्रे एक्कार्ड (Andre Eckhardt) हैं। इन दोनों ने एक 'पिक्टो लिपि' का आविष्कार किया है। इसको देख कर यह प्रतीत होता है कि मानव पुनः प्राचीनता की ओर जाने का प्रयास कर रहा है। इस लिपि का एक प्रतिदर्श 'फ० सं०–३९१' पर दिया गया है।

विशिष्ट चिह्नों का प्रयोग : इतनी प्रगति होने के पश्चात् भी चिह्नों का प्रयोग, जो मानव ने कई सहस्र वर्ष पूर्व लिपि के उद्‌भव – क्रम के प्रथम चरण के रूप में, प्राचीन काल में किया था, आज भी किया जाता है। चिह्नों के बिना कार्य चल ही नहीं सकता। कुछ चिह्न निम्नलिखित हैं :– (फ० सं० – ३९०)।

---

1. (Short Hand)
2. Gardthau sen : Griechische Palagraphic, Vol. II, page -- 204.

रोमन वर्णों की ब्रेल लिपि

बिन्दु	A	B	C	D	E	F	G	H	I	J
	K	L	M	N	O	P	Q	R	S	T
	U	V	W	X	Y	Z	अंक			
	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10

ब्रेल लिपि के कुछ शब्द

HELP THE BLIND TO

HELP THEMSELVES

नेत्रहीनों की उनकी मदद के लिए सहायता कीजिये

फलक संख्या – ३८९

खगोल विद्या - राशीचक्र

खगोल शास्त्र :

सूर्य

चन्द्र

तारा

पुच्छल तारा

बुध ग्रह

शुक्र

पृथ्वी

मंगल ग्रह

शनि

बृहस्पति

राशि चक्र :

मेष (Aries) – मेढ़े के सींग।

वृष (Taurus) – बैल का सिर व सींग।

मिथुन (Gemini) – दो काष्ठ के टुकड़े।

कर्क (Cancer) – केंकड़े के पैर।

सिंह (Lion) – बाघ की पूंछ।

कन्या (Virgo) – कन्या अर्थात् विरजिन का संक्षिप्त ।

तुला (Libra) – तुला का रूप।

वृश्चिक (Scorpio) – बिच्छू के पैर एवं पूंछ।

धनु (Sagittarius) – धनुष तथा बाण।

मकर (Capricornus) – बकरा।

कुम्भ (Aquarius) – जल।

मीन (Pisces) – मछलियाँ।

कुछ अन्य चिह्न :-

$ – अमरीका की मुद्रा डालर का चिह्न जो 'थेलर' से बना।

£ – युनाइटेड किंगडम की मुद्रा पाउण्ड का चिह्न जो बड़े 'एल' से बना।

@ – इसके अर्थ हैं 'प्रति' अर्थात् इतने दर से।

– इसके अर्थ हैं 'निकाल दो'। बहुधा मुद्रणालय में यह चिह्न प्रयोग में आता है। यह अंग्रेजी शब्द डीलिट (Delete) का संक्षिप्त रूप है।

पिक्टो लिपि का प्रतिदर्श
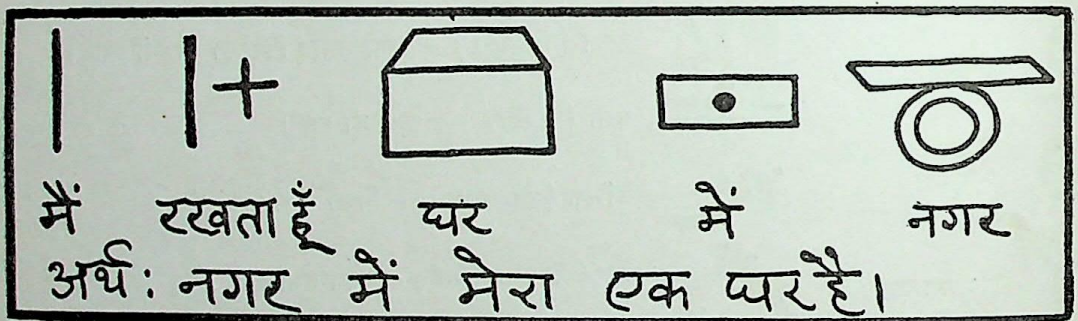
फलक संख्या – ३९१

उद्बोधन

जब से संसार में लिपि का उद्भव हुआ है, तब से अब तक विद्वानों का तथा लिपि – आविष्कारकों का यही प्रयास रहा है कि भाषा की ध्वनियों के साथ नवनिर्मित चिह्नों या वर्णों का ऐसा साम्य हो जाय कि जो बोला जाय वह लिखा जाय तथा जो लिखा जाय वह पढ़ा जाय परन्तु सारे प्रयासों के पश्चात् ऐसा न हो सका। संसार की लगभग प्रत्येक लिपि में कुछ न कुछ पॉलीफ़ोन (Polyphones) अर्थात् बहुस्वर वर्ण (एक वर्ण में अनेक ध्वनियाँ) तथा मोनोफ़्थांग (Monophthong) अर्थात् एक स्वर के अनेक वर्ण दृष्टिगोचर होते हैं।

आज विश्व में लगभग ४००[1] लिपियाँ और २७९६[2] बोलियाँ प्रचलित हैं जो मानव एकता में पर्वत की भांति राह में खड़ी हैं। तकनीकी तथा वैज्ञानिक प्रगतियों के कारण संसार का कोई देश अब दूर नहीं लगता। दो शताब्दियों पूर्व भारत से इंगलैण्ड पहुँचने के लिये छः माह लगते थे परन्तु अब छः घण्टे में पहुँचा जा सकता है। अन्त-रिक्ष में मानव की गति लगभग बीस सहस्र मील प्रति घण्टा से भी अधिक हो गयी है परन्तु राष्ट्रवाद संकीर्णता के कारण एक देश के मानव को अपने राष्ट्र की दस गज़ चौड़ी सीमा को पार करने में छः माह लग जाते हैं। इसी राष्ट्रवाद – संकीर्णता के कारण लिपियों में समन्वय नहीं हो पाता। अब तो देशों में प्रान्तवाद – संकीर्णता भी दृष्टिगोचर होने लगी है जो एक देश की मानव – एकता में भी बाधक सिद्ध हो रही है। भाषा एवं लिपि की समानता न होने से एक देश का निवासी दूसरे देश के निवासी के साथ अपने विचारों को व्यक्त नहीं कर सकता। इसी राष्ट्रवाद – संकीर्णता तथा प्रांतवाद – संकीर्णता के कारण बालकपन से ही ऐसे विचारों का विष मस्तिष्क में प्रवेश कराया जाता है, जैसे, "जो हमारा है वह अच्छा है"। इस विष के कारण वह अपने प्रांत या देश की प्रत्येक वस्तु को सर्वोच्च-समझने लगता है और मानव एकता के लिए किसी प्रकार का संशोधन सहन नहीं करता चाहे वह संशोधन कितना ही व्यापक रूप से लाभदायक सिद्ध हो। इस विषय में मेरा नवयुवकों से निवेदन तथा अनुरोध है कि वे राष्ट्रवाद तथा प्रान्तवाद के इस सिद्धान्त "जो हमारा है वह अच्छा है" को अपने मस्तिष्क से निकाल कर मानव समाज की एकता एवं प्रगति के लिये इस "जो अच्छा है वह हमारा है" सिद्धान्त को धारण करें। कुटुम्ब का, समाज का, प्रांत का, राष्ट्र का तथा सारे विश्व के मानव समाज की प्रगति का तथा एकता का भार अब आप पर है। आप ही इस सिद्धान्त को मान्यता प्रदान करके मानव एकता एवं प्रगति का उत्थान कर सकते हैं।

क्या आज के वैज्ञानिक युग में मानव एकता, सद्भावना की समस्या, समस्या ही बनी रहेगी ? मानव एकता की राह में, जहाँ विश्व के विभिन्न देशों की राजनीति, अर्थ व्यवस्था, बोलियाँ बाधक हैं वहाँ लिपि भी एक अवरोध है। विश्व की लिपियों के एकीकरण का अर्थ है एक नयी लिपि का आविष्कार, जिसके द्वारा विभिन्न देशवासी पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित कर सकें। नयी लिपि के आविष्कार का परिणाम क्या होगा ? नयी लिपि के निर्माण से विश्व के लाखों पुस्तकालयों तथा संग्रहालयों में सुरक्षित रखे ग्रन्थों की उपयोगिता का अन्त,

---

1. इनमें से बहुत सी ऐसी हैं जिनमें नाम मात्र की भिन्नता है।
2. Gray, G. F. : Foundations of the Languages (1861), p – 418.

लाखों मुद्रणालयों का टाइप परिवर्तन, टंकणों का नव निर्माण आदि। इस उपयोगिता को स्थिर रखने के लिये उन ग्रन्थों का नवनिर्मित लिपि में पुनः अनुवाद तथा मुद्रण और उसके लिये अथाह धन का व्यय, जिसका अनुमान लगाना असंभव है। यही नहीं लाखों विद्वानों का परिश्रम एवं समय भी इस दुर्लभ कार्य के लिये अर्पित करना होगा। क्या यह संभव है ?

संभव क्यों नहीं ? एक ओर विश्व के लगभग सभी देश पारस्परिक सम्बन्ध बनाये रखने की चेष्टा रखते हैं परन्तु दूसरी ओर पारस्परिक भय के कारण निःशस्त्रीकरण के नाम पर शस्त्रीकरण, शान्ति के नाम पर युद्ध की तत्परता में उद्दत हैं। इसके लिये सभी देश सुरक्षा के नाम पर मानव के संहारक तथा विध्वंसक शस्त्रों का या तो निर्माण कर रहे हैं या संग्रह कर रहे हैं। क्या इस सुरक्षा के नाम पर बेहिसाब धन का व्यय, परिश्रम व समय का दुरोपयोग नहीं हो रहा ? विश्व के देश मानव संहार के लिये जितना धन आज लगा रहे हैं, संभवतः उसका केवल दस प्रतिशत यदि मानव एकता पर, मानव की पारस्परिक सद्भावना पर, मानव के आपसो प्रेम तथा समझदारी पर, विश्व – बन्धुता पर व्यय किया जाय, तब यह निश्चय है कि दो पीढ़ियों अर्थात अर्ध शतक के पश्चात् सारे संसार का यह भयभीत मानव सुख की नींद सो सकेगा। अपनी सांस्कृतिक प्रगति का, पारस्परिक प्रेम का तथा 'वसुधैव कुटुम्बकम' की धारणा का उत्थान करके अभाव – रहित तथा शान्तिमय जीवन व्यतीत कर सकेगा।

यह कल्पना तभी साकार हो सकती है जब विश्व के देशों के शासनाध्यक्ष अपने सुरक्षा कोष से केवल दस प्रतिशत व्यय कम करके उस धन को ऐसी सोसायटियों को, ऐसी सामाजिक एवं धार्मिक संस्थानों को, लिपियों की समानता पर विचार तथा शोध करने वाले संगठनों को तथा वर्तमान युग की सर्वोपरि अन्तर्राष्ट्रीय संस्था, 'संयुक्त राष्ट्र – संघ' को प्रदान कर दे जो मानव एकता और विश्व बन्धुता की ओर अग्रसर होने की चेष्टा कर रहे हैं।

मुझे न केवल आशा है अपितु पूर्ण विश्वास है कि लिपि के एकीकरण के लिये एक नवनिर्मित लिपिद्वारा, जिसका निर्माण आज के वैज्ञानिक युग में असंभव नहीं है, मानव सद्भावना को बढ़ाने में एक नया प्रयास होगा। इस प्रयास को प्रगतिपथ पर लाने के लिये वर्तमान राष्टों के शासनाध्यक्षों की, मानव हितों के लिये, इक्कोसवीं सदी की एक महान् भेंट होगी।

□□□
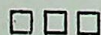
परिशिष्ट

परिमार्जिका

पृष्ठ सं०	पंक्ति सं०	ऐसा है	ऐसा होना चाहिये
२१	अन्तिम	सौजन्यता	सौजन्य
५०	३	२३	१५
५३	२१	२६००	१६००
७८	१	मौय	मौर्य
	३	पुनर्मठन	पुनर्गठन
८७	९	सााम्राज्य	साम्राज्य
९०	२६	बहाहुर शाह	बहादुर शाह
९१	अन्तिम	संवर्ष	संघर्ष
९५	१	व्राण	ब्राह्मण
	१५	भू-गर्म	भू-गर्भ
	२१	१५०० ई० पू० में अन्त हो गया	१५०० ई० पू० में हो गया
	२२	होता	होना
९६	१४	सेसिटिक	सेमिटिक
९९	३०	पश्चिमात्तर	पश्चिमोत्तर
१०१	५	पहलवी	पहलवी
१०४	शीर्षक	संलिष्ट	संश्लिष्ट
११३	१०	स्पयं	स्वयं
१२५	६	इनने	इसने
	७	बड़	बड़े
	नोट	yazdaui	Yazdani
	२३	कलीहार्न	कीलहार्न
१२९	१०	१५०	५०
१३२	१२	तास्रपत्रों	ताम्रपत्रों
१५२	१	कामरूप की वंगला की असम लिपि	कामरूप की बंगला लिपि
१५७	१३	सामान्त	सामन्त
१८६	३	७४७ ७५३	७४७ से ७५३
१८८	१५	डा० कलिहार्न	डा० कीलहार्न
	२१	अ अ ण ण झ झ	अ अ ण रा झ
	अन्तिम	तीन से	तीन सौ से
२०४	१६	विभाजित होते	विभाजित होते होते
२०६	१७	नुलेख	सुलेख

पृष्ठ सं०	पंक्ति सं०	ऐसा है	ऐसा होना चाहिये
२१२	११	जाज़ेफ़ हूकर जो	जाज़ेफ हूकर का जो
२२७	अन्तिम	राज्या	राज्य
२३२	१३	निनेब	निनेवः
२३५	५	Tosblets	Tablets
	नोट	जनुवाद	अनुवाद
२३८	१०	बेबीलोनिया नव –	बेबीलोनिया में नव –
२३९	२६	पृरातत्त्व	पुरातत्त्व
२४१	४	विश्ब	विश्व
२४३	नोट – 1	लूग़ विड्व	लूग़े विश्व
२४८	२०	एकबहान	एकबटान
	२८	पुरोहित – राजा	पुरोहित ने – राजा
	अन्तिम	परसगादे	पसरगादे
२५०	२८	म्रष्ट	भ्रष्ट
२५७	नोट – 7	सारे धिइव	सारे विश्व
२६१	७	उद्भय	उद्भव
	११	परसगादे	पसरगादे
	नोट – २	जेण्ट	ज़ेण्ड
२६२	१	फ० सं० – २७	फ० सं० १२७
२६३	९	निकलीं	निकले
२६४	४	असीकीज़	अर्साकीज़
२६४	१४	कोपेनगेन	कोपेनहेगेन
२६५	३	दि सेमी	सेसी
२६६	७	ऐन्तोने यान	ऐन्तोने इयान
२७२	१६	फ० सं० – १४१	फ० सं० – १३६
२७३	३१	भेद	भेज
२७६	१६	हख़ानीशीय	हखामनीशीय
२७९	११	शर्रुड	शर्रुउ
२८२	७	आरम्भ किया (से) १४१ तक	
२८९	अन्तिम	वर्गों	वर्णों
२९०	५	Halvey	Halevy
३०२	११	राज्थ	राज्य
	१९	पटिया	पाटिया
३०३	३	पामरा शमरा	शामरा शामरा
३०७	६	१७१	१५७

पृष्ठ सं०	पंक्ति सं०	ऐसा है	ऐसा होना चाहिये
३०८	६	Hitii	Hitti
३०९	३	सूल	मूल
	१५	प्रयम	प्रथम
	अन्तिम	६००	९००
३१०	मानचित्र	हत्ती	हित्ती
३१३	१५	सेसो	सेसी
	१९	अभिशेखों	अभिलेखों
३२१	२०	१८०	१६६
३२५	२	उसको	उसका
३२६	१	अमोज़ेजको	मोज़ेज़ को
३३१	९	१४५	१६९
३३२	११	एक्र	एक
	नोट—२	Fisler	Fisher
३४०	१५	१८९	१७५
	१७	वन	बस
	अंतिम	१८९	१७५
३४३	२०	प्रयम	प्रथम
३५०	मानचित्र	क़ोरिया	कैरिया
३५९	१९	माम	माल
	२२	रोम के कारण सम्राट	रोम के सम्राट
	अंतिम	५१६ ई०	५१५ ई०
३६१	३३	मंगलों	मंगोलों
३६३	४	अनेकों	अनेक
	१५	नप्ट	नष्ट
३६६	१३	ब	एवं
	अंतिम	लघ	लघु
३७९	२८	दिथे	दिये
३८३	८	किया जाता।	किया जाता था।
	१७	तो, ज़ो	तोय, ज़ोय
३८५	१५	था, के विरुद्ध	था, विरुद्ध
	२१	चौथि	चौथी

पृष्ठ सं	पंक्ति सं	ऐसा है	ऐसा होना चाहिये
३९९	१५	तिश्बत	तिब्बत
	नोट–	हसका	इसका
४००	९	प्रथान	प्रधान
४०२	१८	प्रतिदर्ज्ञ	प्रतिदर्श
	२५	अुमेद का लिपि का	अुमेद लिपि का
४०६	२	नाम पौराणिक	नाम की पौराणिक
४१४	१	वैसे बसे राज्वंश में	वैसे वैसे राजवंश में
४२७	२८	शेर	शर
४२९	११	Shn	Shu
४३२	२०	रक्त भरा थाला	रक्त भरा प्याला
४४१	१७	२५५	२३०
	२६	डसी	उसी
	२८	दसरे	दूसरे
४४३	५	di	bi
४५२	शीर्षक	रेखाओं का (ट्रोक)	रेखाओं के (स्ट्रोक)
४५४	८	भिंग वंश	मिंग वंश
४६६	२२	बर्षो	वर्षो
४७३	नोट–३	Palaeoraphy	Palaeography
	१२	गेंन्थियट	गौथियट
४७६	२७	बर्णसाला	वर्णमाला
४७९	शीर्षक		पटनीय सामग्री
४८०	१६	सिल्ला का राज्य	सिल्ला राज्य का
४८६	१२	२५२	२५१ क
	१६	Meeune	McCune
	अंतिम	Ecardt	Eckardt
४८६	२	८०५ से हो गया	८०५ में हो गया
	१६	बाहर	बारह
४९३	१५	२५३, २५४	२५४, २५४ क
	१८	लगभश	लगभग
४९६	६	ध्वनी	ध्वनि
	२२	D–1811	D–1911
५००	२	२५८ दिये गये हैं	२५८ पर दिये गये हैं
५१५	१९	पह	यहाँ
५१८	१	ब्रह्मा	ब्राह्मी

पृष्ठ सं०	पक्ति सं०	ऐसा है	ऐसा होना चाहिये
५२७	२४	१९ मार्च १६२१	१६ मार्च १५२१
	२६	स पबन्तु	से परन्तु
५४१	अंतिम	Rule	Royal
५५०	२७	१८२८ तक	१९२८ तक
	२८	१९९५ तक	१८९५ तक
५५१	२	इथ	इथ-तवी
	१७	थीबीज़ इनकी राजधानी थी	
	१९	१६०३ ई० पू०	१६७९ ई० पू०
	२१	१६७१	१६७८
५५२	१५	१४९० से १४३६ तक	१४६९ से १४३६ तक
५५३	२	सिस्र	मिस्र
५५५	प्रथम	उन्हें	उसके
	अन्तिम	आपने	अपने
५५८	प्रथम	७५१ से ६६३	७१५ से ६६२
	२३	पिपांच्वी	पियांखी
	२४	७१६	७१५
५६०	प्रथम	तिपास	तियास
	९	३३६ से ३२२ तक	३३६ से ३३२ तक
	११	किया	करने
	२१	टॉलेभी	टॉलेमी
५६१	२०	वूटस	ब्रूटस
	२६	ने भी अपनी	ने अपनी
५६२	८	सम्राट, जब मिस्र	सम्राट मिस्र
५६७	२७	बिलासी	विलासी
५९७	१७	फ० सं०–३०६	फ० सं०–३०५ क
६०३	शीर्षक	बामतुन	बामुन
६४७	१८	लाइनियर-एवं बी	लाईनियर–ए एवं बी
६५७	८	पिसिसट्रेटस	पिसिट्रेटस
६८८	२७	११	१७७१
७२१	१६	४५	४५१
७५३	२१	२७७६	१७७६
७६०	१	मोटजेबू	कोटजेबू
७६२	१०	जी० द० हेवसे	जी० डी० हेवेसी
७६४	१०	फ० सं० – ९८	फ० सं० – ९९
	११	फ० सं० – ९९	फ० सं० – ९८

□

पारिभाषिक शब्दावली (Glossary)

Alphabetic	वर्णात्मक
Anthropology	मानव विज्ञान; नृतत्त्व
Archaeological Finds	पुरातात्त्विक सामग्री
Archaeologist	पुरातत्त्ववेत्ता
Archaeology	पुरातत्त्व
Archaic	प्राचीन
Bas - relief	उद्भृत; उभरे हुए चित्र
Bibiliography	पठनीय सामग्री
Biconsonantal	द्विवर्णिक (एक वर्ण दो ध्वनियाँ)
Biliteral	,, ,, ,,
Boustrophoden	हल चलाने वाली पद्धति; दाएँ से बाएँ तथा बाएँ से दाएँ लिखने की पद्धति
Classical period	साहित्यिक काल
Cylinder Seal	वर्तुल मुद्रा
Decipherment	रहस्योद्घाटन
Demotic (from 'Demos')	जनता - लिपि
Determinative	निर्धारित शब्द
Embryo Writing	भ्रूण लिपि
Engrave	उत्कीर्ण करना
Excavation	उत्खनन
Flint	चकमक पत्थर
Horizontal	क्षैतिज
Ideographic	भावात्मक
Index	पृष्ठबोधनी; अनुक्रमणिका
Indo – European	भारोपीय
Inscribe	उत्कीर्ण करना
Inscription	अभिलेख

Linguistics	भाषा विज्ञान
Logographic	रेखाक्षरात्मक
Map	मानचित्र
Monophone	एक ध्वनि अनेक वर्ण
Museum	संग्रहालय
Observatory	वेधशाला
Phonographic	ध्वन्यात्मक
Pictographic	चित्रात्मक
Polyphone	एक वर्ण अनेक ध्वनियाँ
Pottery	मिट्टी के बर्तन
Sacrofagus	पत्थर की कब्र
Scribe	प्राचीन लिपियों को उत्कीर्ण करने वाला
Seal	मुद्रा
Short - hand	आशुलिपि
Specimen	प्रतिदर्श
Stele	कब्र पर लगाने वाला पत्थर
Syllabic	अक्षरात्मक
Syllable	एक वर्ण में व्यंजन + स्वर
Tablet	पाटिया
Test	परख
Text	पाठ
Transliteration	लिप्यन्तरण
Triconsonantal (Triliteral)	त्रैवर्णिक (एक वर्ण तीन ध्वनियाँ)
Type-Writer	टंकण
Uniconsonantal (Uniliteral)	एक वर्ण एक ध्वनि
Vertical	शिरोवृत
Vowel	स्वर

□

अनुक्रमणिका

यह अनुक्रमणिका वर्णानुक्रमानुसार तथा निम्नलिखित विषयानुसार प्रस्तुत की गयी है :—

ब्रैकेट के अन्दर लिखे गये शब्द यां तो दिये गये नाम से सम्बन्धित हैं या नाम का दूसरा रूप हैं।

□

अभिलेख

काल

खोजकर्ता

ग्रन्थ

ग्राम

जातियाँ

झीलें

द्वीप

देवता

देश

धर्म

धर्म प्रवर्तक

धर्म प्रचारक एवं धार्मिक नेता

नगरों के नाम

---

१. अक्कादियन भाषा में बाब = द्वार; इलिम = भगवान; बाबइलिग; बाइबिल; बेबिल अर्थ हुए — भगवान का द्वार; ग्रीक भाषा में 'न' जोड़ने से हो गया 'बेबीलोन'। कसाइट शासकों ने इसका नाम कारदुनियाश रख दिया। अब केवल एक टीला रह गया है। उसी टीले के निकट हिल्ला ग्राम है।

नगर-राज्य

नदियाँ

पदवियाँ

पदाधिकारी

पर्वत

प्रांत

भाषायें

भू भाग

महाद्वीप

युद्ध

राजकुमार, राजकुमारियाँ

राजवंश

राजवंशों के संस्थापक

राज्य

लिपियाँ

लोग एवं निवासी

विद्वान

विशिष्ट मनुष्य

शासक

संघ

स्मारकों के नाम

स्मारक

सरकारें

संस्कृतियाँ

संस्थायें

सागरों के नाम

साम्राज्य

INDEX

A

1. *Autonomous Soviet Sacialist Republic.*

D

E

F

G

K

L

O

P

Q

R

S

1. *Saint*

□